अलेक्सान्द्र पुश्किन

चुनी हुई रचनाएं

खण्ड २

कहानियां - उपन्यास

अनिल जनविजय

प्रिय पाठक यह दुर्लभ पुस्तक श्री अनिल जनविजय जी (मॉस्को) द्वारा उपलब्ध करायी गयी है ताकि हनी शर्मा (पीटर्सबर्ग) इसका PDF बना सकें और महाकवि पुश्किन के चाहने वाले उनकी रचनाओं को हिंदी में पढ़ सकें।

धन्यवाद।

[signature]

अलेक्सांद्र सेर्गेयेविच
पुश्किन

अलेक्सान्द्र पुश्किन

चुनी हुई रचनाएं

खण्ड २

कहानियां - उपन्यास

प्रगति प्रकाशन

मास्को

अनुवादक : डॉ० मदनलाल ' मधु '

Александр Пушкин

ИЗБРАННЫЕ ПРОИЗВЕДЕНИЯ В 2-Х ТОМАХ

Том II. Проза.

на языке хинди

Pushkin A.

Selected Works. In two volumes.

Volume Two. Prose.
in Hindi

सोवियत संघ में मुद्रित

П $\frac{70301\text{-}467}{014(01)\text{-}82}$ 758-82 4702010100

अनुक्रम

दिवंगत इवान पेत्रोविच बेल्किन की कहानियां

श्रीमती प्रोस्ताकोवा

उसे बचपन से ही कहानियां सुनने का बड़ा चस्का था।

स्कोतीनिन

मित्रोफ़ान तो पूरी तरह मुझ पर गया है।

घोंघाबसन्त *

सम्पादक की ओर से

इवान पेत्रोविच बेल्किन की कहानियों के प्रकाशन के लिये यत्न करते हुए, जो अब पाठकों के हाथों में हैं, हमने चाहा कि दिवंगत लेखक के जीवन का संक्षिप्त विवरण भी इसके साथ जोड़ दिया जाये और इस तरह राष्ट्रीय गद्य साहित्य-प्रेमियों की सर्वथा तर्क-संगत जिज्ञासा की भी कुछ सीमा तक तुष्टि हो जायेगी। इसी उद्देश्य से हमने इवान पेत्रोविच बेल्किन की एक नज़दीकी रिश्तेदार और उनकी सम्पत्ति की वारिस मारिया अलेक्सेयेव्ना त्राफ़ीलिना से उनके बारे में बताने का अनुरोध किया। किन्तु खेद की बात है कि वह हमें इवान पेत्रोविच बेल्किन के सम्बन्ध में कुछ भी जानकारी नहीं दे पायीं, क्योंकि उनसे परिचित तक नहीं थीं। उन्होंने हमें सलाह दी कि इस सिलसिले में हम एक अन्य महानुभाव से, जो इवान पेत्रोविच के मित्र रहे थे, सम्पर्क स्थापित करें। हमने ऐसा ही किया और हमें वांछित उत्तर भी मिला। इसमें किसी प्रकार का परिवर्तन न करके और अपनी ओर से कोई टीका-टिप्पणी जोड़े बिना गहरी समझ और मर्मस्पर्शी मैत्री के एक मूल्यवान स्मारक तथा साथ ही जीवनी के सर्वथा पर्याप्त वक्तव्य के रूप में हम इसे यहां प्रकाशित कर रहे हैं।

माननीय महानुभाव!

इस महीने की १५ तारीख़ का लिखा हुआ आपका कृपापत्र २३

---

* आदर्शवाक्य १८वीं शताब्दी के प्रमुखतम नाटकार और पत्रकार देनीस इवानोविच फ़ोनवीज़िन (१७४५–१७९२) द्वारा लिखे गये 'घोंघाबसन्त' सुखान्ती नाटक से लिया गया है। – सं०

तारीख़ को पाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। इस पत्र में आपने मेरे भूतपूर्व सच्चे मित्र और गांव के पड़ोसी दिवंगत इवान पेत्रोविच बेल्किन के जन्म और मृत्यु, उनके काम-काज, घरेलू जीवन, उनकी रुचियों तथा आचार-व्यवहार के बारे में विस्तृत जानकारी पाने की इच्छा प्रकट की है। मैं सहर्ष आपकी यह इच्छा पूरी कर रहा हूं। प्रिय महानुभाव, मुझे उनकी जो बातचीत याद है तथा जिस रूप में मैं उन्हें अपनी स्मृति में सहेज पाया हूं, वह सब कुछ आपकी सेवा में लिखकर भेज रहा हूं।

इवान पेत्रोविच बेल्किन का गोर्यूख़िनो गांव के एक प्रतिष्ठित कुलीन घराने में सन् १७६८ में जन्म हुआ। उनके स्वर्गीय पिता प्योतर इवानोविच बेल्किन ने, जो सेना में सेकण्ड-मेजर थे, त्राफ़ीलिन परिवार की कन्या पेलागेया गव्रीलोव्ना से शादी की थी। वह धनी तो नहीं, किन्तु अपनी चादर के अनुसार पांव फैलानेवाले व्यक्ति थे और अपने काम-काज को बहुत अच्छे ढंग से सम्भालने की क्षमता रखते थे। उनके बेटे ने गांव के पादरी से ही अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पाई। मुझे लगता है कि इसी भले व्यक्ति के संसर्ग से इवान पेत्रोविच बेल्किन को पुस्तकें पढ़ने और मातृभाषा में सृजन करने का शौक़ पैदा हुआ। १८१५ में वे येगेर पैदल सेना में भर्ती हुए (रेजिमेंट का नम्बर मुझे याद नहीं) और १८२३ तक उसी में रहे। माता-पिता की मृत्यु के बाद, जो कुछ ही अन्तर के बाद चल बसे थे, उन्हें सेना से अवकाश लेना पड़ा और वे गोर्यूख़िनो गांव की अपनी पैतृक जागीर पर आकर रहने लगे।

जागीर का संचालन-भार अपने हाथ में लेने के कुछ ही समय बाद अपनी अनुभवहीनता और कोमलहृदयता के फलस्वरूप इवान पेत्रोविच ने उसकी देख-भाल में ढील दे दी और वह कड़ा अनुशासन गड़बड़ा गया, जो उनके दिवंगत पिता ने लागू किया था। गांव के सुयोग्य और ईमानदार मुखिया की, जिससे किसान (अपनी आदत के मुताबिक़) नाख़ुश थे, उन्होंने छुट्टी कर दी और जागीर की देख-भाल का सारा काम अपनी बूढ़ी भंडारिन को सौंप दिया। इस भंडारिन ने क़िस्से-कहानियां सुनाने की कला-दक्षता से उनके दिल में अपनी जगह बना ली थी। पचीस और पचास रूबल के नोटों के बीच फ़र्क न जाननेवाली यह बुद्धू बुढ़िया अनेक किसानों के बच्चों की धर्म-मां थी और किसान

उससे ज़रा भी नहीं डरते थे। किसानों द्वारा चुना गया नया मुखिया उन्हें हर तरह की मनमानी करने और साथ ही मालिक की आंखों में धूल झोंकने में इतनी अधिक सीमा तक मदद देता था कि इवान पेत्रोविच को जल्द ही बेगार की प्रथा से इन्कार करके हल्का-सा लगान लागू करना पड़ा। इतना होने पर भी किसानों ने उनकी दुर्बलता से लाभ उठाते हुए पहले साल अतिरिक्त रियायतें हासिल कर लीं और अगले वर्ष लगान का दो तिहाई से भी अधिक भाग अख़रोटों-गिरियों तथा बिल-बेरियों के रूप में निवटा दिया और फिर भी पूरा लगान नहीं चुकाया।

चूंकि मैं इवान पेत्रोविच के स्वर्गीय पिता का भी मित्र रहा था, इसलिये बेटे को सलाह-मशविरा देना भी अपना कर्त्तव्य मानता था। बहुत बार मेरा मन हुआ कि फिर से पहले जैसी व्यवस्था स्थापित करने में, जिसे उन्होंने गड़बड़ कर दिया था, उनकी मदद करूं। इसी भावना से प्रेरित होकर मैं एक दिन उनके यहां गया, हिसाब-किताब के रजिस्टर मंगवाये, मक्कार मुखिया को बुलवाया और इवान पेत्रोविच की उपस्थिति में उनकी जांच-पड़ताल करने लगा। जवान मालिक ने शुरू में तो बहुत ध्यान और बड़ी लगन से मेरे काम में रुचि ली। किन्तु जैसे ही हिसाब देखने से यह पता चला कि पिछले दो सालों में किसानों की संख्या में वृद्धि हुई है और मुर्ग़े-मुर्ग़ियों तथा ढोर-डंगरों की संख्या को जान-बूझकर घटा दिया गया है, तो वे इन प्रारम्भिक तथ्यों की जानकारी से ही इतने सन्तुष्ट हो गये कि आगे मेरी बात पर कान ही नहीं दिया। ठीक उसी क्षण में, जब छानबीन करने और मामले की तह में जानेवाले मेरे प्रश्नों से मक्कार मुखिया बदहवास हो गया और उसकी ज़बान पर ताला पड़ गया, मैंने इवान पेत्रोविच को अपनी आरामकुर्सी पर बड़े चैन से खर्राटे लेते पाया। ज़ाहिर है कि मुझे इससे बहुत दुख हुआ। उस दिन से मैंने उनके काम-काज में दिलचस्पी लेना बन्द कर दिया और उन्हें भगवान के भरोसे पर (जैसा कि उन्होंने स्वयं भी कर रखा था) छोड़ दिया।

इस सबके बावजूद हमारे मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा। कारण कि उनकी दुर्बलता और हमारे कुलीन युवाजन की सामान्य काहिली की भर्त्सना करते हुए भी मैं सच्चे मन से इवान पेत्रोविच को प्यार करता था। ऐसे विनम्र और ईमानदार युवक को प्यार न

करना सम्भव ही नहीं था। दूसरी ओर इवान पेत्रोविच मेरी बुज़ुर्गी की इज़्ज़त करते थे और मुझे हृदय से चाहते थे। जीवन-लीला समाप्त होने तक वे मुझ से लगभग हर दिन मिलते रहे, मेरी सीधी-सादी बातों को मूल्यवान मानते रहे, यद्यपि स्वभाव, विचार-चिन्तन और आचार-व्यवहार की दृष्टि से हम दोनों के बीच कोई समानता नहीं थी।

इवान पेत्रोविच बहुत ही संयत जीवन बिताते थे, सभी प्रकार की अतिशयता से दूर रहते थे। मैंने उन्हें कभी शराब के नशे में गड़गच्च नहीं देखा (यह हमारे क्षेत्र में अनसुना-अनदेखा चमत्कार है)। नारियों की ओर वे बहुत खिंचते थे, किन्तु स्वयं भी लड़कियों जैसे शर्मीले थे।*

उन कहानियों के अतिरिक्त, जिनका आपके पत्र में उल्लेख है, इवान पेत्रोविच अनेक अन्य पाण्डुलिपियां भी छोड़ गये हैं। उनमें से कुछ मेरे पास हैं और कुछ का उनकी भंडारिन ने विभिन्न घरेलू आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये उपयोग कर लिया है। उदाहरण के लिये पिछले जाड़े में घर के जिस भाग में वह स्वयं रहती है उसकी सभी खिड़कियों पर इवान पेत्रोविच बेल्किन के उस उपन्यास के पहले भाग के कागज़ चिपके हुए थे, जिसे उन्होंने कभी समाप्त नहीं किया। जहां तक मुझे याद है, जिन कहानियों का आपने उल्लेख किया है, वे उनकी पहली रचनायें थीं। इवान पेत्रोविच के कथनानुसार, इनमें से अधिकांश कहानियां सच्ची हैं और उन्होंने किसी न किसी के मुंह से सुनी हैं।** किन्तु सभी पात्रों के नाम कल्पित हैं और गांव-बस्तियों के नाम हमारे क्षेत्र से लिये गये हैं। इसीलिये कहीं मेरे गांव का भी नाम आ गया है। किन्तु किसी दुर्भावना से ऐसा नहीं हुआ, बल्कि कल्पना के अभाव के फलस्वरूप।

१८२८ की शरद ऋतु में इवान पेत्रोविच को ठण्ड लग गयी और

---

* इस सम्बन्ध में एक क़िस्से का भी उल्लेख किया गया है जिसे हम अनावश्यक मानते हुए यहां छाप नहीं रहे हैं। साथ ही अपने पाठक को यह विश्वास दिलाते हैं कि इस क़िस्से में ऐसा कुछ नहीं, जिससे इवान पेत्रोविच बेल्किन की स्मृति पर किसी प्रकार की काली छाया पड़ती हो। (**अ० स० पुश्किन की टिप्पणी।**)

** वास्तव में ही श्री बेल्किन की पाण्डुलिपि में हर कहानी के ऊपर स्वयं लेखक के हाथ से यह लिखा हुआ है—फ़लां-फ़लां व्यक्ति से

बहुत ज़ोर के बुख़ार ने उन्हें धर दबाया। बहुत ही अच्छे और गोखरू आदि पुराने रोगों की चिकित्सा में विशेष रूप से दक्ष हमारे क्षेत्र के चिकित्सक की सभी कोशिशों के बावजूद वे कूच कर गये। तीस वर्ष की आयु में उन्होंने मेरी बांहों में ही अपनी अन्तिम सांस ली। उन्हें गोर्यूख़िनो गांव के गिरजाघर के अहाते में उनके माता-पिता की क़ब्रों के निकट ही दफ़नाया गया है।

मंझोला क़द, भूरी आंखें, ललौहें बाल, तीखी नाक, गोरा रंग और छरहरा बदन – ऐसे थे इवान पेत्रोविच।

प्रिय महानुभाव, अपने दिवंगत पड़ोसी और मित्र के जीवन-ढंग, उनकी रुचियों, आचार-विचार और रंग-रूप के बारे में मुझे यही कुछ याद है। यदि आप मेरे इस पत्र को कहीं उद्धृत करना उचित समझें, तो आपसे यह बिनती करता हूं कि मेरे नाम का उल्लेख न करें। यद्यपि यों तो मैं लेखकों का बड़ा आदर करता हूं और उनके प्रति स्नेह-भाव भी रखता हूं, तथापि अपने को उनकी पांत में शामिल नहीं करना चाहता और अपनी आयु को ध्यान में रखते हुए मुझे यह शोभा भी नहीं देगा।

हार्दिक सम्मान-भावनाओं सहित आपका ...

१६ नवम्बर, १८३०
नेनारादोवो गांव

हमारे लेखक के सम्मानित मित्र की इच्छा का आदर करना अपना कर्त्तव्य मानते हुए हम उनके द्वारा दी गयी जानकारी के लिये आभार-प्रदर्शन करते हैं और हमें आशा है कि पाठक उनकी निश्छलता तथा नेकदिली का ऊंचा मूल्यांकन करेंगे।

अ० पु०

सुनी गयी (यह या उपाधि और नाम तथा कुलनाम के प्रथम अक्षर)। जिज्ञासु पाठक के लिये कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं – 'डाक-चौकी का मुंशी' कहानी टिट्युलर कौंसिलर अ० ग० न० ने सुनाई; 'पिस्तौल का निशाना' लेफ़्टीनेंट कर्नल इ० ल० प० ने; 'ताबूतसाज़' दुकान के एक विक्रेता ब० व० ने; 'बर्फ़ीली आंधी' और 'प्रेम-मिलन' कुमारी क० इ० त० ने। (**अ० स० पुश्किन की टिप्पणी।**)

पिस्तौल का निशाना

हमने एक-दूसरे पर गोलियां चलाईं

बरातीन्स्की *

द्वन्द्व-युद्ध के नियमानुसार मैंने उसकी हत्या कर डालने का प्रण किया था (गोली चलाने की मेरी बारी अभी शेष थी)।

'पड़ाव की एक शाम' **

(१)

एक बस्ती में हम तैनात थे। फ़ौजी अफ़सर की ज़िन्दगी कैसी होती है, यह सब जानते हैं। सुबह सैनिक-शिक्षा, घुड़सवारी, रेजिमेंट के कमाण्डर के घर या किसी यहूदी के भटियारख़ाने में दिन का भोजन, शाम को शराब और ताश। उस बस्ती में न तो किसी घर के दरवाज़े हमारे लिये खुले थे और न मुहब्बत करने लायक़ कोई जवान लड़की ही थी। हम एक-दूसरे के यहां एकत्रित होते, जहां अपनी वर्दियों के अलावा और कुछ भी देखने को न होता।

हमारे हलक़े के लोगों में सिर्फ़ एक ही असैनिक व्यक्ति था। उसकी उम्र लगभग पैंतीस साल थी और हम उसे बुज़ुर्ग मानते थे। जीवन के कहीं अधिक अनुभव की दृष्टि से वह हम से बढ़-चढ़कर था।

---

* येव्गेनी बरातीन्स्की (१८००–१८४४) – पुश्किन के कवि-मित्र। उनकी 'बॉल-नृत्य' कविता से उद्धृत पंक्ति। – सं०

** अलेक्सान्द्र बेस्तुजेव-मार्लीन्स्की की 'पड़ाव की एक शाम' कहानी से उद्धृत पंक्ति। इस लेखक ने १४ दिसम्बर, १८२५ के सशस्त्र विद्रोह में भाग लिया था और उसकी कहानी के उद्धरण द्वारा पुश्किन ने यह स्पष्ट कर दिया कि उनकी सहानुभूति दिसम्बरवादियों के साथ थी। –सं०

इसके अलावा उस पर छाई रहनेवाली सामान्य उदासी, उसकी तुनुक-मिज़ाजी और ज़हरीली ज़बान ने भी हम जवान लोगों के दिल-दिमाग़ पर उसकी काफ़ी धाक जमा दी थी। उसका जीवन किसी रहस्य से घिरा-सा था। वह रूसी प्रतीत होता था, मगर उसका नाम विदेशी था। कभी वह हुस्सार घुड़ सेना में रह चुका था और वहां उसने अच्छी सफलता भी पायी थी। किस कारण उसने सेना से इस्तीफ़ा दिया और इस छोटी-सी बस्ती में आ बसा, यह कोई नहीं जानता था। यहां वह एकसाथ ही फटेहाल और बड़े ठाठ से भी रहता। हमेशा पैदल चलता, फटा-पुराना काला फ़ाककोट पहनता, मगर हमारी रेजिमेंट के सभी अफ़सरों के लिये अपने घर के दरवाज़े खुले रखता। यह सही है कि उसके यहां खाने की मेज़ पर दो या तीन चीज़ें ही होतीं, जिन्हें एक भूतपूर्व सैनिक तैयार करता था, मगर दूसरी ओर शेम्पेन की नदी बहती रहती थी। किसी को यह मालूम नहीं था कि उसकी हैसियत क्या है, उसकी आमदनी कितनी है और कोई भी उससे यह पूछने की जुर्रत नहीं करता था। उसके यहां बहुत-सी किताबें थीं, अधिकतर सेना-सम्बन्धी और उपन्यास। वह ख़ुशी से उन्हें पढ़ने के लिये दूसरों को देता, मगर कभी वापिस न मांगता और खुद भी किसी से ली हुई पुस्तक न लौटाता। पिस्तौल से गोलियां चलाना – यही उसकी सबसे बड़ी दिलचस्पी थी। उसके कमरों की दीवारें गोलियों से छलनी हो गयी थीं और मधुमक्खियों के छत्तों की भांति लगती थीं। वह जिस कच्चे घर में रहता था, उसमें सिर्फ़ बढ़िया पिस्तौलों का बड़ा संग्रह ही विलासिता का द्योतक था। निशानेबाज़ी में तो उसने ऐसा कमाल हासिल कर लिया था कि अगर वह किसी की टोपी पर नाशपाती रखकर उसे बेधने की इच्छा प्रकट करता, तो हमारी रेजिमेंट का कोई भी अफ़सर किसी प्रकार की दुविधा के बिना उसके सामने अपना सिर पेश कर देता। हमारे बीच बहुधा द्वन्द्व-युद्ध की चर्चा चलती, किन्तु सीिल्वयो (हम उसे यही नाम देंगे) उसमें कभी दिलचस्पी ज़ाहिर न करता। यह पूछने पर कि उसे कभी द्वन्द्व-युद्ध करना पड़ा या नहीं, वह रुखाई से हामी भरता, मगर कभी भी उसकी तफ़सीलों में न जाता। उसके चेहरे के भाव से यह स्पष्ट हो जाता कि ऐसे सवाल उसे नापसन्द हैं। हम ऐसा मानने लगे थे कि कोई क़िस्मत का मारा उसकी निशाने-

बाज़ी के भयानक कमाल का शिकार हुआ है और यही चीज़ उसकी आत्मा को कचोटती रहती है। उसमें कायरता जैसी कोई बात हो, इसकी तो हम कल्पना तक नहीं कर सकते थे। कुछ लोगों की शक्ल-सूरत ही ऐसे सन्देह को पास नहीं फटकने देती। किन्तु तभी एक अप्रत्याशित घटना ने हम सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

एक दिन हमारे कोई दस अफ़सर सील्वियो के यहां भोजन कर रहे थे। सदा की भांति पिलाई हो रही थी, ख़ूब जमकर शराब पी जा रही थी। भोजन के बाद हम अपने मेज़बान से आग्रह करने लगे कि वह हमारे साथ ताश खेले और ख़ज़ांची बन जाये। वह बहुत देर तक इन्कार करता रहा, क्योंकि लगभग कभी ताश नहीं खेलता था। आख़िर उसने ताश लाने को कहा, दस-दस रूबल के पचासेक सिक्के मेज़ पर डाल दिये और पत्ते बांटने लगा। हम उसे घेर कर बैठ गये और खेल शुरू हो गया। खेल के वक़्त बिल्कुल चुप रहना – सील्वियो की यह आदत थी। वह न तो किसी से बहस करता था और न किसी बात की सफ़ाई देता था। अगर दांव लगानेवाला कोई ग़लती कर देता, तो वह या तो बक़ाया रक़म तुरन्त अदा कर देता या उसे लिख लेता। हम यह जानते थे और उसे अपनी मनमर्ज़ी के मुताबिक़ ख़ज़ांची का काम पूरा करने देते थे। किंतु हमारे बीच एक ऐसा अफ़सर भी था जो कुछ ही समय पहले बदली होकर यहां आया था। उसने खेलते हुए बेख़्याली से एक प्वाइंट बढ़ा दिया। सील्वियो ने खड़िया ली और अपने ढंग से हिसाब को ठीक कर दिया। अफ़सर यह मानते हुए कि सील्वियो ने कुछ हेराफेरी की है, उससे उलझने लगा। सील्वियो चुपचाप पत्ते बांटता रहा। अफ़सर के सब्र का प्याला छलक गया और उसने ब्रश लेकर वे आंकड़े मिटा दिये जिन्हें वह व्यर्थ समझता था। सील्वियो ने खड़िया लेकर उसे फिर से लिख दिया। शराब, खेल और साथियों की हंसी से बौखलाये हुए अफ़सर ने मेज़ से तांबे का शमादान उठाया और सील्वियो पर दे मारा। सील्वियो किसी तरह से एक ओर को हटकर चोट से बच गया। हम सभी परेशान हो उठे। सील्वियो उठकर खड़ा हो गया, ग़ुस्से से उसके चेहरे का रंग उड़ गया था और उसकी आंखों से लपटें-सी निकल रही थीं। उसने अफ़सर से कहा, "महानुभाव, अब यहां से चले जाइये और इस बात

के लिये भगवान को धन्यवाद दीजिये कि यह घटना मेरे घर में घटी है।"

इस क़िस्से का क्या नतीजा होगा, हमें इसके बारे में कोई सन्देह नहीं था और हम यह जानते थे कि हमारे इस नये साथी की मौत पत्थर की लकीर है। अफ़सर यह कहकर बाहर चला गया कि ख़ज़ांची महोदय, जब और जैसे भी चाहें, अपने इस अपमान का बदला ले सकते हैं। खेल कुछ देर तक और चलता रहा, किन्तु यह अनुभव करते हुए कि हमारे मेज़बान का मन अब खेल में नहीं लग रहा, हमने एक-एक करके उनसे विदा ली और शीघ्र ही रिक्त होनेवाले स्थान की चर्चा करते हुए अपने-अपने क्वार्टरों की ओर चले गये।

अगले दिन हम घुड़सवारी के मैदान में यह पूछ-ताछ कर ही रहे थे कि क़िस्मत का मारा लेफ़्टिनेण्ट ज़िन्दा है या नहीं कि तभी वह खुद सामने आ गया। हमने उससे भी यही पूछा कि उसके साथ क्या बीतनेवाली है। उसने उत्तर दिया कि सील्वियो की ओर से उसे कोई सूचना नहीं मिली है। हमें इससे बड़ी हैरानी हुई। हम सील्वियो के यहां गये, उसे अहाते में पाया और देखा कि वह फाटक पर चिपकाये हुए इक्के पर एक के बाद एक गोली दागता जा रहा है। वह हर दिन की तरह हम से मिला और पिछले दिन की घटना के बारे में उसने एक भी शब्द मुंह से नहीं निकाला। तीन दिन बीत गये और लेफ़्टीनेण्ट अभी भी ज़िन्दा था। हम हैरान होते हुए एक-दूसरे से पूछते – क्या सील्वियो उसे द्वन्द्व-युद्ध के लिये चुनौती नहीं देगा? किन्तु उसने ऐसा नहीं किया। अफ़सर के मामूली-सी माफ़ी मांग लेने पर ही वह सन्तुष्ट हो गया और उसने उससे सुलह कर ली।

युवाजन की दृष्टि में यह सील्वियो के सम्मान को बड़ा धक्का लगानेवाली बात थी। जवान लोग कायरता को सबसे कम क्षमा करते हैं, वीरता को सबसे बड़ा गुण मानते हैं और सभी तरह की कमज़ोरियों-त्रुटियों को इसके लिये माफ़ कर देते हैं। किन्तु धीरे-धीरे यह भूली-बिसरी बात हो गयी और सील्वियो ने हमारे बीच फिर से पहले जैसी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली।

एक मैं ही ऐसा था जो उसके निकट नहीं हो पाया। स्वभाव से ही रोमानी कल्पना का धनी होने के कारण मैं औरों की तुलना में इस व्यक्ति के प्रति, जो किसी रहस्यमय उपन्यास का नायक प्रतीत

होता था, कहीं अधिक लगाव रखता था। वह भी मुझे चाहता था। कम से कम वह मेरे साथ अपने सामान्य जले-कटे अन्दाज़ में नहीं, बल्कि ख़ुशमिज़ाजी और असाधारण मधुरता से विभिन्न विषयों की चर्चा करता था। किन्तु उस बुरी शाम के बाद यह विचार किसी प्रकार भी मेरे दिमाग़ से नहीं निकलता था कि उसका अपमान हुआ था, कि इस धब्बे को धोने के लिये उसने कुछ नहीं किया था और यह विचार पहले की भांति मेरे उसके साथ घुलने-मिलने में बाधा डालता था। उससे नज़र मिलाते हुए मुझे झेंप महसूस होती थी। सील्वियो अत्यधिक बुद्धिमान और अनुभवी व्यक्ति था और ऐसा नहीं हो सकता था कि इस बात की ओर उसका ध्यान न जाता और वह इसका कारण न समझ पाता। मुझे लगा कि इससे उसके मन को दुख होता है। कम से कम एक-दो बार मैंने यह तो देखा ही कि वह मुझसे बात करके अपना मन हल्का करना चाहता है। किन्तु मैंने ऐसी सम्भावना से बचने का यत्न किया और तब सील्वियो ने भी ऐसी कोशिश करना छोड़ दिया। तब से मैं केवल अपने साथियों की उपस्थिति में ही उससे मिलता-जुलता और हमारे बीच पहले की भांति खुलकर बातचीत न होती।

राजधानी के जीवन की हड़बड़ी के आदी लोग कभी उन अनेक अनुभूतियों की उत्तेजना से परिचित नहीं हो सकते, जिन्हें गांवों या बस्ती-कस्बों के लोग जानते हैं। उदाहरण के लिये डाक के दिन की प्रतीक्षा को ही लिया जा सकता है। मंगल और शुक्रवार को हमारी रेजिमेंट के दफ़्तर में अफ़सरों की भीड़ लगी रहती थी–कोई पैसों की राह देखता, कोई पत्रों की, और कोई अख़बारों की। बंडलों-पैकेटों को आम तौर पर वहीं खोला जाता, एक-दूसरे को ख़बरें सुनाई जातीं और इस तरह दफ़्तर में बड़ी रौनक़ रहती। सील्वियो के पत्र भी हमारी रेजिमेंट के पते पर आते और वह भी सामान्यतः यहीं उपस्थित रहता। एक दिन उसके नाम एक पैकेट आया और उसने बड़ी बेसब्री से उसे खोला। ख़त पर उसने जल्दी-जल्दी नज़र डाली और उसकी आंखें चमक उठीं। अपने-अपने पत्र पढ़ने में व्यस्त अफ़सरों ने उसकी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया। "महानुभावो," सील्वियो ने उन्हें सम्बोधित किया, "परिस्थितियां ऐसी मांग करती हैं कि मैं

तत्काल यहां से चल दूं। इसलिये मैं आज रात को ही रवाना हो जाऊंगा। आशा करता हूं कि आज शाम को आख़िरी बार मेरे साथ भोजन करने का अनुरोध आप अस्वीकार नहीं करेंगे। आपकी भी प्रतीक्षा रहेगी मुझे," उसने मुझसे कहा, "अवश्य ही आइयेगा।" इतना कहकर वह जल्दी से बाहर चला गया और हम लोग सीत्वियो के यहां मिलने की बात तय करके अपने-अपने रास्ते चले गये।

मैं नियत समय पर सीत्वियो के यहां पहुंचा और रेजिमेंट के लगभग सभी अफ़सरों को वहां पाया। उसका सारा सामान बंधा हुआ था और गोलियों से छलनी हुई नंगी दीवारों के सिवा वहां कुछ भी नज़र नहीं आ रहा था। हम लोग खाने की मेज़ के गिर्द बैठ गये, मेज़बान बड़े रंग में था और जल्द ही हम सब भी उसके रंग में बह गये। शेम्पेन की बोतलें फटाके के साथ लगातार खुलती जाती थीं, सूं-सूं करती और फेन उगलती शेम्पेन गिलासों में डाली जाती तथा हम जानेवाले के लिये ख़ूब बढ़-चढ़कर शुभ-यात्रा और सभी तरह की सफलताओं की कामनाएं करते। शाम को काफ़ी देर से हम मेज़ पर से उठे। सभी लोग अपनी फ़ौजी टोपियां पहन-पहनकर उससे विदा लेने और जाने लगे। जब मैं चलने को तैयार हुआ, तो उसने मेरा हाथ पकड़कर मुझे रोक लिया और धीरे-से कहा, "मुझे आपसे कुछ बात करनी है।" मैं रुक गया।

मेहमान चले गये, हम दोनों ही रह गये, एक-दूसरे के सामने बैठ गये और अपने-अपने पाइप से धुआं उड़ाने लगे। सीत्वियो विचारों में डूबा हुआ था और कुछ ही देर पहले की ख़ुशी और मस्ती का चिह्न तक भी उसके चेहरे पर नहीं रहा था। उदासी में डूबा पीला चेहरा, चमकती आंखें और मुंह से निकलता हुआ घना धुआं, यह सब कुछ उसे शैतान-सा बना रहा था। चन्द क्षण बीत जाने पर सीत्वियो ने ख़ामोशी तोड़ी।

"बहुत मुमकिन है कि हमारी फिर कभी मुलाकात न हो," उसने मुझसे कहा, "जुदा होने से पहले मैं आपसे कुछ कहना चाहता हूं। आपने शायद इस बात की ओर ध्यान दिया होगा कि दूसरे लोग मेरे बारे में क्या सोचते हैं, मैं इस चीज़ की ख़ास परवाह नहीं करता। किन्तु मैं आपको चाहता हूं और आपके दिमाग़ में यदि मेरे बारे में

कोई ग़लत धारणा जड़ जमाये रहेगी, तो मेरे मन पर एक बोझ-सा बना रहेगा।"

वह रुका और पाइप में तम्बाकू भरने लगा। मैं नज़र झुकाये चुपचाप बैठा रहा।

"आपको यह अजीब-सा लगा होगा," उसने अपनी बात आगे बढ़ाई, "कि मैंने उस झक्की शराबी र... से बदला लेकर अपना जी ठण्डा करने की मांग क्यों नहीं की। आपको मानना पड़ेगा कि पहले गोली चलाने का हक़ मेरा था और इसलिये उसकी जान मेरी मुट्ठी में बन्द थी, जबकि मेरी जान के लिये लगभग कोई ख़तरा नहीं था। अपने ऐसे संयत व्यवहार को मैं अपनी उदारता भी कह सकता था, मगर मैं झूठ नहीं बोलना चाहता। अगर मैं अपनी ज़िन्दगी को बिल्कुल ख़तरे में न डाले बिना उस र... को सज़ा दे सकता, तो मैंने किसी भी हालत में उसे माफ़ न किया होता।"

मैं बड़े आश्चर्य से सील्वियो को देख रहा था। उसकी ऐसी आत्म-स्वीकृति से मैं स्तम्भित रह गया था। सील्वियो कहता गया –

"बिल्कुल यही बात है। मुझे अपनी जान को ख़तरे में डालने का कोई अधिकार नहीं है। छः साल पहले किसी ने मेरे मुंह पर तमाचा मारा था। और मेरा वह शत्रु अभी तक जीवित है।"

मेरी उत्सुकता की अब कोई सीमा नहीं थी। "आपने उससे द्वन्द्व-युद्ध नहीं किया?" मैंने पूछा, "शायद किन्हीं परिस्थितियों के कारण आपका उससे आमना-सामना नहीं हो सका?"

"मैंने उससे द्वन्द्व-युद्ध किया था," सील्वियो ने जवाब दिया, "और हमारे द्वन्द्व-युद्ध की निशानी भी मेरे पास है।"

सील्वियो उठा और उसने गत्ते के डिब्बे में से सुनहरे गुच्छे और फ़ीतेवाली लाल टोपी निकाली (वैसी ही जिसे फ़्रांसीसी bonnet de police* कहते हैं), उसे सिर पर पहन लिया। वह माथे से तनिक ऊपर गोली से छिदी हुई थी।

"यह तो आपको मालूम ही है," उसने अपनी बात जारी रखी, "कि मैं हुस्सारों की रेजिमेंट न... में काम करता रहा हूं। मेरे स्वभाव

---

* पुलिस की टोपी (फ़्रांसीसी)।

से भी आप परिचित हैं – सबसे आगे रहना मेरी आदत है और चढ़ती जवानी के दिनों में तो यह मेरे लिये जनून ही था। हमारे ज़माने में हुल्लड़बाज़ी का फ़ैशन था और मैं इस काम में सेना में सब का गुरु था। कौन ज़्यादा शराब पी सकता है – इस बात की हम डींग हांका करते थे और एक बार तो मैंने विख्यात बुर्त्सोव से भी, जिसे कवि देनीस दवीदोव* ने अपनी रचनाओं में अमर कर दिया है, बाज़ी मार ली थी। हमारी रेजिमेंट में द्वन्द्व-युद्ध तो हर दिन ही होते थे और मैं उन सब में या तो साक्षी होता या ख़ुद हिस्सा लेता। साथी तो मुझे पूजते थे और निरन्तर बदलते रहनेवाले रेजिमेंट-कमांडरों के लिये मैं हमेशा सिर पर बनी रहनेवाली मुसीबत था।

"मैं बड़े चैन (या बेचैनी) से अपनी ख्याति का मज़ा ले रहा था कि तभी एक धनी और जाने-माने परिवार (मैं उसका कुलनाम नहीं बताना चाहता हूं) का नौजवान अफ़सर हमारी रेजिमेंट में आया। अपने जीवन में कभी ऐसा तकदीर का सिकन्दर और इतना होनहार आदमी मैंने नहीं देखा! ज़रा कल्पना कीजिये – जवानी की मस्ती, समझ-बूझ, रूप का जादू, ख़ुशी से उमड़ता दिल, ख़तरे से आंख मिलानेवाली दिलेरी, गूंजता हुआ कुलनाम, बेहिसाब और कभी न ख़त्म होनेवाला पैसा – आप स्वयं ही सोच सकते हैं कि कैसा असर डाला होगा उसने हम सब पर। मेरा सिंहासन डोल उठा। मेरी ख्याति से मेरी ओर खिंचकर पहले तो उसने मेरे साथ दोस्ती करनी चाही, किन्तु मैंने उसे सीधा मुंह न दिया। उसने किसी प्रकार के अफ़सोस के बिना मुझसे किनारा कर लिया। मैं उससे नफ़रत करता था। रेजिमेंट और औरतों के बीच उसकी बढ़ती प्रतिष्ठा से मैं बिल्कुल जल-भुन गया। मैं उससे झगड़ा मोल लेने के मौक़े ढूंढ़ने लगा। मैं

---

* देनीस दवीदोव – कवि और सैनिक विषयों के लेखक तथा पुश्किन के मित्र थे। १८१२ में दवीदोव ने किसान छापामारों के साथ मिलकर एक छापामार टुकड़ी का नेतृत्व किया और आक्रमणकारी फ़्रांसीसी सेना के विरुद्ध लड़ाई लड़ी। बुर्त्सोव ने भी १८१२ के देशभक्तिपूर्ण युद्ध में भाग लिया था और दवीदोव की कविताओं में उसका अक्सर उल्लेख मिलता है। – सं०

2*

उस पर कोई फबती कसता, तो वह भी वैसा ही करता और मुझे उसकी फबती हमेशा अपने से ज़्यादा तीखी और नयी प्रतीत होती और मनोरंजक तो वे निश्चय ही मुझसे अधिक होतीं। वह मज़ाक करता और मैं ज़हर उगलता। आख़िर एक पोलैंडी ज़मींदार के घर दावत के समय उसे सभी नारियों, और विशेषकर गृह-स्वामिनी के भी गले का हार बना देखकर, जिसके साथ मेरा अपना भी प्रेम-नाटक चल रहा था, मैंने उसके कान में कोई भद्दी-सी बात कह दी। उसने ग़ुस्से में आकर मेरे मुंह पर तमाचा जड़ दिया। हमने म्यान से तलवारें खींच लीं, महिलायें बेहोश हो गयीं और हम दोनों को ज़बर्दस्ती अलग कर दिया गया। हमने उसी रात को द्वन्द्व-युद्ध के लिये एक-दूसरे को ललकारा।

"पौ फटनेवाली थी। मैं तीन साक्षियों को साथ लिये हुए नियत स्थान पर खड़ा था। ऐसी बेसब्री से मैं अपने प्रतिद्वन्द्वी की राह देख रहा था कि बयान से बाहर। वसन्त के दिनों का सूरज निकल आया था और कुछ-कुछ गर्मी भी हो गयी थी। मैंने उसे दूर से आते देखा। वह पैदल आ रहा था, अपनी फ़ौजी कमीज़ को तलवार की नोक पर टांगे था और सिर्फ़ एक गवाह उसके साथ था। हम उसकी ओर बढ़े। वह चेरियों से भरी टोपी हाथ में लिये हुए हमारे निकट आया। गवाहों ने हमें बारह क़दमों की दूरी पर एक-दूसरे के सामने खड़ा कर दिया। मुझे पहले गोली चलानी थी, किन्तु मैं ग़ुस्से से ऐसे आग-बबूला हो रहा था कि गोली चलाते वक़्त मेरा हाथ नहीं डोलेगा, मुझे इसका विश्वास नहीं था। इसलिये अपने को शान्त करने के ख़्याल से मैंने उसे पहले गोली चलाने का अधिकार देना चाहा। किन्तु मेरा प्रतिद्वन्द्वी इसके लिये राज़ी नहीं हुआ। चुनांचे सिक्का उछालकर बारी तय की गयी। जन्म से ही तकदीर के उस सिकन्दर को पहले गोली चलाने का हक़ मिला। उसने गोली चलाई और वह मेरी टोपी को छेदती हुई निकल गयी। अब मेरी बारी थी। आख़िर तो उसकी ज़िन्दगी पूरी तरह मेरी मुट्ठी में थी। मैंने यह जानने की कोशिश करते हुए बहुत ग़ौर से उसको देखा कि उसके चेहरे पर घबराहट का कोई निशान भी है या नहीं... वह पिस्तौल के निशाने के सामने खड़ा था, टोपी में से चुन-चुनकर पकी हुई चेरियां खा रहा था और गुठलियां थूकता जाता था, जो मुझ तक पहुंच रही थीं। उसकी ऐसी लापरवाही से

मैं बौखला उठा। मैंने सोचा कि ऐसे आदमी की जान लेने से भला क्या फ़ायदा जो उसकी ज़रा भी परवाह नहीं करता? एक क्रूर विचार मेरे मस्तिष्क में कौंध गया। मैंने पिस्तौल नीचे कर ली। 'मुझे लगता है कि इस समय आपको मौत से कोई मतलब नहीं,' मैंने उससे कहा, 'आप अपना नाश्ता करने में मस्त हैं। मैं आपके इस मज़े में ख़लल नहीं डालना चाहता।'—'आपके ऐसा करने से ज़रा भी ख़लल नहीं पड़ेगा,' उसने मेरी बात काटी, 'गोली चलाइये। वैसे, आपकी मर्ज़ी। मुझ पर गोली चलाने का आपका यह हक़ हमेशा बना रहेगा। आप जब चाहेंगे, मैं आपके सामने हाज़िर हो जाऊंगा।' मैंने साक्षियों से कहा कि इस समय गोली नहीं चलाना चाहता और द्वन्द्व-युद्ध यहीं ख़त्म हो गया।

"मैं सेना से मुक्त होकर इस छोटी-सी जगह पर आ बसा। तब से एक दिन भी ऐसा नहीं बीता कि उससे बदला लेने का ख़्याल मेरे दिमाग़ में न आया हो। अब वह घड़ी आ गई है..."

इतना कहकर सील्वियो ने अपनी जेब से उसी सुबह को उसे प्राप्त हुआ एक पत्र निकाला और मुझे पढ़ने को दिया। मास्को से किसी ने (सम्भवतः उसके वकील ने) उसे सूचित किया था कि "अमुक व्यक्ति" शीघ्र ही एक सुन्दर युवती से विवाह करनेवाला है।

"आपने अनुमान लगा लिया होगा," सील्वियो ने कहा, "कि 'अमुक व्यक्ति' कौन है। मैं मास्को जा रहा हूं। देखेंगे कि शादी से पहले भी वह उसी तरह मौत का सामना करेगा या नहीं, जैसे कभी चेरियां खाते हुए उसने किया था।"

इन शब्दों के साथ ही सील्वियो उठकर खड़ा हो गया, उसने अपनी टोपी फ़र्श पर फेंक दी और पिंजरे में बन्द शेर की तरह कमरे में इधर-उधर आने-जाने लगा। मैं बुत बना-सा उसकी बातें सुनता रहा था—अजीब और एक-दूसरी के प्रतिकूल भावनाएं मेरे मन को विह्वल कर रही थीं।

नौकर ने कमरे में आकर बताया कि घोड़े जुत गये हैं। सील्वियो ने बहुत स्नेहपूर्वक मुझसे हाथ मिलाया और हमने एक-दूसरे को चूमा। वह घोड़ा-गाड़ी में जा बैठा जिसमें दो सूटकेस रखे हुए थे—एक में पिस्तौलें थीं और दूसरे में उसका निजी सामान। हमने एक बार फिर एक-दूसरे से विदा ली और घोड़े सरपट दौड़ने लगे।

(२)

कई साल बीत गये और घरेलू परिस्थितियों से मजबूर होकर मैं न... ज़िले के एक ग़रीब गांव में बस गया। जागीर की देख-भाल करता, किन्तु पहले की मस्त और हंगामों से भरी हुई अपनी ज़िन्दगी को याद करके दबी-घुटी टीस अनुभव किये बिना न रह पाता। निपट एकाकीपन में पतझर और जाड़े की शामें बिताने का आदी हो पाना मेरे लिये सबसे ज़्यादा मुश्किल था। दोपहर के खाने तक तो मैं किसी तरह वक़्त बिता लेता, मुखिया से बातें करता, काम-काज से घोड़ा-गाड़ी में इधर-उधर आता-जाता, नये धन्धों को देखने के लिये चक्कर लगाता, किन्तु जैसे ही झुटपुटा होने लगता, मेरी समझ में यह न आता कि मैं क्या करूं। अलमारियों के नीचे और सामान के कमरे में मुझे जो थोड़ी-सी किताबें मिली थीं, वे तो बार-बार पढ़ने से मुझे ज़बानी याद हो गयी थीं। भण्डारिन किरीलोव्ना को जितने भी क़िस्से-कहानियां याद थे, उन्हें वह दसियों बार सुना चुकी थी और देहाती औरतों के गीतों-गानों से मैं गहरी उदासी में डूब जाता था। मैंने शराब का सहारा लेना चाहा, लेकिन इससे मेरे सिर में दर्द होने लगता था। इसके अलावा मुझे यह भी मानना चाहिये कि ऊब के कारण कहीं शराबी न बन जाऊं, मैं इस चीज़ से भी डरता था। मेरा मतलब ऐसे "गये-बीते" शराबियों से था, जिनकी बहुत-सी मिसालें हमारे इलाक़े में मौजूद थीं। इसी तरह के दो-तीन "गये-बीते" पियक्कड़ों के अलावा मेरे कोई अन्य पड़ोसी थे नहीं और उनकी बातचीत का ज़्यादा हिस्सा हिचकियां लेने और आहें भरने में ही गुज़रता था। इनकी संगत से तो अकेले रहना ही कहीं बेहतर था।

मेरे यहां से चार वेर्स्ता यानी लगभग छः किलोमीटर की दूरी पर काउंटेस ब... की सम्पन्न जागीर थी। किन्तु वहां केवल कारिन्दा ही रहता था और काउंटेस तो अपनी शादी के पहले साल सिर्फ़ एक बार ही जागीर पर आई थी और सो भी एक महीने से अधिक वहां नहीं रही थी। ऐसा होते हुए भी मेरे एकाकीपन के दूसरे वसन्त में यह अफ़वाह फैली कि काउंटेस अपने पति के साथ पूरी गर्मी के लिये गांव आनेवाली है। वास्तव में ही जून महीने के शुरू में वे गांव आ गये।

धनी पड़ोसी का आगमन गांववासियों के लिये एक युगान्तरकारी घटना होता है। ज़मींदार और उनके घर-बार के लोग ऐसे पड़ोसी के आने के दो महीने पहले से और जाने के तीन साल बाद तक इसकी चर्चा करते रहते हैं। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, तो मैं खुलकर मानता हूं कि जवान और ख़ूबसूरत पड़ोसिन के आने की ख़बर ने मेरे दिल में बड़ी हलचल पैदा कर दी। मैं बड़ी बेचैनी से उसे देख पाने का इन्तज़ार करने लगा और इसलिये उसके आने के पहले ही इतवार को दोपहर का खाना खाने के बाद गांव ... की ओर रवाना हो गया ताकि निकटतम पड़ोसी और विनम्र सेवक के रूप में अपने को उनके सामने पेश कर सकूं।

नौकर ने मुझे काउंट के अध्ययन-कक्ष में ले जाकर बिठा दिया और स्वयं मेरे बारे में सूचना देने के लिये अन्दर चला गया। बड़ा-सा कमरा खूब बढ़िया ढंग से सजा हुआ था। दीवारों के क़रीब किताबों से भरी अलमारियां रखी थीं, हर अलमारी पर कांसे की मूर्त्ति सजी थी, संगमरमर के आतिशदान के ऊपर ख़ासा बड़ा दर्पण टंगा था, हरे रंग की बनात से मढ़े हुए फ़र्श पर क़ालीन बिछे थे। अपने ग़रीबी के वातावरण में रहते हुए मैं इस तरह के ठाठ-बाट का आदी नहीं रहा था, बहुत समय से मैंने परायी दौलत का ऐसा रंग भी नहीं देखा था, इसलिये मैं कुछ सहम-सा गया और ऐसे धड़कते दिल से काउंट की राह देखने लगा, जैसे किसी छोटे-से नगर से आनेवाला प्रार्थी मन्त्री के बाहर निकलने का इन्तज़ार करता है। दरवाज़ा खुला और कोई बत्तीस साल का सुन्दर पुरुष कमरे में दाख़िल हुआ। काउंट अपनत्व और मैत्री का भाव लिये मेरे निकट आया। मैंने अपनी घबराहट पर क़ाबू पाने की कोशिश की और अपना परिचय देना चाहा, किन्तु इसी बीच उसने अपना परिचय दे दिया। हम दोनों बैठ गये। उसके बातचीत के सहज और स्नेहपूर्ण अन्दाज़ से एकाकी जीवन बिताने के कारण मुझमें पैदा हुई झेंप शीघ्र ही दूर हो गयी और मैं अपनी सामान्य-स्वाभाविक स्थिति में आने लगा कि काउंटेस ने कमरे में प्रवेश किया और पहले से भी कहीं अधिक घबराहट ने मुझे दबोच लिया। वह तो सचमुच ही बड़ी सुन्दर थी। काउंट ने मेरा परिचय दिया। मैंने अपने को बेतकल्लुफ़ ज़ाहिर करना चाहा, लेकिन मैं बेतकल्लुफ़ी का जितना

अधिक ढोंग करता था, उतना ही ज़्यादा अटपटापन महसूस करता था। मेरे साथ किसी प्रकार की औपचारिकता न बरतते और अच्छे पड़ोसी का सा व्यवहार करते हुए उन्होंने मुझे सम्भलने और नये परिचय का अभ्यस्त होने का समय देने के लिये आपस में बातचीत शुरू कर दी। इसी बीच मैं किताबों और तस्वीरों पर नज़र दौड़ाने लगा। तस्वीरों की मुझे कोई ख़ास जानकारी हो, ऐसी बात नहीं है, लेकिन एक तस्वीर ने मेरा ध्यान अपनी ओर खींच लिया। उसमें स्विटज़रलैंड का कोई दृश्य अंकित था, पर मुझे चित्र ने नहीं, बल्कि इस बात ने आश्‍चर्यचकित किया कि वह एक के ऊपर एक दो गोलियों से छिदा हुआ था।

"यह हुआ न बढ़िया निशाना," मैंने काउंट को सम्बोधित करते हुए कहा।

"हां, बहुत बढ़िया निशाना है," उसने जवाब दिया। "आप भी अच्छे निशानेबाज़ हैं क्या?" काउंट ने पूछा।

"हां, कुछ बुरा नहीं," मैंने इस बात से ख़ुश होते हुए कि बात-चीत का सिलसिला आख़िर तो मेरे मनपसन्द विषय की ओर मुड़ गया है, उत्तर दिया। तीस क़दम की दूरी से तो ताश के पत्ते के बिन्दु को छेद डालूंगा। ज़ाहिर है कि ऐसी पिस्तौल से जिस पर मेरा हाथ सधा हुआ हो।"

"सच?" काउंटेस ने बड़ी गम्भीरता से जानना चाहा और फिर पति से पूछा, "मेरे प्यारे, क्या तुम भी तीस क़दम की दूरी से ऐसा निशाना लगा सकते हो?"

"कभी आज़माकर देखेंगे," काउंट ने जवाब दिया। "अपने ज़माने में मैं भी कुछ बुरा निशानेबाज़ नहीं था, लेकिन अब तो पिछले चार साल से कभी पिस्तौल हाथ में नहीं लीं।"

"ओह, तब तो मैं शर्त लगाकर यह कह सकता हूं कि, हुज़ूर, बीस क़दम की दूरी से भी ताश के पत्ते को नहीं छेद सकेंगे – पिस्तौल तो इस बात की मांग करती है कि हर दिन उससे अभ्यास किया जाये। अपने तजरबे से मैं यह जानता हूं। अपनी रेजिमेंट में मुझे एक बहुत अच्छा निशानेबाज़ माना जाता था। एक बार ऐसा हुआ कि पूरे एक महीने तक मैं पिस्तौल हाथ में नहीं ले पाया – मेरी पिस्तौलें मरम्मत

के लिये गयी हुई थीं। जानते हैं, हुज़ूर, कि इसका क्या नतीजा निकला? इसके बाद जब मैंने पहली बार निशानेबाज़ी शुरू की, तो पच्चीस क़दम की दूरी से ही मैं लगातार चार बार बोतल का निशाना भी न साध सका। बड़ी फड़कती हुई बात कहने और चुटकियां लेनेवाला हमारा कप्तान वहां मौजूद था। वह बोला, 'मेरे भाई, बात साफ़ है। तुम्हें बोतल से इतना लगाव है कि उस पर गोली नहीं चला पाते।' नहीं, हुज़ूर, निशानेबाज़ी का अभ्यास तो लगातार करते रहना चाहिये, नहीं तो मामला चौपट हो जायेगा। अपनी ज़िन्दगी में जिस सबसे अच्छे निशानेबाज़ से मेरा वास्ता पड़ा, वह दोपहर के खाने के पहले कम से कम तीन गोलियां हर रोज़ चलाता था। उसके लिये यह वैसा ही नियम था, जैसे भोजन के पहले वोदका का जाम।"

काउंट और काउंटेस इस बात से ख़ुश थे कि मैं झेंप-मुक्त होकर बातचीत करने लगा था।

"किस तरह की निशानेबाज़ी करता था वह?"

"किस तरह की? कभी-कभी ऐसा होता था, हुज़ूर, कि वह किसी मक्खी को दीवार पर बैठे देखता – आप हंस रही हैं काउंटेस? क़सम खाकर कहता हूं कि यह बिल्कुल सच बात है। वह मक्खी को देखता और नौकर को पुकारता, 'कूज़्का, मेरी पिस्तौल लाओ!' कूज़्का भरी हुई पिस्तौल लाता। वह गोली दागता और मक्खी का दीवार पर ही भुरकस हो जाता।"

"यह तो कमाल की बात है!" काउंट ने कहा, "उसका नाम क्या था?"

"सील्वियो, हुज़ूर।"

"सील्वियो!" अपनी कुर्सी से उछलकर खड़ा होता हुआ काउंट चिल्ला उठा, "आप सील्वियो को जानते थे?"

"जानता कैसे नहीं था, हुज़ूर। हम तो अच्छे दोस्त थे। हमारी रेजिमेंट में उसे अपना साथी, बन्धु ही माना जाता था। अब पिछले पांच साल से मुझे उसके बारे में कोई ख़बर नहीं मिली। तो हुज़ूर, मतलब यह हुआ कि आप भी उसे जानते थे?"

"जानता था, ख़ूब अच्छी तरह से जानता था। उसने आपको कभी यह नहीं बताया था... लेकिन नहीं, शायद ही उसने ऐसा

किया हो – उसने आपको एक बहुत ही अजीब क़िस्सा नहीं सुनाया था ?"

"बॉल-नृत्य के वक़्त किसी छैले ने उसके मुंह पर तमाचा जड़ दिया था, यही तो नहीं हुज़ूर ?"

"उसने आपको उस छैले का नाम बताया था ?"

"नहीं हुज़ूर, नाम तो नहीं बताया... ओह, हुज़ूर," मामले की तह में छिपी सचाई का अनुमान लगाते हुए मैं कहता गया, "माफ़ी चाहता हूं... मैं नहीं जानता था... कहीं आप ही तो वह नहीं हैं ?.."

"हां, वह मैं ही हूं," काउंट ने बड़ी खिन्नता से उत्तर दिया, "और गोली से छिदी हुई यह तस्वीर हमारी आखिरी मुलाक़ात की निशानी है..."

"ओ, मेरे प्यारे," काउंटेस ने कहा, "भगवान के लिये यह क़िस्सा नहीं सुनाओ। उसे सुनते हुए मेरा दिल कांपने लगता है।"

"नहीं," काउंट ने काउंटेस की बात काटी, "मैं सब कुछ बताऊंगा। इन्हें यह मालूम है कि कैसे मैंने इनके दोस्त की बेइज़्ज़ती की थी। अब इन्हें यह भी मालूम हो जाना चाहिये कि सील्वियो ने किस तरह मुझसे इसका बदला लिया।"

काउंट ने एक आरामकुर्सी मेरी ओर बढ़ा दी और मैंने बड़ी उत्सुकता से यह कहानी सुनी।

"पांच साल पहले मैंने शादी की थी। पहला महीना, the honey-moon, यानी मधुमास मैंने यहां इस गांव में बिताया। मेरे जीवन के मधुरतम क्षण और एक बहुत ही कटु स्मृति इस घर के साथ जुड़ी हुई है।

"एक शाम को हम दोनों एकसाथ घुड़सवारी के लिये निकले। मेरी पत्नी का घोड़ा कुछ अड़ने और बिदकने लगा। यह डर गयी, इसने घोड़े की लगामें मुझे दे दीं और पैदल ही घर को चल दी। मैं अपने घोड़े पर ही आगे-आगे बढ़ चला। अहाते में मुझे एक घोड़ागाड़ी खड़ी दिखाई दी। मुझे बताया गया कि मेरे अध्ययन-कक्ष में एक व्यक्ति बैठा है, जो अपना नाम नहीं बताना चाहता, किन्तु जिसने सिर्फ़ इतना ही कहा है कि उसे मुझसे कुछ काम है। मैं कमरे में गया और वहां अंधेरे में धूल से लथपथ और बढ़ी हुई दाढ़ीवाले एक व्यक्ति को

अपने सामने पाया। वह यहां, आतिशदान के क़रीब खड़ा था। उसके चेहरे-मोहरे को पहचानने की कोशिश करते हुए मैं उसके निकट गया। 'काउंट, तुमने मुझे नहीं पहचाना?' उसने कांपती-सी आवाज़ में पूछा। 'सील्वियो!' मैं कह उठा और स्वीकार करता हूं, मैंने अनुभव किया कि कैसे मेरे रोंगटे खड़े हो गये हैं। 'हां, मैं वही हूं,' उसने जवाब दिया, 'मैं अपना हिसाब चुकाने आया हूं, मुझे अपनी पिस्तौल को गोली से मुक्त करना है। तुम तैयार हो?' उसकी बग़लवाली जेब में पिस्तौल दिखाई दे रही थी। मैंने बारह डग भरे और वहां कोने में जाकर खड़ा हो गया। मैंने उससे अनुरोध किया कि वह झटपट, मेरी पत्नी के लौटने से पहले ही गोली चला दे। किन्तु उसने जल्दी नहीं की, रोशनी लाने के लिये कहा। मोमबत्तियां जला दी गयीं। मैंने दरवाज़े को ताला लगा दिया, किसी के भी भीतर आने की कड़ी मनाही कर दी और फिर उससे गोली चलाने का अनुरोध किया। उसने पिस्तौल निकालकर निशाना साधा... मैं हर क्षण गिन रहा था... अपनी पत्नी के बारे में सोच रहा था... बहुत ही भयानक एक मिनट बीता! सील्वियो ने हाथ नीचे कर लिया। 'बड़े दुख की बात है,' उसने कहा, 'कि पिस्तौल में चेरियों की गुठलियां नहीं भरी हैं... गोली बहुत भारी है। मुझे लग रहा है कि यह द्वन्द्व-युद्ध नहीं है, बल्कि मैं आपकी हत्या कर रहा हूं। निहत्थे पर निशाना साधने की मुझे आदत नहीं। हम फिर से शुरू करते हैं, पर्चियां डाल लेते हैं कि कौन पहले गोली चलायेगा।' मेरा सिर चकरा रहा था... जहां तक मुझे याद है, मैं राज़ी नहीं हुआ... आख़िर हमने एक अन्य पिस्तौल में गोली भरी और दो पर्चियों की गोलियां-सी बनायीं। उसने उन्हें उसी टोपी में डाल दिया जिसे मैंने कभी छेद डाला था। फिर से मुझे ही पहले गोली चलाने का अधिकार मिल गया। 'काउंट, तुम तक़दीर के बड़े सिकन्दर हो,' उसने ऐसी व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के साथ कहा जिसे मैं कभी नहीं भूल पाऊंगा। मेरे लिये यह समझ पाना कठिन है कि उस समय मुझे क्या हो गया था और कैसे मैं यह सब करने को विवश हो गया था... किन्तु मैंने गोली चलाई और वह इस तस्वीर में जा लगी।" (काउंट ने गोलियों से छिदे चित्र की ओर उंगली से इशारा किया। उसका चेहरा तमतमाया हुआ था, काउंटेस के चेहरे का रंग

उसके दुपट्टे से भी अधिक सफ़ेद पड़ गया था और मैं स्तम्भित-सा होकर चीख़े बिना न रह सका।)

"मैंने गोली चलाई," काउंट ने अपनी बात जारी रखी, "और भला हो भगवान का, मेरा निशाना चूक गया। तब सील्वियो... (इस क्षण वह सचमुच बहुत भयानक प्रतीत हो रहा था) सील्वियो मेरी ओर निशाना साधने लगा। अचानक दरवाज़ा खुल गया, माशा भागती हुई भीतर आई और चीख़ मार कर मेरे गले से लिपट गयी। इसके आने से मैं फ़ौरन सम्भल गया। 'मेरी प्यारी,' मैंने पत्नी से कहा, 'क्या तुम देख नहीं रही हो कि हम यों ही मज़ाक़ कर रहे हैं। देखो तो तुम कैसे सहम गयी हो! जाओ, पानी का एक गिलास पीकर वापस आ जाओ। मैं अपने पुराने दोस्त और साथी से तुम्हारा परिचय करवा दूंगा।' माशा को मेरी बात पर विश्वास नहीं हुआ। 'यह बताइये कि मेरे पति सच कह रहे हैं न?' माशा ने रौद्र रूप धारण किये सील्वियो को सम्बोधित करते हुए पूछा, 'क्या यह सच है कि आप दोनों मज़ाक़ कर रहे हैं?'—'यह तो हमेशा मज़ाक़ करते हैं, काउंटेस,' सील्वियो ने माशा को उत्तर दिया। 'एक बार मज़ाक़ में ही इन्होंने मेरे मुंह पर तमाचा मारा था, मज़ाक़ करते हुए ही मेरी इस टोपी को छेद डाला था, मज़ाक़ में ही अभी मुझ पर चलाई गयी गोली का निशाना चूक गया। अब मैं मज़ाक़ करना चाहता हूं...' इतना कहकर उसने मुझ पर निशाना साधना चाहा... पत्नी के सामने ही! माशा उसके क़दमों पर जा गिरी। 'माशा, उठो, कुछ शर्म करो!' मैं पागलों की तरह चिल्ला उठा। 'और आप, महानुभाव, इस बेचारी औरत से खिलवाड़ करना बन्द करेंगे या नहीं? गोली चलायेंगे या नहीं?'—'नहीं चलाऊंगा,' सील्वियो ने जवाब दिया। 'मेरे लिये इतना ही काफ़ी है—मैंने तुम्हें घबराये और सहमे हुए देख लिया, तुम्हें अपने पर गोली चलाने को मजबूर कर दिया, मेरे लिये इतना ही बहुत है। याद रखोगे मुझे। अब तुम जानो और तुम्हारी आत्मा।' इतना कहकर वह बाहर जाने लगा, लेकिन दरवाज़े के पास रुका, उसने उस चित्र की ओर देखा जिसे मैंने छेद डाला था, लगभग निशाना साधे बिना उस पर गोली चलाई और ग़ायब हो गया। मेरी पत्नी बेहोश पड़ी थी, नौकरों-चाकरों को उसे रोकने की हिम्मत

नहीं हुई, वे सब भयभीत-से उसे देखते रहे। बाहर जाकर उसने अपने कोचवान को पुकारा और मेरे सम्भल पाने से पहले ही ग़ायब हो गया।"

काउंट ने इससे आगे कुछ नहीं कहा। इस तरह मुझे उस कहानी के अन्त का पता चला, जिसके आरम्भ ने कभी मेरे मन पर गहरी छाप छोड़ी थी। इसके नायक से मेरी फिर कभी भेंट नहीं हुई। कहते हैं कि अलेक्सान्द्र इप्सिलान्ती* के विद्रोह के समय सील्वियो ने एक फ़ौजी दस्ते की कमान सम्भाली और स्कुल्यानी के निकट हुए युद्ध में खेत रहा।

बर्फ़ीली आंधी

करते हुए हवा से बातें, ऊबड़-खाबड़ धरती पर
रौंद-रौंद हिम-परतों को
घोड़े दौड़े जाते हैं...
नज़र घूमती एक तरफ़ को
गिरजाघर हम पाते हैं।

. . . .

सहसा उठी बर्फ़ की आंधी
ढेरों बर्फ़ गिराती है,
सरसर पंख हिलाता, काला कौवा उड़ता जाता है
उस स्लेज के ऊपर, जो तेज़ी से दौड़ी जाती है।
कांय-कांय में उसकी दुख है,
है संकेत अशुभ कोई
घोड़े इसको अनुभव करते, और तेज़ होते जाते,
दूर अंधेरे को हैं उनकी आंखें मानो चीर रहीं
भय से ऊपर उठे अयालों को हैं वे तो लहराते...

जुकोव्स्की**

---

* अलेक्सान्द्र इप्सिलान्ती – रूसी सेना के एक जनरल, जिन्होंने तुर्क क़ब्ज़ावरों से यूनान की मुक्ति के लिये लड़नेवाले एक गुप्त क्रान्तिकारी संगठन का नेतृत्व किया। तुर्क सेना ने प्रूत नदी के तटवर्ती स्कुल्यानी स्थान पर २९ जून, १८२१ को इस पलटन को कुचल दिया था। – सं०

** प्रसिद्ध रूसी कवि और अनुवादक वसीली जुकोव्स्की (१७८५–१८५२) की 'स्वेत्लाना' कविता से। – सं०

हमें कभी न भूलनेवाले सन् १८११ के अन्त में गव्रीला गव्रीलोविच र... नाम के एक सज्जन व्यक्ति नेनारादोवो गांव की अपनी जागीर पर रहते थे। बड़ी ख़ुशमिज़ाजी और मेहमाननवाज़ी के लिये वे अपने सारे इलाक़े में मशहूर थे। उनके पड़ोसी खाने-पीने और पांच कोपेक की बाज़ी लगाकर उनकी पत्नी के साथ बोस्टन खेलने के लिये लगातार उनके घर आते रहते। कुछ उनकी सुघड़-सुडौल, चम्पई रंग की सत्रह वर्षीया बेटी मारिया गव्रीलोव्ना को एक नज़र देख लेने के लिये भी आते। वह धनी भावी पत्नी थी और बहुतों के दिल उसे अपने या अपने बेटों के लिये पा लेने को ललकते।

मारिया गव्रीलोव्ना फ़्रांसीसी उपन्यासों के रंग में रंगकर बड़ी हुई थी और इसलिये स्वाभाविक था कि जल्द ही मुहब्बत के जाल में फंस गयी। एक मामूली और ग़रीब फ़ौजी अफ़सर को, जो छुट्टी पर अपने गांव आया हुआ था, उसने अपना दिल दे दिया। ज़ाहिर है कि उस नौजवान के दिल में भी प्रेम की वैसी ही आग सुलग रही थी। उसकी प्रेम-पात्री के माता-पिता ने ज्योंही एक-दूसरे के प्रति उनके आपसी झुकाव को देखा, त्योंही बेटी से कह दिया कि वह उसका ध्यान तक दिमाग़ से निकाल दे और अब वे अपने घर आने पर उस नौजवान का अवकाश-प्राप्त छोटे न्यायाधीश से भी बुरी तरह स्वागत करते।

हमारे इन दोनों प्रेमियों के बीच पत्र-व्यवहार चलता और वे हर दिन सनोबरों के झुरमुट या पुराने गिरजे के क़रीब एकान्त में मिलते। वहां वे जीवन के अन्तिम क्षण तक प्रेम करने की क़समें खाते, क़िस्मत का रोना रोते और तरह-तरह की योजनायें बनाते। इसी तरह से एक-दूसरे को चिट्ठियां लिखते और बातचीत करते हुए वे इस नतीजे पर पहुंचे (जो सर्वथा स्वाभाविक था) – अगर हम एक-दूसरे के बिना ज़िन्दा नहीं रह सकते और कठोर माता-पिता की इच्छा हमारे सुखी जीवन के मार्ग में बाधा बनती है, तो क्यों हम इसके बिना ही काम न चला लें? स्पष्ट है कि यह विचार फ़ौजी नौजवान के दिमाग़ में ही आया और मारिया गव्रीलोव्ना की रोमानी कल्पना को भी यह बहुत अच्छा लगा।

जाड़ा आने पर इन दोनों की मुलाक़ातें बन्द हो गयीं और इसलिये पत्र-व्यवहार में अधिक सजीवता आ गयी। व्लादीमिर निकोलायेविच

अपने हर पत्र में उससे अनुरोध करता कि वह उसकी पत्नी बन जाये, चोरी-छिपे उससे शादी कर ले, कुछ समय के लिये वे दोनों छिपे रहें, इसके बाद उसके मां-बाप के क़दमों पर जा गिरें, जिनका दिल आख़िर प्रेमियों की ऐसी सच्ची निष्ठा तथा दुख से पिघल जायेगा और वे अवश्य ही उनसे यह कहेंगे, "बच्चो, आओ, हमारे गले से लग जाओ।"

मारिया गव्रीलोव्ना बहुत समय तक डांवांडोल रही, घर से भाग जाने की बहुत-सी योजनाओं से उसने इन्कार कर दिया। आख़िर वह राज़ी हो गयी। योजना यह बनी कि नियत दिन पर शाम का भोजन न करे और सिर दर्द का बहाना करके अपने कमरे में चली जाये। उसकी नौकरानी को भी षड्यन्त्र में शामिल किया जाये, पिछले दरवाज़े से दोनों बाग़ में चली जायें, जहां उन्हें घोड़ा-गाड़ी तैयार खड़ी मिलेगी और वे दोनों उसमें बैठकर नेनारादोवो गांव से पांच वेर्स्ता* की दूरी पर जाद्रिनो गांव के गिरजे में पहुंच जायें। व्लादीमिर वहीं पर उनका इन्तज़ार करेगा।

नियत दिन की पूर्ववेला में मारिया गव्रीलोव्ना को सारी रात नींद नहीं आई – अपने कपड़ों-लत्तों को बांध कर तैयार करती रही और उसने दो पत्र लिखे। एक तो अपनी भावुक-संवेदनशील सहेली को और दूसरा अपने मां-बाप को। उसने बहुत ही मर्मस्पर्शी शब्दों में उनसे विदा ली, अदम्य प्रेम-प्रवाह के वश में होकर ऐसी हरकत करने के लिये माफ़ी मांगी और अन्त में लिखा कि उसके जीवन का सबसे सुखद क्षण वह होगा, जब उसे अपने प्यारे माता-पिता के पैरों पर गिरने का सौभाग्य प्राप्त होगा। दोनों पत्रों को उसने तूला की वह मुहर लगाकर बन्द किया, जिसपर एक अच्छे आलेख के साथ दो दहकते हुए दिल अंकित थे। इसके बाद वह बिस्तर पर जा गिरी और पौ फटने के समय उसे झपकी आ गयी। किन्तु भयानक सपनों के कारण रह-रहकर उसकी आंख खुल जाती। उसे सपने में दिखाई देता कि जब वह शादी के लिये रवाना होने को स्लेज में जाकर बैठी, उसी क्षण उसके पिता ने उसे रोक लिया, बड़ी तेज़ी और निर्दयता से बर्फ़ पर घसीटते हुए ले गये और ले जाकर अंधेरे, अतल तहख़ाने में

---

* वेर्स्ता – एक किलोमीटर से कुछ अधिक। – अनु०

फेंक दिया... और वह बड़ी तेज़ी से अंधेरे में नीचे ही नीचे धसकती चली गयी तथा उसके दिल की गति मानो बन्द हो गयी। या फिर उसे पीले-ज़र्द चेहरेवाला तथा ख़ून से लथपथ व्लादीमिर घास पर पड़ा नज़र आता। वह दम तोड़ता हुआ हृदय-विदारक स्वर में यह अनुनय-विनय करता सुनाई देता कि उसके साथ जल्दी से शादी कर ले... एक के बाद एक इसी तरह के दूसरे, अटपटे और बेमानी सपने उसके सामने आते रहे। आख़िर वह अन्य दिनों की तुलना में कहीं अधिक पीला मुख और सिर में सचमुच ही दर्द लिये हुए बिस्तर से उठी। माता-पिता से उसकी परेशानी की यह हालत छिपी न रह सकी, प्यार और चिन्ता से उनके लगातार यह पूछने पर कि "माशा, तुम्हें क्या हुआ है? तुम बीमार तो नहीं हो?" उसका दिल टुकड़े-टुकड़े हुआ जाता था। उसने उन्हें शान्त करना चाहा, अपने को ख़ुश ज़ाहिर करने का प्रयास किया, किन्तु सफल न हो सकी। शाम हो गयी। इस ख़्याल से कि वह अपने परिवारवालों के बीच आज आख़िरी दिन बिता रही है, उसका हृदय द्रवित हुआ जाता था। वह मुश्किल से सांस ले पा रही थी और मन ही मन अपने माता-पिता, घर की सभी चीज़ों और पूरे घरेलू वातावरण से विदा ले रही थी।

शाम का भोजन परोसा गया, माशा का दिल ज़ोर से धड़कने लगा। उसने कांपते होंठों से यह कहा कि उसका भोजन करने को मन नहीं है और वह माता-पिता से विदा लेने लगी। उन्होंने बेटी को चूमा और हर दिन की भांति उसे आशीर्वाद दिया। माशा बड़ी मुश्किल से अपने आंसू रोक पायी। अपने कमरे में आकर वह कुर्सी पर ढह पड़ी और फूट-फूटकर रोने लगी। नौकरानी ने उसे शान्त करने और उसमें प्रफुल्लता लाने का प्रयास किया। पूरी तैयारी हो चुकी थी। आध घण्टे बाद माशा को अपने माता-पिता के घर, अपने कमरे और एक युवती के शान्त जीवन से सदा के लिये विदा ले लेनी थी... बाहर ज़ोर की बर्फ़ीली आंधी चल रही थी, हवा चीखती-चिल्लाती थी, पट ज़ोर से हिलते और बजते थे। हर चीज़ मानो आतंक और अशकुन का संकेत कर रही थी। शीघ्र ही घर में सब कुछ शान्त हो गया, सब सो गये। माशा ने शाल लपेटी, गर्म गाउन पहना, हाथ में अपनी मंजूषा ली और पिछले दरवाज़े से बाहर आ गयी। दो पोटलियां उठाये हुए नौकरानी

भी उसके पीछे-पीछे बाहर निकल आई। वे बाग़ में गयीं। बर्फ़ीली आंधी शान्त नहीं हुई थी, तेज़ हवा सामने से थपेड़े मार रही थी मानो युवा अपराधिनी को बरबस रोक रही हो। ये दोनों बड़ी कठिनाई से बाग़ के सिरे तक पहुंचीं। सड़क पर स्लेज घोड़ा-गाड़ी इनकी राह देख रही थी। बुरी तरह से ठिठुरे हुए घोड़े निश्चल नहीं खड़े रह पा रहे थे। बमों के सामने इधर-उधर लपकता हुआ व्लादीमिर का कोचवान उन्हें किसी तरह से क़ाबू में रखने की कोशिश कर रहा था। कोचवान ने मारिया और उसकी नौकरानी को बैठने, पोटलियों तथा मंजूषा को रखने में उनकी मदद की, लगामें सम्भालीं और घोड़े मानो उड़ चले। मारिया को उसके भाग्य और कोचवान तेर्योश्का की होशियारी पर छोड़कर अब हम अपने जवान प्रेमी की ओर मुड़ते हैं।

व्लादीमिर का पूरा दिन घोड़ा-गाड़ी में इधर-उधर दौड़-धूप करते ही बीता। सुबह वह जाद्रिनो के पादरी के पास गया – किसी तरह उसे शादी करवाने के लिये राज़ी किया और इसके बाद आस-पास के ज़मींदारों में गवाहों की खोज करने गया। वह सब से पहले घुड़सवार सेना के सेवानिवृत्त छोटे फ़ौजी अफ़सर, जिसकी उम्र चालीस साल थी, द्राविन के यहां पहुंचा। द्राविन ख़ुशी से गवाह बनने को तैयार हो गया। उसने राय ज़ाहिर की कि ऐसे साहसिक कार्य ने उसके दिल में पुराने वक़्तों और हुस्सारों के हंगामों-शरारतों की याद ताज़ा कर दी है। उसने व्लादीमिर से दोपहर का भोजन करने के लिये रुक जाने का अनुरोध किया और उसे विश्वास दिलाया कि बाक़ी दो गवाहों की समस्या भी हल हो जायेगी। वास्तव में ही भोजन समाप्त होते न होते बड़ी-बड़ी मूंछोंवाला श्मीत नाम का पटवारी, जो एड़दार जूते पहने था, और उसके साथ ज़िले के पुलिस अफ़सर का सोलह वर्षीय बेटा भी यहां आ गये। यह नौजवान कुछ ही समय पहले घुड़सवारों की रेजिमेंट में भर्ती हुआ था। इन दोनों ने न केवल गवाह बनने के व्लादीमिर के प्रस्ताव को स्वीकार किया, बल्कि यह क़सम भी खाई कि उसके लिये अपना जीवन तक न्योछावर कर देंगे। व्लादीमिर ने बड़े जोश से उन्हें गले लगाया और तैयारी करने के लिये घर चला गया।

दिन ढले काफ़ी देर हो चुकी थी। उसने अपने भरोसे के कोचवान तेर्योश्का को तफ़सील से सारी बात समझाकर अपनी तीन घोड़ोंवाली

बर्फ़-गाड़ी में नेनारादोवो भेज दिया और अपने लिये एक घोड़ेवाली छोटी बर्फ़-गाड़ी जोतने को कहा। वह कोचवान के बिना ही जाद्रिनो के लिये, जहां दो घण्टे बाद मारिया गव्रीलोव्ना को भी पहुंचना था, रवाना हो गया। रास्ता उसका जाना-पहचाना था और वहां पहुंचने के लिये उसे केवल बीस मिनट दरकार थे।

किन्तु व्लादीमिर गांव से बाहर खेतों में पहुंचा ही था कि इतने ज़ोर की हवा चली, ऐसी बर्फ़ीली आंधी आई कि उसे कुछ भी नज़र नहीं आता था। आन की आन में रास्ता बर्फ़ से ढक गया। इर्द-गिर्द का सभी कुछ अंधेरे की धुंधली और पीली चादर में खो गया, जिसमें से बर्फ़ के सफ़ेद फाहे-से उड़ते आ रहे थे। धरती और आकाश एकाकार हो गये थे। व्लादीमिर ने अपने को खेत में पाया और उसने फिर से सड़क पर लौटने का व्यर्थ ही प्रयास किया। घोड़ा रास्ते से भटक गया और वह कभी बर्फ़ के ढेर पर चढ़ जाता, कभी किसी गड्ढे में धंस जाता तथा बर्फ़-गाड़ी बार-बार उलट-पलट जाती। व्लादीमिर ने यह कोशिश की कि वह ठीक दिशा को न खो दे। किन्तु उसे लगा कि आध घण्टे से अधिक समय बीत चुका है और वह जाद्रिनो गांव के बाहर वृक्ष-झुरमुट तक नहीं पहुंच पाया है। लगभग दस मिनट और बीत गये तथा वृक्ष-झुरमुट की अभी झलक भी नहीं मिली थी। व्लादीमिर गहरे गड्ढों से कटे-फटे मैदान में से बर्फ़-गाड़ी बढ़ा रहा था। बर्फ़ का तूफ़ान शान्त नहीं हो रहा था, आसमान साफ़ होने का नाम नहीं ले रहा था। घोड़ा थकने लगा और इस चीज़ के बावजूद कि व्लादीमिर हर क्षण कमर तक बर्फ़ में धंस जाता था, पसीने से तर-ब-तर था।

आख़िर वह समझ गया कि ठीक दिशा में नहीं जा रहा है। वह रुककर सोचने, याद करने और स्थिति को समझने लगा और इस परिणाम पर पहुंचा कि उसे दायीं ओर जाना चाहिये। उसने दायीं ओर गाड़ी बढ़ाई। उसका घोड़ा बड़ी मुश्किल से ही क़दम उठा पा रहा था। एक घण्टा हो गया था उसे घर से रवाना हुए। जाद्रिनो को कहीं नज़दीक ही होना चाहिये था। किन्तु वह स्लेज बढ़ाता जा रहा था, बढ़ाता जा रहा था और मैदान का कोई ओर-छोर ही नज़र नहीं आता था। बस, बर्फ़ के बड़े-बड़े ढेर और गड्ढे ही सामने दिखाई दे रहे थे। रह-रहकर उसकी बर्फ़-गाड़ी उलट जाती और बार-बार

वह उसे सीधी करता। समय बीतता जा रहा था और व्लादीमिर बहुत परेशान हो उठा था।

अन्त में एक ओर को कुछ काला-सा उभरने लगा। व्लादीमिर ने उसी दिशा में घोड़ा मोड़ दिया। निकट आने पर उसे झुरमुट नज़र आया। शुक्र है भगवान का, उसने अपने मन में सोचा, अब गिरजाघर दूर नहीं है। वह मन में यह आशा लिये हुए कि तत्काल जानी-पहचानी सड़क पर पहुंच जायेगा या झुरमुट के गिर्द चक्कर लगाकर सड़क पर पहुंचेगा – जाद्रिनो ठीक उसी के पीछे था। सड़क उसे जल्द ही मिल गयी और जाड़े में निपत्ते हुए वृक्षों के अंधेरे में घोड़े को आगे बढ़ाने लगा। हवा यहां इतनी अधिक तेज़ नहीं थी, सड़क समतल थी, घोड़े में भी फुर्ती आ गयी और व्लादीमिर शान्त हो गया।

वह घोड़े को बढ़ाता जा रहा था, बढ़ाता जा रहा था, किन्तु जाद्रिनो कहीं दिखाई नहीं दे रहा था, झुरमुट का अन्त नहीं हो रहा था। यह देखकर कि वह किसी अपरिचित जंगल में पहुंच गया है, व्लादीमिर का दिल बैठ गया। हताशा उस पर हावी हो गयी। उसने घोड़े पर चाबुक बरसाया – बेचारा जानवर दुलकी चाल से दौड़ने लगा, किन्तु जल्द ही उसकी गति धीमी होने लगी और बदक़िस्मत व्लादीमिर की सारी कोशिशों के बावजूद पन्द्रह मिनट बाद वह क़दम-क़दम चलने लगा।

धीरे-धीरे वृक्ष कम होने लगे और व्लादीमिर जंगल से बाहर निकला – जाद्रिनो का कहीं नाम-निशान नहीं था। लगभग आधी रात हो गयी थी। व्लादीमिर की आंखें डबडबा आईं। बेशक किसी तरफ़ भी चला जाये, यह सोचकर उसने घोड़ा आगे बढ़ा दिया। मौसम कुछ शान्त हो गया था, बादल छंट गये थे और सफ़ेद लहरदार क़ालीन से ढका हुआ समतल मैदान उसके सामने था। रात अब काफ़ी साफ़ हो गयी थी। कुछ ही दूरी पर उसे चार-पांच घरोंवाला एक छोटा-सा गांव दिखाई दिया। व्लादीमिर ने उधर ही स्लेज बढ़ा दी। पहले घर के पास पहुंचकर वह बर्फ़-गाड़ी से नीचे कूदा, भागकर खिड़की के पास गया और उसे खटखटाने लगा। कुछ मिनट बाद खिड़की का पट खुला और एक बूढ़े की सफ़ेद दाढ़ी नज़र आई।

"क्या बात है?" – "जाद्रिनो दूर है क्या?" – "जाद्रिनो दूर

3*

है या नहीं ?" – "हां, हां! दूर है क्या ?" – "बहुत दूर तो नहीं, कोई दसेक वेर्स्ता होगा।" यह जवाब सुनकर व्लादीमिर ने अपना सिर थाम लिया और उस आदमी की तरह बुत बना-सा खड़ा रह गया, जिसे इसी वक़्त मौत की सज़ा सुनाई गयी हो।

"तुम इस वक़्त कहां से आ रहे हो ?" बूढ़े ने पूछा। प्रश्नों के उत्तर देने को व्लादीमिर का मन नहीं हो रहा था। "बाबा, क्या तुम मुझे जाद्रिनो तक पहुंचाने के लिये घोड़ों का प्रबन्ध कर सकते हो ?" उसने बुज़ुर्ग से पूछा। "हमारे पास कहां से आयेंगे घोड़े!" बूढ़े ने जवाब दिया। "कोई रास्ता दिखानेवाला तो मिल सकता है या नहीं ? वह जितने चाहेगा, मैं उसे उतने ही पैसे दे दूंगा।" – "ज़रा रुको," बूढ़े ने खिड़की का पल्ला नीचे करते हुए कहा, "अभी अपने बेटे को भेज देता हूं, वह तुम्हें पहुंचा देगा।" व्लादीमिर इन्तज़ार करने लगा। एक मिनट भी नहीं बीता होगा कि वह फिर से खिड़की को खटखटाने लगा। खिड़की खुली और दाढ़ी दिखाई दी। "क्या बात है ?" – "कहां है तुम्हारा बेटा ?" – "अभी बाहर आ जायेगा, जूते पहन रहा है। शायद तुम ठिठुर गये हो ? भीतर आकर तन गर्मा लो।" – "नहीं, धन्यवाद, तुम जल्दी से बेटे को भेज दो।"

फाटक चरमराया – लाठी लिये हुए एक नौजवान बाहर निकला और कभी रास्ता दिखाता, तो कभी बर्फ़ के ढेरों से ढके रास्ते को ढूंढ़ता हुआ आगे-आगे चलने लगा। "क्या वक़्त हुआ होगा ?" व्लादीमिर ने पूछा। "जल्द ही पौ फटनेवाली है," नौजवान किसान ने जवाब दिया। इसके बाद व्लादीमिर ने एक भी शब्द नहीं कहा।

ये लोग जब जाद्रिनो पहुंचे, तो मुर्ग़े बांग दे रहे थे और उजाला हो चुका था। गिरजाघर को ताला लगा हुआ था। व्लादीमिर ने रास्ता दिखानेवाले नौजवान देहाती को पैसे दिये और पादरी के घर की ओर चल पड़ा। पादरी के घर के सामने उसकी तीन घोड़ोंवाली बर्फ़-गाड़ी नहीं थी। कौन जाने, अभी और क्या जानना-सुनना बदा था उसके भाग्य में !

किन्तु अब हम नेनारादोवो गांव के भले ज़मींदार के घर की ओर चलते हैं और यह देखेंगे कि वहां क्या हो रहा है।

कुछ ख़ास नहीं।

मारिया के बुज़ुर्ग माता-पिता जागे और मेहमानख़ाने में आ गये। गव्रीला गव्रीलोविच रात को पहनने की टोपी और गर्म जाकेट पहने थे और प्रास्कोव्या पेत्रोव्ना रूई का अस्तर लगा गाउन। समोवार लाया गया और गव्रीला गव्रीलोविच ने यह जानने के लिए नौकरानी को मारिया गव्रीलोव्ना के पास भेजा कि उसकी तबीयत कैसी है तथा रात कैसे बीती। नौकरानी ने लौटकर बताया कि कुमारी जी को नींद अच्छी नहीं आई, किन्तु अब तबीयत कुछ बेहतर है और अभी मेहमान-ख़ाने में आ जायेंगी। सचमुच ऐसा ही हुआ, दरवाज़ा खुला और माता-पिता का अभिवादन करने के लिये मारिया गव्रीलोव्ना उनके निकट आई।

"तुम्हारा सिर-दर्द कैसा है?" गव्रीला गव्रीलोविच ने पूछा। "पहले से कम है, पापा," माशा ने जवाब दिया। "ज़रूर अंगीठी के पास बैठे रहने से ही तुम्हारे सिर में दर्द हुआ है," प्रास्कोव्या पेत्रोव्ना ने कहा। "हो सकता है, अम्मां," माशा ने उत्तर दिया।

दिन तो अच्छे ढंग से बीत गया, लेकिन रात को माशा बीमार हो गयी। शहर से डाक्टर को बुलवाया गया। वह शाम को आया और उसने रोगिनी को सरसाम में बड़बड़ाते पाया। इसके बाद उसे ख़ूब ज़ोर का बुख़ार चढ़ा और बेचारी माशा दो हफ़्ते तक मृत्यु-द्वार पर दस्तक देती रही।

घर से भाग जाने की माशा की योजना के बारे में किसी को कुछ मालूम नहीं था। पिछली शाम को लिखे गये पत्र आग की नज़र किये जा चुके थे। अपने मालिकों के ग़ुस्से से डरनेवाली नौकरानी ने किसी से एक शब्द नहीं कहा। पादरी, घुड़सेना का सेवानिवृत्त छोटा अफ़सर, मूंछोंवाला पटवारी और घुड़सवार सेना का नौजवान सैनिक भी किन्हीं कारणों से अपनी ज़बान को ताला लगाये हुए थे। नशे में धुत्त होने की हालत में भी तेर्योश्का कोचवान ने कभी कोई फ़ालतू शब्द मुंह से नहीं निकाला। इस तरह षड्यंत्र में भाग लेनेवाले आध दर्जन से भी अधिक लोगों ने इस रहस्य को छिपाये रखा। किन्तु मारिया गव्रीलोव्ना ने लगातार चलनेवाली सन्निपात की हालत में स्वयं ही अपना भंडाफोड़ कर दिया। मगर उसके शब्द इतने असम्बद्ध थे कि दिन-रात बेटी के सिरहाने बैठी रहनेवाली मां केवल इतना ही समझ

पाई कि उसकी बेटी व्लादीमिर निकोलायेविच को जी-जान से चाहती है और सम्भवतः प्रेम ही उसकी बीमारी का कारण है। उसने अपने पति और कुछ पड़ोसियों से सलाह-मशविरा किया, आख़िर सभी इस नतीजे पर पहुंचे कि मारिया गव्रीलोव्ना के भाग्य में शायद यही लिखा है, कि क़िस्मत का लिखा होकर रहेगा, कि ग़रीबी कोई गुनाह नहीं है, कि धन-दौलत के साथ नहीं, बल्कि आदमी के साथ ज़िन्दगी बितानी होती है, आदि, आदि। जब हम अपनी सफ़ाई में कुछ नहीं कह पाते, तो इस तरह की धर्म-कर्म की बातें बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं।

इसी बीच मारिया गव्रीलोव्ना स्वस्थ होने लगी थी। व्लादीमिर बहुत दिनों से गव्रीला गव्रीलोविच के घर में नहीं आया था। जिस उपेक्षा भाव से उसका यहां स्वागत होता था, वह उससे आतंकित-सा हो गया था। आख़िर उसे बुलवाया गया और बेटी के साथ विवाह की सहमति के अप्रत्याशित सौभाग्य की सूचना दी गयी। किन्तु जब अपने निमंत्रण के उत्तर में माशा के माता-पिता को नीम-पागलों जैसा उसका पत्र मिला तो उनकी हैरानी का कोई ठिकाना न रहा! उसने लिखा था कि वह कभी इस घर में पांव नहीं रखेगा और यह अनुरोध किया था कि वे उस क़िस्मत के मारे को भूल जायें, जिसके लिये अब मृत्यु ही एकमात्र आशा थी। कुछ दिनों के बाद उन्हें पता चला कि व्लादीमिर सेना में चला गया है। यह १८१२ की बात है।

स्वस्थ हो रही माशा को बहुत समय तक यह सब कुछ नहीं बताया गया। माशा ने भी व्लादीमिर का कभी नाम नहीं लिया। कुछ महीने बाद बोरोदिनो के निकट लड़ाई में विशेष वीरता दिखाने और घायल होनेवालों की सूची में उसका नाम पढ़कर माशा बेहोश हो गयी और घरवालों को यह चिन्ता हुई कि कहीं पहले की तरह बुख़ार उसे फिर से न धर दबाये। किन्तु भगवान की कृपा ही कहिये कि बेहोशी का कोई बुरा परिणाम नहीं हुआ।

माशा को एक अन्य दुखद आघात सहना पड़ा – उसके पिता गव्रीला गव्रीलोविच इस दुनिया से चल बसे और बेटी को ही अपनी सारी सम्पत्ति की उत्तराधिकारिणी बना गये। किन्तु उत्तराधिकार पाकर उसके मन की व्यथा दूर नहीं हुई। अपनी मां, बेचारी प्रास्कोव्या पेत्रोव्ना के दुख को वह सच्चे मन से अनुभव करती थी, उसने क़सम

खाई कि कभी उससे जुदा नहीं होगी। इन दोनों ने नेनारादोवो को छोड़ दिया, जिसके साथ बड़ी करुण स्मृतियां जुड़ी हुई थीं और ... गांव में अपनी जागीर पर जा बसीं।

सुन्दर और धनी माशा के गिर्द विवाह के इच्छुकों की भीड़ लगी रहती थी, किन्तु वह किसी को तनिक भी आशा नहीं बंधवाती थी। मां कभी-कभी उसे समझाती कि वह अपना जीवन-साथी चुन ले, किन्तु मारिया गव्रीलोव्ना सिर हिलाकर इन्कार कर देती और सोच में डूब जाती। व्लादीमिर इस दुनिया में नहीं रहा था, फ़्रांसीसियों के मास्को में दाख़िल होने की पूर्ववेला में वहीं उसका देहान्त हो गया था। माशा उसकी स्मृति को पुण्य मानती थी। कम से कम वह उन सभी चीज़ों को सहेजे थी जो व्लादीमिर की याद दिलाती थीं – उसके द्वारा कभी पढ़ी गयी पुस्तकें, उसके रेखाचित्र, स्वर-लिपियां और वे कवितायें, जिन्हें उसने उसके लिये नक़ल किया था। पड़ोसी यह सब कुछ जानकर उसकी प्रेम-निष्ठा से आश्चर्यचकित होते थे और बड़ी उत्सुकता से उस नायक की प्रतीक्षा कर रहे थे जो इस सतवन्ती आर्तेमीज़ा* के ऐसे शोकपूर्ण लगाव पर विजय प्राप्त करेगा।

इसी दौरान जीत के साथ जंग का अन्त हो गया था। हमारी फ़ौजें विदेशों से लौट रही थीं। लोग उनके स्वागत को उमड़े पड़ते थे। बैंड बाजे दुश्मन से छीनी हुई धुनें – Vive Henri - Quatre**, तिरोली वाल्ज़ और जोकोन्द ऑपेरा के प्रेमगीत*** – बजाते थे। लगभग तरुणावस्था में मोर्चे पर गये अफ़सर युद्ध-क्षेत्र की हवा में तगड़े जवान होकर तथा पदक लगाये हुए लौट रहे थे। सैनिक बड़ी ख़ुशमिज़ाजी से आपस में बातें करते थे और अपनी बातचीत में रह-रहकर

---

* आर्तेमीज़ा – सीता-सावित्री की भांति यूनानी पौराणिक साहित्य में पवित्र नारी का प्रतीक। – सं०

** फ़्रांसीसी नाटककार शार्ल कोल्ले (१७०६–१७८३) के 'हेनरी चतुर्थ का आखेट-गमन' (१७६४) सुखान्ती नाटक के गाने। – सं०

*** निकोलो इज़ुआर (१७७५–१८१८) के हास्यपूर्ण ऑपेरा 'जोकोन्द, या जोखिमी कारनामों का इच्छुक' के गीत, जो १८१४ में पेरिस में लोकप्रिय था, जब रूसी सेनायें वहां तैनात थीं। – सं०

जर्मन और फ़्रांसीसी शब्दों का पुट देते जाते थे। यह ऐसा वक़्त था जो कभी भुलाये नहीं भूलेगा! यह कीर्ति और हर्ष-उत्कर्ष का समय था! "मातृभूमि" शब्द सुनते ही रूसी लोगों के हृदय कैसे ज़ोर से धड़कने लगते थे! कितने मीठे थे मिलन के आंसू! राष्ट्र-गौरव और ज़ार-प्रेम की भावना को हम कैसे एकमत होकर घुला-मिला देते थे! और कितना मधुर समय था यह ज़ार के लिये!

नारियों, रूसी नारियों का भी तब कोई जवाब नहीं था। उनकी सामान्य उदासीनता उन दिनों हवा हो गयी थी। उनका उल्लास तो उस समय सचमुच मदहोश करनेवाला होता था, जब वे विजेताओं का स्वागत करते हुए चिल्लाती थीं – हुर्रा और

उछाल देती थीं अपनी टोपियां हवा में।*

उस समय के अफ़सरों में से भला कौन यह स्वीकार नहीं करेगा कि अपने सर्वश्रेष्ठ और सबसे अधिक मूल्यवान पुरस्कार के लिये वह रूसी नारी का आभारी है?..

ऐसे अनूठे समय में मारिया गव्रीलोव्ना अपनी मां के साथ ... गुबेर्निया में रहती थी और वह यह नहीं देख पाई कि कैसे दोनों राजधानियों ने सेनाओं के लौटने का सोत्साह स्वागत किया। किन्तु उल्लास की यह भावना ज़िलों और गांवों में सम्भवतः और अधिक तीव्र थी। ऐसी जगहों पर किसी फ़ौजी अफ़सर का आ जाना तो मानो विजय-अभियान होता था और उसके सामने असैनिक प्रेमी पर तो बहुत भारी गुज़रती थी।

हम पीछे कह चुके हैं कि मारिया गव्रीलोव्ना की उदासीनता के बावजूद वह पहले की भांति विवाह-इच्छुकों से घिरी रहती थी। किन्तु जब वक्ष पर सन्त जार्ज का पदक लगाये तथा स्थानीय युवतियों के शब्दों में "आकर्षक पीतवर्णवाला" हुस्सार सेना का घायल कर्नल बुर्मीन उसके गढ़ में आया, तो बाक़ी सभी को मैदान छोड़कर भागना पड़ा। कोई छब्बीस साल की उम्र थी उसकी। वह अपनी जागीर पर,

---

* १९वीं शताब्दी के प्रसिद्ध रूसी नाटककार और कूटनीतिज्ञ अलेक्सान्द्र ग्रिबोयेदोव के सुखान्ती नाटक 'अक़्ल से मुसीबत' (१८२४) से। –सं०

जो मारिया गव्रीलोव्ना के गांव के निकट थी, छुट्टी बिताने आया था। मारिया गव्रीलोव्ना ने उसमें बड़ी दिलचस्पी ली। उसकी उपस्थिति में उसकी सामान्य उदासी जाती रहती और उसमें सजीवता आ जाती। यह कहना उचित नहीं होगा कि वह किसी तरह की चंचलता दिखाती थी, किन्तु कवि उसके हाव-भाव को देखकर यह कहे बिना नहीं रह सकता था –

Se amor non è, che dunque?..*

बुर्मीन वास्तव में ही बहुत प्यारा जवान आदमी था। उसमें वास्तव में ही वह सब कुछ था जो नारियों को अच्छा लगता है – सलीक़ेदार, हर बात की ओर ध्यान देनेवाला, किसी भी तरह की बनावट से मुक्त और व्यंग्यपूर्ण मस्ती लिये हुए। मारिया गव्रीलोव्ना के साथ उसका व्यवहार सहज-स्वाभाविक और उन्मुक्त था। किन्तु वह चाहे कुछ भी कहती या करती, उसका मन और उसकी दृष्टि उसी की ओर खिंचती रहती। वह शान्त और विनम्र-सा प्रतीत होता, किन्तु सुनने में यह आया था कि कभी वह बहुत चंचल और तेज़ रहा था। इससे मारिया गव्रीलोव्ना के मन पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा था और उसने (जैसा कि सभी युवा महिलाओं ने किया होता) बड़ी ख़ुशी से साहस और गर्ममिज़ाजी को ज़ाहिर करनेवाली उसकी शरारतों को माफ़ कर दिया।

किन्तु सबसे अधिक... (उसकी शालीनता, मधुर बातचीत, आकर्षक पीतवर्ण और पट्टी में बंधे हुए हाथ से भी बढ़कर) जवान हुस्सार की ख़ामोशी ने मारिया गव्रीलोव्ना की जिज्ञासा और कुतूहल को उकसाया। उसे इस बात की चेतना हुए बिना न रह सकती थी कि वह बुर्मीन को अच्छी लगती है। दूसरी ओर, अपनी सूझबूझ और अनुभव से वह भी इस बात की तरफ़ ध्यान दिये बिना नहीं रह सकता था कि मारिया उसमें दिलचस्पी लेती है। तो फिर क्यों उसने अभी तक उसके सामने घुटने टेककर प्रेम-निवेदन नहीं किया था? कौन-सी चीज़ उसके आड़े आ रही थी? भीरुता, जो सच्चे प्रेम की चिर-

---

* अगर नहीं यह प्रेम, कहो तो और क्या?.. (इतालवी)।

संगिनी है, गर्व की भावना या मंजे हुए प्रेम-खिलाड़ी का खिलवाड़? उसके लिये यह चीज़ एक रहस्य थी। अच्छी तरह से सोच-विचार करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंची कि भीरुता ही इसका एकमात्र कारण थी और वह उसकी ओर अत्यधिक ध्यान देकर तथा अनुकूल परिस्थितियां पाकर स्नेह-प्रदर्शन द्वारा भी उसे प्रोत्साहित करने लगी। वह सर्वथा अप्रत्याशित स्थिति के लिये ज़मीन तैयार कर रही थी और बड़ी बेचैनी से प्रणय-स्वीकृति के रोमानी क्षणों की प्रतीक्षा करने लगी। रहस्य, वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो, नारी-हृदय के लिये बहुत बोझल होता है। मारिया गव्रीलोव्ना की ब्यूह-रचना को वांछित सफलता मिली – कम से कम बुर्मीन विचारों में ऐसे डूबा रहता और उसकी काली आंखें ऐसे चमकती हुई उसपर जम जातीं कि निर्णायक क्षण बिल्कुल निकट ही प्रतीत होता। पड़ोसी तो इनकी शादी की ऐसे चर्चा करते मानो वह तयशुदा बात हो और भले दिल की प्रास्कोव्या पेत्रोव्ना ख़ुश होती कि उसकी बेटी को आख़िर तो सुयोग्य वर मिल गया।

मारिया गव्रीलोव्ना की बूढ़ी मां एक दिन मेहमानख़ाने में बैठी हुई ताश के ग्राण्डपेशेंस खेल से अपना मन बहला रही थी कि बुर्मीन कमरे में दाख़िल हुआ और उसने यह पूछा कि मारिया गव्रीलोव्ना कहां है। "वह बाग़ में है," बूढ़ी मां ने जवाब दिया, "वहीं चले जाइये और मैं यहां आप दोनों की राह देखूंगी।" बुर्मीन बाग़ की ओर चला गया, बूढ़ी मां ने सलीब का निशान बनाया और सोचा – शायद आज मामला तय हो जायेगा!

बुर्मीन को मारिया गव्रीलोव्ना तालाब के किनारे बेद-वृक्ष की छाया में बैठी मिली। सफ़ेद फ़ाक पहने और हाथ में किताब लिये हुए वह किसी उपन्यास की नायिका जैसी लग रही थी। अभिवादन करने और हाल-चाल पूछने के बाद मारिया गव्रीलोव्ना ने जान-बूझकर बातचीत आगे नहीं बढ़ाई और इस तरह उसने दोनों की वह आपसी बेचैनी बढ़ा दी, जिसका केवल आकस्मिक और दृढ़तापूर्ण प्रेम-निवेदन से ही अन्त हो सकता था। ऐसा ही हुआ भी – बुर्मीन ने अपनी स्थिति का बेतुकापन अनुभव करते हुए कहा कि बहुत दिनों से उसके सामने अपना दिल खोलना चाहता था और यह अनुरोध किया कि वह थोड़ी देर के लिये बहुत ध्यान देकर उसकी बात सुने। मारिया गव्रीलोव्ना

ने किताब बन्द कर दी और यह ज़ाहिर करने के लिये कि उसकी बात सुनने को तैयार है, पलकें झुका लीं।

"मैं आपको प्यार करता हूं," बुर्मीन ने कहा, "मैं आपको जी-जान से प्यार करता हूं..." (मारिया गव्रीलोव्ना के गालों पर लाली दौड़ गयी और उसने अपना सिर और नीचे झुका लिया।) "यह मेरी असावधानी थी कि मैंने आपको हर दिन देखने और हर दिन आपकी बात सुनने की प्यारी आदत डाल ली..." (मारिया गव्रीलोव्ना को St.-Preux* के प्रथम पत्र की याद आ गयी।) "किन्तु अब मैं अपनी क़िस्मत से नहीं लड़ सकता – आपकी याद, आपकी प्यारी और अनुपम छवि अब मेरे जीवन की यातना और सबसे बड़ी ख़ुशी बनी रहेगी। किन्तु मुझे अभी एक बड़ी बोझल ज़िम्मेदारी पूरी करनी है – आपके सामने एक भयानक रहस्य का उद्घाटन करना है और हम दोनों के बीच एक ऐसी दीवार खड़ी करनी है, जिसे लांघना सम्भव नहीं होगा..." – "वह दीवार तो हमेशा ही बनी रही है," मारिया गव्रीलोव्ना ने झटपट बीच में ही उसकी बात काट दी, "मैं कभी भी आपकी पत्नी नहीं बन सकती थी..." – "मैं जानता हूं," बुर्मीन ने उसे धीरे से जवाब दिया, "मुझे मालूम है कि आपने कभी प्यार किया था, किन्तु उस व्यक्ति की मृत्यु और आहों-आंसुओं के तीन वर्ष... दयालु और प्यारी मारिया गव्रीलोव्ना, मुझे इस आख़िरी ख़ुशी, इस विचार के सुख से तो वंचित नहीं कीजिये कि आप मेरा सौभाग्य बन सकती थीं, यदि... आप चुप रहें, भगवान के लिये कुछ न बोलें। आप मेरी यातना को बढ़ा रही हैं। हां, मैं जानता हूं, मैं अनुभव करता हूं कि आप मेरी हो सकती थीं, किन्तु मैं – मैं एक बड़ा बदक़िस्मत इन्सान हूं... मैं शादीशुदा हूं!"

मारिया गव्रीलोव्ना ने हैरानी से उसकी तरफ़ देखा।

"मैं शादीशुदा हूं," बुर्मीन कहता गया, "चार साल हो गये मेरी शादी हुए और मुझे यह तक मालूम नहीं है कि मेरी बीवी कौन है, वह कहां है और उससे कभी मेरी मुलाक़ात भी होगी या नहीं!"

---

* रूसो के उपन्यास 'जूलिया या नई एलोइज़ा' के पात्र की चिट्ठी से आशय है। – सं०

"यह क्या कह रहे हैं आप?" मारिया गव्रीलोव्ना बरबस कह उठी। "कैसी अजीब बात है यह! आप कहते जायें, मैं अपनी बात बाद में कहूंगी ... तो जारी रखिये, मेहरबानी कीजिये।"

"सन् १८१२ के आरम्भ की बात है," बुर्मीन ने अपनी कहानी आगे बढ़ाई, "मैं विल्नो पहुंचने की उतावली में था, जहां उन दिनों हमारी रेजिमेंट थी। एक दिन शाम गहराने पर मैं डाक-चौकी पहुंचा और मैंने आदेश दिया कि जल्दी से घोड़े बदल दिये जायें। किन्तु उसी समय बहुत ज़ोर की बर्फ़ीली आंधी आ गयी, डाक-चौकीवाले और कोचवानों ने भी यही सलाह दी कि मैं कुछ देर को रुक जाऊं। मैंने उनकी बात मान ली, किन्तु एक अनबूझ-सी बेचैनी मुझ पर हावी हो गयी। मुझे ऐसे प्रतीत होता था मानो कोई मुझे चलने के लिये मजबूर कर रहा है। बर्फ़ीली आंधी का ज़ोर कम नहीं हो रहा था, मुझसे और सब्र नहीं हुआ, मैंने फिर से घोड़े जोतने का हुक्म दिया और अंधड़-तूफ़ान में ही रवाना हो गया। कोचवान ने अपनी सूझ दिखाई और नदी के किनारे-किनारे बर्फ़-गाड़ी बढ़ा दी जिससे हमारा रास्ता कोई तीन वेर्स्ता कम हो जाता था। नदी-तट बर्फ़ से बेहद ढका हुआ था, कोचवान उस मोड़ से चूक गया जहां सड़क पर पहुंचा जा सकता था और इस तरह हम एक अनजाने-अपरिचित क्षेत्र में जा निकले। बर्फ़ीली आंधी पहले की तरह अपना ज़ोर बांधे थी। इसी समय मुझे रोशनी दिखाई दी और मैंने बर्फ़-गाड़ी को उधर ही बढ़ाने का आदेश दिया। हम एक गांव में पहुंच गये, जहां लकड़ी के गिरजाघर में बत्ती जल रही थी। गिरजाघर का दरवाज़ा खुला था, बाड़ के क़रीब कई बर्फ़-गाड़ियां खड़ी थीं और कुछ लोग बाहर-भीतर आ-जा रहे थे। 'इधर! इधर आओ!' कुछ लोग एकसाथ चिल्लाये। मैंने कोचवान को उधर ही चलने का हुक्म दिया। 'अरे भई, कहां रह गये थे तुम?' किसी ने मुझसे कहा, 'दुलहन बेहोश पड़ी है, पादरी की समझ में नहीं आ रहा कि वह क्या करे, हम वापस लौटने की सोच रहे थे। जल्दी से उतरो न।' मैं चुपचाप स्लेज से नीचे कूदा और दो-तीन मोमबत्तियों के हल्के-से उजालेवाले गिरजाघर में दाख़िल हुआ। एक लड़की गिरजाघर के अंधेरे कोने में बेंच पर बैठी थी और दूसरी उसकी कनपटी सहला रही थी। 'भला हो भगवान का,' इस दूसरी

लड़की ने कहा, 'आख़िर आप पहुंच गये। आपने तो मालकिन की जान ही ले ली होती।' बूढ़े पादरी ने मेरे पास आकर पूछा, 'तो शुरू करें?'—'शुरू करें, शुरू करें, पादरी जी,' मैंने बेख़्याली से जवाब दिया। लड़की को सहारा देकर खड़ा किया गया। वह मुझे ख़ासी सुन्दर लगी... कैसी ग़ैरज़िम्मेदारी की, कितनी अक्षम्य हरकत थी यह... वेदी के सामने मैं उसकी बग़ल में खड़ा हो गया। पादरी जल्दी-जल्दी मामला निपटा रहा था। तीनों मर्द और नौकरानी दुलहन को थामे हुए थे और इसके सिवा उन्हें किसी बात की सुध नहीं थी। हमारी शादी करवा दी गयी। 'एक-दूसरे का चुम्बन लीजिये,' हमसे कहा गया। मेरी पत्नी ने अपना पीला चेहरा मेरी ओर किया। मैंने उसे चूमना चाहा कि... वह चिल्ला उठी, 'अरे, यह तो वह नहीं है! वह नहीं है!' और बेहोश होकर गिर पड़ी। गवाह डरी-सहमी नज़रों से एकटक मुझे देखने लगे। मैं मुड़ा, किसी तरह की बाधा के बिना गिरजाघर से बाहर निकला, लपककर बर्फ़-गाड़ी में जा बैठा और चिल्लाकर कोचवान से कहा, 'चलो!'"

"हे भगवान!" मारिया गव्रीलोव्ना चिल्ला उठी, "और आपको यह तक मालूम नहीं कि आपकी उस बेचारी पत्नी का क्या हुआ?"

"कुछ मालूम नहीं," बुर्मीन ने उत्तर दिया, "मैं उस गांव का नाम तक नहीं जानता, जहां मेरी शादी हुई थी। मुझे यह भी याद नहीं कि किस डाक-चौकी से रवाना हुआ था। अपने इस अपराधपूर्ण खिलवाड़ को मैंने उस समय इतना कम महत्त्व दिया था कि गिरजे से थोड़ी दूर जाकर ही मैं गहरी नींद सो गया और अगली सुबह तीसरी डाक-चौकी पर पहुंचकर ही मेरी आंख खुली। उन दिनों जो नौकर मेरे साथ था, वह युद्ध के दौरान मारा गया और इस तरह अब मुझे अपनी उस पत्नी को ढूंढ़ पाने की ज़रा भी आशा नहीं है, जिसके साथ मैंने ऐसा निर्मम मज़ाक़ किया था और जो अब ऐसी निर्दयता से इस तरह मुझसे बदला ले रही है।"

"हे भगवान, हे मेरे भगवान!" मारिया गव्रीलोव्ना ने उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए कहा, "तो ये आप ही थे! और आप मुझे पहचानते भी नहीं?"

बुर्मीन के चेहरे का रंग उड़ गया... और वह उसके पैरों पर गिर पड़ा...

ताबूतसाज़

क्या हमें हर दिन ताबूत नहीं दिखाई देते हैं,
हमारी इस खूसट दुनिया के पके बाल?

देर्जाविन *

ताबूतसाज़ अद्रियान प्रोखोरोव की घर-गिरस्ती का आखिरी सारा सामान मुर्दे ले जानेवाली गाड़ी पर लाद दिया गया और मरियल-से घोड़ों की जोड़ी ने बस्मान्नाया गली से निकीत्स्काया गली तक का, जहां ताबूतसाज़ अपने पूरे घरबार के साथ जा बसा था, चौथी बार चक्कर लगाया। उसने दुकान का ताला बन्द किया, दरवाज़े पर यह तख़्ती लगायी कि घर बिकाऊ है, भाड़े पर भी चढ़ाया जा सकता है और पैदल ही अपने नये घर की तरफ़ चल दिया। पीले रंग के इस छोटे-से घर के निकट पहुंचने पर, जो एक अर्से से उसके दिल में जगह बनाये हुए था, और जिसे उसने ख़ासी बड़ी रक़म देकर ख़रीदा था, उसे इस बात की हैरानी हुई कि उसका दिल ख़ुशी से तरंगित नहीं हो रहा है। अनजानी-अपरिचित दहलीज़ को लांघने पर जब उसने अपने नये घर में सभी ओर गड़बड़ देखी, तो पुराने और टूटे-फूटे घर को याद करके, जहां अठारह वर्ष तक उसने कड़ी व्यवस्था बनाये रखी थी, गहरी सांस ली। उसने अपनी दोनों बेटियों और नौकरानी को बहुत धीरे-धीरे काम करने के लिये भला-बुरा कहा और ख़ुद उनके काम में हाथ बंटाने लगा। जल्द ही सब कुछ ढंग से सज गया, देव-प्रतिमा, चीनी के बर्तनों की अलमारी, मेज़, सोफ़ा और पलंग – इन सब के लिये पिछले कमरे के कोनों में स्थान बना दिये गये और रसोईघर तथा मेहमानख़ाने में मालिक के हाथों की बनी चीज़ें – सभी रंगों और आकारों के ताबूत तथा मातमी टोपियों, लबादों और मशालों से भरी

---

* एक प्रमुख रूसी कवि गव्रीला देर्जाविन (१७४३–१८१६) की 'जल प्रपात' कविता से। – सं०

हुई अलमारियां टिका दी गयीं। दरवाज़े पर एक साइन बोर्ड लटका दिया गया था, जिस पर हाथ में उल्टी मशाल लिये आमूर* का चित्र बना हुआ था और उसके नीचे यह लिखा था – "यहां सादे और रंगे हुए सभी तरह के ताबूत बेचे तथा बनाये जाते हैं, किराये पर दिये जाते हैं और पुराने ताबूतों की मरम्मत भी की जाती है"। ताबूतसाज़ की बेटियां अपने कमरे में चली गयीं। अद्रियान ने अपने घर का चक्कर लगाया, खिड़की के पास बैठ गया और समोवार गर्माने का आदेश दिया।

पढ़े-लिखे पाठक को यह ज्ञात है कि शेक्सपियर और वाल्टर स्कॉट – इन दोनों ने ही क़ब्र खोदनेवालों को ख़ुशमिज़ाज और विनोदी व्यक्तियों के रूप में चित्रित किया है** ताकि उनके काम और स्वभाव की तुलना द्वारा हमारे दिलों पर अधिक गहरी छाप अंकित कर सकें। किन्तु सचाई का आदर करते हुए हम उनका अनुकरण नहीं कर सकते और यह मानने को विवश हैं कि हमारे ताबूतसाज़ का मिज़ाज उसके मनहूस धंधे के बिल्कुल अनुरूप था। अद्रियान प्रोख़ोरोव आम तौर पर गुमसुम और अपने ही ख़्यालों में खोया रहता था। वह अपनी ख़ामोशी तभी तोड़ता था जब निठल्ली बेटियों को खिड़की से राहगीरों को झांकते हुए देखकर डांटता या फिर जब उसे अपनी हस्त-रचनाओं के लिए उनसे कसकर पैसे लेने होते, जिन्हें बदक़िस्मती (कभी-कभी ख़ुशक़िस्मती से) उन्हें खरीदने की ज़रूरत आ पड़ती। तो खिड़की के क़रीब बैठा और चाय का सातवां प्याला पीता हुआ अद्रियान सदा की तरह मनहूस ख़्यालों में डूबा हुआ था। वह उस मूसलधार बारिश के बारे में सोच रहा था जिसने सेवा-निवृत्त ब्रिगेडियर के मातमी जुलूस को नगर-द्वार के निकट अपनी लपेट में ले लिया था। नतीजा यह हुआ था कि बहुत-से लबादे सिकुड़ गये थे और मातमी टोपियों के किनारे टेढ़े-मेढ़े हो गये थे। वह जानता था कि अगले कुछ समय में उसे अनिवार्य रूप से

---

* आमूर – कामदेव, किन्तु जब उसके हाथ में उल्टी मशाल हो, तो वह यमदूत या मृत्यु का प्रतीक हो जाता है। – अनु०

** पुश्किन का अभिप्राय शेक्सपियर के 'हेमलेट' (१६००–१६०१) दुखान्ती नाटक और वाल्टर स्कॉट के 'लामेरमूर की दुलहन' उपन्यास में ताबूतसाज़ों के बिम्बों से है। – सं०

ख़ासी रक़म ख़र्च करनी पड़ेगी, क्योंकि मातमी कपड़ों के उसके पुराने स्टाक की हालत काफ़ी ख़राब थी। उसे उम्मीद थी कि बूढ़ी सेठानी त्रूख़िना के मरने पर, जो लगभग एक साल से क़ब्र में टांगें लटकाये थी, उसका सारा घाटा पूरा हो जायेगा। किन्तु त्रूख़िना राज़गुल्याई गली में अपनी आख़िरी घड़ियां गिन रही थी और प्रोख़ोरोव को इस बात की शंका थी कि अपने वादे के बावजूद उसके वारिस उसे इतनी दूर से बुलवा भेजने के मामले में काहिली न कर जायें और अपने नज़दीक के किसी ठेकेदार से ही मामला तय न कर लें।

अद्रियान प्रोख़ोरोव इसी तरह के विचारों में खोया हुआ था कि अचानक फ़्रीमेसनों* की भांति दरवाज़े पर किसी के अचानक तीन बार दस्तक देने से उसकी विचार-श्रृंखला टूटी। "कौन है?" ताबूतसाज़ ने पूछा। दरवाज़ा खुला और एक ऐसा व्यक्ति भीतर आया जिसे देखते ही एक जर्मन कारीगर के रूप में पहचाना जा सकता था। वह प्रफुल्ल मुद्रा में ताबूतसाज़ के निकट आया। "मेरे कृपालु पड़ोसी, मैं माफ़ी चाहता हूं," उसने ऐसी अटपटी रूसी भाषा में कहा, जिसे सुनकर हम आज भी हंसे बिना नहीं रह सकते, "माफ़ी चाहता हूं कि आपके काम-काज में ख़लल डाल दिया... लेकिन मैं आपके साथ जल्दी से जान-पहचान कर लेना चाहता था। मैं मोची हूं, मेरा नाम गोत्लिब शूल्त्स है और गली पार आपके सामनेवाले घर में रहता हूं। कल मैं अपने विवाह की रजत-जयंती मना रहा हूं और आपसे तथा आपकी बेटियों से अनुरोध करता हूं कि मेरे यहां मित्र के नाते खाना खायें।" निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर लिया गया। ताबूतसाज़ ने मोची से बैठने और चाय का प्याला पीने को कहा। गोत्लिब शूल्त्स की मिलनसार तबीयत की बदौलत जल्द ही दोनों घुल-मिलकर बातें करने लगे। "आपका काम-धंधा कैसा चल रहा है?" अद्रियान ने पूछा। "अजी, क्या कहा जाये," शूल्त्स ने उत्तर दिया, "कभी अच्छा और कभी बुरा। शिकवा-शिकायत नहीं कर सकता। वैसे, इतना ज़रूर है कि मेरा

---

* १८वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में रहस्यवादी संगठन जिसका लक्ष्य मानव का नैतिक पुनरुत्थान था। दरवाज़े पर तीन बार दस्तक इस संगठन के सदस्यों का एक गुप्त संकेत था। —सं०

माल आपके माल जैसा नहीं है – ज़िन्दा आदमी जूतों के बिना काम चला सकता है, मगर मुर्दे का तो ताबूत के बिना गुज़ारा नहीं।" – "सोलह आने सही बात है," अद्रियान ने सहमति प्रकट की, "लेकिन अगर ज़िन्दा आदमी के पास जूते ख़रीदने को पैसे नहीं, तो ग़म की कोई बात नहीं, नंगे पांव ही काम चला लेता है, मगर भिखारी को ताबूत मुफ़्त ही मिल जाता है।" तो इस तरह थोड़ी देर तक उन दोनों के बीच कुछ और बातचीत चलती रही। आख़िर मोची उठा, उसने अपना निमंत्रण दोहराया और ताबूतसाज़ से विदा ली।

अगले रोज़, दिन के ठीक बारह बजे ताबूतसाज़ और उसकी बेटियां अपने नये ख़रीदे गये घर के फाटक से बाहर निकलीं और पड़ोसी के यहां चल दीं। मैं न तो अद्रियान प्रोख़ोरोव के रूसी अंगरखे का वर्णन करूंगा और न उसकी बेटियों की यूरोपीय पोशाकों के ठाठ का और इस दृष्टि से आधुनिक उपन्यासकारों की परम्परा का साथ नहीं दूंगा। फिर भी इतना कह देना अनावश्यक नहीं समझता कि दोनों लड़कियां पीली टोपियां और लाल बूट पहने थीं जो वे जशन के ख़ास-ख़ास मौक़ों पर ही पहनती थीं।

मोची का छोटा-सा फ़्लैट मेहमानों से खचाखच भरा था, जिनमें अधिकतर जर्मन कारीगर, उनकी बीवियां और शागिर्द थे। सरकारी कर्मचारियों में से केवल एक यानी पुलिस का सिपाही यूर्को ही यहां उपस्थित था। वह जाति का चूख़ोन था और बहुत मामूली पद के बावजूद मेज़बान उसकी ख़ास तौर पर बड़ी ख़ातिरदारी कर रहा था। पिछले पच्चीस सालों से वह पोगोरेल्स्की के प्रसिद्ध हरकारे या डाकिये* की तरह बड़ी आज्ञाकारिता से अपनी ड्यूटी बजा रहा था। १८१२ में प्राचीन राजधानी यानी मास्को के जल जाने पर उसकी पीले रंग की संतरी-चौकी भी भस्म हो गयी थी। किन्तु फ़्रांसीसी दुश्मन के खदेड़े जाते ही उसकी नयी संतरी-चौकी बन गयी – सलेटी रंग की और यूनानी ढंग के सफ़ेद स्तम्भोंवाली। अपने सिपाही के ठाट-बाट से यूर्को फिर उसके आस-पास गश्त करने लगा। निकीत्स्की सड़क

---

* अ० पोगोरेल्स्की की कहानी 'लाफ़ेर्त की नानबाइन' (१८२५) का एक पात्र। – सं०

के नज़दीक रहनेवाले अधिकतर जर्मनों से उसकी अच्छी जान-पहचान थी और उनमें से कुछेक तो कभी-कभी इतवार की रात भी उसकी चौकी पर ही बिताते थे। अद्रियान ने झटपट यूर्को से परिचय कर लिया, क्योंकि वह ऐसा आदमी था जिसकी कभी और किसी भी समय ज़रूरत पड़ सकती थी। मेहमान जब खाने की मेज़ों पर पधारे, तो वे दोनों एक-दूसरे की बग़ल में बैठे। शूल्त्स दम्पति और उनकी सत्रह वर्षीया बेटी लोत्खेन मेहमानों के साथ भोजन करते हुए खाना परोसने और दूसरी बातों में बावर्चिन का लगातार हाथ बंटा रहे थे। बियर तो ख़ूब बह रही थी। यूर्को चार आदमियों के बराबर अकेला ही खा रहा था और अद्रियान उससे उन्नीस नहीं रह रहा था। उसकी बेटियां बड़े सलीक़े से बैठी थीं। जर्मन भाषा में होनेवाली बातचीत लगातार बहुत ऊंची होती जा रही थी। मेज़बान ने अचानक अपनी ओर सबका ध्यान आकृष्ट किया और कोलतार पुती बोतल का कार्क खोलते हुए रूसी भाषा में चिल्लाकर कहा, "अपनी दयालु लुईज़ा के स्वास्थ्य के लिये!" और शेम्पेन का फेन उड़ने लगा। मेज़बान ने अपनी चालीस साल की जीवन-संगिनी का चेहरा, जिस पर ताज़गी बनी हुई थी, प्यार से चूमा और मेहमानों ने शोर मचाते हुए दयालु लुईज़ा के स्वास्थ्य का जाम पी लिया। मेज़बान ने "प्यारे मेहमानों के स्वास्थ्य के लिये!" कहते हुए शेम्पेन की दूसरी बोतल खोली और मेहमानों ने उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए फिर से अपने गिलास ख़ाली कर दिये। इसके बाद तो स्वास्थ्य के जाम पीने का दौर चल पड़ा – हर मेहमान की सेहत का जाम पिया गया, मास्को तथा एक दर्जन जर्मन नगरों, सभी दस्तकारियों और हर दस्तकारी के लिये अलग-अलग तथा कारीगरों और उनके शागिर्दों के लिये जाम उठाये और चढ़ाये गये। अद्रियान ख़ूब डटकर पी रहा था और इस हद तक रंग में आ गया कि उसने स्वयं भी एक विनोदपूर्ण जाम पीने का प्रस्ताव पेश किया। सहसा एक अतिथि, मोटे-से नानबाई ने जाम ऊपर उठाया और चिल्लाकर कहा, "उनकी सेहत का जाम, जिनके लिए हम काम करते हैं, unserer Kundleute!"* इस जाम का भी सभी ने खुशी

* अपने ग्राहकों के लिये! (जर्मन)।

से और एकमत होकर स्वागत किया। मेहमान एक-दूसरे के सामने सिर झुकाने लगे – दर्ज़ी मोची के सामने, मोची दर्ज़ी के सामने, नानबाई इन दोनों के सामने और सभी नानबाई के सामने इत्यादि। इस प्रकार के पारस्परिक अभिवादन के बीच यूर्को ने अपने पड़ोसी को सम्बोधित करते हुए चिल्लाकर कहा, "तो मेरे भाई, आओ, तुम्हारे मृतकों के नाम पर भी जाम पियें।" सभी ठठाकर हंस पड़े, किन्तु ताबूतसाज़ को लगा कि उसका अपमान किया गया है और उसके माथे पर बल पड़ गये। इस बात की ओर किसी का भी ध्यान नहीं गया, मेहमानों ने पीना जारी रखा और जब वे मेज़ पर से उठे तो रात की अन्तिम प्रार्थना की घण्टियां बज रही थीं।

अतिथि काफ़ी रात गये विदा हुए और अधिकतर नशे में बुरी तरह धुत्त थे। मोटा नानबाई और जिल्दसाज़, जिसका चेहरा "लाल चमड़े की जिल्द चढ़ा"* प्रतीत होता था, यूर्को की दोनों बांहों में बांहें डालकर उसे उसकी चौकी की ओर ले जा रहे थे और इस रूसी कहावत को सही सिद्ध करते प्रतीत होते थे – असली मज़ा तो ऋण की वसूली में ही है। ताबूतसाज़ बेहद पिये हुए और झल्लाया हुआ घर लौटा। "आख़िर दूसरों के मुक़ाबले में मेरा धन्धा किसलिये बुरा है?" वह ऊंचे-ऊंचे सोच रहा था। "क्या ताबूतसाज़ और जल्लाद भाई हैं? किसलिये हंसते हैं ये काफ़िर? क्या ताबूतसाज़ रंग-बिरंगी पोशाक पहने हुए कोई मसखरा है? मैं तो इन्हें इस घर में आने की दावत पर बुलाना और ख़ूब खिलाना-पिलाना चाहता था – मगर अब यह नहीं होने का! मैं उन्हीं को दावत में बुलाऊंगा जिनके लिये काम करता हूं – ईसाई धर्म को माननेवाले मृतकों को।" – "अरे मालिक, यह आप क्या कह रहे हैं?" नौकरानी ने कहा जो इस समय उसके जूते उतार रही थी। "सलीब का निशान बनाइये! घर में आने की दावत के लिये मुर्दों को बुलायेंगे! कैसी भयानक बात है यह!" – "क़सम भगवान की, ज़रूर बुलाऊंगा," अद्रियान कहता गया, "और वह भी कल ही। मेरे हित-चिन्तको, कल शाम को मेरे यहां दावत

---

* या० ब० क्न्याजनिन के सुखान्ती नाटक 'शेख़ीख़ोर' (१७८६) की कुछ परिवर्तित काव्य-पंक्ति। – सं०

पर आओ। भगवान जो देंगे, वही सेवा में हाज़िर कर दूंगा।" इतना कहकर ताबूतसाज़ बिस्तर पर चला गया और जल्द ही खर्राटे लेने लगा।

अगले दिन मुंह अंधेरे ही अद्रियान को जगा दिया गया। सेठानी त्रूख़िना इसी रात को चल बसी थी और उसके कारिन्दे ने एक तेज़ घुड़सवार को यह ख़बर देने के लिये उसके पास भेजा था। ताबूतसाज़ ने हरकारे को दस कोपेक वोदका पीने को इनाम के तौर पर दिये, जल्दी से कपड़े पहने, किराये की बग्घी ली और राज़्गुल्याई गली में पहुंच गया। परलोक सिधार गई बुढ़िया के दरवाज़े पर पुलिसवाले खड़े थे और सेठ-व्यापारी लोग वहां ऐसे मंडरा रहे थे, जैसे लाश की गंध पाकर कौवे मंडराते हैं। मोम की तरह पीली बुढ़िया का शव मेज़ पर रखा था, किन्तु शरीर अभी बिगड़ने नहीं लगा था। रिश्तेदार, पड़ोसी और नौकर-चाकर उसके क़रीब भीड़ लगाये थे। सभी खिड़कियां खुली थीं, मोमबत्तियां जल रही थीं और पादरी मृतक की आत्मा की शान्ति के लिये पाठ कर रहे थे। अद्रियान मृतक के भानजे के पास गया, जो फ़ैशनदार फ़्राक-कोट पहने जवान व्यापारी था और उसे यह बताया कि ताबूत , मोमबत्तियां, कफ़न और मातम की बाक़ी सारी चीज़ें भी अच्छी हालत में फ़ौरन पहुंचा दी जायेंगी। वारिस ने बेध्यानी से उसे धन्यवाद दिया, यह कहा कि पैसों के बारे में वह किसी तरह की सौदेबाज़ी नहीं करेगा और उसी की ईमानदारी पर सारी बात छोड़ देगा। ताबूतसाज़ ने अपनी आदत के मुताबिक़ क़सम खाकर यह कहा कि एक पैसा भी फ़ालतू नहीं लेगा और इसके बाद अर्थपूर्ण ढंग से कारिन्दे से नज़र मिलाकर सामान की तैयारी करने चला गया। वह दिन भर राज़्गुल्याई से निकीत्स्की सड़क तक घोड़ागाड़ी पर चक्कर काटता रहा। शाम तक उसने सारा प्रबन्ध कर दिया और घोड़ागाड़ी छोड़कर पैदल घर लौटा। रात चांदनी थी। ताबूतसाज़ निकीत्स्की सड़क तक सही-सलामत पहुंच गया। गिरजे के पास उसके परिचित, हमारे यूर्को ने उसे ललकारा, किन्तु पहचानकर शुभरात्रि की कामना की। काफ़ी रात बीत चुकी थी। ताबूतसाज़ अपने घर के निकट पहुंच गया था, जब अचानक उसे लगा कि कोई उसके फाटक के निकट आया और दरवाज़ा खोलकर अन्दर ग़ायब हो गया है। "यह क्या क़िस्सा है?" अद्रियान ने सोचा। "किसको फिर से मेरी ज़रूरत हो

सकती है? कहीं कोई चोर तो भीतर नहीं चला गया? मेरी बुद्धू बेटियों के पास कोई प्रेमी तो नहीं आते?" ताबूतसाज़ ने यह भी सोचा कि अपने दोस्त यूर्को को मदद के लिये पुकारना चाहिये। इसी क्षण एक अन्य व्यक्ति फाटक के निकट आया, उसने भीतर जाना चाहा, किन्तु घर के मालिक को भागा आता देखकर रुक गया और उसने अपना तिकोना टोप उतार लिया। अद्रियान को उसका चेहरा परिचित-सा प्रतीत हुआ, किन्तु उतावली के कारण वह उसे बहुत ध्यान से नहीं देख पाया। "आप मेरे यहां आये हैं," अद्रियान ने हांफते हुए पूछा, "कृपया पधारिये, भीतर चलिये।" – "आप औपचारिकता के फेर में नहीं पड़ें," आगन्तुक ने दबी-घुटी आवाज़ में जवाब दिया, "मेहमानों को रास्ता दिखाते हुए आगे-आगे चलिये!" अद्रियान के पास औपचारिकता के फेर में पड़ने का समय ही नहीं था। घर का फाटक खुला हुआ था, अद्रियान आगे-आगे और उसका अतिथि उसके पीछे-पीछे चल दिया। अद्रियान को ऐसे लगा मानो उसके कमरों में लोग चल-फिर रहे हों। "यह क्या माजरा है!" उसने सोचा और जल्दी से क़दम बढ़ाता हुआ भीतर गया... वहां उसकी टांगें लड़खड़ा गयीं। कमरा प्रेतों से भरा हुआ था। खिड़की में से छनती हुई चांदनी उनके पीले और नीले चेहरों, सिकुड़े-टेढ़े होंठों, धुंधली-अधमुंदी आंखों और उभरी हुई नाकों को रोशन कर रही थी... अद्रियान ने दहलते दिल से इन प्रेतों के रूप में उन लोगों को पहचान लिया जो उसके योग-सहयोग से दफ़नाये गये थे और उसके साथ आनेवाला मेहमान तो वह ब्रिगेडियर था जो मूसलधार बारिश के वक़्त दफ़नाया गया था। इन सभी स्त्री-पुरुषों ने ताबूतसाज़ को घेर लिया और सिर झुका-झुकाकर वे उसका अभिवादन करने लगे। क़िस्मत का मारा केवल एक ही, जो कुछ समय पहले मुफ़्त दफ़नाया गया था मानो अपने चिथड़े को छिपाता और शर्म से गड़ा जाता हुआ एक कोने में चुपचाप खड़ा था। उसे छोड़कर बाक़ी सभी बढ़िया कपड़े पहने थे – महिलाओं के सिरों पर रिबन वाली टोपियां थीं, मृत अफ़सर वर्दियां डाटे थे, किन्तु उनकी दाढ़ियां बढ़ी हुई थीं, व्यापारी-सेठ लोग समारोही अंगरखों में ख़ूब जंच रहे थे। "देखो प्रोख़ोरोव," ब्रिगेडियर ने सभी आदरणीय अतिथियों की ओर से बोलते हुए कहा, "हम सभी तुम्हारे निमंत्रण

पर अपनी क़ब्रों से उठकर आये हैं। वहां केवल वही रह गये हैं जिनमें बिल्कुल शक्ति शेष नहीं रह गयी, जो पूरी तरह गल-सड़ गये हैं, जो त्वचा के बिना केवल हड्डियों का पंजर हैं। किन्तु इनमें से भी एक तुम्हारे यहां आने का मोह संवरण नहीं कर सका – इतना अधिक उसने तुम्हारे यहां आना चाहा..." इसी समय एक छोटा-सा पंजर औरों को कोहनियाता और भीड़ को चीरता हुआ अद्रियान के निकट आया। उसकी खोपड़ी ताबूतसाज़ की ओर स्नेहपूर्वक मुस्करायी। उजले हरे और लाल रंग के चिथड़े और तार-तार हुए गाढ़े के टुकड़े उसपर ऐसे लटक रहे थे मानो डंडे पर लटके हुए हों तथा घुटनों तक के बूटों में टांगों की हड्डियां ऐसे बज रही थीं जैसे ऊखल में मूसल। "तुमने मुझे पहचाना नहीं, प्रोख़ोरोव," कंकाल ने कहा।" गार्ड सेना के भूतपूर्व सार्जेण्ट उसी प्योत्र पेत्रोविच कुरील्किन को भूल गये हो जिसे तुमने १७९९ में अपना पहला ताबूत बेचा था और सो भी चीड़ का, जिसे बलूत की लकड़ी का बताया था?" इतना कहकर उसने अद्रियान को अपनी बांहों में भरने के लिये अपनी कंकाली बांहें उसकी ओर फैला दीं। किन्तु अद्रियान अपनी सारी शक्ति बटोरकर चिल्ला उठा और उसने उसे परे धकेल दिया। प्योत्र पेत्रोविच लड़खड़ाया, गिरा और हड्डियों का ढेर बनकर रह गया। मुर्दों में ग़ुस्से की लहर-सी दौड़ गयी, सभी अपने साथी की इज़्ज़त की रक्षा के लिये डट गये, अद्रियान को भला-बुरा कहने और डराने-धमकाने लगे। बेचारे मेज़बान के होश-हवास गुम हो गये। इनकी चीख़-चिल्लाहट से बहरा और इनके द्वारा लगभग कुचला हुआ मेज़बान बिल्कुल घबरा गया, ख़ुद गार्ड सेना के भूतपूर्व सार्जेण्ट की हड्डियों पर गिर गया और बेहोश हो गया।

सूरज की किरणें ताबूतसाज़ के बिस्तर को कभी की आलोकित कर रही थीं। आख़िर उसने आंखें खोलीं और नौकरानी को अपने सामने समोवार गर्माते देखा। रात की घटनाओं को याद करके अद्रियान भय से कांप उठा। उसे अपनी कल्पना में त्रूख़िना, ब्रिगेडियर और सार्जेंट कुरील्किन का धुंधला-सा आभास हो रहा था। वह चुपचाप इस बात की प्रतीक्षा करता रहा कि नौकरानी उसके साथ बातचीत शुरू करे और उसे रात की घटनाओं का बाक़ी हाल बताये।

"बहुत देर तक सोये रहे आज तो आप, अद्रियान प्रोख़ोरोविच,"

मालिक को गाउन देते हुए नौकरानी अक्सीन्या ने कहा। "पड़ोसी दर्ज़ी भी मिलने के लिये आ चुका है, हमारे हलक़े का पुलिसवाला भी यह बता गया है कि आज इन्स्पेक्टर का जन्मदिन है, मगर आप सो रहे थे और हमने यह ठीक नहीं समझा कि आपको जगायें।"

"भगवान को प्यारी हो गयी त्रूख़िना के यहां से कोई आया था क्या?"

"भगवान को प्यारी हो गयी त्रूख़िना? क्या वह मर गयी?"

"कैसी उल्लू हो तुम भी! उसके कफ़न-दफ़न की तैयारी में क्या कल तुम्हीं ने मेरा हाथ नहीं बंटाया था?"

"क्या कह रहे हैं आप, मालिक? कहीं आपका दिमाग़ तो नहीं चल निकला या कल के नशे का ख़ुमार अभी तक बाक़ी है? कल किसी को दफ़नाया ही कब गया था? आप दिन भर जर्मन के यहां दावत के मज़े लूटते रहे, नशे में धुत्त होकर घर लौटे, बिस्तर पर ढह पड़े और अब तक सोते रहे। गिरजे में प्रार्थना की घण्टियां भी कभी की बज चुकीं।"

"अरे, सच!" ताबूतसाज़ ने ख़ुश होकर कहा।

"बिल्कुल सच," नौकरानी ने जवाब दिया।

"अगर ऐसा ही है, तो झटपट चाय दो और मेरी बेटियों को भी बुला लो।"

डाक-चौकी का मुंशी

छोटा-सा कर्मचारी, भई वाह!
वह तो पूरा तानाशाह!

प्रिंस व्याज़ेम्स्की *

डाक-चौकी के मुंशियों को भला किसने नहीं कोसा होगा, किसकी उनसे तू-तू मैं-मैं नहीं हुई होगी? किसने ग़ुस्से से आग-बबूला होकर

---

* १९वीं शताब्दी के कवि प्योत्र व्याज़ेम्स्की की 'डाक-चौकी' कविता (१८२५) की कुछ परिवर्तित काव्य-पंक्तियां। ज़ारशाही रूस में

वह क़िस्मत की मारी हुई शिकायत की कापी नहीं मांगी होगी, ताकि उसमें उनकी हठधर्मी, अशिष्टता और लापरवाही के बारे में बेकार ही एक शिकायत और लिख दे? कौन उन्हें दरिन्दों जैसा नहीं मानता, गये-बीते घटिया अफ़सरों जैसा या कम से कम "मुरोम के लुटेरों" के समान नहीं समझता? लेकिन हमें इन्साफ़ से काम लेना होगा, अपने को उनके स्थान पर रखकर देखना होगा, तब शायद हम उनके बारे में ऐसी कठोर राय ज़ाहिर नहीं करेंगे। डाक-चौकी का मुंशी आख़िर है क्या? एक बहुत ही छोटा कर्मचारी जिसके भाग्य में यातना ही यातना है और अगर वह लातों-घूंसों की मार से बच जाता है (सो भी हमेशा नहीं), तो सिर्फ़ इसलिये कि सरकारी कर्मचारी है (मेरे पाठक, अपनी आत्मा में झांक लें)। प्रिंस व्याज़ेम्स्की ने मज़ाक़ में उसे तानाशाह कहा है, वह भला कहां का तानाशाह है? क्या वास्तव में उसका काम जेल की चक्की पीसने के समान नहीं है? न दिन को चैन, न रात को आराम। ऊबभरी यात्रा के दौरान यात्री को जो दुख-दर्द सहने पड़ते हैं, उनका सारा ग़ुस्सा डाक-चौकी के मुंशी पर निकलता है। मौसम ख़राब है, सड़क टूटी-फूटी है, कोचवान ज़िद्दी है, घोड़े अड़ियल हैं — इन सब के लिये दोषी है डाक-मुंशी। उसके मामूली-से घर के अहाते में दाख़िल होने पर आगन्तुक एक दुश्मन की तरह उसकी तरफ़ देखता है। इस बिन बुलाये मेहमान से अगर उसे जल्दी ही निजात मिल जाये, तो बड़ी ग़नीमत है। लेकिन अगर घोड़े तैयार न मिलें?.. तो हे भगवान, कैसी-कैसी गालियां और कैसी-कैसी धमकियां सुननी पड़ती हैं उसे! बारिश और कीचड़-गन्दगी में उसे पराये अहातों में भागते फिरना पड़ता है, बुरी तरह झल्लाये हुए यात्री की चीख़-चिल्लाहट और धक्कों-मुक्कों से क्षण भर को चैन पाने के लिये उसे तूफ़ान और कड़ाके की सर्दी में ड्योढ़ी में जा छिपना पड़ता है। कोई जनरल आ जाता है, तो थर-थर कांपता हुआ डाक-मुंशी उसे तीन घोड़ोंवाली आख़िरी दो घोड़ागाड़ियां दे देता है, जिनमें एक डाक की घोड़ागाड़ी भी होती है। जनरल तो धन्यवाद का एक शब्द कहे बिना चल देता है। पांच मिनट बाद घण्टी की टनटन सुनाई पड़ती है... और

सभी सरकारी कर्मचारियों को श्रेणियों में विभाजित किया गया था और डाक-चौकी का मुंशी सबसे नीची, चौदहवीं श्रेणी में आता था। — सं०

सरकारी हरकारा उसकी मेज़ पर आदेशपत्र पटक देता है... आइये, इन सब बातों की गहराई में जायें, तो ग़ुस्से के बजाय हमारा हृदय सच्ची सहानुभूति से भर जायेगा। कुछ शब्द और भी – बीस वर्षों के दौरान मैं सभी दिशाओं में रूस की यात्रा कर चुका हूं, डाक-घोड़ागाड़ियों के लगभग सभी रास्ते जानता हूं, कोचवानों की कई पीढ़ियों से परिचित हूं, शायद ही कोई ऐसा डाक-चौकी मुंशी होगा जिसे मैं पहचानता न होऊं, शायद ही कोई ऐसा होगा जिससे मेरा वास्ता न पड़ा हो। निकट भविष्य में मैं अपने यात्रा-अनुभवों को प्रकाशित करने की आशा करता हूं। फ़िलहाल केवल इतना ही कहूंगा कि आम तौर पर डाक-चौकी के मुंशियों को बहुत ग़लत रंग में पेश किया गया है। इतने अधिक बदनाम ये डाक-मुंशी कुल मिलाकर बड़े शान्त स्वभाव के लोग होते हैं, दूसरों के काम आना उनके मिज़ाज में है, दूसरों से घुलने-मिलने का उनमें झुकाव होता है, अपने बारे में किसी प्रकार की ग़लतफ़हमी के बिना वे विनयशील होते हैं और निन्यानवे के फेर में भी बहुत अधिक नहीं पड़ते। उनकी बातचीत से (जिसे कुछ आगन्तुक महानुभाव बकवास से अधिक कुछ नहीं मानते) बहुत कुछ जिज्ञासापूर्ण और शिक्षाप्रद प्राप्त किया जा सकता है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, तो मैं ऊंचे दर्जे के किसी सरकारी कर्मचारी की तुलना में उनकी बातचीत को कहीं अधिक बेहतर मानता हूं।

इस बात का आसानी से अनुमान लगाया जा सकता है कि डाक-चौकी के मुंशियों की सम्मानित श्रेणी में भी मेरे कुछ मित्र हैं। वास्तव में उनमें से एक की स्मृति को मैं बहुत मूल्यवान मानता हूं। परिस्थितियां हमें निकट ले आयीं और अपने कृपालु पाठकों के साथ मैं अब उसी की चर्चा करना चाहता हूं।

१८१६ के मई महीने की बात है कि मुझे... गुबेर्निया के उस मार्ग पर यात्रा करनी पड़ी जो अब नहीं रहा। मैं छोटा-सा अफ़सर था, एक डाक-चौकी से दूसरी डाक-चौकी तक जाता था और दो घोड़ों से अधिक किराये पर लेने के लिये मेरी जेब में पैसे नहीं होते थे। नतीजा यह कि डाक-मुंशी भी मेरा कोई लिहाज़ नहीं करते थे और अक्सर मुझे ज़ोर-ज़बर्दस्ती से वह लेना पड़ता था जिसे मैं अपना हक़ समझता था। तब मैं जवान और बहुत गर्ममिज़ाज था और उन

डाक-मुंशियों के घटियापन और नीचता से जल-भुन उठता जो मेरे लिये तैयार किये गये घोड़ों को ऊंचे अफ़सरों के हवाले कर देते। इसी तरह मैं बहुत अर्से तक इस बात का आदी नहीं हो पाया था कि राज्यपाल की मेज़ पर खाना परोसने के समय बड़े लोगों का ध्यान रखनेवाला बैरा मेरी अवहेलना कर देता था। अब तो दोनों बातें मुझे ठीक लगती हैं। आप ही सोचें, अगर सामान्य रूप से स्वीकृत इस नियम की जगह कि "नीची पदवीवाला ऊंची पदवीवाले के सामने झुके" यह नियम लागू हो जाये कि "कम समझदार समझदार के सामने सिर झुकाये" तो क्या होता? अच्छी ख़ासी मुसीबत खड़ी हो जाती। नौकर-चाकर पहले किसकी सेवा करने दौड़ते? ख़ैर, मैं अपनी कहानी सुनाता हूं।

बहुत गर्म दिन था... चौकी से तीन वेर्स्ता इधर हल्की बूंदा-बांदी शुरू हुई और एक मिनट बाद इतने ज़ोर की बारिश होने लगी कि मैं बिल्कुल भीग गया। डाक-चौकी पर पहुंचते ही मैंने झटपट कपड़े बदले और चाय लाने के लिये कहा। "अरी दून्या!" मुंशी ने आवाज़ दी, "समोवार गर्म करो और कुछ क्रीम ले आओ!" इन शब्दों के साथ ही बीच की दीवार के पीछे से कोई चौदह साल की लड़की सामने आयी और ड्योढ़ी की ओर भाग गयी। उसके सौन्दर्य से मैं दंग रह गया। "यह तुम्हारी बेटी है?" मैंने डाक-मुंशी से पूछा। "जी, मेरी बेटी है," उसने गर्व से प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दिया, "बड़ी समझदार, बड़ी ही चुस्त-फुर्तीली है, बिल्कुल अपनी दिवंगता मां जैसी।" वह रजिस्टर में मेरा यात्रा-पत्र दर्ज करने लगा और मैं चित्रों को देखने लगा जिनसे उसका साधारण, किन्तु साफ़-सुथरा घर सजा हुआ था। उन चित्रों में एक उड़ाऊ-खाऊ बेटे का क़िस्सा बयान किया गया था। पहले चित्र में ड्रेसिंग-गाउन और रात की टोपी पहने बूढ़ा एक चंचल किशोर को विदा कर रहा था जो बड़ी उतावली से बाप का आशीर्वाद और उसके हाथ से धन की थैली ले रहा था। दूसरे चित्र में उस नौ-जवान की ऐयाशी को ख़ूब उभारा गया था – वह मतलबी दोस्तों और बेहया औरतों से घिरा हुआ मेज़ पर बैठा था। तीसरे चित्र में तबाह हो गये इसी युवक को फटा चोग़ा पहने और सिर पर टेढ़ी टोपी रखे सुअर चराता और उन्हीं की संगत में भोजन करते दिखाया गया था।

उसके चेहरे पर गहरे सन्ताप और पश्चाताप की छाप थी। अन्तिम चित्र में उसका पिता के पास लौटना चित्रित था – नेक बुज़ुर्ग वही ड्रेसिंग-गाउन और रात की टोपी पहने हुए बेटे के स्वागत को बाहर भागा आता है, ऐयाश बेटा बाप के पैरों पर गिरा हुआ है, चित्र की पृष्ठभूमि में बावर्ची एक मोटे-ताज़े बकरे को काट रहा है और बड़ा भाई उससे इस ख़ुशी, इस जशन का कारण पूछ रहा है। हर चित्र के नीचे मैंने जर्मन भाषा में लिखी ढंग की कविता भी पढ़ी। यह सब कुछ मेरी स्मृति में आज भी वैसे ही सजीव है, जैसे फूलोंवाले गमले, पलंग और चटक रंग का पर्दा तथा मेरे इर्द-गिर्द की अन्य सभी चीज़ें। घर के स्वामी को भी ज्यों का त्यों अपनी आंखों के सामने देखता हूं – उम्र कोई पचास साल, प्रफुल्ल और ताज़गी लिये, हरे रंग का फ़्राक-कोट पहने जिसपर बदरंग फ़ीतों के साथ तीन तमग़े लटक रहे थे।

मैंने अभी पिछली डाक-चौकी के कोचवान के पैसे चुकाये ही थे कि दून्या समोवार लिये हुए आ गयी। उस चंचल किशोरी को यह भांपते देर न लगी कि उसने मुझपर कैसा जादू कर दिया है। उसने अपनी बड़ी-बड़ी नीली आंखों को नीचे झुका लिया। मैं उसके साथ बातचीत करने लगा और वह किसी भी तरह की झेंप-झिझक के बिना दुनिया के रंग-ढंग से परिचित लड़की की तरह मुझसे बोलने-बतियाने लगी। मैंने उसके पिता की ओर शराब का एक गिलास बढ़ाया, दून्या को चाय का प्याला दिया और हम तीनों ऐसे घुल-मिलकर बातें करने लगे मानो बरसों से एक दूसरे को जानते हों।

घोड़े कभी के जोत दिये गये थे, मगर डाक-मुंशी और उसकी बेटी से विदा लेने को मेरा मन नहीं हो रहा था। आख़िर मैंने उनसे विदा ली, पिता ने मेरे लिये शुभयात्रा की कामना की और बेटी मुझे घोड़ागाड़ी तक पहुंचाने को मेरे साथ हो ली। मैं ड्योढ़ी में रुका और मैंने उससे चुम्बन लेने की अनुमति मांगी। दून्या इसके लिये राज़ी हो गयी... चुम्बनों के बारे में बहुत कुछ कह सकता हूं मैं तबसे,

जबसे मैंने यह खिलवाड़ शुरू
किया है,

किन्तु एक चुम्बन ने भी ऐसी अमिट और मधुर छाप मन पर नहीं छोड़ी।

कई साल बीत गये और परिस्थितियां मुझे फिर से उसी रास्ते, उन्हीं जगहों पर ले गयीं। मुझे बूढ़े डाक-मुंशी की बेटी की याद हो आयी और इस ख़्याल से मेरा मन खिल उठा कि फिर उससे भेंट हो सकेगी। किन्तु यह विचार भी मन में आया कि बूढ़े मुंशी को शायद नौकरी से अलग कर दिया गया हो, दून्या की शादी हो चुकी हो। दोनों में से किसी एक की मृत्यु की बात भी मेरे दिमाग़ में कौंधी और मैं सभी तरह के बुरे-बुरे ख़्याल लिये हुए डाक-चौकी के निकट पहुंचा।

घोड़ागाड़ी डाक-मुंशी के छोटे-से घर के सामने जाकर रुक गयी। कमरे में दाख़िल होते ही मैंने उड़ाऊ-खाऊ बेटे की कहानी बयान करने-वाले चित्रों को पहचान लिया। मेज़ और पलंग अपनी पहलेवाली जगहों पर ही थे, किन्तु खिड़कियों के दासों पर फूलों के गमले नहीं थे और इर्द-गिर्द गड़बड़ तथा उपेक्षा साफ़ दिखाई दे रही थी। डाक-मुंशी भेड़ की खाल ओढ़े हुए सो रहा था, मेरे आने से उसकी आंख खुल गयी और वह थोड़ा-सा उठा ... यह तो वही सम्सोन वीरिन था, किन्तु कितना बुढ़ा गया था वह! जब तक वह मेरा यात्रा-पत्र दर्ज करता रहा मैं उसके पके बालों, बहुत समय से बढ़ी दाढ़ीवाले चेहरे की गहरी झुर्रियों और उसकी झुकी हुई पीठ को देखता तथा इस बात से हैरान होता रहा कि तीन-चार सालों में प्रफुल्ल मर्द कैसे जीर्ण-शीर्ण बुढ़ऊ में बदल गया है। "मुझे पहचाना?" मैंने उससे पूछा। "हम तो पुराने परिचित हैं।"—"हो सकता है," उसने उदासी से उत्तर दिया, "यह रास्ता बड़ा चालू है, अनेक लोग मेरे यहां आ चुके हैं।"—"तुम्हारी दून्या तो ठीक-ठाक है?" मैंने अपनी बात जारी रखते हुए पूछा। बूढ़े के माथे पर बल पड़ गये। "भगवान जाने," उसने उत्तर दिया। "शायद उसकी शादी हो गयी?" मैंने जानना चाहा। बूढ़े ने ऐसे ढोंग किया मानो मेरा सवाल सुना ही न हो और फुसफुसाते हुए यात्रा-पत्र पढ़ता रहा। मैंने अपने सवाल पूछने बन्द कर दिये और चाय के लिये केतली गर्म करने को कहा। जिज्ञासा मुझे बेचैन करने लगी और मेरे मन में यह आशा पैदा हुई कि शराब पीने के बाद मेरे पुराने परिचित की ज़बान खुल जायेगी।

मेरा अनुमान सही निकला। बूढ़े ने शराब का गिलास ले लिया

और मैंने देखा कि उसकी उदासी के बादल छंट गये हैं। शराब का दूसरा गिलास पीने के बाद वह बतियाने लगा। उसे मेरी याद आ गयी या फिर उसने यह ढोंग किया कि उसे मेरा स्मरण हो आया है और उसने मुझे वह क़िस्सा सुनाया जो उस समय मेरे दिल-दिमाग़ पर छा गया और जिसने मेरे मर्म को छू लिया।

"तो आप मेरी दून्या को जानते थे?" उसने कहना आरम्भ किया, "कौन नहीं जानता था उसे? ओह, दून्या, दून्या! क्या लड़की थी वह भी! जो कोई भी यहां आता, उसकी तारीफ़ करता, कोई भी उसे भला-बुरा न कहता। कुलीन नारियों में से कोई उसे दुपट्टा भेंट कर जाती, तो कोई झुमके। इधर से गुज़रनेवाले बड़े लोग जान-बूझकर दोपहर या रात का भोजन करने के लिये यहां रुक जाते, मगर वास्तव में उनका उद्देश्य यही होता कि अधिक देर तक उसे देखते रहें। ऐसा भी होता था कि कोई महानुभाव चाहे कितना ही झल्लाया हुआ क्यों न आता, उसके सामने शान्त हो जाता और मेरे साथ अच्छे ढंग से बातचीत करता। आप विश्वास करेंगे श्रीमान – सरकारी और सैनिक हरकारे आध-आध घण्टे तक उससे बतियाते रहते थे। सारा घर भी वही सम्भालती थी – झाड़ना-बुहारना, खाना पकाना, सभी कुछ कर लेती थी वह। मुझ बूढ़े उल्लू की तो उसे देखते-देखते नज़र ही नहीं भरती थी, मेरी ख़ुशी का तो कोई ठिकाना ही नहीं था। क्या जी-जान से प्यार नहीं करता था मैं अपनी बिटिया को, क्या बहुत सहेज कर नहीं रखता था मैं उसे, कोई कष्ट होने देता था क्या उसे? लेकिन नहीं, मुसीबत से बचा नहीं जा सकता, क़िस्मत में जो लिखा है, वह होकर रहता है।" अब इसके बाद वह सविस्तार अपनी दर्द-कहानी सुनाने लगा। तीन साल पहले जाड़े की एक शाम को जब डाक-चौकी का मुंशी अपने नये रजिस्टर में लकीरें खींच रहा था और उसकी बेटी बीच की दीवार के पीछे अपने लिये फ़्राक सी रही थी, तो तीन घोड़ों की एक गाड़ी – त्रोइका – आकर दरवाज़े पर रुकी। चेर्केसी ढंग की टोपी और बड़ा फ़ौजी कोट पहने तथा गुलूबन्द लपेटे हुए एक व्यक्ति कमरे में दाख़िल हुआ और उसने घोड़े मांगे। उस वक़्त सभी घोड़े गये हुए थे। यह ख़बर सुनते ही यात्री ने अपनी आवाज़ और कोड़ा भी ऊंचा किया। किन्तु दून्या, जो इस

तरह के दृश्यों की आदी हो चुकी थी, बीच की दीवार के पीछे से भागकर सामने आयी और बड़े स्नेह से उसने यात्री से पूछा – आप कुछ खाना पसन्द नहीं करेंगे? दून्या के सामने आने का जो असर होना चाहिये था, वही हुआ। आगन्तुक का गुस्सा ठंडा पड़ गया, वह घोड़ों का इन्तज़ार करने को राज़ी हो गया और उसने खाने का आदेश दे दिया। फ़र की झबरीली, गीली टोपी, गुलूबन्द और बड़ा फ़ौजी कोट उतार देने पर काली मूंछोंवाला एक सुघड़-सुडौल हुस्सार अफ़सर सामने आ गया। डाक-मुंशी के घर में इतमीनान से बैठ वह उससे और उसकी बेटी से हंस हंसकर बोलने-बतियाने लगा। उसके लिये भोजन परोस दिया गया। इसी बीच घोड़े भी आ गये और मुंशी ने आदेश दिया कि दाना-पानी दिये बिना उन्हें यात्री की बर्फ़-गाड़ी में जोत दिया जाये। किन्तु घर में लौटने पर उसने नौजवान अफ़सर को बेंच पर बेहाल-सा पड़ा पाया। वह बेहोश हो रहा था, उसके सिर में बहुत दर्द था और उसके लिये यात्रा जारी रखना सम्भव नहीं था... तो क्या किया जाये! मुंशी ने अपना पलंग उसे दे दिया और यह तय हुआ कि अगर बीमार की तबीयत बेहतर नहीं हो जायेगी, तो अगली सुबह को स... नगर से डाक्टर को बुलवाया जाये।

अगले दिन हुस्सार की तबीयत और ज़्यादा ख़राब हो गयी। उसका नौकर घोड़े पर सवार होकर डाक्टर को लाने के लिये शहर चला गया। दून्या ने सिरके में तर किया हुआ रूमाल उसके सिर पर रखा और अपनी सिलाई लेकर उसके पलंग के पास बैठ गयी। डाक-चौकी के मुंशी की उपस्थिति में रोगी हाय-वाय करता, मुंह से लगभग एक भी शब्द न निकालता, फिर भी वह कॉफ़ी के दो प्याले पी गया और आहें भरते हुए उसने अपने लिये दोपहर के भोजन का भी आदेश दिया। दून्या उसके पास ही बैठी रहती थी। वह बार-बार पीने के लिये कुछ देने को कहता और दून्या ख़ुद बनाये हुए लेमोनाड का गिलास उसे देती। रोगी अपने होंठ तर करता और हर बार गिलास लौटाते हुए कृतज्ञता प्रकट करने के लिये अपने क्षीण हाथ से उसका हाथ दबाता। दोपहर के भोजन के समय तक डाक्टर भी आ गया। उसने रोगी की नब्ज़ देखी, उसके साथ जर्मन भाषा में बातचीत की और रूसी में यह बताया कि उसे केवल आराम की ज़रूरत है और दो दिन बाद

वह अपनी यात्रा आगे जारी रखने के लायक़ हो जायेगा। हुस्सार ने डाक्टर को पच्चीस रूबल फ़ीस के रूप में दिये और उसे अपने साथ दोपहर का भोजन करने को आमन्त्रित किया। डाक्टर राज़ी हो गया, दोनों ने ख़ूब मज़े से भोजन किया, शराब की पूरी बोतल पी डाली और बहुत ख़ुश-ख़ुश एक दूसरे से विदा ली।

एक दिन और बीतने पर हुस्सार बिल्कुल भला-चंगा हो गया। वह बड़े रंग में था, लगातार कभी दून्या और कभी डाक-मुंशी के साथ हंसी-मज़ाक़ करता, सीटी बजाते हुए धुनें गुनगुनाता, यात्रियों से बातचीत करता, रजिस्टर में उनके यात्रा-पत्र दर्ज करता और इस तरह उसने डाक-मुंशी का ऐसे मन मोह लिया कि तीसरे दिन की सुबह को अपने इतने अच्छे मेहमान से विदा लेते हुए उसके दिल को कुछ हो रहा था। इतवार का दिन था और दून्या प्रार्थना के लिये गिरजे में जाने को तैयार हो रही थी। हुस्सार की बर्फ़-गाड़ी दरवाज़े के सामने लायी गयी। उसने डाक-मुंशी से विदा ली और अपने यहां ठहराने तथा खिलाने-पिलाने के लिये बहुत-सा पुरस्कार दिया। उसने दून्या से भी विदा ली और यह कहा कि उसे वह अपनी घोड़ागाड़ी में गिरजे तक पहुंचा देगा जो गांव के छोर पर था। दून्या दुविधा में पड़कर जहां की तहां खड़ी रह गयी... "अरे, तुम डर क्यों रही हो?" पिता ने उससे कहा, "ये महानुभाव कोई भेड़िया तो हैं नहीं, जो तुम्हें खा जायेंगे, गिरजे तक इनकी गाड़ी में चली जाओ।" दून्या हुस्सार की बर्फ़-गाड़ी में उसकी बग़ल में बैठ गयी, नौकर बाक्सवाली सीट पर जा बैठा, कोचवान ने सीटी बजायी और घोड़े तेज़ी से दौड़ने लगे।

बेचारा डाक-मुंशी यह समझने में असमर्थ था कि कैसे उसने अपनी दून्या को हुस्सार के साथ जाने दिया, कैसे उसकी आंखों पर पर्दा पड़ गया था और उसकी अक्ल कहां घास चरने चली गयी थी। आध घण्टा भी नहीं बीता था कि उसका दिल बुरी तरह बेचैन होने लगा और उसकी परेशानी इस हद तक बढ़ी कि बेटी को ढूंढ़ने के लिये ख़ुद गिरजे में चला गया। गिरजे के निकट पहुंचने पर उसने देखा कि लोग जा रहे हैं, किंतु दून्या न तो अहाते में थी और न ही गिरजे की ड्योढ़ी में। वह तेज़ डग भरता हुआ गिरजे में पहुंचा: पादरी

देव-मण्डप से बाहर निकल रहा था, गिरजे की देख-भाल करनेवाला मोमबत्तियां बुझा रहा था, दो बूढ़ी औरतें अभी तक एक कोने में प्रार्थना कर रही थीं, किन्तु दून्या गिरजे में नहीं थी। अभागे पिता ने आख़िर मन मारकर गिरजे के चौकीदार से यह पूछा कि दून्या प्रार्थना में आयी थी या नहीं। उसने जवाब दिया कि नहीं आयी थी। डाक-मुंशी न जीता, न मरता-सा वापस घर चल दिया। सिर्फ़ यही आस उसके दिल में रह गयी – हो सकता है कि जवानी की मस्ती में आकर दून्या ने अगली डाक-चौकी तक, जहां उसकी धर्म-माता रहती थी, जाने की ठान ली हो। बहुत ही यातनापूर्ण विह्वलता से वह उस त्रोइका बर्फ़-गाड़ी के लौटने की राह देखने लगा, जिसपर उसने अपनी बेटी को जाने दिया था। कोचवान नहीं लौटा। आख़िर रात हो जाने पर वह नशे में धुत्त अकेला लौटा और उसने यह भयानक ख़बर सुनायी – अगली डाक-चौकी से दून्या हुस्सार के साथ चली गयी।

अपने दुर्भाग्य की इस चोट को बूढ़ा सहन न कर सका, उसी समय उसने वह चारपाई थाम ली जिसपर वह जवान ढोंगी पिछले दिन पड़ा रहा था। सारी परिस्थितियों पर विचार करते हुए डाक-मुंशी समझ गया कि उस जवान ने बीमारी का नाटक किया था। बेचारे को ज़ोर के बुख़ार ने धर दबाया, उसे स... नगर में इलाज के लिये ले जाया गया और किसी अन्य को वक़्ती तौर पर उसकी जगह नियुक्त कर दिया गया। हुस्सार के इलाज के लिये आनेवाले डाक्टर ने ही उसकी चिकित्सा की। उसने डाक-मुंशी को विश्वास दिलाया कि नौजवान अफ़सर बिल्कुल स्वस्थ था, कि उसके बुरे इरादे के बारे में उसने तभी भांप लिया था, किन्तु उसके कोड़े से डरता हुआ ख़ामोश रहा था। जर्मन डाक्टर ने सच कहा था या अपनी दूर-दर्शिता की डींग हांकनी चाही थी, बेचारे रोगी को इससे कोई सन्तोष नहीं हुआ। अपनी बीमारी से थोड़ा अच्छा होते ही डाक-मुंशी ने स... नगर के डाक-अधिकारी से दो महीने की छुट्टी ली और किसी से भी अपने इरादे की चर्चा किये बिना पैदल ही अपनी बेटी की खोज में चल दिया। यात्रा-पत्र से उसे मालूम था कि कप्तान मीन्स्की स्मोलेन्स्क से आया था और पीटर्सबर्ग गया था। कप्तान को ले जानेवाले कोचवान ने बताया कि दून्या रास्ते भर रोती रही, यद्यपि

ऐसा लगता था कि वह गयी थी अपनी इच्छा से। "शायद मैं अपने उस राह भूले मेमने को घर वापस ला सकूंगा।" मन में यही विचार लिये हुए वह पीटर्सबर्ग पहुंचा, इज़्माइलोव पलटन की बारेक में अपने एक पुराने सेवानिवृत्त नान-कमीशंड साथी के यहां ठहरा और उसने अपनी खोज शुरू कर दी। जल्द ही उसे पता चल गया कि कप्तान मीन्स्की पीटर्सबर्ग में है और देमुतोव होटल में रह रहा है। डाक-मुंशी ने उसके यहां जाने का निर्णय किया।

वह तड़के ही उसके दरवाज़े पर पहुंचा और अर्दली से यह सूचना देने का अनुरोध किया कि एक बूढ़ा सैनिक हुज़ूर से मिलना चाहता है। घुटनों तक के जूतों को एक बक्से पर रखकर साफ़ कर रहे फ़ौजी अर्दली ने उसे बताया कि साहब सो रहे हैं और ग्यारह बजे से पहले वे किसी से नहीं मिलते। डाक-मुंशी चला गया और नियत समय पर फिर से यहां आया। ड्रेसिंग-गाउन पहने और सिर पर लाल टोपी रखे हुए मीन्स्की ख़ुद बाहर आया। "कहो भाई, क्या चाहिये तुम्हें?" उसने पूछा। बूढ़े के दिल में तूफ़ान-सा उमड़ पड़ा, उसकी आंखें छलछला आयीं और कांपती आवाज़ में वह केवल इतना ही कह पाया, "हुज़ूर, इतनी मेहरबानी कीजिये!.." मीन्स्की ने झटपट उसकी तरफ़ देखा, उसके गालों पर सुर्ख़ी दौड़ गयी, उसका हाथ पकड़कर वह उसे अपने कमरे में ले गया और उसने भीतर से दरवाज़ा बन्द कर लिया। "हुज़ूर," बूढ़े ने फिर से कहा, "उतरा हुआ पानी वापस नहीं आता, पर कम से कम मुझे मेरी बेचारी दून्या तो लौटा दीजिये। आपने उससे अपना जी ख़ुश कर लिया, लेकिन अब व्यर्थ उसका जीवन तो नष्ट नहीं करें।" – "जो हो गया, उसे लौटाया नहीं जा सकता," बड़ी उलझन में पड़े युवा अफ़सर ने कहा, "मैं तुम्हारे सम्मुख दोषी हूं और क्षमा चाहता हूं; मगर तुम यह न सोचो कि मैं उसे कूड़े-करकट में फेंक सकता हूं। क़सम खाकर कहता हूं कि वह सुखी रहेगी। तुम उसे ले जाकर क्या करोगे? वह मुझे प्यार करती है, अपनी पहली स्थिति की अभ्यस्त नहीं रही। जो कुछ हो गया है, उसे न तो तुम और न वही भूल सकती है।" इसके बाद उसकी आस्तीन में कुछ खोंसकर उसने दरवाज़ा खोल दिया और डाक-मुंशी कुछ न समझ पाते हुए सड़क पर बाहर आ गया।

बूढ़ा देर तक बुत बना खड़ा रहा। आख़िर उसे आस्तीन के कफ़ में काग़ज़ों की एक गड्डी-सी दिखाई दी। उसने उसे निकालकर खोला और उसमें पांच-पांच तथा दस-दस रूबल के कई मुड़े-मुड़ाये नोट पाये। उसकी आंखों में फिर से आंसू आ गये—विक्षोभ के आंसू। उसने नोटों को मसलकर उनका गोला-सा बनाया, उसे ज़मीन पर फेंका, जूते की एड़ी से रौंदा और आगे चल दिया… कुछ क़दम जाकर वह रुका, उसने थोड़ी देर विचार किया और मुड़ा… किन्तु नोट ग़ायब हो चुके थे। लक़-दक़ कपड़े पहने एक नौजवान उसे अपनी ओर आते देखकर बग्घी की तरफ़ लपका, जल्दी से उसमें बैठ गया और उसने चिल्लाकर कोचवान से कहा, "चलो!.." डाक-मुंशी ने उसका पीछा नहीं किया। उसने अपनी डाक-चौकी पर लौटने का फ़ैसला कर लिया, किन्तु ऐसा करने से पहले अपनी बेचारी दून्या को एक बार देख लेना चाहा। दो दिन बाद वह पुनः मीन्स्की के यहां लौटा। किन्तु फ़ौजी अर्दली ने बड़ी कठोरता से उससे कहा कि मालिक किसी से नहीं मिलते, धकियाकर उसे ड्योढ़ी से बाहर निकाला और फटाक से दरवाज़ा बन्द कर दिया। डाक-मुंशी खड़ा रहा, खड़ा रहा—और फिर वापस चला गया।

बूढ़ा उसी शाम को गिरजे की प्रार्थना के बाद लितेयनाया सड़क पर जा रहा था। अचानक उसके सामने से एक बढ़िया बग्घी गुज़री और उसने उसमें बैठे मीन्स्की को पहचान लिया। बग्घी एक तिमंज़िले मकान के दरवाज़े के सामने रुकी और हुस्सार भागकर ओसारे में चला गया। डाक-मुंशी को एक बात सूझी। वह मुड़ा और कोचवान के पास जाकर उसने पूछा, "किसकी बग्घी है यह भाई? मीन्स्की की तो नहीं?"—"उन्हीं की है," कोचवान ने जवाब दिया, "मगर तुम्हें इससे मतलब?"—"बात यह है कि तुम्हारे साहब ने दून्या के पास पहुंचा देने के लिये एक रुक्क़ा मुझे दिया था, लेकिन मुझे याद नहीं रहा कि दून्या कहां रहती है।"—"यहीं रहती है, दूसरी मंज़िल पर। देर कर दी तुमने मेरे भाई, रुक्क़ा लेकर आने में। अब तो साहब खुद उसके पास हैं।"—"इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता," दिल में अस्पष्ट-सी धड़कन अनुभव करते हुए बूढ़े ने कोचवान की बात काटी। "यह बताने के लिये धन्यवाद, मैं अपना कर्त्तव्य पूरा कर आता हूं।" इतना कहकर वह ज़ीने पर चढ़ चला।

दरवाज़ा बन्द था। उसने घण्टी बजायी और उसके लिये बहुत बोझिल प्रतीक्षा के कुछ क्षण बीते। चाबी को ताले में डालने की आवाज़ हुई और दरवाज़ा खुला। "अव्दोत्या सम्सोनोव्ना क्या यहीं रहती हैं?" उसने पूछा। "हां," जवान नौकरानी ने जवाब दिया। "तुम्हें उनसे क्या काम है?" डाक-मुंशी ने कोई उत्तर नहीं दिया और भीतर बढ़ चला। "भीतर नहीं जाइये, नहीं जाइये!" नौकरानी पीछे से चिल्लायी, "अव्दोत्या सम्सोनोव्ना के यहां इस समय मेहमान हैं।" किन्तु डाक-मुंशी उसकी बात पर कान दिये बिना आगे चलता गया। पहले दो कमरों में अन्धेरा था, तीसरे में रोशनी थी। खुले दरवाज़े के पास आकर वह रुक गया। बहुत ही सजे-धजे कमरे में मीन्स्की सोच में डूबा हुआ बैठा था। आधुनिकतम फ़ैशन की पुतली-सी बनी दून्या उसकी आरामकुर्सी के हत्थे पर ऐसे बैठी थी जैसे कोई नारी-घुड़सवार अंग्रेज़ी ज़ीन पर बैठी हो। वह मुग्ध भाव से मीन्स्की को देखती हुई उसके काले घुंघराले बालों को अपनी हीरों से चमकती उंगलियों के गिर्द लपेट रही थी। बेचारा डाक-चौकी का मुंशी! उसे अपनी बेटी कभी भी इतनी सुन्दर नहीं लगी थी, वह बरबस उसे देखता ही रह गया। "कौन है वहां?" दून्या ने सिर ऊपर उठाये बिना पूछा। बूढ़ा बाप चुप रहा। कोई उत्तर न मिलने पर दून्या ने सिर ऊपर उठाया... और वह चीख़ मारकर क़ालीन पर गिर गयी। मीन्स्की घबराकर उसे उठाने के लिये लपका, अचानक डाक-मुंशी को दरवाज़े के पास खड़ा देखकर उसने दून्या को वहीं छोड़ दिया और गुस्से से कांपता हुआ उसके पास गया, "क्या चाहिये तुम्हें?" उसने दांत पीसते हुए पूछा, "चोरों की तरह हर जगह मेरा पीछा क्यों करते रहते हो? या तुम मेरी जान लेने के फेर में पड़े हो? दफ़ा हो जाओ यहां से!" और उसने अपने मज़बूत हाथ से बूढ़े का कालर पकड़कर उसे ज़ीने की ओर धकेल दिया।

बूढ़ा वापस आया। उसके दोस्त ने सुझाव दिया कि वह मीन्स्की के ख़िलाफ़ शिकायत करे, किन्तु डाक-मुंशी ने कुछ देर सोचकर हाथ झटका और इस ख़्याल को रद्द कर दिया। दो दिन बाद वह पीटर्सबर्ग से अपनी डाक-चौकी को वापस चल पड़ा और फिर से वही पुराना काम करने लगा। "तो अब तीसरा साल चल

5*

रहा है इस बात को," उसने अन्त में कहा, "मैं दून्या के बिना रह रहा हूं और कोई ख़ैर-ख़बर नहीं है मुझे उसके बारे में। वह ज़िन्दा है या मर गयी, भगवान ही जाने। सब कुछ होता है इस दुनिया में। किसी आते-जाते छैल-छबीले के फेर में पड़ जानेवाली वह न तो पहली है और न आख़िरी जिसके साथ मौज मनाकर फिर उसे एक तरफ़ फेंक दिया जाता है। पीटर्सबर्ग में ऐसी बहुत-सी बुद्धू युवतियां हैं जो आज मख़मल और रेशम से लदी हुई हैं, मगर कल फटेहाल शराबियों-पियक्कड़ों के साथ सड़कें बुहारती दिखाई देती हैं। जैसे ही कभी यह ख़्याल आता है कि दून्या की भी ऐसी दुर्गति हो सकती है, तो अनचाहे ही मेरा मन उसकी मौत की कामना करने लगता है..."

तो यह थी दर्द-कहानी मेरे मित्र, मेरे बूढ़े डाक-मुंशी की, जिसे सुनाते हुए अनेक बार उसका गला रुंध गया था। अपने आंसुओं को वह वैसे ही अनूठे अन्दाज़ में कोट के पल्लू से पोंछता था जैसे द्मीत्रियेव की सुन्दर कविता में उद्यमी तेरेन्तिच* करता है। उसके आंसू कुछ हद तक शराब के प्रभाव का भी परिणाम थे, जिसके वह कहानी सुनाते हुए पांच गिलास पी गया था। कुछ भी क्यों न हो, उसके आंसुओं ने मेरे मर्म को अत्यधिक छू लिया था। उससे अलग होने पर मैं बहुत समय तक बूढ़े डाक-मुंशी को नहीं भूल सका, बेचारी दून्या के बारे में भी बहुत समय तक मेरे मन में विचार बने रहे...

कुछ ही समय पहले ... बस्ती में से गुज़रते हुए मुझे अपने मित्र का ध्यान हो आया। मालूम करने पर पता चला कि जिस डाक-चौकी का वह मुंशी था, उसे कभी का बन्द किया जा चुका है। मेरे इस प्रश्न का कि "बूढ़ा डाक-मुंशी ज़िन्दा है या नहीं?" किसी से सन्तोष-जनक उत्तर नहीं मिला। मैंने अपने सुपरिचित स्थान को देखने के लिये जाने का निर्णय किया, किराये की बग्घी ली और "न" गांव की ओर चल दिया।

यह पतझर के दिनों की बात है। धूसर बादल आकाश को ढके हुए थे, फ़सल-कटे खेतों से ठण्डी हवा आ रही थी और रास्ते में आने-वाले वृक्षों के लाल तथा पीले पत्ते अपने साथ उड़ाकर ला रही थी। मैं सूर्यास्त के समय गांव में पहुंचा और डाक-चौकीवाले घर के सामने

---

* १८वीं शताब्दी के रूसी कवि इवान द्मीत्रियेव की एक कविता में वर्णित बन्धक-दास तेरेन्तिच की ओर संकेत है। —सं०

रुका। उस ड्योढ़ी में (जहां कभी बेचारी दून्या ने मुझे चूमा था) एक मोटी-सी औरत सामने आयी और मेरे सवाल के जवाब में उसने बताया कि बूढ़े डाक-मुंशी को मरे हुए एक साल हो गया, कि उसके घर में अब एक बियर बनानेवाला रहने लगा है और वह उसी बियर बनानेवाले की बिवी है। मुझे अपनी व्यर्थ की यात्रा और व्यर्थ ख़र्च किये गये सात रूबलों के लिये अफ़सोस हुआ। "किस कारण मृत्यु हुई उसकी?" मैंने बियर बनानेवाले की बीवी से पूछा। "शराब में डूब गया था, भैया।" उसने जवाब दिया। "उसे दफ़नाया कहां गया है?" – "गांव के छोर पर, उसकी बीवी की बग़ल में।" – "क्या कोई मुझे वहां तक पहुंचा सकता है?" – "क्यों नहीं पहुंचा सकता! ए वान्का, बिल्ली का पिंड छोड़। इन साहब को क़ब्रिस्तान ले जाकर डाक-मुंशी की क़ब्र दिखा दो।"

ये शब्द सुनते ही फटे-पुराने कपड़े पहने लाल बालोंवाला काना लड़का भागता हुआ मेरे पास आया और मुझे गांव के छोर की ओर ले चला।

"क्या तुम डाक-मुंशी को जानते थे?" मैंने रास्ते में उससे पूछा।

"जानता कैसे नहीं था! उन्होंने मुझे सीटी बनानी सिखायी थी। कभी-कभी ऐसा होता था कि वे शराबख़ाने से बाहर आते (भगवान उनकी आत्मा को शान्ति दे!) और हम उनके पीछे-पीछे शोर मचाने लगते, "दादा, दादा! अखरोट दो!" और वे हमें सारे अखरोट दे डालते। अक्सर वे हमारे साथ ही खेलते रहते।"

"राहगीर उन्हें याद करते हैं या नहीं?"

"राहगीर तो अब यहां आते ही बहुत कम हैं। कोई अदालती अफ़सर आ जाये, तो बात दूसरी है और वह मुर्दों के बारे में पूछताछ नहीं करता। हां, गर्मियों में एक कुलीन महिला आयी थी, उसने बूढ़े डाक-मुंशी के बारे में पूछताछ की और उनकी क़ब्र पर गयी थी।"

"कैसी थी वह महिला?" मैंने जिज्ञासावश पूछा।

"बहुत ही सुन्दर थी," लड़के ने जवाब दिया, "वह छः घोड़ों-वाली बग्घी में यहां आयी, उसके साथ तीन बच्चे, आया और एक छोटा-सा काला कुत्ता भी था। जैसे ही उसे यह बताया गया कि डाक-चौकीवाला बूढ़ा इस दुनिया में नहीं रहा, वह रो पड़ी और बच्चों से बोली, 'यहां चैन से बैठे रहना, मैं क़ब्रिस्तान हो आती हूं।' मैंने

उसके साथ चलना चाहा, किन्तु वह बोली, 'मैं ख़ुद रास्ता जानती हूं।' और उसने मुझे चांदी का पांच कोपेक का सिक्का दिया – इतनी अच्छी थी वह!.."

हम क़ब्रिस्तान में पहुंच गये, एकदम उजाड़-सुनसान जगह, जिसके गिर्द बाड़ नहीं थी, सभी जगह लकड़ी की सलीबें लगी हुई थीं और छाया देनेवाला एक भी वृक्ष नहीं था। ज़िन्दगी में कभी ऐसा मनहूस क़ब्रिस्तान मैंने नहीं देखा।

"यह है डाक-चौकीवाले बूढ़े की क़ब्र," लड़के ने बालू के ढूह पर उछलकर कहा, जिसमें तांबे की देव-प्रतिमावाली काली सलीब धंसी थी।

"वह महिला यहां आयी थी?" मैंने पूछा।

"हां, आयी थी," वान्का ने जवाब दिया। "मैं उसे दूर से देखता रहा था। वह यहां आकर गिर गयी और देर तक ऐसे ही पड़ी रही। इसके बाद वह गांव में गयी, उसने पादरी को बुलवाया, उसे पैसे दिये और मुझे चांदी का पांच कोपेक का सिक्का दिया – बहुत अच्छी थी वह महिला।"

मैंने भी लड़के को पांच कोपेक का सिक्का दिया और अब मुझे न तो यहां तक की यात्रा करने और न ही उन सात रूबलों का अफ़सोस था जो मैंने ख़र्च किये थे।

प्रेम-मिलन

मेरी प्यारी, कुछ भी पहनो
पर तुम सुन्दर लगती हो।

बोग्दानोविच *

इवान पेत्रोविच बेरेस्तोव की जागीर हमारे देश के एक दूरस्थ गुबेर्निया में थी। अपनी जवानी के दिनों में वह गार्ड सेना में था,

---

* १८वीं शताब्दी के रूसी कवि इप्पोलीत बोग्दानोविच की 'मन की रानी' लम्बी कविता से। – सं०

१७९७ के आरम्भ में सैन्य-सेवा से मुक्त होकर अपने गांव में चला आया और वहीं बस गया। एक ग़रीब कुलीना से उसने शादी की, जो उस समय, जब वह शिकार के लिये गया हुआ था, बच्चे को जन्म देते हुए इस दुनिया से चल बसी। जागीर की देखभाल में शीघ्र ही उसके मन को चैन मिल गया। उसने अपनी योजना के अनुसार मकान का निर्माण करवाया, कपड़े की एक फ़ैक्टरी लगा ली, अच्छी आमदनी हासिल करने और पूरे इलाक़े में अपने को सब से ज़्यादा अक़्लमन्द आदमी मानने लगा। उसके पड़ोसी, जो अपने परिवार और कुत्तों सहित उसके यहां आकर डेरा डाले रहते थे, अपने बारे में उसकी उक्त राय का कभी खण्डन नहीं करते थे। हर दिन तो वह मख़मल की जाकेट पहने घूमता रहता, किन्तु पर्वों-त्योहारों के अवसरों पर घर के बने बनात के बढ़िया फ़्राक-कोट में ठाठ से बाहर निकलता; अपना सारा हिसाब-किताब ख़ुद लिखता और 'सिनेट-समाचार' के अलावा और कुछ न पढ़ता। कुल मिलाकर, लोग उसे प्यार करते थे, यद्यपि घमण्डी मानते थे। केवल उसके निकटतम पड़ोसी, ग्रिगोरी इवानोविच मूरोम्स्की की ही उसके साथ पटरी नहीं बैठती थी। वह असली रूसी ढंग का रईस था। अपनी जागीर का अधिकतर भाग मास्को में उड़ाने-लुटाने और तभी विधुर हो जाने के बाद वह अपने एकमात्र बच रहे गांव में आ गया, जहां नये तरीक़े से उल्टी-सीधी हरकतें करता रहा। उसने अंग्रेज़ी ढंग का बाग़ लगवाया और जो कुछ हाथ-पल्ले बचा था, वह उसकी नज़र कर दिया। उसके सईस अंग्रेज़ जॉकियों की तरह सजे-बजे रहते, एक अंग्रेज़ मदाम उसकी बेटी को पढ़ाती और अपने खेतों में वह अंग्रेज़ी ढंग से खेतीबारी करता – रूसी अन्न न पैदा होता किन्तु पराये ढंग से – और ख़र्च में बहुत कतर-ब्योंत करने के बावजूद ग्रिगोरी इवानोविच की आय नहीं बढ़ी। गांव में भी वह जैसे-तैसे नये क़र्ज़े ले लेता। इन सब बातों के बावजूद उसे समझदार आदमी माना जाता था, क्योंकि अपने गुबेर्निया का वही पहला ज़मींदार था जिसने सबसे पहले अपनी जागीर "संरक्षण-परिषद" के अधीन गिरवी रखी थी। उस ज़माने के मुताबिक़ यह बहुत ही पेचीदा और साहस का काम प्रतीत होता था। उस पर टीका-टिप्पणी करनेवालों में बेरेस्तोव ही सबसे ज़्यादा कठोर था। नये तौर-तरीक़ों के प्रति

घृणा उसके स्वभाव का एक विशेष लक्षण थी। अपने पड़ोसी की अंग्रेज़ियत के जनून के बारे में वह उदासीन रह ही नहीं पाता था और उसकी आलोचना का कोई भी मौक़ा हाथ से न जाने देता। किसी मेहमान को वह अपनी जागीर दिखाता और अपने प्रबन्ध की प्रशंसा के उत्तर में वह व्यंग्यपूर्ण धूर्त्तता से कहता, "जी! मैं पड़ोसी ग्रिगोरी इवानोविच की भांति हवाई क़िले नहीं बनाता। अंग्रेज़ी रंग-ढंग के फेर में पड़कर कौन भला अपने को बरबाद करे! रूसी ढंग से पेट भरने को मिल जाये, इतना ही बहुत है!" उत्साही पड़ोसियों द्वारा ऐसे और इसी तरह के दूसरे व्यंग्य-बाण कुछ बढ़ा-चढ़ाकर और नमक-मसाले के साथ ग्रिगोरी इवानोविच तक पहुंचाये जाते। अंग्रेज़ियत का दीवाना हमारे पत्रकारों की तरह अपनी ऐसी आलोचना से झल्ला उठता और आग-बबूला होकर अपने इस आलोचक को भालू और दक़ियानूसी कहता।

इन दोनों ज़मींदारों के बीच जब ऐसी तनातनी चल रही थी, उसी समय बेरेस्तोव का बेटा उसके पास गांव में आया। उसने ... विश्वविद्यालय में शिक्षा पायी थी और फ़ौज में जाना चाहता था, मगर उसके पिता इसके लिये राज़ी नहीं थे। दूसरी ओर, नौजवान बेटा अपने को ग़ैरफ़ौजी नौकरी के बिल्कुल अयोग्य अनुभव करता था। बाप-बेटा अपनी-अपनी बात पर अड़े हुए थे और जवान अलेक्सेई फ़िलहाल रईसी का निठल्ला जीवन बिताने लगा और इस ख़्याल से कि जाने कब उनकी ज़रूरत पड़ जाये उसने मूंछें बढ़ा लीं।*

अलेक्सेई तो वास्तव में ही बड़ा ख़ूबसूरत जवान था। सचमुच ही यह बड़े अफ़सोस की बात होती कि उसकी सुघड़-सुडौल काठी पर फ़ौजी वर्दी कभी अपनी अनूठी छटा न दिखाती और घोड़े की सवारी करने के बजाय दफ़्तरी काग़ज़ों से मत्थापच्ची करते हुए ही वह अपनी पीठ झुका लेता। शिकार के वक़्त रास्ते की किसी भी बाधा की परवाह किये बिना जब वह सबसे आगे-आगे सरपट घोड़ा दौड़ाता, तो पड़ोसी यह देखकर एकमत से कहते कि वह कभी ढंग का दफ़्तरी अफ़सर नहीं बन पायेगा। युवतियां उसे प्रशंसा से देखतीं, कोई-कोई मुग्ध भी हो

---

* उस ज़माने में सरकारी कर्मचारियों के लिये दाढ़ी-मूंछ रखने की कड़ी मनाही थी। किन्तु सैनिकों के लिये मूंछें रखना अनिवार्य था। – सं०

जाती, किन्तु अलेक्सेई उनमें कोई दिलचस्पी ज़ाहिर न करता। वे उसकी ऐसी उदासीनता का यह अर्थ लगातीं कि वह किसी के प्रेम-जाल में फंसा हुआ है। इतना ही नहीं, उसके एक पत्र के पतेवाला यह रुक़्क़ा भी उनके हाथों में घूम गया था – मास्को, अलेक्सी मठ के सामने, ठठेरे सवेल्येव का मकान, अकुलीना पेत्रोव्ना कूरोच्किना के नाम। कृपया यह पत्र अ० न० र० को पहुंचा दें।

मेरे पाठक जो कभी गांव में नहीं रहे, इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकते कि गुबेर्निया की ये युवतियां कैसी कमाल की होती हैं! स्वच्छ हवा और अपने बाग़ों के सेब के पेड़ों की छाया में पली ये युवतियां पुस्तकों से ही दीन-दुनिया का ज्ञान प्राप्त करती हैं। एकान्त, स्वच्छन्दता और अध्ययन उनमें कच्ची उम्र में ही ऐसी भावनाओं, उद्वेगों और भावावेशों को जन्म दे देते हैं जिनसे हमारी नगर की सुन्दरियां अनजान रहती हैं। ऐसी युवतियों के लिये घण्टियों की टनटन अनूठी बात होती है, पड़ोस के नगर की यात्रा उनके जीवन की बड़ी महत्वपूर्ण घटना बन जाती है और किसी मेहमान का आगमन बहुत समय के लिये तथा कभी-कभी तो जीवन भर के लिये अमिट छाप छोड़ जाता है। ज़ाहिर है कि इनके कुछ अटपटेपन पर कोई हंस सकता है, किन्तु सतही ज्ञान रखनेवाले निरीक्षकों के मज़ाक़ों से उनके गहन गुणों पर पर्दा नहीं पड़ सकता, जिनमें से मुख्य हैं – चारित्रिक विशिष्टता, व्यक्तित्व की मौलिकता (individualité), जिसके बिना, जॉन पाल* के मतानुसार, मानवीय महत्ता भी नहीं हो सकती। राजधानियों की नारियों को सम्भवतः अधिक अच्छी शिक्षा मिलती है, किन्तु ऊंचे समाज का रंग-ढंग शीघ्र ही उनकी चारित्रिक विलक्षणता का अन्त कर देता है और उनकी आत्माओं में टोपियों जैसी एकरूपता आ जाती है। उनके बारे में ऐसा कहकर न तो हम अपना कोई फ़ैसला सुना रहे हैं और न उनकी भर्त्सना ही कर रहे हैं, फिर भी जैसे कि एक पुराने टिप्पणीकार ने लिखा है – nota nostra manet.**

---

* रोमानी धारा के जर्मन लेखक जोहन पाउल रीख़्तर (१७६३–१८२५) का उपनाम। – सं०

** हमारी टिप्पणी अपनी जगह पर बिल्कुल ठीक है (लातीनी)।

इस बात की कल्पना करना कुछ कठिन नहीं होगा कि हमारी युवतियों के बीच अलेक्सेई ने कैसा प्रभाव पैदा किया होगा। उनके सामने आनेवाला वह पहला इतना उदास और निराशा में डूबा हुआ युवक था, वही पहला ऐसा था जो लुटी हुई ख़ुशियों और मुरझाये हुए यौवन की बातें करता था। इतना ही नहीं, वह खोपड़ी के चित्रवाली काली अंगूठी पहनता था। उस गुबेर्निया के लिये यह सब कुछ एकदम नया था। युवतियां उसके लिये पागल हुई जा रही थीं।

किन्तु अंग्रेज़ी रंग-ढंग के दीवाने की बेटी लीज़ा (या बेत्सी, जैसे कि उसके पिता ग्रिगोरी इवानोविच उसे बुलाते थे) सबसे ज़्यादा अलेक्सेई के फेर में पड़ी हुई थी। दोनों के पिता एक दूसरे के यहां कभी आते-जाते नहीं थे, लीज़ा ने अलेक्सेई को अभी तक देखा नहीं था, जबकि जवान पड़ोसिनें सिर्फ़ उसी की बातें करती रहती थीं। लीज़ा सत्रह साल की थी। उसकी काली आंखें उसके सांवले और बहुत ही प्यारे चेहरे को विशेष सजीवता प्रदान करती थीं। वह अपने पिता की इकलौती और इसीलिये लाड़-प्यार से बिगड़ी हुई बेटी थी। उसकी चंचलता और हर क्षण उसके द्वारा की जानेवाली शरारतों से पिता को बड़ी ख़ुशी होती, मगर जिनसे नियमनिष्ठ मिस जैक्सन बुरी तरह परेशान हो उठती। यह अविवाहिता, चालीस वर्षीया शिक्षिका अपने चेहरे को चिकनाती-चमकाती, भौंहों को रंगती, साल में दो बार 'पामेला'* पढ़ती, दो हज़ार रूबल वार्षिक वेतन पाती और इस "बर्बर रूस" में ऊब के मारे उसकी जान निकलती।

लीज़ा की नौकरानी थी नास्त्या। वह लीज़ा से कुछ बड़ी थी, मगर अपनी मालकिन की तरह ही चंचल। लीज़ा उसको बहुत प्यार करती थी, उसे अपने दिल के सभी राज़ बताती थी और उसके साथ मिलकर अपनी शरारतों के सभी मंसूबे बनाती थी। संक्षेप में यह कि प्रिलूचिनो गांव में नास्त्या किसी भी दुखान्ती फ़्रांसीसी उपन्यास की विश्वासपात्र सहेली से कहीं अधिक महत्त्व रखती थी।

---

* अंग्रेज़ उपन्यासकार रिचर्डसन के 'पामेला' (१७४१) उपन्यास से अभिप्राय है। – सं०

"मैं आज किसी के यहां जा सकती हूं?" अपनी मालकिन का सिंगार करते हुए नास्त्या ने एक दिन पूछा।

"हां, मगर यह बताओ कि जाना कहां है?"

"तुगीलोवो गांव में, बेरेस्तोवों के यहां। उनके बावर्ची की बीवी का आज जन्मदिन है और कल वह मुझे भोजन का निमंत्रण देने आयी थी।"

"यह भी ख़ूब रही!" लीज़ा ने कहा, "मालिकों की आपस में बोल-चाल तक नहीं और नौकर एक दूसरे की दावतें करते हैं।"

"हमें मालिकों से क्या लेना-देना!" नास्त्या ने आपत्ति की, "इसके अलावा मैं तो आपकी नौकरानी हूं, आपके पापा की तो नहीं। युवा बेरेस्तोव का अभी आपसे तो कोई झगड़ा नहीं हुआ। बूढ़ों को अगर इसी में मज़ा आता है, तो उलझते रहें दोनों आपस में।"

"नास्त्या, तुम अलेक्सेई बेरेस्तोव को देखने की कोशिश करना और फिर मुझे एक सिलसिले से यह बताना कि वह देखने में कैसा लगता है और किस ढंग का आदमी है।"

नास्त्या ने ऐसा करने का वचन दिया और लीज़ा दिन भर बड़ी बेचैनी से उसके लौटने की राह देखती रही। नास्त्या शाम को घर लौटी।

"तो लीज़ावेता ग्रिगोर्येव्ना," उसने कमरे में दाख़िल होते हुए कहा, "देखा, ख़ूब जी भरकर देखा मैंने युवा बेरेस्तोव को। हम दिन भर साथ रहे।"

"यह कैसे हो सकता है? बताओ, सब कुछ सिलसिलेवार बताओ।"

"तो सुनिये – मैं, अनीसिया येगोरोव्ना, नेनीला और दून्या... हम एकसाथ रवाना हुईं।"

"यह सब मुझे मालूम है। इसके बाद क्या हुआ?"

"कृपया टोकिये नहीं, शुरू से आख़िर तक सब कुछ बताने दीजिये। तो हम ठीक भोजन के समय पहुंचीं। कमरा लोगों से भरा हुआ था। कोल्बिन और ज़खार्येव की नौकरानियां भी वहां थीं, बेटियों सहित कारिन्दे की बीवी, ख़्लूपिन की नौकरानियां भी..."

"और बेरेस्तोव?"

"ज़रा ठहरिये न। सो हम मेज़ के गिर्द बैठ गयीं, कारिन्दे की बीवी मेज़बान की बग़ल में और मैं उसके पास... कारिन्दे की बेटियों ने मुंह फुला लिये, मगर मेरी जूती परवाह करे उनकी..."

"ओह, नास्त्या, कितनी ऊब पैदा करती हैं तुम्हारी ये हमेशा की तफ़सीलें!"

"और आप में भी तो ज़रा धीरज नहीं! तो आख़िर हम दावत की मेज़ पर से उठीं... हम कोई तीन घण्टे बैठी रही थीं। भोजन बहुत बढ़िया था, नीली, लाल और धारीदार पेस्ट्रियां थीं... हम मेज़ पर से उठीं और बगीचे में छू-पकड़ खेलने चली गयीं। जवान मालिक भी वहीं आ गया।"

"तो बताओ, क्या सचमुच ही वह प्यारा है?"

"अद्भुत रूप से प्यारा, कहा जा सकता है कि बहुत ही सुन्दर। सुघड़-सुगठित शरीर, ऊंचा क़द, दोनों गालों पर गुलाब खिले हुए..."

"सच? मगर मेरा तो ऐसा ख़्याल था कि उसका चेहरा पीला होगा। तो? कैसा लगा वह तुम्हें? उदास-सा, विचारों में डूबा हुआ?"

"क्या कह रही हैं आप? ऐसा मस्त-मौजी तो मैंने पहले कभी देखा ही नहीं। जाने उसे क्या सूझी, हमारे साथ छू-पकड़ खेलने लगा।"

"तुम लोगों के साथ छू-पकड़ खेलने लगा! यह असम्भव है!"

"बिल्कुल सम्भव है! इतना ही नहीं, वह तो और भी आगे बढ़ गया। जिस किसी को पकड़ लेता, उसे चूमे बिना न छोड़ता!"

"मर्ज़ी तुम्हारी, नास्त्या, लेकिन तुम झूठ बोल रही हो।"

"मर्ज़ी आपकी, मैं झूठ नहीं बोल रही हूं। मैंने ख़ुद बड़ी मुश्किल से उससे पिण्ड छुड़ाया। इसी तरह उसने पूरा दिन हमारे साथ बिताया।"

"मगर सुनने में तो यह आया है कि वह किसी के प्रेम में दीवाना है और किसी दूसरी लड़की की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखता?"

"मालूम नहीं, लेकिन मुझे तो उसने ख़ूब नज़र गड़ाकर देखा, कारिन्दे की बेटी तान्या को भी, कोल्बिन की पाशा को भी। हां, यह कहना पाप होगा कि उसने किसी की अवहेलना की, ऐसा शैतान है।"

"बड़े अचम्भे की बात है यह तो! घर में उसके बारे में लोगों की क्या राय है?"

"लोगों का कहना है कि बहुत ही अच्छा रईसज़ादा है वह, बड़ा दयालु और बहुत ही ख़ुशमिज़ाज। सिर्फ़ एक ही बुराई है उसमें – लड़कियों के पीछे भागने का बड़ा चसका है उसे। लेकिन मेरे ख़्याल

में तो यह कोई बड़ी मुसीबत नहीं है – धीरे-धीरे रास्ते पर आ जायेगा।"

"ओह, कितनी उत्सुक हूं मैं उसे देखने को!" लीज़ा ने गहरी सांस छोड़ते हुए कहा।

"यह कौन-सी बड़ी बात है? तुगीलोवो गांव हमारे यहां से कुछ दूर नहीं, सिर्फ़ तीन वेर्स्ता है। उसी तरफ़ पैदल घूमने निकल जाइये या घोड़े पर सवारी करते हुए। निश्चय ही आपकी उससे भेंट हो जायेगी। वह तो हर दिन तड़के ही बन्दूक़ लेकर शिकार को निकलता है।"

"अरी नहीं, ऐसा करना अच्छा नहीं होगा। वह सोच सकता है कि मैं उसके लिये मरी जा रही हूं। इसके अलावा हम दोनों के पिताओं के बीच तनातनी चल रही है, इसलिये मैं उसके साथ यों भी जान-पहचान नहीं कर सकती... अरी, नास्त्या! तुम्हें एक बात बताऊं? मैं किसान लड़की का भेस बना लूंगी।"

"हां, हां, यह बहुत अच्छा ख़्याल है। गाढ़े की क़मीज़, उसके ऊपर सराफ़ान पहनिये और बेधड़क तुगीलोवो की ओर चल दीजिये। यक़ीन दिलाती हूं कि बेरेस्तोव आपकी ओर ध्यान दिये बिना नहीं रह सकेगा।"

"देहाती ढंग से बात करना तो मुझे बहुत अच्छी तरह आता ही है। अरी, नास्त्या, प्यारी नास्त्या! कितनी अच्छी तरकीब सूझी है यह मुझे!" और लीज़ा अपने इस दिलचस्प विचार को अवश्य ही अमली शक्ल देने का इरादा बनाकर सोने के लिये बिस्तर पर चली गयी।

अगले ही दिन वह अपने इरादे को अमली शक्ल देने के काम में जुट गयी। उसने बाज़ार से मोटा कपड़ा, नीले रंग की छींट और तांबे के बटन मंगवाये, नास्त्या की मदद से अपने लिये क़मीज़ और सराफ़ान काटा, सभी नौकरानियों को सिलाई करने के लिये बिठा दिया और शाम तक दोनों चीज़ें तैयार हो गयीं। लीज़ा ने उन्हें पहनकर दर्पण में अपने को निहारा और उसे भी यह मानना पड़ा कि इतनी प्यारी तो वह ख़ुद को भी कभी नहीं लगी थी। उसने अपनी भूमिका की रिहर्सल की, चलते-चलते अपना सिर झुकाया, मिट्टी के चूलदार बिल्लों की भांति उसे कई बार दायें-बायें हिलाया, किसानी बोली में

बातचीत की और आस्तीन से मुंह ढंकते हुए हंसी। नास्त्या को उसकी यह भूमिका ख़ूब जंची। हां, एक ही मुश्किल का सामना करना पड़ा– उसने नंगे पांव अहाते में चलने की कोशिश की, किन्तु दूब उसके कोमल पैरों में चुभी और बालू तथा कंकड़-पत्थर तो बर्दाश्त से बाहर लगे। नास्त्या ने इस चीज़ में भी उसकी मदद की– उसने लीज़ा के पैरों की माप ली, भागकर त्रोफ़ीम गड़रिये के पास खेत में गयी और उससे उसी नाप की छाल की चप्पलें बनाने को कहा। लीज़ा अगले दिन मुंह-अंधेरे जागी। घर के बाक़ी लोग अभी सो रहे थे। घर के फाटक पर नास्त्या चरवाहे की राह देख रही थी। सिंगी बज उठी और गांव के पशु ज़मींदार की हवेली के पास से गुज़रने लगे। त्रोफ़ीम ने नास्त्या के सामने आकर छाल की रंग-बिरंगी छोटी-छोटी चप्पलों की जोड़ी उसे दे दी और बदले में पचास कोपेक इनाम पाया। लीज़ा ने चुपके से देहातिन का भेस बनाया, मिस जैक्सन के बारे में फुस-फुसाकर नास्त्या को हिदायतें दीं, पिछवाड़े के ओसारे से बाहर निकली और सब्ज़ियों के बगीचे को लांघते हुए खेत की ओर भाग चली।

पूरब में उषा का प्रकाश फैल रहा था और बादलों की सुनहरी पांतें सूर्य की ऐसे ही प्रतीक्षा कर रही थीं जैसे दरबारी ज़ार के स्वागत को उसकी राह देखते हैं। निर्मल आकाश, सुबह की ताज़गी, शबनम, सुखद पवन और पक्षियों के कलरव ने लीज़ा के हृदय को यौवन के आह्लाद से ओतप्रोत कर दिया। इस बात से डरते हुए कि कहीं जान-पहचान के किसी व्यक्ति से भेंट न हो जाये, वह चल नहीं रही थी, उड़ी जा रही थी। पिता की जागीर की सीमा पर खड़े झुरमुट के निकट पहुंचकर लीज़ा धीरे-धीरे चलने लगी। यहीं उसे अलेक्सेई की बाट जोहनी थी। उसका दिल ज़ोर से धड़क रहा था, यद्यपि वह स्वयं इसका कारण नहीं जानती थी। किन्तु जवानी के दिनों की हमारी शरारतों के साथ अनुभव होनेवाला यही भय तो उनका मुख्य आकर्षण है। लीज़ा ने झुरमुट के धुंधलके में प्रवेश किया। वृक्षों के झुरमुट की गहराई में से दबे-घुटे शोर ने लड़की का स्वागत किया। उसका उल्लास दब गया। धीरे-धीरे वह मधुर कल्पना के वशीभूत हो गयी। वह कुछ सोच रही थी... किन्तु कौन यह सही-सही कह सकता है कि वसन्त की सुबह में कोई छः बजे के क़रीब सत्रह वर्षीया युवती कुंज में क्या

सोचती है? इस तरह वह दोनों ओर से ऊंचे छायादार वृक्षों से ढके रास्ते पर चली जा रही थी कि अचानक एक बढ़िया शिकारी कुत्ता उस पर भूंकने लगा। लीज़ा डरकर चिल्ला उठी। इसी समय ऊंची आवाज़ सुनाई दी, "Tout beau, Sbogar, ici!.."* और भाड़ियों के पीछे से जवान शिकारी सामने आया। "मेरी प्यारी, डरो नहीं," उसने लीज़ा से कहा, "मेरा कुत्ता काटता नहीं।" लीज़ा ने भय से मुक्ति पा ली और तत्काल परिस्थिति से लाभ उठाया। "हुज़ूर, मेरे को लगत," उसने कुछ भय और कुछ लाज का नाटक करते हुए कहा, "देखत तो कैसो डरावनो, फेर मो पर भपटत।" इसी बीच अलेक्सेई (पाठक ने उसे पहचान लिया होगा) जवान किसान लड़की को एकटक देख रहा था। "अगर डरती हो, तो मैं तुम्हारे साथ-साथ चल सकता हूं," उसने लीज़ा से कहा, "तुम मुझे अपने साथ चलने की इजाज़त देती हो?" – "कौन मना कर सकत?" लीज़ा ने उत्तर दिया, "सड़क सभी की होत, जो चाहे चलत।" – "किस गांव की हो तुम?" – "प्रिलूचिनो की। वासीली लुहार की बेटी, खुम्मियां बटोरन जात" (लीज़ा ने डोरी से लटकती छाल की टोकरी को हिलाया)। "और साहब तुम, तुगीलोवो के होवत?" – "बिल्कुल ठीक," अलेक्सेई ने जवाब दिया, "छोटे साहब का अर्दली हूं मैं।" अलेक्सेई ने बराबरी के नाते बात करनी चाही। किन्तु लीज़ा ने उसकी ओर देखा और हंस पड़ी। "भूठ बोलत," उसने कहा, "ऐसी बुद्धू मति समभत। ख़ूब देखत, तुम ख़ुद साहब होत।" – "तुम ऐसा क्यों समभती हो?" – "सब बातन से।" – "फिर भी?" – "क्या साहब और नौकर में फर्क न कर सकत? पहनत-ओढ़त हमार माफ़िक़ नहीं, बोलत-बतियावत हमार माफ़िक़ नहीं, कुत्ते को भी हमार माफ़िक़ नहीं पुकारत।" लीज़ा अलेक्सेई को अधिकाधिक अच्छी लग रही थी। गांव की प्यारी-सुन्दर लड़कियों के मामले में औपचारिकता न बरतने के आदी अलेक्सेई ने उसे बांहों में भरना चाहा। किन्तु लीज़ा उछलकर उससे दूर हट गयी और अपने चेहरे पर ऐसी रुखाई तथा कड़ाई ले आयी कि यद्यपि अलेक्सेई को इससे तनिक हंसी आ गयी, तथापि

---

* स्बोगार, भौंकना बन्द करो, इधर आओ... (फ़्रांसीसी)।

उसे अपना क़दम आगे बढ़ाने की जुर्रत नहीं हुई। "अगर साहब आप चाहत कि हमारे बीच दोस्ती बनी रहत," उसने बड़ी शान दिखाते हुए कहा, "तो यों अपनी सुध-बुध न बिसारत।" – "किसने तुम्हें ऐसी अक़्लमन्दी की बातें करना सिखाया है?" अलेक्सेई ने ठठाकर हंसते हुए पूछा "मेरी परिचिता, तुम्हारी छोटी मालकिन की नौकरानी नास्त्या ने तो नहीं? तो कैसे-कैसे रास्तों से शिक्षा का प्रचार हो रहा है!" लीज़ा ने अनुभव किया कि उसके वाक्य उसकी भूमिका की सीमा से बाहर निकल गये हैं और इसलिये उसने फ़ौरन अपनी भूल सुधारी। "तुम क्या सोचत," वह बोली, "क्या हम मालिक की डेवढ़ी पर कभी न जावत? वहां सभी कुछ देखत, सभी कुछ सुनत। परन," वह कहती गयी, "तुम्हार साथ बतियात रहत, तो खुम्मियां न बटोर पावत। तो साहब, तुम उधर जावत, हम इधर जावत। छिमा मांगत..." लीज़ा ने जाना चाहा, किन्तु अलेक्सेई ने उसका हाथ पकड़ लिया। "तुम्हारा नाम क्या है, मेरी प्यारी?" – "अकुलीना," लीज़ा ने अलेक्सेई के हाथ से अपनी उंगलियां छुड़ाने की कोशिश करते हुए जवाब दिया, "छोड़ भी देत साहब, घर जावन को बख़्त होए गयो।" – "तो मेरी मित्र अकुलीना, मैं ज़रूर तुम्हारे पिता, लुहार वासीली के यहां जाऊंगा।" – "यह क्या कहत?" लीज़ा ने चिल्लाकर आपत्ति की, "ईसू के नाम पर ऐसा मत करियो। घरवाले जान जावत कि साहब के साथ कुंज में अकेली बोलत-बतियात रही, तो मेरी सामत आ जावत। बापू, वासीली लुहार, मार-मार जान ले लेवत।" – "लेकिन मैं तो तुमसे ज़रूर फिर मिलना चाहता हूं।" – "किसी और दिन यहां खुम्मियां बटोरन आवत।" – "कब आओगी?" – "कल भी आ सकत।" – "प्यारी अकुलीना, मैंने तुम्हें चूम लिया होता, मगर हिम्मत नहीं होती। तो कल इसी समय आओगी न?" – "हां, आवत, आवत।" – "छल तो नहीं करोगी?" – "छल नहीं करत।" – "क़सम खाओ!" – "क़सम खावत, पावन सलीब की क़सम खावत।"

दोनों युवा लोग अलग हुए, लीज़ा जंगल से बाहर निकली, उसने खेत को पार किया, दबे पांव बाग़ में पहुंची और सीधे खलिहान की ओर भाग गयी जहां नास्त्या उसकी राह देख रही थी। वहां उसने कपड़े बदले, बेख़्याली से अपनी बेचैन राज़दान के उत्तर दिये और मेहमानख़ाने

में गयी। मेज़ पर नाश्ता लगा हुआ था और चेहरे पर पाउडर की परत चढ़ाये तथा अपनी पतली कमर को कसे हुए अंग्रेज़ शिक्षिका डबल रोटी के पतले-पतले टुकड़े काट रही थी। लीज़ा के पिता ने सुबह की सैर के लिये उसकी प्रशंसा की। "सेहत के लिये तड़के उठने से ज़्यादा फ़ायदेमन्द और कुछ नहीं," पिता ने राय ज़ाहिर की। उन्होंने दीर्घायु के बारे में अंग्रेज़ी पत्र-पत्रिकाओं के हवाले देते हुए कहा कि सौ साल से अधिक समय तक जीनेवाले सभी लोग ऐसे थे जो कभी वोदका नहीं पीते थे और जाड़ों तथा गर्मियों में तड़के ही उठते थे। लीज़ा पिता की बातों पर कान नहीं दे रही थी। वह युवा शिकारी के साथ अकुलीना के प्रातःमिलन और उसके साथ हुई सारी बातचीत मन ही मन दोहरा रही थी और उसकी आत्मा उसे यातना देने लगी। व्यर्थ ही वह अपने मन को यह कहकर तसल्ली देती थी कि उनकी बातचीत शालीनता के चौखटे से बाहर नहीं निकली, कि उसकी इस शरारत का कोई बुरा नतीजा नहीं होगा, मगर उसकी आत्मा की आवाज़ उसकी समझ-बूझ पर हावी हो जाती थी। अगली सुबह को मिलने के लिये दिया गया वचन उसे अधिकाधिक परेशान कर रहा था – उसने लगभग यह तय कर लिया कि बड़ी गम्भीरता से ली हुई अपनी शपथ को पूरा नहीं करेगी। किन्तु उसकी व्यर्थ प्रतीक्षा करने के बाद अलेक्सेई लुहार वासीली की बेटी, असली, मोटी-भद्दी और चेचकरू अकुलीना को ढूंढ़ने के लिये गांव में चला जायेगा और इस तरह उसकी चंचलतापूर्ण शरारत को भांप जायेगा। इस विचार से लीज़ा का दिल बैठ गया और उसने अगले दिन फिर से अकुलीना के रूप में कुंज में जाने का निर्णय किया।

दूसरी ओर अलेक्सेई बड़े उछाह में था, वह दिन भर अपनी नवपरिचिता के बारे में सोचता रहा, रात को भी उस सांवली-सलोनी की छवि उसके सपनों में घूमती रही। पौ फटी ही थी कि वह कपड़े पहनकर तैयार हो गया। बन्दूक़ भरने का समय नष्ट किये बिना ही वह अपने वफ़ादार कुत्ते स्बोगार को साथ लिये हुए मिलन-स्थान की ओर भाग चला। उसके लिये बहुत ही बोझल प्रतीक्षा का आधा घण्टा बीता। आख़िर उसे झाड़ियों के बीच नीले सराफ़ान की झलक मिली और वह मोहिनी अकुलीना से मिलने के लिये लपका। वह उसके

कृतज्ञतापूर्ण उत्साह के उत्तर में मुस्करायी। किन्तु अलेक्सेई को उसके चेहरे पर तत्क्षण उदासी तथा चिन्ता के लक्षण दिखाई दिये। उसने इसका कारण जानना चाहा। लीज़ा ने यह स्वीकार किया कि वह अपनी हरकत को चंचलतापूर्ण मानती है, ऐसा करने के लिये पछताती है, कि आज अपने वादे को पूरा करना चाहती थी, कि उनका आज का मिलन अन्तिम होगा, कि वह इस परिचय का, जिसका कोई अच्छा परिणाम नहीं होगा, अन्त कर देना चाहती है। ज़ाहिर है कि यह सब कुछ देहाती भाषा में कहा गया था, किन्तु एक साधारण लड़की के ऐसे असाधारण विचारों और भावों ने उसे आश्चर्यचकित कर दिया। उसने अकुलीना का ऐसा इरादा बदलवाने के लिये अपनी पूरी वाक्-पटुता का उपयोग किया, उसे यक़ीन दिलाया कि उसके मन में कोई पाप-कपट नहीं, वचन दिया कि वह उसे कभी पश्चाताप का अवसर नहीं देगा, उसकी हर बात मानेगा, उसने उसकी मिन्नत-समाजत की कि वह बेशक एक दिन छोड़कर या हफ़्ते में दो बार ही एकान्त में उससे मिलने की ख़ुशी से उसे वंचित न करे। वह सच्ची अनुराग-भाषा में यह सब कह रहा था और इस क्षण वास्तव में ही पूरी तरह से प्रेम में डूबा हुआ था। लीज़ा चुपचाप उसकी बातें सुन रही थी। "तो मो को ऐसो वचन देवत," आख़िर उसने कहा, "कि तुम कभी मो को गांव में ढूंढ़न नहीं जात, वां मोरे बाबत किसी से पूछत न फिरत। ऐसो वचन भी देवो कि जो मिलन हम नियत करत, वा के अतिरिक्त मिलन न करन चाहत।" अलेक्सेई ने पवित्र सलीब की क़सम खानी चाही, किन्तु उसने मुस्कराकर उसे मना कर दिया। "क़सम काहे खावत," वह बोली, "वचन देवत, इतना बहुत होवत।" इसके बाद वे दोनों जंगल में एकसाथ घूमते हुए मैत्रीपूर्ण ढंग से तब तक बातचीत करते रहे, जब तक लीज़ा ने उससे यह नहीं कहा कि उसके जाने का वक़्त हो गया। वे एक दूसरे से विदा हुए। अकेला रह जाने पर अलेक्सेई यह नहीं समझ पा रहा था कि किस तरह एक साधारण किसान लड़की ने दो भेंटों में ही उसे सचमुच अपने वश में कर लिया है। अकुलीना के साथ उसके सम्बन्धों में नवीनता का सुख था और यद्यपि इस अजीब किसान लड़की द्वारा पहले से लगा दी गयी शर्तें उसके लिये बड़ी बोझल थीं, तथापि अपना वचन तोड़ने का

विचार तक उसके दिमाग़ में नहीं आया। बात यह है कि भयानक ढंग की अंगूठी पहनने, रहस्यपूर्ण पत्र-व्यवहार करने और टूटे दिल की निराशा का दिखावा करने के बावजूद अलेक्सेई भला और भावुक युवक था, निर्मल-निश्छल दिल रखता था जो निष्कपट आनन्द से रस-विभोर हो सकता था।

अगर मैं अपने मन की बात सुनता, तो निश्चय ही इन दोनों युवा लोगों के मिलनों, एक दूसरे के प्रति उनके बढ़ते झुकाव और आपसी विश्वास, उनके मनबहलावों और बातचीत का वर्णन करता। किन्तु जानता हूं कि मेरे अधिकतर पाठकों ने मेरी ऐसी खुशी का रस न लिया होता। कुल मिलाकर, ऐसे ब्योरे नीरस होंगे और इसलिये मैं संक्षेप में इतना कहकर ही उन्हें छोड़ देता हूं कि दो महीने बीतते न बीतते हमारा अलेक्सेई तो पूरी तरह प्रेम-दीवाना हो गया, लीज़ा पर भी प्रेम का रंग कुछ कम नहीं चढ़ा था, यद्यपि वह उसे अधिक प्रकट नहीं होने देती थी। वे दोनों अपने वर्तमान से सुखी थे और भविष्य की कम चिन्ता करते थे।

वे दोनों अटूट प्रेम-बन्धनों में कस गये हैं, यह विचार अक्सर उनके दिमाग़ में कौंध जाता, किन्तु उन्होंने कभी एक दूसरे के सामने इसकी चर्चा नहीं की। कारण स्पष्ट था – अलेक्सेई अपनी प्यारी अकु-लीना के प्रति चाहे कितना ही अनुराग अनुभव क्यों न करता था, तो भी अपने और एक ग़रीब किसान लड़की के बीच विद्यमान दूरी को भूलने में असमर्थ था। दूसरी ओर लीज़ा जानती थी कि इन दोनों के पिता एक दूसरे से कितनी अधिक घृणा करते हैं और इसलिये उसे उनके बीच आपसी सुलह की कोई आशा नहीं थी। इसके अलावा उसके हृदय की गहराई में कहीं एक चंचल और रोमानी भावना भी छिपी हुई थी कि वह तुगीलोवो के ज़मींदार को प्रिलूचिनो के लुहार की बेटी के पैरों पर झुका देखे। अचानक एक महत्त्वपूर्ण घटना हो गयी, और उनके आपसी सम्बन्धों में मोड़ आते-आते रह गया।

एक साफ़-सुहानी और ठण्डी सुबह को (जैसी कि हमारी रूसी पतझर में बहुत होती हैं) इवान पेत्रोविच बेरेस्तोव घोड़े पर सवार होकर सैर को निकला। कहीं जरूरत न पड़ जाये, यह बात ध्यान में रखते हुए उसने छः शिकारी कुत्ते, सईस और खटखटे बजानेवाले कुछ

दास-छोकरों को भी अपने साथ ले लिया। इसी समय ग्रिगोरी इवानोविच मूरोम्स्की ने भी सुहाने मौसम के रंग में आकर अपनी दुमकटी घोड़ी पर ज़ीन कसने का आदेश दिया और उसे दुलकी चाल से दौड़ाता हुआ अपनी अंग्रेज़ी ढंग की जागीर को लांघ चला। जंगल के निकट पहुंचने पर उसे अपना पड़ोसी दिखाई दिया जो लोमड़ी की खाल का अस्तर लगी लम्बी जाकेट पहने बड़े गर्व से घोड़े पर बैठा उस ख़रगोश का इन्तज़ार कर रहा था जिसे दास-लड़के चीख़-चिल्लाकर और खटखटे बजाकर झाड़ियों से बाहर निकाल रहे थे। यदि ग्रिगोरी इवानोविच इस भेंट की पूर्वकल्पना कर सकता, तो उसने अपनी घोड़ी को दूसरी दिशा में मोड़ दिया होता। किन्तु वह बिल्कुल अप्रत्याशित ही बेरेस्तोव के सामने जा निकला और उसने अचानक अपने को पिस्तौल की गोली के निशाने की दूरी पर पाया। अब तो कोई चारा न था – सुशिक्षित यूरोपीय की भांति वह अपने शत्रु के पास गया और उसने ढंग से उसका अभिवादन किया। बेरेस्तोव ने भी ज़ंजीर से बंधे उस भालू की भांति, जिसे उसका मालिक महानुभावों को सिर झुकाने का आदेश देता है, बड़ी शिष्टता से उत्तर दिया। इसी समय ख़रगोश जंगल से निकलकर खेत में भाग चला। बेरेस्तोव और सईस गला फाड़कर चिल्लाये, उन्होंने कुत्तों को उसके पीछे छोड़ दिया और अपने घोड़ों को उसके पीछे सरपट दौड़ाने लगे। मूरोम्स्की की घोड़ी, जो कभी शिकार पर नहीं गयी थी, बुरी तरह डर गयी और ताबड़तोड़ भागने लगी। अपने को बढ़िया घुड़सवार माननेवाले मूरोम्स्की ने उसकी रासें ढीली छोड़ दीं और मन ही मन इस बात से ख़ुश हुआ कि उसे अप्रिय बातचीत से निजात मिल गयी। किन्तु घोड़ी उस गड्ढे तक सरपट दौड़ने के बाद, जिसकी ओर उसका पहले ध्यान नहीं गया था, अचानक एक ओर को मुड़ गयी और मूरोम्स्की नीचे जा गिरा। पाले की मारी सख़्त ज़मीन पर वह बुरी तरह गिरा और वहीं पड़ा हुआ अपनी दुमकटी घोड़ी को कोसता रहा, जो मानो उसी समय होश में आकर रुकी जब उसने अपने को सवार के बिना अनुभव किया। इवान पेत्रोविच सरपट घोड़ा दौड़ाता हुआ उसके पास आया और यह पूछा कि उसे कहीं चोट तो नहीं लगी। इसी बीच सईस अपराधी घोड़ी की लगाम थामे हुए उसे वहां ले आया। उसने मूरोम्स्की को घोड़े पर सवार होने

में मदद दी और बेरेस्तोव ने उसे अपने यहां चलने को आमन्त्रित किया। मूरोम्स्की इन्कार नहीं कर पाया, क्योंकि वह उसके प्रति कृतज्ञता अनुभव कर रहा था। इस तरह बेरेस्तोव ख़रगोश का शिकार करके और अपने विरोधी को घायल तथा लगभग युद्ध-बन्दी बनाये हुए विजेता की भांति घर लौटा।

नाश्ता करते हुए दोनों पड़ोसी काफ़ी दोस्ताना ढंग से बातचीत करते रहे। मूरोम्स्की ने बेरेस्तोव के सामने यह स्वीकार कर लिया कि चोट के कारण वह घोड़ी पर चढ़कर घर जाने में असमर्थ है और इसलिये उसने उससे घोड़ागाड़ी जुतवा देने का अनुरोध किया। बेरेस्तोव उसे अपने घर के दरवाज़े तक विदा करने आया और मूरोम्स्की उससे इस बात का वचन लिये बिना घर को रवाना नहीं हुआ कि अगले दिन वह अपने बेटे अलेक्सेई इवानोविच के साथ प्रिलूचिनो में आयेगा और मित्र की तरह दोपहर का भोजन करेगा। इस तरह दुमकटी डरपोक घोड़ी की बदौलत पुरानी और गहरी जड़वाली दुश्मनी लगभग ख़त्म हो गयी।

लीज़ा भागती हुई बाहर आयी। "यह क्या मामला है, पापा?" उसने हैरान होते हुए पूछा। "आप लंगड़ा क्यों रहे हैं? आपकी घोड़ी कहां है? यह घोड़ागाड़ी किसकी ले आये?" – "तुम इस सब का तो अनुमान नहीं लगा सकोगी, my dear!"* ग्रिगोरी इवानोविच ने उसे उत्तर दिया और जो कुछ हुआ था, सब कह सुनाया। लीज़ा को अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था। इससे पहले कि लीज़ा सम्भल पाती, उसने यह भी कह दिया कि अगले दिन बेरेस्तोव बाप-बेटा उनके घर पर दोपहर का भोजन करेंगे। "यह आप क्या कह रहे हैं!" लीज़ा ने कहा और उसका चेहरा पीला पड़ गया। "बेरेस्तोव बाप-बेटा कल हमारे यहां दोपहर का भोजन करेंगे! नहीं, पापा, आप चाहे कुछ भी क्यों न कहें, मैं तो किसी हालत में भी उनके सामने नहीं आऊंगी!" – "तुम क्या पागल हो गयी हो?" पिता ने आपत्ति की। "कब से तुम ऐसी लजीली-शर्मीली हो गयी हो या रोमानी नायिका की भांति उनके प्रति ख़ानदानी नफ़रत महसूस करती हो?

---

* मेरी प्यारी (अंग्रेज़ी)।

बस, यह बेवक़ूफ़ी की बात ख़त्म करो..." – "नहीं, पापा, मैं किसी भी हालत में, किसी भी क़ीमत पर बेरेस्तोवों के सामने नहीं आऊंगी।" ग्रिगोरी इवानोविच ने कंधे झटक दिये तथा उसके साथ और बहस नहीं की, क्योंकि पिता को मालूम था कि विवाद करने में कोई फ़ायदा नहीं होगा और इतनी बढ़िया सैर के बाद आराम करने को अपने कमरे में चला गया।

लीज़ावेता ग्रिगोर्येव्ना ने अपने कमरे में जाकर नास्त्या को बुलवा भेजा। दोनों देर तक अगले दिन आनेवाले मेहमानों के बारे में बातचीत करती रहीं। एक सुसंस्कृत और कुलीन युवती के रूप में अपनी अकुलीना को पहचान लेने पर अलेक्सेई क्या सोचेगा? उसके आचार-विचार, उसके रंग-ढंग और समझ-बूझ के बारे में उसकी क्या राय बनेगी? दूसरी ओर लीज़ा यह देखने को भी बहुत उत्सुक थी कि ऐसी अप्रत्याशित भेंट से उसके मन पर क्या छाप पड़ेगी... अचानक उसके दिमाग़ में एक विचार कौंध गया। उसने उसी समय नास्त्या को वह विचार बताया। दोनों को एक बढ़िया सूझ के रूप में इस विचार से बेहद ख़ुशी हुई और उन्होंने तय किया कि ज़रूर ही इसे अमली शक्ल देंगी।

अगले दिन नाश्ते के समय ग्रिगोरी इवानोविच ने अपनी बेटी से पूछा कि क्या वह बेरेस्तोव पिता-पुत्र के सामने न आने का अपना इरादा उसी तरह बनाये हुए है। "पापा," लीज़ा ने उत्तर दिया, "यदि आप ऐसा ही चाहते हैं, तो मैं उनकी ख़ातिरदारी के लिये सामने आ जाऊंगी, लेकिन एक शर्त पर। मैं उनके सामने किसी भी रूप में क्यों न आऊं, चाहे कुछ भी क्यों न करूं, आप मुझे कुछ भी भला-बुरा नहीं कहेंगे, हैरानी या नराज़गी का कोई भाव व्यक्त नहीं करेंगे।" – "फिर कोई शरारत सूझी लगती है तुम्हें!" ग्रिगोरी इवानोविच ने हंसते हुए कहा। "अच्छी बात है, अच्छी बात है, जो चाहो वही करो, मेरी काली आंखोंवाली शरारती बिटिया।" इतना कहकर उसने बेटी का माथा चूमा और लीज़ा तैयारी करने के लिये भाग गयी।

दिन के ठीक दो बजे घर की बनी घोड़ागाड़ी, जिसमें छः घोड़े जुते हुए थे, अहाते में दाख़िल हुई और बहुत ही हरी घासवाले चक्र के पास आकर रुकी। मूरोम्स्की के दो बावर्दी नौकरों की सहायता से

बूढ़ा बेरेस्तोव ओसारे की सीढ़ियों पर चढ़ा। उसके पीछे-पीछे ही घोड़े पर सवार उसका बेटा भी पहुंच गया और दोनों ने एक साथ भोजन-कक्ष में प्रवेश किया, जहां पहले से ही मेज़ लगा दी गयी थी। मूरोम्स्की ने बहुत ही स्नेह से अपने पड़ोसियों का आदर-सत्कार किया, भोजन के पहले बाग़ और जन्तुशाला देखने का सुझाव दिया तथा ख़ूब अच्छी तरह से साफ़ की गयी एवं बजरी बिछी पगडंडियों से उन्हें अपने साथ ले चला। बूढ़े बेरेस्तोव को मन ही मन इस बात का अफ़सोस हो रहा था कि इस व्यर्थ की सनक के फेर में पड़कर इतना श्रम और समय नष्ट किया गया है, किन्तु वह शिष्टतावश चुप रहा। बेटे को न तो दांत से कौड़ी पकड़नेवाले अपने ज़मींदार बाप का असन्तोष पसन्द था और न ही आत्मतुष्ट तथा अंग्रेज़ी ढंग के दीवाने का उत्साह। वह तो बड़ी बेसब्री से गृह-स्वामी की बेटी के आने का इन्तज़ार कर रहा था जिसके बारे में बहुत कुछ सुन चुका था। यद्यपि उसके दिल में, जैसा कि हम जानते हैं, कोई और बसी हुई थी, तथापि सुन्दर युवती तो हमेशा ही उसकी कल्पना को गुदगुदा सकती थी।

तीनों लौटकर मेहमानख़ाने में बैठ गये – दोनों बुज़ुर्ग अपने पुराने वक़्तों तथा सेना के ज़माने के क़िस्से-कहानियों को याद करने लगे और अलेक्सेई यह सोचने लगा कि लीज़ा की उपस्थिति में वह क्या भूमिका अदा करे। उसने यह निर्णय किया कि उत्साह के बिना वह बिल्कुल खोया-खोया सा बैठा रहेगा और उसने अपने को इसी के लिये तैयार कर लिया। दरवाज़ा खुला और उसने ऐसी उदासीनता तथा लापरवाही से अपना सिर घुमाया कि बहुत ही नाज़-नखरे वाली सुन्दरी का दिल भी धड़क उठे। किन्तु उसकी बदक़िस्मती थी कि लीज़ा की जगह बूढ़ी मिस जैक्सन भीतर आयी – पाउडर थोपे, चोली से कमर कसे, शिष्टता से नज़र झुकाये। चुनांचे अलेक्सेई ने जो शानदार मोर्चेबन्दी की थी, वह बेकार हो गयी। वह अपने को फिर से तैयार नहीं कर पाया था कि दरवाज़ा पुनः खुला और इस बार लीज़ा भीतर आयी। सभी उठकर खड़े हो गये। पिता ने अतिथियों से उसका परिचय करवाना चाहा, किन्तु सहसा बीच में ही रुक गया और उसने अपनी हंसी पर क़ाबू पाने के लिये होंठ भींच लिये... लीज़ा, उसकी सांवली-सलोनी लीज़ा कानों तक पाउडर थोपे थी, मिस जैक्सन से भी ज़्यादा अपनी

भौंहों को रंगे थी, उसके अपने बालों से अधिक सुनहरे बाल लुई चौदहवें की विग की भांति लहरा रहे थे, à l'imbecile* आस्तीनें Madame de Pompadour** के स्कर्ट की चुन्नटों की भांति फूली और दायें-बायें लटक रही थीं, कमर फ़ीतों से ऐसे कसी थी कि अंग्रेज़ी के "एक्स" अक्षर जैसी लगती थी और उसकी मां के अभी तक गिरवी न रखे गये सभी हीरे उसकी उंगलियों और गर्दन पर तथा कानों में चमक रहे थे। अलेक्सेई इस चमकती-दमकती, हास्यास्पद कुलीन युवती के रूप में अपनी अकुलीना को नहीं पहचान पाया। अलेक्सेई के पिता ने लीज़ा का हाथ चूमा और पिता के बाद उसने भी भारी मन से ऐसा ही किया। जब उसने अपने होंठों को उसकी गोरी उंगलियों से छुआया, तो उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे सिहर उठी थीं। इसी समय उस छोटे-से पांव पर भी उसकी नज़र पड़ी जिसे जान-बूझकर बेहद फ़ैशनदार और शोख़ जूते के प्रदर्शन के लिये आगे बढ़ाया गया था। इसने उसे उसकी बाक़ी वेश-भूषा के कारण पैदा हुई अरुचि पर क़ाबू पाने में मदद दी। जहां तक पाउडर और भौंहों को रंगने का सवाल था, तो यह कहना चाहिए कि अपने हृदय की सरलता के कारण अलेक्सेई ने पहली नज़र में उनकी तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया और बाद को भी उन्हें भांप नहीं पाया। ग्रिगोरी इवानोविच को अपना दिया हुआ वचन याद था और इसलिये अपने आश्चर्य को छिपाये रखने का प्रयास किया। किन्तु बेटी की शरारत ने पिता के दिल को ऐसे गुदगुदा दिया था कि बड़ी मुश्किल से ही वह अपने को वश में रख पा रहा था। रही नकचढ़ी मिस जैक्सन, तो उसे हंसने की सूझ ही नहीं सकती थी। उसने अनुमान लगा लिया था कि रंग और पाउडर उसकी अलमारी से उड़ाये गये हैं और इसलिये उसके चेहरे की बनावटी सफ़ेदी के बीच से गुस्से की लाली उभर आयी थी। मिस जैक्सन ने इस शरारती लड़की को बेहद गुस्से की नज़रों से देखा, जिसने सफ़ाई पेश करने का काम किसी दूसरे वक़्त पर टालते हुए

---

* मूर्खों जैसी, फ़्रांस में कभी ऐसी आस्तीनों का फ़ैशन था (फ़्रांसीसी)।

** मदाम द पोम्पादूर फ़्रांसीसी सम्राट लुई १५वें की प्रेयसी और विशेष स्नेह-पात्र थी (फ़्रांसीसी)।

यह ज़ाहिर किया मानो उनकी तरफ़ उसका ध्यान ही न गया हो।

सभी खाने की मेज़ पर बैठे। अलेक्सेई खोये-खोये और विचारों में डूबे हुए व्यक्ति की भूमिका निभाता रहा। लीज़ा बनती रही, दांतों के बीच से गुनगुनाते हुए केवल फ़्रांसीसी में ही बोलती रही। मूरोम्स्की अपनी बेटी के ऐसा करने के उद्देश्य को न समझ पाते हुए बार-बार उसकी ओर देखता था और उसे यह सब कुछ बहुत मनोरंजक प्रतीत हो रहा था। मिस जैक्सन ग़ुस्से से भुनभुनाती हुई ख़ामोश थी। केवल इवान पेत्रोविच अपने को मानो घर में अनुभव कर रहा था, उसने डटकर दो के बराबर भोजन किया, छककर शराब पी, अपने मज़ाक़ों पर ख़ुद हंसा, अधिकाधिक मैत्रीपूर्ण ढंग से बातें करता और ठहाके लगाता रहा।

आख़िर भोजन समाप्त होने पर सब उठे। मेहमान चले गये, ग्रिगोरी इवानोविच खुलकर हंसा और बेटी से पूछताछ करने लगा। "उनका इस तरह उल्लू बनाने की तुम्हें क्या सूझी?" पिता ने बेटी से पूछा। "वैसे एक बात कहूं, पाउडर तुम पर फबता है। नारियों के साज-सिंगार के रहस्यों की गहराई में मैं नहीं जाऊंगा, किन्तु तुम्हारी जगह मैं ख़ुद भी पाउडर लगाने लगता। ज़ाहिर है कि इतना अधिक नहीं, हल्का-सा।" अपनी इस तरक़ीब की सफलता से लीज़ा बहुत ही ख़ुश थी। उसने पिता के गले में बांहें डाल दीं, यह वचन दिया कि उनकी सलाह पर विचार करेगी और बेहद झल्लायी हुई मिस जैक्सन को मनाने के लिये भाग गयी, जो बड़ी मुश्किल से ही दरवाज़ा खोलने और उसके द्वारा दी जानेवाली सफ़ाई सुनने को तैयार हुई। लीज़ा ने बताया कि अपरिचितों के सामने अपनी काली-कलूटी शक्ल लेकर आते हुए उसे शर्म महसूस हुई और यह कि वह उससे अनुमति लेने की हिम्मत नहीं कर पायी। उसे विश्वास था कि दयालु और प्यारी मिस जैक्सन उसे क्षमा कर देगी... आदि, आदि। यह विश्वास हो जाने पर कि लीज़ा ने उसकी खिल्ली उड़ाने के लिये ऐसा नाटक नहीं किया था, मिस जैक्सन शान्त हो गयी और सुलह की निशानी के तौर पर उसने लीज़ा को अंग्रेज़ी पाउडर-क्रीम की एक शीशी भेंट की, जिसे लीज़ा ने हार्दिक कृतज्ञता जताते हुए स्वीकार किया।

पाठक ने यह अनुमान लगा लिया होगा कि अगले दिन लीज़ा

सुबह के मधुर-मिलन के लिये जल्दी से कुंज में पहुंची। "साहब, तुम कल हमार मालिक के घर गयो?" उसने भेंट होते ही अलेक्सेई से कहा, "हमार छोटी मालकिन कैसी लगत रही?" अलेक्सेई ने जवाब में कहा कि उसने उसकी तरफ़ ध्यान नहीं दिया। "बुरी बात होवत," लीज़ा ने राय ज़ाहिर की। "वह किसलिये?" अलेक्सेई ने जानना चाहा। "एही कारण, हम तुम से पूछन चाहत, क्या लोग-बाग सच कहत..." – "क्या कहते हैं लोग-बाग?" "सच कहत रहत कि छोटी मालकिन और हमारी सकल आपस में मिलत-जुलत?" – "कैसी बेहूदा बात है यह! तुम्हारे सामने तो वह बिल्कुल भूतनी-सी लगती है।" – "ओह, साहब, ऐसा बोलत पाप लगत। हमार छोटी मालकिन ऐसी गोरी-गोरी, ऐसी बांकी-छैली होत! हम क्या बराबरी कर सकत मालकिन की!" अलेक्सेई ने क़सम खाकर कहा कि वह सभी गोरी-चिट्टी कुलीनाओं से बढ़-चढ़कर है और उसे पूरी तरह शान्त करने के लिये उसकी मालकिन का ऐसा ख़ाका खींचने लगा कि लीज़ा ख़ूब ठठाकर हंसी। "परन," उसने गहरी उसांस छोड़ते हुए कहा, "मालकिन पर बेसक हंसी आवत, तो भी हम उसके सामने मूढ़-गंवार होत।" – "अरे!" अलेक्सेई ने कहा, "यह भी कोई दुखी होने की बात है! कहो तो मैं तुम्हें अभी पढ़ाना शुरू कर सकता हूं।" – "हां," लीज़ा बोली, "कोसिस क्यों न करके देखत?" – "तो मेरी प्यारी, लाओ, हम अभी यह शुरू कर दें।" वे दोनों बैठ गये। अलेक्सेई ने अपनी जेब से पेंसिल और नोटबुक निकाल ली। अकुलीना ने ऐसी आश्चर्यजनक तेज़ी से वर्णमाला सीख ली कि अलेक्सेई उसकी समझदारी पर हैरान हुए बिना न रह सका। अगली सुबह को लीज़ा ने लिखने की कोशिश करने की इच्छा प्रकट की। शुरू में तो पेंसिल ने उसकी बात नहीं मानी, किन्तु कुछ मिनट बाद वह ढंग से अक्षर लिखने लगी। "यह तो कमाल है!" अलेक्सेई ने कहा। "हमारी पढ़ाई तो लेंकास्टर की विधि* से भी अधिक तेज़ी से चल रही है।" वास्तव में ही तीसरे पाठ के समय अकुलीना अक्षर जोड़-जोड़कर 'बोयार की बेटी नताल्या'**

---

* शिक्षा की उन दिनों रूस में अत्यधिक लोकप्रिय अंग्रेज़ शिक्षाशास्त्री लेंकास्टर (१७७१–१८३८) की विधि की ओर संकेत है। – सं०

** रूसी लेखक न० कारामज़िन की उपन्यासिका। – सं०

पढ़ने लगी, बीच-बीच में रुककर वह ऐसी टीका-टिप्पणियां करती कि अलेक्सेई दंग रह जाता और वह इसी उपन्यास से चुनी हुई सूक्तियों को पूरे कागज़ पर लिख-लिखकर उसे काला कर डालती।

एक हफ़्ता बीतते न बीतते उन दोनों के बीच पत्र-व्यवहार होने लगा। एक बूढ़े शाहबलूत के कोटर को पत्र-पेटी बनाया गया। नास्त्या चोरी-छिपे डाकिये की ड्यूटी बजाती। अलेक्सेई मोटे-मोटे अक्षरों में लिखे हुए अपने पत्र वहां लाता और वहीं उसे साधारण, नीले कागज़ पर टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखी अपनी प्यारी की चिट्ठी मिलती। अकुलीना का पत्र लिखने का ढंग निरन्तर सुधरता जा रहा था और उसकी बुद्धि लगातार विकसित तथा प्रखर होती जाती थी।

इसी बीच इवान पेत्रोविच बेरेस्तोव और ग्रिगोरी इवानोविच मूरोम्स्की की कुछ ही समय पहले की जान-पहचान अधिक पक्की हो गई तथा निम्न परिस्थितियों के फलस्वरूप मैत्री में बदल गयी। मूरोम्स्की अक्सर यह सोचता कि इवान पेत्रोविच की मृत्यु के बाद उसकी सारी जागीर अलेक्सेई इवानोविच को मिल जायेगी। ऐसा होने पर अलेक्सेई इवानोविच उस गुबेर्निया का एक सबसे धनी ज़मींदार हो जायेगा और इसलिये उसे ऐसा कोई कारण नज़र नहीं आता कि वह लीज़ा से क्यों शादी न करे। दूसरी ओर बुज़ुर्ग बेरेस्तोव को अपने पड़ोसी में कुछ सनकीपन (उसके शब्दों में अंग्रेज़ी रंग-ढंग का भूत) तो दिखाई देता, फिर भी वह उसमें कुछ श्रेष्ठ गुणों से इन्कार नहीं कर सकता था। उदाहरण के लिये सूझ-बूझ एक ऐसा ही गुण था। फिर ग्रिगोरी इवानोविच जाने-माने और प्रभावशाली काउंट प्रोन्स्की का नज़दीकी रिश्तेदार था। काउंट उसके बेटे अलेक्सेई के लिये बहुत उपयोगी हो सकता था और मूरोम्स्की (इवान पेत्रोविच ऐसा सोचता था) अपनी बेटी के विवाह का ऐसा अच्छा संयोग पाकर सम्भवतः ख़ुश होगा। दोनों बूढ़ों ने शुरू में अपने-अपने दिल में ही इस बात पर सोचा और आख़िर उन्होंने एक दूसरे से अपने दिल की बात कही, गले मिले, एक दूसरे को यह वचन दिया कि इस मामले पर ढंग से विचार करेंगे और दोनों अपनी-अपनी ओर से इसके लिये यत्न करने लगे। मूरोम्स्की के सामने एक कठिनाई थी – अलेक्सेई के साथ अपनी बेत्सी की किसी

तरह घनिष्ठता बढ़ायी जाये जिसे उसने उस चिर स्मरणीय दिन के बाद नहीं देखा था। ऐसा प्रतीत होता था कि वे एक दूसरे को बहुत पसन्द नहीं आये थे। कम से कम अलेक्सेई तो फिर कभी प्रिलूचिनो नहीं आया था और इवान पेत्रोविच जब कभी उनके यहां आने की कृपा करता था, तो लीज़ा हमेशा अपने कमरे में चली जाती थी। किन्तु ग्रिगोरी इवानोविच ने अपने मन में सोचा कि अगर अलेक्सेई हर दिन मेरे यहां आने लगे, तो बेत्सी के मन में उसके लिये जगह बन जायेगी। ऐसा ही होता है, समय सब कुछ ठीक कर देता है।

अपने इरादे की कामयाबी के बारे में इवान पेत्रोविच को कम परेशानी थी। उसी शाम उसने बेटे को अपने कमरे में बुलाया, पाइप सुलगा ली और कुछ देर चुप रहने के बाद बोला, "क्या बात है, अल्योशा, तुम बहुत समय से फ़ौज में जाने की बात नहीं करते हो? या फिर हुस्सारों की वर्दी अब तुम्हें अपनी ओर नहीं खींचती?.."— "नहीं, ऐसी बात नहीं है, पिता जी," अलेक्सेई ने बड़े आदर से उत्तर दिया, "मैंने देखा कि आपको हुस्सारों की पलटन में मेरा जाना पसन्द नहीं है। ऐसी हालत में आपकी इच्छा को ध्यान में रखना मेरा कर्त्तव्य है।"—"यह बहुत अच्छी बात है," इवान पेत्रोविच ने उत्तर दिया, "देख रहा हूं कि तुम बड़े आज्ञाकारी बेटे हो। मुझे इससे बड़ा सन्तोष हुआ। मैं भी तुम्हें किसी तरह से मजबूर नहीं करना चाहता, अभी सरकारी नौकरी करने के लिये विवश नहीं करूंगा। हां, फ़िलहाल, तुम्हारी शादी ज़रूर कर देना चाहता हूं।"

"किसके साथ, पिता जी?" अलेक्सेई ने हैरान होकर पूछा।

"लीज़ावेता ग्रिगोर्येव्ना मूरोम्स्काया के साथ," इवान पेत्रोविच ने जवाब दिया। "लड़की ख़ासी अच्छी है, ठीक है न?"

"पिता जी, मैं तो फ़िलहाल शादी करने की सोच ही नहीं रहा हूं।"

"तुम नहीं सोचते हो, इसीलिये मैंने सोचा है और फ़ैसला कर लिया है।"

"आप जैसा चाहें, लेकिन लीज़ा मूरोम्स्काया मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।"

"बाद में पसन्द करने लगोगे। आदी हो जाओगे, प्यार भी हो जायेगा।"

"मुझे ऐसा नहीं लगता कि मैं उसे सुखी बना सकूंगा।"

"तुम्हें ज़रूरत नहीं उसके सुख की चिन्ता में घुलने की। तो? तो ऐसे ही तुम आदर करते हो अपने पिता की इच्छा का? बहुत ख़ूब!"

"आप चाहे कुछ भी क्यों न कहें, मैं शादी करना नहीं चाहता और नहीं करूंगा।"

"तुम शादी करोगे, नहीं तो तुम्हें मेरा अभिशाप लगेगा। भगवान साक्षी है, अपनी जागीर को मैं बेच डालूंगा, सारा पैसा उड़ा डालूंगा और एक कौड़ी भी तुम्हें नहीं दूंगा! सोच-विचार करने के लिये तुम्हें तीन दिन देता हूं और इस बीच तुम मेरी नज़रों से दूर ही रहना।"

अलेक्सेई जानता था कि अगर पिता के दिमाग़ में कोई बात घुस जाती है, तो उसे, तारास स्कोतीनिन* के शब्दों में "कील ठोंककर बाहर नहीं निकाला जा सकता।" किन्तु अलेक्सेई में भी अपने बाप का ख़ून था, उसे भी उसकी ज़िद्द से टालना आसान नहीं था। वह अपने कमरे में जाकर पिता के अधिकार की सीमा, लीज़ावेता ग्रिगोर्येव्ना, उसे भिखारी बना देने की पिता की गम्भीर धमकी और अकुलीना के बारे में सोचने लगा। पहली बार उसने साफ़ तौर पर यह देखा कि वह उसे बहुत प्यार करता है। किसान लड़की से शादी करने और अपनी मेहनत की कमाई पर जीने का रोमानी विचार उसके मस्तिष्क में आया। अपने ऐसे निर्णायक क़दम के बारे में वह जितना अधिक सोचता था, उसे वह उतना ही अधिक समझदारी का प्रतीत होता था। पिछले कुछ समय से वर्षा के कारण उनका प्रेम-मिलन नहीं होता था। उसने बहुत साफ़-साफ़ लिखावट और हृदय के दहकते उद्‌गारों के साथ अकुलीना को यह लिखा कि कैसे उनके सुख पर भयानक बिजली गिरनेवाली है और साथ ही विवाह का प्रस्ताव भी कर दिया। इस पत्र को वह फ़ौरन पत्र-पेटी यानी कोटर में रख आया और पूरी तरह सन्तोष अनुभव करते हुए बिस्तर पर चला गया।

अगले दिन वह पक्का इरादे बनाये हुए तड़के ही मूरोम्स्की के यहां पहुंचा ताकि खुलकर बात कर ले। उसे आशा थी कि वह हृदय की उदारता की दुहाई देकर लीज़ावेता के पिता को अपने पक्ष में कर

* फ़ोनवीज़िन की 'घोंघाबसन्त' सुखान्ती नाटक का एक ज़मींदार पात्र, मूर्ख और ख़रदिमाग़। —सं०

लेगा। "ग्रिगोरी इवानोविच घर पर हैं?" प्रिलूचिनो की हवेली के सामने अपने घोड़े को रोककर उसने नौकर से पूछा। "नहीं, हुज़ूर," नौकर ने जवाब दिया, "ग्रिगोरी इवानोविच तो आज सुबह ही बाहर चले गये थे।" – "कितने अफ़सोस की बात है!" अलेक्सेई ने सोचा। "लीज़ावेता ग्रिगोर्येव्ना तो घर पर होंगी?" – "जी, हुज़ूर!" अलेक्सेई घोड़े से कूदा, घोड़े की लगामें उसने नौकर के हाथ में पकड़ा दीं और अपने आने की सूचना दिलवाये बिना ही अन्दर चला गया।

"अभी सब कुछ तय हो जायेगा," उसने मेहमानख़ाने के निकट पहुंचते हुए अपने मन में सोचा, "ख़ुद लीज़ावेता से ही बात कर लूंगा।" वह कमरे में दाख़िल हुआ... और बुत बना खड़ा रह गया! लीज़ा... नहीं अकुलीना, उसकी प्यारी, सांवली-सलोनी अकुलीना सराफ़ान नहीं, बल्कि सुबह का हल्का-सा सफ़ेद फ़्राक पहने खिड़की के सामने बैठी हुई उसका पत्र पढ़ रही थी। वह इतनी खोई हुई थी कि उसने अलेक्सेई के पैरों की आहट तक नहीं सुनी। अलेक्सेई अपने हर्षोदगार को अभिव्यक्ति दिये बिना न रह सका। लीज़ा चौंककर सिहरी, उसने अपना सिर ऊपर उठाया, चीख़ उठी और उसने भाग जाना चाहा। अलेक्सेई ने लपककर उसे रोक लिया। "अकुलीना, अकुलीना!.." लीज़ा ने अपने को उससे मुक्त करने की कोशिश की... "Mais laissez-moi dona, monsieur; mais êtes-vous fou?"* अपने को छुड़ाने का यत्न करते हुए वह लगातार दोहराती जाती थी। "अकु-लीना! मेरी प्यारी अकुलीना!" अलेक्सेई उसके हाथों को चूमते हुए बार-बार कह रहा था। यह सारा तमाशा देखनेवाली मिस जैक्सन यह समझने में असमर्थ थी कि इस सबका क्या अर्थ लगाये। इसी समय दरवाज़ा खुला और ग्रिगोरी इवानोविच ने भीतर प्रवेश किया।

"अरे, वाह!" पिता ने कहा, "लगता है कि तुम दोनों ने सब कुछ तय ही कर लिया है..."

आशा है कि पाठकगण इस क़िस्से के अन्त का वर्णन करने के फ़ालतू काम से मुझे मुक्त कर देंगे।

(इ० प० बेल्किन की कहानियां समाप्त।)

---

* मुझे छोड़ दीजिये श्रीमान, आप क्या पागल हो गये हैं?

हुक्म की बेगम

हुक्म की बेगम का
अर्थ है रहस्यपूर्ण शत्रुता।

भविष्य बूझने की नवीनतम पुस्तक से।

(१)

ठण्डे, बुरे मौसम में
जमा होकर अक्सर,
भगवान उन्हें क्षमा करे
खेलें जुआ डटकर —
पचास से सौ तक
दांव पर लगाते,
जीतते, वे हारते
हिसाब लिखते जाते,
यों ठण्डे, बुरे मौसम में
ऐसे अच्छे काम में
वक़्त वे बिताते।

एक बार गार्डों की घुड़सेना के अफ़सर नारूमोव के यहां जुआ खेला जा रहा था। पता भी नहीं चला कि जाड़े की लम्बी रात कब बीत गयी — सुबह के पांच बजे ये लोग भोजन करने बैठे। जीतनेवाले तो ख़ूब मज़े से खाने पर हाथ साफ़ कर रहे थे और दूसरे अपनी ख़ाली प्लेटों के सामने खोये-खोये से बैठे थे। लेकिन जैसे ही शेम्पेन सामने आई, बातचीत सजीव हो उठी और सभी ने उसमें भाग लिया।

"तुम्हारा कैसा हालचाल रहा, सूरिन?" मेज़बान ने पूछा।

"सदा की भांति हार गया। मानना ही होगा कि क़िस्मत मुझसे ख़ार खाये बैठी है – मैं छोटे-छोटे दांव लगाकर खेलता हूं, कभी उत्तेजित नहीं होता, दिमाग़ को इधर-उधर भटकने नहीं देता, लेकिन फिर भी हमेशा हारता ही रहता हूं!"

"क्या कभी तुम्हारे मन में लालच नहीं आया? क्या कभी बड़ा दांव लगाने को तुम्हारा मन नहीं हुआ?.. तुम्हारी यह दृढ़ता मेरे लिये आश्चर्यजनक है।"

"यह हेर्मन्न भी ख़ूब है न?" जवान इंजीनियर की ओर संकेत करते हुए एक मेहमान ने कहा। "इसने कभी पत्ते हाथ में नहीं लिये, कभी दांव नहीं लगाया, लेकिन सुबह के पांच बजे तक हमारे साथ बैठा हुआ हमारे खेल को देखता रहता है।"

"खेल में मुझे बहुत मज़ा आता है," हेर्मन्न ने कहा, "लेकिन मैं ऐसी स्थिति में नहीं हूं कि कुछ फ़ालतू पाने की उम्मीद में उसे भी क़ुर्बान कर दूं जो एकदम ज़रूरी है।"

"हेर्मन्न जर्मन है, सावधान है, बस, इतनी ही बात है!" तोम्स्की ने राय ज़ाहिर की। लेकिन मेरे लिये अगर कोई पहेली है, तो मेरी दादी काउंटेस आन्ना फ़ेदोतोव्ना।"

"वह कैसे? वह क्यों?" मेहमानों ने चिल्लाते हुए जिज्ञासा व्यक्त की।

"किसी तरह भी यह नहीं समझ पाता," तोम्स्की ने अपनी बात जारी रखी, "कि मेरी दादी जुआ क्यों नहीं खेलती!"

"इसमें हैरानी की कौन-सी बात है कि अस्सी साल की बुढ़िया जुआ नहीं खेलती!" नारूमोव ने कहा।

"तो क्या आप उसके बारे में कुछ नहीं जानते?"

"नहीं! सचमुच, कुछ भी नहीं!"

"ओह, तो सुनिये":

"यह जानना ज़रूरी है कि मेरी दादी साठ साल पहले पेरिस गयी थी और वहां उसकी बड़ी धूम रही थी। La Vénus moscovite*

* मास्को की सौन्दर्य-देवी (फ़्रांसीसी)।

को एक नज़र देख लेने के लिये लोग उसके पीछे-पीछे भागा करते थे। रिशेल्ये उसका दीवाना था और दादी यह यक़ीन दिलाती है कि उसकी निष्ठुरता के कारण वह अपने को गोली मारते-मारते रह गया था।

"उस ज़माने में महिलायें फ़ारो खेला करती थीं। एक दिन दरबार में जुआ खेलते हुए वह ड्यूक दे' ओरलिआन को बहुत बड़ी रक़म हार गयी जिसे उसने बाद में चुका देने का वचन दिया। घर लौटने पर चेहरे को सुन्दर बनाने के लिये लगाये जानेवाले रेशमी बिन्दु और स्कर्ट को फैलानेवाले धातु के घेरे उतारते हुए उसने दादा को बताया कि कितनी रक़म हार गयी है और आदेश दिया कि वे उसे चुका दें।

"जहां तक मुझे याद है, मेरे दिवंगत दादा एक तरह से मेरी दादी के कारिन्दा ही थे। वे दादी से आग की तरह डरते थे। किन्तु इतनी बड़ी रक़म हार जाने की बात सुनकर वे आपे से बाहर हो गये, सभी बिल लाकर उन्होंने दादी को दिखाये और यह साबित किया कि छः महीनों में उन्होंने पांच लाख का ख़र्च किया है, कि पेरिस के आस-पास मास्को या सरातोव की भांति उनकी कोई जागीर नहीं है और रक़म अदा करने से साफ़ इन्कार कर दिया। दादी ने उनके मुंह पर एक तमाचा मारा और अपनी नाराज़गी ज़ाहिर करने के लिये दादा को अपने पास नहीं सोने दिया।

"अगले दिन दादी ने यह उम्मीद करते हुए कि घरेलू दण्ड का आवश्यक प्रभाव हुआ होगा, पति को बुलवा भेजा किन्तु दादा अपनी बात पर अड़े हुए थे। जीवन में पहली बार दादी ने मामले पर सोच-विचार किया, सब कुछ स्पष्ट करना चाहा, सोचा कि बड़ी नम्रता से यह बताते हुए पति को लज्जित करेगी कि क़र्ज़ क़र्ज़ में फ़र्क़ होता है और प्रिंस तथा बग्घी बनानेवाला – ये दोनों एक जैसे ही नहीं होते। लेकिन सब बेकार! दादा ने विद्रोह कर दिया था। नहीं, और बात ख़त्म! दादी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे।

"दादी की अच्छी जान-पहचानवालों में एक बहुत ही कमाल का आदमी था। आपने काउंट सेंट-जेर्मेन * का नाम तो सुना होगा, जिसके

---

* १८वीं शताब्दी के अन्त का फ़्रांसीसी कीमियागर और जोखिमबाज़। – सं०

7*

बारे में बड़ी-बड़ी अद्भुत बातें कही जाती हैं। आपको यह भी मालूम होगा कि उसने अपने को अमर यहूदी, जीवन-अमृत और दार्शनिक पत्थर का आविष्कारक आदि, आदि बताया था। लोग ढोंगी-पाखंडी कहकर उसका मज़ाक़ उड़ाते थे और काज़ानोवा ने* अपनी टिप्पणियों में उसे जासूस कहा है। ऐसी रहस्यपूर्ण ख्याति के बावजूद सेंट-जेर्मेन बहुत ही सम्मानित व्यक्तित्व रखता था और सोसाइटी में बड़ा ही कृपालु तथा विनयी-शिष्ट व्यक्ति माना जाता था। दादी अभी तक उसकी प्रेम-दीवानी है और अगर कोई अनादर से उसकी चर्चा करता है, तो वह बिगड़ उठती है। दादी जानती थी कि सेंट-जेर्मेन ख़ासा अमीर आदमी है। उसने उसी से मदद लेनी की सोची। उसके नाम एक रुक़्क़ा लिख भेजा जिसमें अनुरोध किया कि वह फ़ौरन उसके पास चला आये।

"सनकी बूढ़ा उसी वक़्त आ गया और दादी को उसने बहुत ही दुखी पाया। दादी ने अपने पति की क्रूरता को काले से काले रंग में पेश किया और आख़िर यह कहा कि वह उसकी मैत्री और कृपालुता पर ही पूरी आस लगाये हुए है।

"सेंट-जेर्मेन सोच में पड़ गया।

"'यह रक़म तो मैं आपको दे सकता हूं,' वह बोला, 'लेकिन जानता हूं कि जब तक आप यह रक़म मुझे लौटा नहीं देंगी, आपको चैन नहीं आयेगा। मैं आपके लिये नई परेशानियां पैदा नहीं करना चाहता। एक और रास्ता है – आप यह रक़म वापस जीत सकती हैं।' – 'किन्तु कृपालु काउंट,' दादी ने जवाब दिया, 'मैं तो यह कह रही हूं कि हमारे पास पैसे ही नहीं हैं।' – 'पैसों की कोई ज़रूरत नहीं,' सेंट-जेर्मेन ने दादी की बात काटी, 'आप पूरी तरह मेरी बात सुनने की कृपा करें।' इतना कहकर उसने दादी को वह राज़ बताया, जिसे जानने के लिये हममें से हर कोई बड़ी ख़ुशी से भारी क़ीमत अदा कर देता ..."

जवान जुआरी अब बहुत ही ध्यान से बात सुनने लगे।

---

* प्रसिद्ध इतालवी जोख़िमबाज़ (१७२५–१७६८), जिसने बड़े दिलचस्प संस्मरण लिखे हैं। – सं०

तोम्स्की ने पाइप सुलगाया, कश खींचा और अपनी बात आगे बढ़ायी।

"दादी उसी शाम को वेर्साली, au jeu de la Reine* में पहुंची। ड्यूक द ओर्लिआन पत्ते बांट रहा था। दादी ने क़र्ज़ की रक़म न लाने के लिये ज़रा माफ़ी मांगी, अपनी सफ़ाई में छोटा-सा क़िस्सा सुनाया और ड्यूक के सामने जुआ खेलने बैठ गयी। दादी ने तीन पत्ते चुने, एक के बाद दूसरा पत्ता चला, तीनों पत्ते जीतनेवाले निकले और दादी ने अपना सारा ऋण बराबर कर दिया।"

"संयोग की बात थी!" एक मेहमान ने कहा।

"मनगढ़न्त क़िस्सा है!" हेर्मन्न ने राय ज़हिर की।

"शायद निशानी वाले पत्ते थे?" तीसरा कह उठा।

"मैं ऐसा नहीं सोचता हूं," तोम्स्की ने बड़ी शान से जवाब दिया।

"भई वाह!" नारूमोव बोला, "तुम्हारी ऐसी दादी है जो लगातार जीतनेवाले तीन पत्तों का अनुमान लगा सकती है और तुमने अभी तक उससे यह राज़ नहीं जाना?"

"मामला इतना सीधा-सादा नहीं है!" तोम्स्की ने जवाब दिया, "मेरे पिता जी समेत दादी के चार बेटे थे। चारों ही ख़ूब जुआ खेलते थे और दादी ने उनमें से किसी को भी अपना राज़ नहीं बताया, गो यह उनके लिये और ख़ुद मेरे लिये भी कुछ बुरा न होता। लेकिन मेरे चाचा, काउंट इवान इल्यीच ने मुझे यह क़िस्सा सुनाया और क़सम खाकर इसके बारे में यक़ीन दिलाया। दूसरी दुनिया में पहुंच चुका चाप्लीत्स्की, वही चाप्लीत्स्की जो लाखों-करोड़ों उड़ाकर बड़ी मुहताजी में मरा, अपनी जवानी में एक बार तीन लाख रूबल हार गया – याद आ रहा है ज़ोरिच** के पास। वह बहुत ही परेशान था। दादी जवान लोगों की ऐसी शरारतों, ऐसी हरकतों के मामले में बड़ी कठोर थी, लेकिन न जाने क्यों, उसे चाप्लीत्स्की पर रहम आ गया। उसने उसे तीन पत्ते बताये, यह कहा कि एक के बाद एक को चले और साथ ही उससे यह वचन ले लिया कि वह फिर कभी जुआ नहीं खेलेगा।

---

* महारानी के यहां ताश का खेल (फ़्रांसीसी)।

** येकातेरीना द्वितीय का एक कृपापात्र, जुए का दीवाना (१७४५–१७९९)। – सं०

चाप्लीत्स्की अपने ख़ुशक़िस्मत प्रतिद्वन्द्वी के यहां गया और वे जुआ खेलने बैठे। उसने पहले पत्ते पर पचास हज़ार का दांव लगाया और जीत गया, दूसरे पत्ते पर इस दांव को दुगुना कर दिया, तीसरे पर चौगुना – इस तरह हारी हुई सारी रक़म लौटाने के अलावा वह कुछ और भी जीत गया ...

"लेकिन अब सोना चाहिये – सुबह के पौने छः बज गये हैं।"

वास्तव में ही उजाला होने लगा था। जवान लोगों ने जाम ख़ाली किये और अपने-अपने घरों को चल दिये।

(२)

—Il paraît que monsieur est décidement pour les suivantes.
—Que voulez-vous, madame? Elles sont plus fraiches.*

सोसाइटी की गपशप

बूढ़ी काउंटेस ... अपने शृंगार-कक्ष में दर्पण के सामने बैठी थी। तीन नौकरानियां उसे घेरे हुए थीं। एक सुर्ख़ी की शीशी लिये थी, दूसरी के हाथ में हेयर पिनों का डिब्बा था और तीसरी अंगारों के रंग की फ़ीतोंवाली ऊंची टोपी। काउंटेस की सुन्दरता का रंग कभी का फीका पड़ चुका था, इसलिये वह सुन्दरता का ज़रा भी दावा नहीं कर सकती थी, किन्तु जवानी के दिनों की सभी आदतों को उसने ज्यों का त्यों बनाये रखा था, अठारहवीं सदी के आठवें दशक के फ़ैशनों को कड़ाई से निभाती थी और साठ साल पहले की तरह बहुत यत्न से और बड़ा समय लगाकर साज-सिंगार करती थी। खिड़की के पास उसकी संरक्षिता युवती कसीदाकारी के फ़्रेम के सामने बैठी थी।

---

* लगता है कि आप तो निश्चित रूप से नौकरानियों को तरजीह देते हैं।

क्या किया जाये? उनमें अधिक ताज़गी होती है (फ़्रांसीसी)।

“नमस्ते, grand’maman,* कमरे में दाख़िल होनेवाले जवान अफ़सर ने कहा। “Bonjour, mademoiselle Lise.** Grand’-maman, मैं आपके पास एक अनुरोध लेकर आया हूं।”

“क्या बात है, Paul?”***

“आपके साथ अपने एक दोस्त का परिचय करवाने और शुक्रवार के बॉल-नृत्य में उसे अपने साथ यहां लाने के लिये आपकी अनुमति चाहता हूं।”

“उसे सीधे बॉल-नृत्य में ही ले आना और तभी मेरे साथ उसका परिचय करवा देना। कल तुम ... के यहां गये थे?”

“बेशक गया था! वहां बहुत मज़ा रहा – सुबह के पांच बजे तक नाचते रहे। येलेत्स्काया तो ख़ूब ही जंच रही थी!”

“ओह, मेरे प्यारे! उसमें भला जंचनेवाली क्या ख़ास बात हो सकती है? काश, उसकी दादी, प्रिंसेस दार्या पेत्रोव्ना को तुमने उसकी जवानी के दिनों में देखा होता!.. अब तो बहुत बुढ़ा गयी होगी प्रिंसेस दार्या पेत्रोव्ना?”

“बुढ़ा गयी होगी?” तोम्स्की ने बेख़्याली से जवाब दिया, “उसे तो मरे हुए सात साल हो चुके हैं।”

खिड़की के पास बैठी युवती ने सिर ऊपर उठाया और तोम्स्की को इशारा किया। तोम्स्की को याद आया कि बूढ़ी काउंटेस से उसकी हमउम्रों की मौत को छिपाया जाता है और यह भूल करने के लिये उसने अपना होंठ काटा। किन्तु काउंटेस ने अपने लिये यह नई ख़बर सुनकर कोई ख़ास परेशानी ज़ाहिर नहीं की।

“मर चुकी है!” काउंटेस ने कहा, “और मुझे मालूम ही नहीं था! हम दोनों को सम्राज्ञी की सेवा में उपस्थित रहने के लिये एक-साथ ही नियुक्त किया गया था और जब हम सम्राज्ञी के सामने गयीं, तो ...”

और काउंटेस ने सौवीं बार पोते को अपना यही क़िस्सा सुनाया।

---

* दादी (फ़्रांसीसी)।

** नमस्ते, लीज़ा (फ़्रांसीसी)।

*** पोल (फ़्रांसीसी)।

"तो Paul," इसके बाद उसने कहा, "अब उठने के लिये ज़रा मुझे सहारा दो। लीज़ा, मेरी नासदानी कहां है?"

और अपना साज-सिंगार पूरा करने के लिये काउंटेस नौकरानियों को साथ लेकर पर्दों के पीछे चली गयी। तोम्स्की युवती के पास रह गया।

"किसे परिचित करवाना चाहते हैं?" लीज़ावेता इवानोव्ना ने धीरे से पूछा।

"नारूमोव को। आप उसे जानती हैं?"

"नहीं। वह फ़ौजी है या ग़ैरफ़ौजी?"

"फ़ौजी।"

"इंजीनियर?"

"नहीं, घुड़सेना का अफ़सर। आपने ऐसा क्यों सोचा कि वह इंजीनियर है?"

युवती हंस दी और उसने कोई जवाब नहीं दिया।

"Paul!" काउंटेस पर्दों के पीछे से चिल्लाई, "मेरे लिये कोई नया उपन्यास भिजवा देना, लेकिन मेहरबानी करके आधुनिक नहीं।"

"क्या मतलब, grand'maman?"

"कोई ऐसा उपन्यास जिसमें नायक न तो अपने पिता और न ही मां का गला घोंटे और जिसमें लाशें न डुबोयी जायें। मैं डूबी लाशों से बहुत डरती हूं!"

"आजकल ऐसे उपन्यास नहीं हैं। आप रूसी उपन्यास पढ़ना नहीं चाहतीं?"

"क्या रूसी उपन्यास भी हैं?.. भेज देना भैया, कृपया भेज देना!"

"माफ़ी चाहता हूं, grand' maman, मैं जाने की जल्दी में हूं... माफ़ कीजिये, लीज़ावेता इवानोव्ना! आपने ऐसा क्यों सोचा कि नारूमोव इंजीनियर है?"

और तोम्स्की शृंगार-कक्ष से बाहर चला गया।

लीज़ावेता इवानोव्ना अकेली रह गयी। उसने कसीदाकारी का काम छोड़ दिया और खिड़की से बाहर झांकने लगी। शीघ्र ही कोनेवाले घर के पीछे से सड़क के पार एक जवान फ़ौजी अफ़सर दिखाई दिया।

लीज़ा के गालों पर लाली दौड़ गयी। वह फिर से कसीदा काढ़ने लगी और उसने किरमिच पर अपना सिर झुका लिया। इसी समय पूरी तरह से सजी-धजी हुई काउंटेस पर्दों के पीछे से बाहर आई।

"लीज़ा, बग्घी जोतने का आदेश दो," उसने कहा, "हम घूमने जायेंगी।"

लीज़ा कसीदाकारी छोड़कर उठी और अपना काम समेटने लगी।

"क्या बात है, लीज़ा! क्या तुम बहरी हो!" काउंटेस चिल्ला उठी। "जल्दी से बग्घी जोतने का आदेश दो।"

"अभी!" युवती ने धीरे से जवाब दिया और प्रवेश-कक्ष की ओर भाग गयी।

नौकर कमरे में आया और उसने प्रिंस पावेल अलेक्सान्द्रोविच की ओर से काउंटेस को पुस्तकें दीं।

"अच्छी बात है! धन्यवाद दे दीजिये"' काउंटेस ने कहा। "लीज़ा, लीज़ा! कहां भागी जा रही हो तुम?"

"कपड़े बदलने के लिये।"

"बदल लेना कपड़े, ऐसी क्या जल्दी है। यहां बैठो। पहला खण्ड खोलो और मुझे पढ़कर सुनाओ..."

युवती ने किताब लेकर कुछ पंक्तियां पढ़ीं।

"ज़ोर से!" काउंटेस ने कहा। "तुम्हें क्या हुआ है, लीज़ा? क्या तुम्हारी आवाज़ जाती रही?.. ज़रा रुको – पैर रखने की यह चौकी ज़रा मेरी तरफ़ खिसका दो, और अधिक निकट... तो पढ़ो!"

लीज़ावेता इवानोव्ना ने दो पृष्ठ और पढ़े। काउंटेस ने जम्हाई ली।

"फेंक दो इस किताब को," उसने कहा, "क्या बकवास है यह! प्रिंस पावेल को वापस भिजवा दो और धन्यवाद देने को कह देना... तो बग्घी का क्या हुआ?"

"बग्घी तैयार है," लीज़ावेता इवानोव्ना ने बाहर झांककर जवाब दिया।

"तुमने कपड़े क्यों नहीं बदले?" काउंटेस ने पूछा, "हमेशा तुम्हारा इन्तज़ार करना पड़ता है! बड़ा मुश्किल है यह तो बर्दाश्त करना!"

लीज़ा अपने कमरे में भाग गयी। दो मिनट भी नहीं गुज़रे कि काउंटेस पूरे ज़ोर से घण्टी बजाने लगी। एक दरवाज़े से तीन नौकरानियां

और दूसरे से एक नौकर भागा आया।

"तुम्हें जब बुलाया जाता है, तो तुम लोग उसी वक़्त क्यों नहीं आते?" काउंटेस ने उनसे कहा। "लीज़ावेता इवानोव्ना को बताओ कि मैं उसकी राह देख रही हूं।"

लीज़ावेता इवानोव्ना चोग़े जैसी पोशाक और टोपी पहने हुए भीतर आई।

"आख़िर तो आ गयीं तुम!" काउंटेस ने कहा। ख़ूब बनाव-सिंगार किया है! यह किसलिये भला?.. किसको मोहित करना चाहती हो?.. मौसम कैसा है? – लगता है हवा है।"

"नहीं, सरकार! बिल्कुल हवा नहीं है!" नौकर ने जवाब दिया।

"तुम लोग हमेशा वही कह देते हैं जो तुम्हारे मुंह में आ जाता है! खिड़की का ऊपरवाला शीशा खोलो तो। ठीक वही मामला है – हवा है, और सो भी ठण्डी! बग्घी खुलवा दीजिये! लीज़ा, हम नहीं जायेंगी – बनने-ठनने की कोई ज़रूरत नहीं थी।"

"यह है मेरी ज़िन्दगी!" लीज़ावेता इवानोव्ना ने सोचा।

वास्तव में ही लीज़ावेता इवानोव्ना बड़ी बदक़िस्मत प्राणी थी। दांते ने कहा है कि परायी रोटी कड़ुवी होती है और पराये घर की पैडियों पर चढ़ना मुश्किल होता है। दूसरे पर निर्भरता की कटुता को यदि जानी-मानी बुढ़िया की आश्रिता, ग़रीब लड़की नहीं जानेगी, तो कौन जानेगा? यह सच है कि काउंटेस दिल की बुरी नहीं थी, लेकिन सोसाइटी द्वारा बिगाड़ी गयी सभी औरतों की तरह मनमानी करती थी, कंजूस और निर्मम स्वार्थ में डूबी हुई थी, जैसे कि वे सभी बूढ़े लोग होते हैं जो अपने ज़माने में सारी कोमल भावनायें लुटाकर वर्त्तमान के प्रति उदासीन हो जाते हैं। वह ऊंचे समाज की सारी चहल-पहल में हिस्सा लेती थी, बॉल-नृत्यों में जाती थी, जहां पुराने ढंग से रंगी-चुनी और पुराने फ़ैशन के कपड़े पहने हुए नाच के हाल की भद्दी और ज़रूरी सजावट बनी बैठी रहती थी; एक प्रचलित रस्म के अनुरूप नवागत अतिथि उसके पास आते, बहुत झुककर उसका अभिवादन करते और बाद में कोई भी उसमें दिलचस्पी न लेता। सारे शहर को ही वह अपने यहां आमंत्रित करती, कड़ाई से आचार-व्यवहार को निभाती और किसी को भी चेहरे से न जानती-पहचानती। उसकी हवेली

और बाहर बने क्वार्टरों में रहने वाले अनेक नौकर-चाकर, जिनकी चर्बी बढ़ती जाती थी और बाल सफ़ेद होते जाते थे, जैसा चाहते थे, वैसा करते थे और मरणासन्न बुढ़िया को अधिक से अधिक लूटने के मामले में एक-दूसरे से होड़ लेते थे। लीज़ावेता इवानोव्ना घरेलू यातनायें-यन्त्रणायें सहती थी। वह चाय का प्याला बनाती तो फ़ालतू चीनी ख़र्च करने के लिये उसे डांटा-डपटा जाता; वह उपन्यास पढ़कर सुनाती, तो लेखक की सभी ग़लतियों के लिये उसे ही दोषी ठहराया जाता, काउंटेस के सैर-सपाटे के समय वह उसके साथ रहती और मौसम तथा सड़क की ख़राबी के लिये भी जवाबदेह होती। उसका वेतन नियत था जो उसे कभी पूरा नहीं मिलता था, लेकिन उससे यह मांग की जाती थी कि वह सभी की तरह पहने-ओढ़े यानी बहुत कम लोगों की तरह। ऊंचे समाज में उसकी भूमिका बहुत ही दयनीय होती थी। उसे सभी जानते थे, मगर कोई भी उसकी तरफ़ ध्यान नहीं देता था; बॉल-नृत्यों में वह केवल तभी नाचती थी जब vis-á-vis* न मिलती और महिलायें हर बार ही, जब उन्हें अपने साज-सिंगार में कुछ ठीक-ठाक करना होता, उसका हाथ थामकर उसे अपने साथ शृंगार-कक्ष में ले जातीं। वह स्वाभिमानी थी, अपनी स्थिति के बारे में पूरी तरह सजग थी और इसलिये अपने इर्द-गिर्द नज़र डालती हुई बड़ी बेसब्री से ऐसे व्यक्ति को ढूंढ़ती रहती जो उसे इस हालत से उबार सके। किन्तु अपने लाभ के फेर में पड़े हुए दम्भी जवान लोग उसकी ओर कोई ध्यान नहीं देते थे, यद्यपि लीज़ावेता इवानोव्ना उन गुस्ताख़ और निठुर युवतियों की तुलना में कहीं अधिक प्यारी थी, जिनके गिर्द वे मंडराते रहते थे। कितनी बार बड़े ही ठाठदार, मगर ऊब भरे मेहमानख़ाने से दबे पांव निकलकर वह अपने मामूली-से कमरे में जाकर रोने लगती, जहां काग़ज़ की दीवारी छींट से मढ़ी हुई लकड़ी की ओटें थीं, अलमारी थी, छोटा-सा दर्पण और रंगा हुआ पलंग था और जहां तांबे के शमादान में एक ही बत्ती धीमी-धीमी जलती रहती थी!

एक बार – यह इस उपन्यासिका के आरम्भ में वर्णित रात के दो दिन बाद और उस दृश्य के, जिसका हमने अभी उल्लेख किया है,

---

* नृत्य-संगिनी (फ़्रांसीसी)।

एक सप्ताह पहले हुआ — लीज़ावेता इवानोव्ना ने खिड़की के पास बैठे और कशीदाकारी करते हुए संयोग से बाहर सड़क पर नज़र डाली और एक जवान फ़ौजी इंजीनियर को निश्चल तथा अपनी खिड़की पर नज़र टिकाये खड़ा देखा। लीज़ा ने सिर झुका लिया और फिर से कढ़ाई करने लगी। पांच मिनट बाद उसने फिर से उधर देखा — जवान अफ़सर उसी जगह पर खड़ा हुआ था। राह चलते अफ़सरों के साथ आंखें लड़ाने की आदत न होने के कारण उसने सड़क की ओर देखना बन्द कर दिया और सिर ऊपर उठाये बिना लगभग दो घण्टों तक अपने काम में लगी रही। दोपहर के भोजन का समय हो गया। वह उठी, कशीदाकारी का सामान समेटने लगी और अनचाहे ही सड़क की ओर देख लेने पर उसे फिर से वही अफ़सर वहां खड़ा दिखाई दिया। उसे यह काफ़ी अजीब-सा लगा। दिन के भोजन के बाद कुछ परेशानी-सी महसूस करते हुए वह खिड़की के पास गई, किन्तु अफ़सर वहां नहीं था — और वह उसके बारे में भूल गयी।

दो दिन बाद, काउंटेस के साथ बग्घी में बैठने के लिये बाहर आने पर उसने उसे फिर से देखा। वह ऊदबिलाव की खाल के कालर से अपना चेहरा ढंके हुए दरवाज़े के पास ही खड़ा था और टोप के नीचे से उसकी काली आंखें चमक रही थीं। कारण न जानते हुए लीज़ावेता इवानोव्ना डर गयी और ऐसी धड़कन अनुभव करते हुए, जिसे स्पष्ट करना सम्भव नहीं था, बग्घी में बैठ गयी।

घर लौटते ही वह खिड़की की तरफ़ भागी गई — अफ़सर उस पर आंखें जमाये पहले वाली जगह पर खड़ा था। जिज्ञासा से व्यथित और ऐसी भावना से विह्वल, जो उसके लिये सर्वथा नई थी, वह खिड़की से पीछे हट गयी।

इस समय से एक भी ऐसा दिन नहीं बीतता था कि यह जवान अफ़सर नियत समय पर इनके घर की खिड़की के नीचे प्रकट न हो। इन दोनों के बीच एक अनजाना सम्बन्ध-सूत्र स्थापित हो गया। अपनी जगह पर बैठकर काम करते हुए वह उसका निकट आना अनुभव कर लेती, सिर ऊपर उठाती और हर दिन अधिकाधिक देर तक उसकी ओर देखती रहती। ऐसा लगता कि जवान अफ़सर इसके लिये उसके प्रति कृतज्ञता अनुभव करता था। जवानी की पैनी दृष्टि से वह यह

देखे बिना न रहती कि जब उनकी नज़रें मिलतीं, तो जवान के पीले गालों पर झटपट सुर्ख़ी दौड़ जाती। एक हफ़्ते बाद वह उसकी ओर देखकर मुस्करा दी ...

तोम्स्की ने अपने मित्र का परिचय करवाने के लिये जब काउंटेस से अनुमति चाही थी, तो इस बेचारी लड़की का दिल धड़क उठा था। किन्तु यह मालूम होने पर कि नारूमोव इंजीनियर नहीं, गार्डों की घुड़सेना का अफ़सर है, उसे इस बात का अफ़सोस हुआ कि अनुचित प्रश्न पूछकर उसने चंचल तोम्स्की के सामने अपना राज़ खोल दिया था।

हेर्मन्न रूस में ही रह जानेवाले एक जर्मन का बेटा था, जो उसके लिये बहुत छोटी-सी पूंजी छोड़ गया था। अपनी आत्म-निर्भरता को सुदृढ़ करने की आवश्यकता के बारे में पक्का विश्वास होने के कारण हेर्मन्न अपनी पूंजी का सूद तक भी नहीं लेता था, केवल वेतन पर गुज़ारा करता था और अपने दिल की कोई छोटी-सी सनक-तरंग भी पूरी नहीं करता था। वैसे वह अपने ही में बन्द और महत्त्वाकांक्षी था और उसके साथियों को उसकी अत्यधिक मितव्ययता की खिल्ली उड़ाने का बहुत ही कम मौक़ा मिलता था। वह बहुत ही भावावेशी और प्रबल कल्पना-शक्ति का धनी था, किन्तु उसकी दृढ़ता ने उसे जवानी की सामान्य भूलों-भ्रांतियों से बचा लिया। उदाहरण के लिये, यद्यपि उसकी आत्मा में जुए का शौक़ घर किये बैठा था, वह कभी पत्ते हाथ में नहीं लेता था, क्योंकि यह हिसाब लगाता था कि उसकी सम्पत्ति उसे इस बात की अनुमति नहीं देती थी (उसी के शब्दों में) "कि वह कुछ फ़ालतू पाने की उम्मीद में उसे भी क़ुर्बान कर दे जो एकदम ज़रूरी है" – और फिर भी वह सारी-सारी रात जुए की मेज़ों के पास बैठा हुआ खेल के उतार-चढ़ावों को बड़ी उत्तेजना से देखता रहता।

तीन पत्तों के क़िस्से ने उसकी कल्पना को अत्यधिक प्रभावित किया और सारी रात वह उसके दिमाग़ से नहीं निकला। "कैसा रहे," अगली शाम को पीटर्सबर्ग में घूमते हुए वह सोचता रहा, "कैसा रहे, अगर बूढ़ी काउंटेस मेरे सामने अपना राज़ खोल दे! या फिर निश्चित रूप से जीतनेवाले तीन पत्ते ही मुझे बता दे! मैं अपनी क़िस्मत क्यों न आज़माकर देखूं?.. उससे जान-पहचान करूं, उसका कृपा-पात्र बन जाऊं – शायद उसका प्रेमी हो जाऊं – लेकिन इस सब के लिये तो वक़्त

चाहिये – और उसकी उम्र है सत्तासी साल – वह एक हफ़्ते बाद, दो दिन बाद भी मर सकती है!.. और फिर ख़ुद वह क़िस्सा भी?.. क्या उसपर यक़ीन किया जा सकता है?.. नहीं! मितव्ययता, संयतता और श्रमप्रियता – यही भरोसे के मेरे तीन पत्ते हैं, यही मेरी पूंजी को तिगुना, सात गुना कर सकते हैं और मुझे चैन तथा स्वावलम्बिता प्रदान कर सकते हैं!"

इसी तरह से सोच-विचार करते हुए वह पीटर्सबर्ग की एक मुख्य सड़क पर प्राचीन वास्तुकला वाले एक घर के सामने जा निकला। सड़क बग्घियों से अटी पड़ी थी और जगमगाते दरवाज़े के सामने एक के बाद एक बग्घी आकर रुक रही थी। बग्घियों में से हर क्षण किसी जवान सुन्दरी का नाज़ुक पांव या छनकती एड़ी वाला घुटनों तक का जूता, या किसी राजदूत की धारीदार लम्बी जुराब और फ़ैंसी जूता बाहर आता। फ़र-कोट और बरसातियां अपनी झलक दिखाती हुई ठाठदार दरबान के पास से गुज़रतीं। हेर्मन्न यहां रुक गया।

"यह किसका घर है?" उसने नुक्कड़ वाले पुलिसमैन से पूछा।

"काउंटेस ... का," पुलिसमैन ने जवाब दिया।

हेर्मन्न का दिल धड़क उठा। अनूठा क़िस्सा फिर से उसकी कल्पना में सजीव हो गया। वह इस घर की स्वामिनी और उसकी अद्भुत क्षमताओं के बारे में सोचता हुआ इसके आस-पास आने-जाने लगा। अपने साधारण-से निवासस्थान पर वह काफ़ी रात गये लौटा, देर तक सो नहीं सका और जब नींद उस पर हावी हो गयी, तो सपने में उसे पत्ते, हरे मेज़पोश से ढकी मेज़, नोटों की गड्डियां और सोने की मुद्राओं के ढेर नज़र आये। वह एक के बाद एक पत्ता चलता था, दृढ़ता से दांव दुगुने करता जाता था, लगातार जीतता था, सोने की मुद्राओं के ढेरों को अपनी तरफ़ खिसका लेता था और जेबों में नोट ठूंसता जाता था। काफ़ी देर से सुबह उठने पर उसने अपनी काल्पनिक दौलत के खो जाने के कारण गहरी सांस ली, फिर से शहर का चक्कर लगाने चल दिया और पुनः अपने को काउंटेस ... के घर के सामने पाया। कोई रहस्यमयी शक्ति मानो उसे उस घर की ओर खींच ले जाती थी। वह रुका और खिड़कियों की तरफ़ देखने लगा। एक खिड़की के पीछे उसे काले बालोंवाला सिर दिखाई दिया जो सम्भवतः किसी किताब

या काम पर झुका हुआ था। सिर ऊपर को उठा। हेर्मन्न को ताज़गी लिये हुए चेहरा और काली आंखें नज़र आईं। इस क्षण ने उसके भाग्य का निर्णय कर दिया।

(३)

Vous m'écrives, mon ange, des lettres de quatre pages plus vite que je ne puis les lire.*

पत्र-व्यवहार

लीज़ावेता इवानोव्ना ने चोग़ा और टोपी उतारे ही थे कि काउंटेस ने उसे बुलवा भेजा और फिर से बग्घी तैयार करवाने का आदेश दिया। वे बग्घी में बैठने के लिये गयीं। जब दो नौकर बूढ़ी काउंटेस को उठाकर बग्घी के दरवाज़े में घुसेड़ रहे थे, लीज़ावेता इवानोव्ना को बग्घी के पहिये के बिल्कुल निकट ही अपना इंजीनियर दिखाई दिया; इंजीनियर ने उसका हाथ पकड़ लिया; डर के मारे लीज़ा की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी, जवान अफ़सर ग़ायब हो गया और एक पत्र लीज़ा के हाथ में रह गया। लीज़ा ने उसे अपने दस्ताने में छिपा लिया और रास्ते भर उसे किसी बात की कोई सुध-बुध ही न रही। बग्घी में जाते हुए काउंटेस को लगातार कुछ न कुछ पूछते जाने की आदत थी: हमारे निकट से अभी कौन गुज़रा था? – इस पुल का क्या नाम है? – वहां साइनबोर्ड पर क्या लिखा है? लीज़ावेता इवानोव्ना ने हर बार ही अटकल-पच्चू और असंगत जवाब दिये। इससे काउंटेस की झल्लाहट बढ़ती गयी।

"तुम्हें क्या हो गया है, री? तुम्हारा दिमाग़ तो नहीं चल निकला? तुम या तो मेरी बात सुनती नहीं हो या समझती नहीं हो?..

---

* मेरे फ़रिश्ते, मैं जितनी जल्दी उन्हें पढ़ पाता हूं, तुम चार-चार पृष्ठों की चिट्ठियां मुझे उससे कहीं ज़्यादा जल्दी लिखती हो (फ़्रांसीसी)।

भगवान की कृपा से मैं न तो तुतलाती हूं और न ही अभी मेरी अक़्ल ने जवाब दिया है!"

लीज़ावेता इवानोव्ना उसे सुन ही नहीं रही थी। घर लौटने पर वह अपने कमरे में भाग गयी, उसने दस्ताने में से पत्र निकाला जो मुहरबन्द नहीं था। लीज़ावेता इवानोव्ना ने उसे पढ़ा। पत्र में प्यार की स्वीकृति थी: उसमें कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति थी, वह आदरपूर्ण था तथा शब्दशः किसी जर्मन उपन्यास से नक़ल किया गया था। पर चूंकि लीज़ावेता इवानोव्ना जर्मन भाषा नहीं जानती थी, इसलिये उसे इस पत्र से बहुत ख़ुशी हुई।

किन्तु साथ ही इस पत्र से वह बड़ी बेचैन भी हो उठी। ज़िन्दगी में पहली बार एक जवान मर्द के साथ उसके गुप्त और घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो रहे थे। उसके ऐसे साहस से वह दहल उठी। अपनी गति-विधि की असावधानी के लिये उसने अपनी भर्त्सना की और यह नहीं समझ पा रही थी कि वह क्या करे – खिड़की के पास बैठना छोड़ दे और लापरवाही दिखाकर आगे के लिये जवान अफ़सर के जोश पर पानी डाल दे? उसे उसका पत्र लौटा दे? रुखाई और दृढ़ता से उसे जवाब दे दे? वह किसी के साथ भी सलाह-मशविरा नहीं कर सकती थी, उसकी न तो सहेलियां थीं और न ही कोई संरक्षिका। लीज़ावेता इवा-नोव्ना ने उत्तर देने का निर्णय किया।

वह लिखने की मेज़ पर बैठ गयी, उसने काग़ज़-क़लम सामने रखे और सोच में डूब गयी। उसने कई बार अपना पत्र शुरू किया और उसे फाड़ डाला – कभी तो वह उसे बहुत कोमल और कभी बहुत कठोर प्रतीत हुआ। आख़िर वह ऐसी कुछ पंक्तियां लिखने में सफल हो गयी जिनसे उसे सन्तोष हुआ। "मुझे विश्वास है," उसने लिखा, "कि आपका इरादा नेक है, कि आप अच्छी तरह से सोचे-समझे बिना कोई क़दम उठाकर मेरे दिल को ठेस नहीं लगाना चाहते हैं, लेकिन हमारी जान-पहचान की इस तरह से शुरुआत नहीं होनी चाहिये। आपका पत्र लौटा रही हूं और आशा करती हूं कि भविष्य में आप मुझे अकारण अनादर की शिकायत करने का मौक़ा नहीं देंगे।"

अगले दिन हेर्मन्न को आते देखकर लीज़ा कशीदाकारी छोड़कर उठी, साथ के बड़े कमरे में गयी, उसने खिड़की का ऊपरी भाग खोला

और जवान अफ़सर की चुस्ती-फुर्ती पर भरोसा करते हुए पत्र नीचे फेंक दिया। हेर्मन्न भागकर आया, उसने पत्र उठा लिया और मिठाइयों की दुकान में जाकर उसे खोला। उसे उसमें अपना और लीज़ावेता इवानोव्ना का पत्र मिला। उसे ऐसी ही आशा थी और वह अपनी इस साज़िशी कार्रवाई में बेहद खोया हुआ घर लौटा।

इसके तीन दिन बाद फ़ैशन की दुकान से चंचल आंखोंवाली एक लड़की लीज़ावेता इवानोव्ना के पास एक रुक्क़ा लेकर आई।

लीज़ावेता इवानोव्ना ने मन में यह घबराहट अनुभव करते हुए कि उससे बिल चुकाने की मांग की गयी होगी, लिफ़ाफ़ा खोला और सहसा हेर्मन्न की लिखावट पहचान ली।

"मेरी प्यारी, तुमसे भूल हो गयी है, यह रुक्क़ा मेरे नाम नहीं है।"

"नहीं, आप ही के नाम है!" साहसी लड़की ने शरारतभरी मुस्कान को छिपाये बिना जवाब दिया। "इसे पढ़ने की कृपा कीजिये!"

लीज़ावेता इवानोव्ना ने रुक्क़े पर जल्दी से नज़र डाल ली। हेर्मन्न ने मिलन की मांग की थी।

"ज़रूर भूल हुई है!" मिलन की मांग के उतावलेपन और हेर्मन्न द्वारा उपयोग में लाये गये तरीक़े से भयभीत होकर लीज़ावेता इवानोव्ना ने कहा। "सम्भवतः यह मेरे नाम नहीं लिखा गया है!" और उसने पत्र के छोटे-छोटे टुकड़े कर डाले।

"अगर आपके नाम नहीं था, तो आपने इसे फाड़ा क्यों?" लड़की ने प्रश्न किया, "मैं इसे उसी को लौटा देती जिसने भेजा था।"

"कृपया प्यारी, भविष्य में मेरे पास पत्र नहीं लाइयेगा," लड़की की टिप्पणी पर भड़कते हुए लीज़ावेता इवानोव्ना ने कहा। "इसके अलावा जिसने तुम्हें भेजा है, उससे यह कह देना कि उसे शर्म आनी चाहिये ..."

किन्तु हेर्मन्न हतोत्साहित नहीं हुआ। लीज़ावेता इवानोव्ना को किसी न किसी ढंग से हर दिन ही उसका पत्र मिलता। अब ये पत्र जर्मन से अनूदित नहीं होते थे। हेर्मन्न भावनाओं से ओत-प्रोत होकर लिखता और अपनी ही भाषा का उपयोग करता: उनमें उसकी दृढ़ इच्छा और बेलगाम कल्पना की उड़ान की गड़बड़ भी अभिव्यक्त होती। लीज़ावेता इवानोव्ना अब उन्हें लौटाने की बात भी नहीं सोचती: वह उनके रस

में डूब-डूब जाती, उनके उत्तर देने लगी और उसके पत्र हर दिन अधिकाधिक लम्बे और प्यारभरे होते गये। आख़िर उसने खिड़की से निम्न पत्र उसके नाम फेंका –

"आज ... राजदूत के यहां बाल-नृत्य है। काउंटेस वहां जायेंगी। हम दो बजे तक वहां रहेंगी। मुझसे एकान्त में मिलने का आपके लिये यह अच्छा मौक़ा है। काउंटेस के जाते ही उनके नौकर-चाकर भी निश्चय ही चले जायेंगे, ड्योढ़ी में सिर्फ़ दरबान ही रह जायेगा और वह भी आम तौर पर अपने छोटे से कमरे में चला जाता है। साढ़े ग्यारह बजे आइये। सीधे सीढ़ियां चढ़ जाइये। अगर प्रवेश-कक्ष में कोई मिल जाये, तो पूछिये कि काउंटेस घर पर हैं या नहीं। यह जवाब मिलने पर कि नहीं हैं, आपके सामने कोई चारा नहीं रह जायेगा। आपको लौटना पड़ेगा। अधिक सम्भावना तो इसी बात की है कि आपको कोई नहीं मिलेगा। नौकरानियां एक ही कमरे में बैठी रहती हैं। प्रवेश-कक्ष से बायें को मुड़ जाइये और काउंटेस के शयन-कक्ष में पहुंच जाने तक सीधे ही चलते जाइये। शयन-कक्ष में पर्दों के पीछे आपको छोटे-छोटे दो दरवाज़े दिखाई देंगे: दायां दरवाज़ा अध्ययन-कक्ष की ओर ले जाता है, जहां काउंटेस कभी नहीं जातीं; बायां दरवाज़ा बरामदे की ओर खुलता है और वहीं एक संकरा-सा घुमावदार ज़ीना है – इसे चढ़कर मेरे कमरे में पहुंचा जा सकता है।"

नियत समय की प्रतीक्षा करते हुए हेर्मन्न बाघ की तरह बेचैनी अनुभव कर रहा था। रात के दस बजने पर वह काउंटेस के घर के सामने जाकर खड़ा भी हो गया था। मौसम बहुत ही बुरा था – हवा चीख़-चिंघाड़ रही थी, कच्ची-गीली बर्फ़ के बड़े-बड़े फाहे-से गिर रहे थे, सड़क के लैम्प मद्धिम-सी रोशनी छिटका रहे थे और सड़कें सुनसान थीं। कभी-कभी किराये की बग्घी वाला कोचवान अपनी मरियल-सी घोड़ी को इस आशा में इधर-उधर हांकता दिखाई दे जाता कि शायद देर से घर को लौटनेवाली कोई सवारी मिल जाये। हेर्मन्न सिर्फ़ फ़ाक-कोट पहने था और न तो हवा और न बर्फ़ का ही असर महसूस कर रहा था। आख़िर काउंटेस की बग्घी दरवाज़े के सामने आकर खड़ी हो गयी। हेर्मन्न ने झुकी पीठ वाली बुढ़िया को, जो सेबल का फ़र-कोट पहने थी, सहारा देकर नौकरों द्वारा बाहर लाते और उसके पीछे-पीछे

हल्का-सा ओवरकोट पहने और बालों में फूल खोंसे उसकी युवा संगिनी को उसके पीछे-पीछे आते देखा। बग्घी के दरवाज़े बन्द कर दिये गये। नर्म बर्फ़ पर बग्घी मुश्किल से आगे बढ़ी। दरबान ने घर का दरवाज़ा बन्द कर दिया। खिड़कियों से रोशनी ग़ायब हो गयी। हेर्मन्न सूने हो गये घर के सामने आने-जाने लगा। लैम्प के पास जाकर उसने घड़ी पर नज़र डाली – ग्यारह बजकर बीस मिनट हुए थे। घड़ी की सूई पर दृष्टि टिकाये हुए सड़क की बत्ती के नीचे ही खड़ा रहकर वह शेष मिनटों के बीतने का इन्तज़ार करने लगा। ठीक साढ़े ग्यारह बजे हेर्मन्न काउंटेस के घर का दरवाज़ा लांघकर रोशनी से जगमगाती ड्योढ़ी में दाख़िल हुआ। दरबान नहीं था। हेर्मन्न भागते हुए सीढ़ियां चढ़ गया, उसने प्रवेश-कक्ष का दरवाज़ा खोला और वहां पुराने ढंग की, जहां-तहां चिकने धब्बे लगी आरामकुर्सियों पर एक नौकर को लैम्प के नीचे सोते पाया। हल्के और दृढ़ क़दम रखते हुए हेर्मन्न उसके पास से निकल गया। हाल और मेहमानख़ाने में अंधेरा था। प्रवेश-कक्ष की बहुत ही हल्की-सी रोशनी इसमें आ रही थी। हेर्मन्न ने शयन-कक्ष में प्रवेश किया। देव-प्रतिमाओं के कोने के सामने सोने का लैम्प जल रहा था। बेल-बूटेदार बदरंग कपड़े से मढ़ी आरामकुर्सियां और रोयें भरे तकियोंवाले सोफ़े, जिन पर से जहां-तहां सुनहरा रंग उतर चुका था, चीनी काग़ज़ी छींट से सजी दीवारों के साथ-साथ मातमी-सी तरतीब में रखे हुए थे। दीवार पर m-me Lebrun* द्वारा पेरिस में बनाये गये दो छविचित्र टंगे हुए थे। एक चित्र तो कोई चालीसेक साल के लाल-लाल गालों और गदराये बदन वाले पुरुष का था जो हल्के हरे रंग की वर्दी पहने था और उसकी छाती पर सितारा दिख रहा था। दूसरा चित्र था शुक नासिका वाली जवान सुन्दरी का जिसके बाल कनपटियों पर संवरे हुए थे और गुलाब का फूल पाउडर लगे बालों की शोभा बढ़ा रहा था। सभी कोनों में चीनी मिट्टी की बनी चरवाहिनों की मूर्त्तियां, प्रसिद्ध Leroy द्वारा बनायी गयी मेज़-घड़ियां, सजावटी मंजूषिकायें, खेलने के चक्र, पंखे और महिलाओं के मनबहलाव के ऐसे खिलौने रखे हुए थे जिनका पिछली शताब्दी के अन्त में

---

* फ़्रांसीसी चित्रकार महिला, छविचित्रकार (१७५५–१८४२)।–सं०

मोंटगोलफ़ियर के गुब्बारे * तथा मेस्मेर के चुम्बकत्व ** सहित आविष्कार किया गया था। हेर्मन्न पर्दों के पीछे गया। उनके पीछे लोहे का छोटा-सा पलंग था, दायीं ओर अध्ययन-कक्ष का दरवाज़ा था तथा बायीं ओर बरामदे की तरफ़ ले जानेवाला दरवाज़ा। हेर्मन्न ने बायीं ओर का दरवाज़ा खोला और उसे वह संकरा तथा घुमावदार ज़ीना दिखाई दिया जिसे चढ़कर बेचारी लीज़ावेता इवानोव्ना के कमरे में पहुंचा जा सकता था... लेकिन वह लौटा और अंधेरे अध्ययन-कक्ष में चला गया।

वक़्त बहुत धीरे-धीरे बीत रहा था। सभी ओर ख़ामोशी छाई थी। मेहमानख़ाने में घड़ी ने बारह बजाये, एक के बाद एक सभी कमरों की घड़ियां टनटना उठीं और फिर से सब कुछ शान्त हो गया। हेर्मन्न ठण्डी अंगीठी का सहारा लिये खड़ा था। वह शान्त था, उसका हृदय उस व्यक्ति के दिल की तरह समगति से धड़क रहा था जो कोई ख़तरनाक, लेकिन ज़रूरी काम करने का फ़ैसला कर लेता है। घड़ियों ने रात का एक और फिर दो बजाये और हेर्मन्न को दूरी से बग्घी के आने की आवाज़ सुनाई दी। अनचाहे ही उसका मन उद्विग्न हो उठा। बग्घी घर के सामने आकर रुक गयी। उसे बग्घी से नीचे उतरने की आवाज़ सुनाई दी। घर में हलचल मच गयी। लोग भागते हुए आये, आवाज़ें गूंज उठीं और घर रोशन हो उठा। अधेड़ उम्र की तीन नौकरानियां भागी हुई सोने के कमरे में आयीं और थकान से बेहाल काउंटेस कमरे में दाख़िल होकर ऊंची टेकवाली आरामकुर्सी में ढह पड़ी। हेर्मन्न पर्दे के पीछे से झांक रहा था। लीज़ावेता इवानोव्ना उसके पास से गुज़री। हेर्मन्न को सुनाई दिया कि कैसे वह जल्दी-जल्दी अपने कमरे की ओर जानेवाले ज़ीने पर चढ़ी। उसकी आत्मा ने मानो उसे धिक्कारा और जल्द ही यह आवाज़ शान्त हो गई। वह जैसे पत्थर की तरह कठोर हो गया।

काउंटेस दर्पण के सामने अपने कपड़े उतारने लगी। नौकरानियों ने पिनें निकालकर गुलाबों से सजी उसकी टोपी और पके तथा छोटे-छोटे कटे बालोंवाले सिर से पाउडर लगा विग उतारा। पिनें बारिश

---

* फ़्रांसीसी आविष्कारक मोंटगोलफ़ियर बन्धुओं ने जून १७८३ में गर्म धुएं से भरा हुआ काग़ज़ी गुब्बारा पहली बार उड़ाया। —सं०

** यहां आस्ट्रिया के डाक्टर फ़्रान्त्स मेस्मेर (१७३४–१८१५) के इस सिद्धान्त से अभिप्राय है कि हर व्यक्ति में "जीवयुक्त चुम्बकत्व" होता है जो लोगों को प्रभावित कर सकता है। —सं०

की तरह उसके आस-पास गिर रही थीं। रुपहली कढ़ाई वाला पीला फ़ाक उसके सूजे पैरों पर जा गिरा। हेर्मन्न उसके शृंगार के घृणित रहस्यों को देख रहा था। आख़िर काउंटेस सोने के गाउन और टोपी में रह गयी। उसके बुढ़ापे के अधिक अनुरूप इस पोशाक में वह कम भयानक और कम भद्दी प्रतीत हो रही थी।

सभी बूढ़े लोगों की तरह काउंटेस भी अनिद्रा रोग से पीड़ित थी। कपड़े उतारने के बाद वह खिड़की के पास ऊंची टेक वाली आराम-कुर्सी पर बैठ गयी और उसने नौकरानियों को जाने का आदेश दिया। जलती मोमबत्तियोंवाले शमादान भी बाहर ले जाये गये और कमरे में फिर से केवल देव-प्रतिमाओं के सामने जल रहे दीप का प्रकाश रह गया। एकदम पीली-ज़र्द काउंटेस अपने अधरों को हिलाती और दायें-बायें डोलती हुई बैठी थी। उसकी धुंधली-धुंधली आंखें मानो सर्वथा भावहीन थीं। उसे देखते हुए ऐसा सोचा जा सकता था कि इस भयानक बुढ़िया का दायें-बायें डोलना उसकी अपनी इच्छा का नहीं, बल्कि किसी प्रेरक प्रक्रिया के प्रभाव का परिणाम है।

इस मृतप्राय चेहरे पर सहसा अवर्णनीय परिवर्तन हो गया। होंठों ने हिलना-डुलना बन्द कर दिया, आंखों में चमक आ गयी – एक अपरिचित पुरुष काउंटेस के सामने खड़ा था।

"डरिये नहीं, भगवान के लिये डरिये नहीं!" हेर्मन्न ने स्पष्ट और धीमी आवाज़ में कहा। "आपको किसी तरह की हानि पहुंचाने का मेरा कतई इरादा नहीं। मैं आपसे केवल एक कृपा का अनुरोध करने आया हूं।"

बुढ़िया चुपचाप उसकी ओर देख रही थी और ऐसे लगता था मानो उसने उसकी बात ही न सुनी हो। हेर्मन्न ने कल्पना की कि वह बहरी है और उसके कान पर झुककर उसने फिर से अपने वही शब्द दोहराये। बुढ़िया पहले की तरह ही ख़ामोश रही।

"आप मेरी ज़िन्दगी को बहुत सुखी बना सकती हैं," वह कहता गया, "और आपको इसके लिये कुछ भी तो नहीं करना पड़ेगा: मुझे मालूम है कि आप ऐसे तीन पत्ते बता सकती हैं जिन्हें लगातार एक के बाद एक खेला जा सकता है..."

हेर्मन्न चुप हो गया। उसे लगा मानो काउंटेस समझ गयी है कि

उससे किस बात की अपेक्षा की जा रही है; वह अपने उत्तर के लिये शब्द ढूंढ़ती-सी दिखाई दी।

"यह तो मज़ाक़ था," उसने आख़िर जवाब दिया, "क़सम खाकर कहती हूं! यह मज़ाक़ था!"

"यह मज़ाक़ की बात नहीं है," हेर्मन्न ने झल्लाते हुए आपत्ति की। चाप्लीत्स्की को याद कीजिये जिसे आपने हारी हुई रक़म वापस जीतने में मदद दी थी।"

काउंटेस स्पष्टत: बेचैनी महसूस कर रही थी। उसके चेहरे से यह पता चल रहा था कि उसके भीतर कोई भारी उथल-पुथल हो रही है, किन्तु उसमें शीघ्र ही पहले जैसी उदासीनता-निर्जीवता आ गयी।

"आप मुझे पूरे भरोसे के तीन पत्ते बता सकती हैं?" हेर्मन्न ने अपनी बात जारी रखी।

काउंटेस ख़ामोश रही। हेर्मन्न कहता गया –

"किसके लिये छिपाये रखना चाहती हैं आप अपना राज़? नाती-पोतों के लिये? वे तो वैसे ही बड़े मालदार हैं, पैसा क्या क़ीमत रखता है, उन्हें यह मालूम नहीं। आपके तीन पत्ते धन उड़ाने-लुटाने-वालों की कोई मदद नहीं कर सकते। अपने बाप से मिली विरासत को ही जो नहीं सहेज सकता, वह एड़ी-चोटी का ज़ोर लगाने पर भी कौड़ी-कौड़ी को मुहताज होकर मरेगा। मैं उड़ाऊ-लुटाऊ नहीं हूं, पैसे की क़ीमत जानता हूं। आपके बताये हुए तीन पत्ते मेरे लिये बेकार नहीं जायेंगे। तो बताइये न!.."

हेर्मन्न रुका और धड़कते दिल से उसके जवाब का इन्तज़ार करने लगा। काउंटेस ख़ामोश रही। हेर्मन्न घुटनों के बल हो गया।

"अगर आपके हृदय ने कभी प्रेम-भावना को जाना है, अगर आपको उसके उल्लास का स्मरण है, अगर आप नवजात शिशु का रोना सुनकर एक बार भी मुस्करायी हैं, अगर आपके दिल में कभी कोई मानवीय धड़कन-स्पन्दन हुआ है, तो एक पत्नी, प्रेयसी और मां की भावनाओं के नाम पर आपकी मिन्नत करता हूं, जीवन में जो कुछ पवित्र-पावन है, उसके नाम पर अनुरोध करता हूं कि मेरी प्रार्थना को नहीं ठुकराइये! – मेरे सामने अपना रहस्य खोल दीजिये! आपको उसे छिपाये रखकर क्या लेना है?.. हो सकता है कि उसका

किसी भयानक पाप के साथ सूत्र जुड़ा हुआ हो, वह शाश्वत सुख से वंचित हो, शैतान के साथ उसने कोई सांठ-गांठ कर रखी हो ... सोचिये तो: आप बूढ़ी हैं, बहुत दिन नहीं जीना है आपको, – आपके पापों को मैं अपनी आत्मा पर लेने को तैयार हूं। सिर्फ़ अपना राज़ मुझे बता दीजिये। सोचिये तो, एक व्यक्ति का सुख-सौभाग्य आपके हाथों में है, केवल मैं ही नहीं, मेरे बेटे-बेटियां, पोते-पोतियां और परपोते-परपोतियां भी आपकी स्मृति का यशोगान करेंगे और उसे पावन मानेंगे ...''

बुढ़िया ने जवाब में एक भी शब्द नहीं कहा।

हेर्मन्न उठकर खड़ा हो गया।

"बूढ़ी डायन!" वह दांत पीसते हुए चिल्ला उठा, "मैं तुझे जवाब देने को मजबूर कर दूंगा ..."

इतना कहकर उसने जेब से पिस्तौल निकाल ली।

पिस्तौल देखकर काउंटेस ने दूसरी बार बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया प्रकट की। उसने सिर पीछे को झटका और हाथ ऐसे ऊपर उठा लिया मानो अपने को गोली के निशाने से बचाना चाहती हो ... इसके बाद उसने आरामकुर्सी की टेक पर अपनी पीठ टिका दी ... और निश्चल हो गयी।

"यह खिलवाड़ बन्द कीजिये," उसका हाथ अपने हाथ में लेकर हेर्मन्न ने कहा। "आख़िरी बार पूछ रहा हूं – अपने तीन पत्ते मुझे बताना चाहती हैं या नहीं? हां या नहीं?"

काउंटेस ने कोई जवाब नहीं दिया। हेर्मन्न ने देखा कि वह मर चुकी है।

(४)

7 Mai 18..
Homme sans moeurs et sans religion!*

पत्र-व्यवहार

लीज़ावेता इवानोव्ना अभी तक अपने कमरे में बॉल-नृत्य की पोशाक पहने और गहन विचारों में डूबी हुई बैठी थी। घर लौटने पर उसने

---

* ७ मई, १८..। ऐसा व्यक्ति, जिसके न तो कोई नैतिक सिद्धान्त हैं और जिसके लिये न कुछ पावन है! (फ़्रांसीसी)।

ऊंघती-सी नौकरानी को, जिसने मन मारकर अपनी सेवा उपस्थित की थी, यह कहते हुए झटपट मुक्त कर दिया कि ख़ुद ही कपड़े बदल लेगी और यह आशा करते, किन्तु साथ ही ऐसा न चाहते हुए कि हेर्मन्न वहां हो, अपने कमरे में धड़कते दिल से दाख़िल हुई। पहली नज़र में ही उसे इस बात का यक़ीन हो गया कि हेर्मन्न वहां नहीं है और उसने उस बाधा के लिये अपने भाग्य को सराहा जिसने उनका मिलन नहीं होने दिया था। वह कपड़े उतारे बिना ही बैठ गयी और मन ही मन उन सभी परिस्थितियों को याद करने लगी, जो इतने थोड़े समय में उसे इतनी दूर तक खींच ले गयी थीं। उस दिन के बाद अभी तीन हफ़्ते भी नहीं गुज़रे थे, जब उसने खिड़की में से पहली बार इस नौजवान को देखा था, वह अब उसके साथ पत्र-व्यवहार भी कर रही थी तथा उसने उससे रात्रि-मिलन की अनुमति भी प्राप्त कर ली थी! वह केवल इसीलिये उसका नाम जानती थी कि कुछ पत्रों के नीचे उसके हस्ताक्षर थे; उसने उसके साथ कभी बातचीत नहीं की थी, कभी उसकी आवाज़ नहीं सुनी थी और... आज की रात के पहले उसके बारे में कभी कुछ नहीं सुना था। अजीब मामला है! इसी रात को तोम्स्की ने जवान प्रिंसेस पोलीना से इस बात के लिये नाराज़ होकर कि वह हमेशा की तरह उसके साथ नहीं, बल्कि किसी अन्य के साथ चोचलेबाज़ी कर रही थी, उससे बदला लेना चाहा, उसके प्रति अपनी उदासीनता दिखाते हुए लीज़ावेता इवानोव्ना को अपने संग नाचने को निमन्त्रित कर लिया और उसी के साथ अन्तहीन माज़ूरका नाच नाचता रहा। इंजीनियर अफ़सरों में लीज़ावेता इवानोव्ना की ख़ास दिलचस्पी के लिये वह लगातार मज़ाक़ करता और यह विश्वास दिलाता रहा कि जितना वह समझती है, वह उसके बारे में उससे कहीं ज्यादा जानता है और उसके कुछ मज़ाक़ तो निशाने पर ऐसे ठीक बैठे कि लीज़ावेता इवानोव्ना ने कई बार ऐसा सोचा कि वह उसका राज़ जानता है।

"किसने आपको यह सब बताया है?" लीज़ावेता इवानोव्ना ने हंसते हुए उससे पूछा।

"उसके मित्र ने जिसे आप जानती हैं," तोम्स्की ने जवाब दिया, "बहुत ही लाजवाब आदमी है वह!"

"कौन है यह लाजवाब आदमी?"

"उसका नाम हेर्मन्न है।"

लीज़ावेता इवानोव्ना ने कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन उसके हाथ-पांव बर्फ़ की तरह ठण्डे हो गये...

"यह हेर्मन्न," तोम्स्की कहता गया, "सचमुच ही रोमांटिक आदमी है – उसका चेहरा-मोहरा नेपोलियन जैसा है और उसकी आत्मा है मेफ़िस्टोफ़ेलिस की। मेरे ख्याल में उसकी आत्मा पर कम से कम तीन पापों का बोझ है। आपका चेहरा कैसा पीला पड़ गया है!.."

"मेरे सिर में दर्द है... उस हेर्मन्न – या क्या नाम है उसका? – उसने आपसे क्या कहा है?.."

"हेर्मन्न अपने दोस्त से बहुत नाख़ुश है: वह कहता है कि उसकी जगह उसने बिल्कुल दूसरा ही ढंग अपनाया होता... मैं तो ऐसा मानता हूं कि ख़ुद हेर्मन्न भी आप पर मुग्ध है। कम से कम इतना तो है ही कि अपने मित्र के प्रेमोद्‌गारों को सुनते हुए वह उदासीन नहीं रह पाता।"

"लेकिन उसने मुझे देखा कहां है?"

"शायद गिरजाघर में – या सैर करते हुए! भगवान ही जाने! शायद उस समय आपके कमरे में, जब आप सो रही थीं – उससे किसी भी बात की उम्मीद की जा सकती है..."

इसी वक़्त तीन महिलाओं ने इनके पास आकर "Oubli ou regret?* प्रश्न किया और इस तरह उस बातचीत में ख़लल डाल दिया जो लीज़ावेता इवानोव्ना के लिये यातनापूर्ण जिज्ञासा से ओतप्रोत हो गयी थी।

तोम्स्की ने जिस महिला को चुना, वह स्वयं प्रिंसेस... ही थी। नाच के हॉल का एक चक्कर लगाने और प्रिंसेस की कुर्सी के सामने एक बार नृत्य-चक्र पूरा करने के दौरान उनके बीच सुलह हो गयी और अपनी जगह लौटने पर तोम्स्की को न तो हेर्मन्न और न लीज़ावेता इवानोव्ना में ही कोई दिलचस्पी रही थी। वह अधूरी रह गयी बातचीत को अवश्य ही फिर से आगे बढ़ाना चाहती थी, मगर माज़ूरका नाच ख़त्म हो गया और उसके फ़ौरन बाद ही बूढ़ी काउंटेस घर को चल दी।

---

* विस्मृति या खेद (फ़्रांसीसी)।

तोम्स्की के शब्द माज़ूरका नाच के समय होनेवाली हल्की-फुल्की गपशप के सिवा कुछ नहीं थे, किन्तु वे रोमांटिक युवती की आत्मा में गहरे उतर गये। तोम्स्की ने जो चित्र प्रस्तुत किया था, वह खुद उसके द्वारा बनाये गये चित्र से बहुत मिलता-जुलता था और नवीनतम उपन्यासों की बदौलत यही ओछा चेहरा उसकी कल्पना को भयभीत भी करता था और मोहित भी। वह दस्तानों के बिना अपने हाथ बांधे और उघाड़ी छाती पर सिर झुकाये, जो अभी तक फूलों से सजा था, बैठी थी... अचानक दरवाज़ा खुला और हेर्मन्न दाखिल हुआ। वह सिहर उठी...

"आप कहां थे?" उसने सहमी-सी फुसफुसाहट में पूछा।

"बूढ़ी काउंटेस के सोने के कमरे में," हेर्मन्न ने जवाब दिया। "मैं वहीं से आ रहा हूं। काउंटेस मर गयी।"

"हे भगवान!.. यह आप क्या कह रहे हैं?.."

"और लगता है," हेर्मन्न कहता गया, "मैं ही कारण हूं उसकी मौत का।"

लीज़ावेता इवानोव्ना ने उसकी ओर देखा और तोम्स्की के ये शब्द उसके दिमाग़ में गूंज गये – उसकी आत्मा पर कम से कम तीन पापों का बोझ है! हेर्मन्न उसके निकट ही खिड़की के दासे पर बैठ गया और उसने सारा क़िस्सा कह सुनाया।

लीज़ावेता इवानोव्ना ने कांपते दिल से उसकी पूरी बात सुनी। तो ये तीव्र भावनाओं-उद्‌गारों से भरे पत्र, मिलन की मांग करनेवाले ज़ोरदार अनुरोध, दृढ़ता और साहसपूर्वक उसका पीछा – यह सब प्यार नहीं था! पैसा – उसकी आत्मा पैसे की दीवानी थी! यह वह नहीं थी जो उसकी इच्छाओं को पूरा कर सकती थी, उसे सुखी बना सकती थी! बेचारी युवती इस लुटेरे-बदमाश, अपनी बूढ़ी अभिभाविका की हत्या करनेवाले की अन्धी सहायिका के सिवा कोई नहीं थी!.. देर से होनेवाले और यातनापूर्ण पश्चाताप के कारण वह फूट-फूटकर रो रही थी। हेर्मन्न उसे चुपचाप देख रहा था – उसका दिल भी कसक रहा था, लेकिन न तो बेचारी लड़की के आंसू और न उसके दुख का अनूठा सौन्दर्य ही उसकी कठोर आत्मा को विह्वल कर रहा था। इस विचार से कि बुढ़िया चल बसी, उसकी आत्मा क्षुब्ध नहीं होती थी।

सिर्फ़ इसी ख़्याल से उसकी आत्मा बुरी तरह दुखी थी कि अब उस राज़ का कभी पता नहीं चलेगा जिससे उसने धनी होने की आशा की थी।

"आप राक्षस हैं!" लीज़ावेता इवानोव्ना ने आख़िर उससे कहा।

"मैंने उसकी मौत नहीं चाही थी," हेर्मन्न ने उत्तर दिया, "पिस्तौल में गोलियां नहीं थीं।"

दोनों ख़ामोश हो गये।

सुबह होने लगी। लीज़ावेता इवानोव्ना ने ख़त्म होती हुई मोमबत्ती को बुझा दिया – कमरे में हल्का-सा उजाला हो गया। लीज़ावेता इवानोव्ना ने रोने के कारण लाल हुई अपनी आंखों को पोंछा और उन्हें ऊपर उठाकर हेर्मन्न की तरफ़ देखा – वह छाती पर अपने हाथ बांधे और दहशत पैदा करनेवाले अन्दाज़ में नाक-भौंह सिकोड़े हुए खिड़की के दासे पर बैठा था। इस मुद्रा में वह अद्भुत रूप से नेपोलियन के छवि-चित्र की याद दिलाता था। इस समानता से लीज़ावेता इवानोव्ना भी दंग रह गयी।

"आप घर से बाहर कैसे जायेंगे?" आख़िर उसने पूछा। "मैंने तो यह सोचा था कि गुप्त ज़ीने से आपको बाहर ले जाऊंगी, मगर इसके लिये काउंटेस के सोने के कमरे में से गुज़रना होगा और मुझे वहां जाते डर लगता है।"

"मुझे बता दीजिये कि इस गुप्त ज़ीने तक कैसे पहुंचा जा सकता है और मैं ख़ुद ही वहां से बाहर चला जाऊंगा।"

लीज़ावेता इवानोव्ना उठी, उसने अलमारी में से चाबी निकालकर हेर्मन्न को दी और विस्तारपूर्वक उसे सब कुछ समझाया। हेर्मन्न ने लीज़ावेता इवानोव्ना का ठण्डा और उत्साहहीन हाथ दबाया, झुका हुआ सिर चूमा और कमरे से बाहर चला गया।

घुमावदार सीढ़ी से नीचे उतरकर वह फिर से काउंटेस के सोने के कमरे में दाख़िल हुआ। मृत बुढ़िया बुत बनी-सी बैठी थी, उसके चेहरे पर गहन शान्ति थी। हेर्मन्न उसके सामने रुककर उसे देर तक देखता रहा मानो भयानक सचाई के बारे में पूरी तरह विश्वास कर लेना चाहता हो। आख़िर वह अध्ययन-कक्ष में गया, काग़ज़ की दीवारी छींट के पीछे टटोलकर उसने दरवाज़ा ढूंढ़ा और अजीब भावनाओं से विह्वल होता हुआ अंधेरे ज़ीने से नीचे उतरने लगा। वह सोच रहा था कि शायद

साठ साल पहले, कढ़ा हुआ अंगरखा पहने, à l'oiseau royal* के ढंग से बाल संवारे, अपनी तिकोनी टोपी को छाती से चिपकाये कोई खुशक़िस्मत जवान इसी वक़्त, इसी ज़ीने से चढ़कर दबे पांव इसी शयन-कक्ष में आया होगा और कभी का क़ब्र में पड़ा सड़ चुका होगा, जबकि उसकी बूढ़ी प्रेयसी के दिल की धड़कन आज बन्द हुई है...

ज़ीने से नीचे पहुंचने पर हेर्मन्न को दरवाज़ा मिला, जिसे उसने उसी चाबी से खोला और अपने को सड़क पर ले जानेवाले संकरे गलियारे में पाया।

(५)

इस रात को दिवंगता बैरोनेस वोन व...
मेरे सपने में आई। वह सफ़ेद पोशाक पहने
थी और बोली मुझसे, "नमस्ते, श्रीमान
कौंसिलर!"

श्वेडेनबोर्ग **

उस मुसीबत की मारी रात के तीन दिन बाद हेर्मन्न सुबह के नौ बजे ... गिरजे में गया, जहां मृत कांउटेस की आत्मा की शान्ति के लिये प्रार्थना की जानेवाली थी। पश्चाताप की भावना वह अनुभव नहीं कर सकता था, लेकिन लगातार सुनाई देनेवाली आत्मा की इस आवाज़ को भी – तुमने बुढ़िया की जान ली है! – वह पूरी तरह से दबाने में असमर्थ था। उसमें सच्ची आस्था बहुत कम थी, पूर्वाग्रह बहुत ज्यादा थे। वह ऐसा मानता था कि परलोक सिधार जानेवाली काउंटेस उसके जीवन पर बुरा प्रभाव डाल सकती थी और इसलिये उससे क्षमा मांगने के लिये उसने उसकी अन्त्येष्टि पर जाने का फ़ैसला किया।

गिरजाघर लोगों से भरा हुआ था। हेर्मन्न बड़ी मुश्किल से लोगों के बीच से रास्ता बनाकर आगे बढ़ा। ताबूत बहुत ही बढ़िया मुर्दागाड़ी

---

* "शाही परिन्दे" (फ़्रांसीसी)।

** स्वीडन का रहस्यवादी दार्शनिक (१६८८–१७७२)। – सं०

पर रखा था और उसके ऊपर मख़मली छत्र था। लेसदार टोपी और साटिन का सफ़ेद फ़्राक पहने तथा छाती पर हाथ बांधे दिवंगता ताबूत में लेटी हुई थी। काली वर्दियां पहने, कंधों पर फ़ीतों के कुलचिह्न लगाये तथा हाथों में मोमबत्तियां लिये घर के नौकर-चाकर, रिश्तेदार – बेटे-बेटियां, पोते-पोतियां और परपोते-परपोतियां गहरे शोक में डूबे हुए उसके चारों ओर खड़े थे। कोई भी रो नहीं रहा था – आंसू une affectation* प्रतीत होते। काउंटेस इतनी बूढ़ी थी कि उसकी मौत से किसी को हैरानी नहीं हो सकती थी और उसके रिश्तेदार एक अर्से से ही उसे बीती कहानी मानते थे। एक जवान पादरी मातमी शब्द कह रहा था। सीधी-सादी और मार्मिक भावाभिव्यक्तियों में उसने पवित्र महिला के शान्तिपूर्ण अन्त का वर्णन किया जिसके लिये जीवन के लम्बे वर्ष ईसाई के अनुरूप मृत्यु की शान्त और मर्मस्पर्शी तैयारी के समान थे। "मौत के फ़रिश्ते ने," पादरी ने कहा, "उसे पावन पूजा-प्रार्थना में लीन, ईसा मसीह की प्रतीक्षा में जागते पाया।" प्रार्थना शोकपूर्ण शिष्टता के साथ समाप्त हुई। सबसे पहले रिश्तेदार मृत काउंटेस से विदा लेने के लिये आगे बढ़े। उनके बाद वे अनेक अतिथि उसके निकट गये जो एक ज़माने तक इन लोगों की चहल-पहल और रंग-रलियों में भाग लेते हुए इस महिला के प्रति श्रद्धा प्रकट करने आये थे। उनके बाद घर के सभी नौकरों-चाकरों ने विदा ली। अन्त में बूढ़ी नौकरानी, जो दिवंगता की हमउम्र थी, निकट आई। दो जवान नौकरानियां उसे सहारा दिये हुए थीं। वह धरती तक झुककर प्रणाम करने में असमर्थ थी – केवल उसी ने अपनी मालकिन का ठण्डा हाथ चूमकर कुछ आंसू बहाये। बूढ़ी नौकरानी के पश्चात हेर्मन्न ने ताबूत के निकट जाने का निर्णय किया। उसने ज़मीन पर माथा टेका और कुछ मिनट तक फ़र्श पर, जहां फ़र-वृक्ष की टहनियां बिखरी हुई थीं, पड़ा रहा। आख़िर वह मृत जैसा पीला चेहरा लिये हुए उठा और उसने मुर्दागाड़ी के पायदान पर चढ़कर सिर झुकाया ... इस क्षण उसे ऐसे लगा कि मृत ने उपहास उड़ाते और एक आंख सिकोड़ते हुए उसकी तरफ़ देखा है। वह जल्दी से पीछे हटा, पायदान पर अपना पांव नहीं टिका पाया

---

* दिखावा या ढोंग (फ़्रांसीसी)।

और चित जा गिरा। उसे उठाया गया। इसी वक़्त लीज़ावेता इवानोव्ना को बेहोशी की हालत में ड्योढ़ी में लाया गया। इस घटना ने कुछ मिनट के लिये इस शोकपूर्ण संस्कार की गम्भीरता को भंग कर दिया। उपस्थित लोगों में दबी-घुटी-सी खुसर-फुसर सुनाई दी और एक दुबले-पतले दरबारी अफ़सर ने, जो काउंटेस का निकट सम्बन्धी था, अपनी बग़ल में खड़े अंग्रेज़ को फुसफुसाकर बताया कि जवान अफ़सर काउंटेस का अवैध बेटा है और अंग्रेज़ ने जवाब में रुखाई से – 'ओह?' कहा।

हेर्मन्न दिन भर बहुत ही खिन्न रहा। किसी एकान्त-से मदिरालय में भोजन करते हुए उसने अपनी आन्तरिक परेशानी पर क़ाबू पाने के लिये सामान्य से कहीं अधिक शराब पी। किन्तु शराब ने उसकी कल्पना को और अधिक तीव्रता प्रदान कर दी। घर लौटकर वह कपड़े उतारे बिना अपने बिस्तर पर जा गिरा और गहरी नींद सो गया।

काफ़ी रात गये उसकी आंख खुली, उसके कमरे में चांदनी छिटकी हुई थी। उसने घड़ी पर नज़र डाली – रात के पौने तीन बजे थे। उसे अब और नींद नहीं आ रही थी। वह पलंग पर बैठकर बूढ़ी काउंटेस के अन्त्येष्टि संस्कार के बारे में सोचने लगा।

इसी समय किसी ने खिड़की में से भीतर झांककर देख और फ़ौरन पीछे हट गया। हेर्मन्न ने इस बात की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। एक मिनट बाद उसे ड्योढ़ी का दरवाज़ा खोलने की भनक मिली। हेर्मन्न ने सोचा कि सदा की भांति शराब के नशे में धुत्त उसका अर्दली अपनी रात की आवारागर्दी से वापस लौटा है। किन्तु उसे अपरिचित पद-चाप सुनाई दी – कोई अपने स्लीपरों को धीरे-धीरे घसीटते हुए चल रहा था। दरवाज़ा खुला, सफ़ेद पोशाक पहने एक नारी भीतर आई। हेर्मन्न ने उसे अपनी बूढ़ी धाय समझा और हैरान हुआ कि इतनी रात गये वह किसलिये आई है। मगर सफ़ेद पोशाक पहने औरत लपककर अचानक उसके सामने आ गयी – और हेर्मन्न ने काउंटेस को पहचान लिया।

"मैं अपनी इच्छा के विरुद्ध तुम्हारे पास आई हूं," उसने दृढ़ आवाज़ में कहा, "लेकिन मुझे तुम्हारा अनुरोध पूरा करने को कहा गया है। तिक्की, सत्ती और इक्का तुम्हारे जीतनेवाले पत्ते हैं, लेकिन शर्त यह है कि तुम एक दिन में एक से अधिक पत्ता नहीं चलना और बाद में

ज़िन्दगी भर जुआ नहीं खेलना। अपनी मौत के लिये तुम्हें इस शर्त पर माफ़ करती हूं कि तुम मेरी आश्रित लीज़ावेता इवानोव्ना से शादी कर लोगे ..."

इतना कहकर वह धीरे-से मुड़ी, दरवाज़े की ओर बढ़ी और स्लीपरों को घसीटते हुए ग़ायब हो गयी। हेर्मन्न को ड्योढ़ी का दरवाज़ा बन्द होने की आवाज़ सुनाई दी और उसने फिर किसी को खिड़की में से भीतर झांकते देखा।

हेर्मन्न देर तक अपने होश-हवास ठीक नहीं कर पाया। वह दूसरे कमरे में गया। अर्दली फ़र्श पर सोया पड़ा था; हेर्मन्न ने बड़ी मुश्किल से उसे जगाया। वह हमेशा की तरह नशे में धुत्त था – उससे कुछ भी जानना-समझ पाना संभव नहीं था। ड्योढ़ी का दरवाज़ा बन्द था। हेर्मन्न अपने कमरे में लौट आया, उसने मोमबत्ती जलाई और जो कुछ देखा था, सब लिख लिया।

(६)

– Atande*
– आपने मुझसे atande'
कहने की जुर्रत कैसे की?
– नहीं हुज़ूर, मैंने तो
atande = जनाब! कहा था।

हमारी नैतिक प्रकृति में दो जड़ विचार वैसे ही एकसाथ विद्यमान नहीं रह सकते, जैसे भौतिक जगत में एक ही जगह पर दो ठोस पदार्थ नहीं टिक सकते। तिक्की, सत्ती और इक्के ने शीघ्र ही हेर्मन्न की कल्पना में मृत बुढ़िया के बिम्ब की जगह ले ली। ये तीनों पत्ते उसके दिमाग़ से नहीं निकलते थे और उसके होंठों पर घूमते रहते थे। किसी जवान लड़की को देखकर वह कहता – "कितनी सुघड़ है वह!.. बिल्कुल पान की तिक्की!" उससे अगर पूछा जाता – "क्या बजा है?" तो वह जवाब

---

* दांव न लगाने का सुझाव देना। – सं०

देता – "पांच मिनट कम सत्ती।" सभी तोंदल आदमी उसे इक्के की याद दिलाते। तिक्की, सत्ती और इक्का उसके सपनों में घूमते रहते, तरह-तरह के रूप धारण करते : तिक्की एक बहुत बड़ा और खिला हुआ फूल बन जाती, सत्ती गोथ शैली का फाटक और इक्का विराटकाय मकड़ी। सब विचार एक ही विचार में घुल-मिल जाते – किसी तरह उस राज़ से फ़ायदा उठाया जाये जिसके लिये उसने इतनी बड़ी क़ीमत चुकायी है। वह सेवा-निवृत्त होने और यात्रा करने की सोचने लगा। उसका मन होता कि पेरिस के सार्वजनिक जुआख़ानों में जाकर जादू-टोने में बंधे भाग्य से ख़जाने हासिल करे। संयोग ने उसे ऐसी चिन्ताओं से मुक्त कर दिया।

इस समय मास्को में धनी जुआरियों की एक संस्था थी। प्रसिद्ध चेकालिन्स्की, जिसने सारी उम्र जुआ खेलते बिताई थी और हुंडियां जीतते तथा नक़द रक़म हारते हुए लाखों-करोड़ों की पूंजी जमा कर ली थी, उसका अध्यक्ष था। लम्बे अनुभव ने उसके साथियों में उसके प्रति विश्वास पैदा कर दिया था, सभी के लिये खुले उसके घर के द्वार, बढ़िया बावर्ची, स्नेह और हंसी-खुशी के वातावरण ने आम लोगों में उसकी मान-मर्यादा बढ़ा दी थी। वह पीटर्सबर्ग आया। युवाजन बॉल-नृत्यों की जगह ताश, और सुन्दरियों की प्यारी संगत के बजाय जुए के आकर्षण को तरजीह देते हुए उसके यहां उमड़ने लगे। नारूमोव हेर्मन्न को उसके घर ले गया।

इन दोनों ने कई कमरे लांघे जिनमें अनेक शिष्ट बैरे तैनात थे। कुछ जनरल और कौंसिलर ह्विस्ट खेल रहे थे। जवान लोग बेल-बूटेदार सोफ़ों पर पसरे हुए आईसक्रीम खा रहे थे, पाइप के कश लगा रहे थे। मेहमानख़ाने में एक लम्बी-सी मेज़ के गिर्द जुआ खेलनेवाले कोई बीसेक व्यक्ति जमा थे। गृह-स्वामी भी वहीं था और वही ख़ज़ांची बना हुआ था। वह साठ साल का बहुत ही सजा-बजा व्यक्ति था। सिर पर रुपहले केश थे और भरा हुआ तथा ताज़गी लिये हुए उसका चेहरा ख़ुशमिज़ाजी अभिव्यक्त करता था। होंठों पर हर समय खिली रहनेवाली मुस्कान से सजीव उसकी आंखें चमक रही थीं। नारूमोव ने हेर्मन्न का परिचय करवाया। चेकालिन्स्की ने मैत्रीपूर्ण ढंग से उससे हाथ मिलाया, तकल्लुफ़ न करने का अनुरोध किया और खेल जारी रखा।

बाज़ी बहुत देर तक चली। मेज़ पर तीस से अधिक पत्ते थे। चेकालिन्स्की हर दांव के बाद रुकता, ताकि खिलाड़ियों को अपनी स्थिति समझने का समय मिल जाये, हारी हुई रक़में लिखता, बड़ी शिष्टता से खेलनेवालों की मांगों को सुनता और इससे भी अधिक शिष्टता से किसी बेध्यान खिलाड़ी द्वारा मोड़ दिये गये पत्ते के कोने को ठीक कर देता। आख़िर बाज़ी ख़त्म हुई। चेकालिन्स्की ने पत्ते फेंटे और अगली बाज़ी बांटने के लिये तैयार हुआ।

"मैं भी एक पत्ते पर दांव लगाना चाहूंगा," मेज़ के गिर्द बैठे हुए एक मोटे आदमी के पीछे से हाथ बढ़ाते इए हेर्मन्न ने कहा। चेका-लिन्स्की मुस्कराया और नम्रतापूर्ण सहमति के रूप में उसने सिर झुका दिया। नारूमोव ने हंसते हुए उसे इस बात की बधाई दी कि आख़िर तो उसने अपना इतने लम्बे अर्से का व्रत तोड़ लिया और उसके लिये शुभारम्भ की कामना की।

"तो मैं दांव लगा रहा हूं!" हेर्मन्न ने अपने पत्ते पर खड़िया से रक़म लिखकर कहा।

"कितना दांव लगाया है जनाब?" मेज़बान-ख़ज़ांची ने आंख सिकोड़ते हुए पूछा, "माफ़ी चाहता हूं, लगता है कि मुझे साफ़ नज़र नहीं आ रहा है।"

"सैंतालीस हज़ार," हेर्मन्न ने जवाब दिया।

ये शब्द सुनते ही सबके सिर फ़ौरन हेर्मन्न की ओर घूम गये और आंखें उस पर जम गयीं। "इसका दिमाग़ चल निकला है!" नारूमोव ने सोचा।

"मैं यह कहने की अनुमति चाहता हूं," चेकालिन्स्की ने सदा की भांति मुस्कराते हुए कहा, "आप बहुत बड़ा दांव लगा रहे हैं। यहां किसी ने भी दो सौ पचहत्तर से अधिक बड़ी रक़म दांव पर नहीं लगाई।"

"आप यह बताइये कि खेलेंगे या नहीं?" हेर्मन्न ने आपत्ति की।

चेकालिन्स्की ने विनयपूर्ण सहमति के रूप में सिर झुकाया।

"मैं केवल यह निवेदन करना चाहता हूं," उसने कहा, "कि मित्रों का विश्वास-पात्र होने के नाते मैं दांव की रक़म सामने रख दी जाने पर ही खेलता हूं। अपनी ओर से मैं तो आपके वचन पर ही भरोसा

9—697

करने को तैयार हूं, लेकिन खेल और हिसाब को सही ढंग से चलाने के लिये आपसे दांव की रक़म पत्ते पर रख देने की प्रार्थना करता हूं।"

हेर्मन्न ने जेब से एक बैंकनोट निकाला और उसे चेकालिन्स्की को दे दिया, ज़िसने उस पर सरसरी-सी नज़र डालकर उसे हेर्मन्न के पत्ते पर रख दिया।

वह पत्ते बांटने लगा। दायीं ओर नहला आया और बाईं ओर तिक्की।

"मेरा पत्ता जीत गया!" हेर्मन्न ने अपना पत्ता दिखाते हुए कहा।

खिलाड़ी खुसर-फुसर करने लगे। चेकालिन्स्की के माथे पर बल पड़ गये, किन्तु तत्काल ही उसके चेहरे पर मुस्कान लौट आयी।

"रक़म चुका दूं?" उसने हेर्मन्न से पूछा।

"कृपा होगी।"

चेकालिन्स्की ने जेब से कुछ बैंकनोट निकाले और फ़ौरन हिसाब चुकता कर दिया। हेर्मन्न ने अपनी रक़म समेटी और मेज़ से हट गया। नारूमोव तो सम्भल भी नहीं पाया। हेर्मन्न लैमनेड का एक गिलास पीकर अपने घर को चला गया।

अगले दिन की शाम को वह फिर चेकालिन्स्की के यहां पहुंचा। गृह-स्वामी पत्ते बांट रहा था। हेर्मन्न मेज़ के निकट गया, लोगों ने फ़ौरन उसके लिये जगह ख़ाली कर दी। चेकालिन्स्की ने स्नेहपूर्वक सिर झुकाया।

हेर्मन्न ने नई बाज़ी शुरू होने का इन्तज़ार किया, एक पत्ते पर अपने सैंतालीस हज़ार और पिछले दिन जीते गये सैंतालीस हज़ार भी रख दिये।

चेकालिन्स्की पत्ते बांटने लगा। दायीं ओर ग़ुलाम तथा बायीं ओर सत्ती आई।

हेर्मन्न ने सत्ती दिखाई।

सभी आश्चर्य से चिल्ला उठे। चेकालिन्स्की स्पष्टतः परेशान हो उठा। उसने चौरानवे हज़ार गिनकर हेर्मन्न के हवाले कर दिये।

हेर्मन्न ने बड़ी शान्ति से यह रक़म ली और उसी क्षण चलता बना।

अगली शाम को हेर्मन्न फिर से खेल की मेज़ पर आया। सभी उसकी राह देख रहे थे। जनरलों और कौंसिलरों ने ऐसा असाधारण खेल देखने के लिये अपनी ह्विस्ट बन्द कर दी। जवान अफ़सर अपने

सोफ़ों से उठकर आ गये, सभी बैरे मेहमानख़ाने में जमा हो गये। सभी हेर्मन्न को घेरे हुए थे। दूसरे खिलाड़ियों ने अपने दांव नहीं लगाये, सभी यह देखने को उत्सुक थे कि इस खेल का क्या अन्त होगा। चेकालिन्स्की के साथ बाज़ी खेलने को तैयार हेर्मन्न अकेला मेज़ के पास खड़ा था। चेकालिन्स्की के चेहरे का रंग उड़ा हुआ था, लेकिन वह सदा की भांति मुस्करा रहा था। दोनों ने ताश की एक-एक नई गड्डी निकाली। चेकालिन्स्की ने पत्ते फेंटे, हेर्मन्न ने पत्ते काटे, अपना पत्ता सामने रखा और उसपर बैंकनोटों का ढेर लगा दिया। एक तरह से यह द्वन्द्व-युद्ध हो रहा था। सभी ओर गहरी ख़ामोशी छाई हुई थी।

चेकालिन्स्की पत्ते बांटने लगा, उसके हाथ कांप रहे थे। दायें बेग़म आई और बायें इक्का।

"इक्का जीत गया!" हेर्मन्न ने कहा और अपना पत्ता खोल दिया।

"आपकी बेगम पिट गयी," चेकालिन्स्की ने स्नेहपूर्वक जवाब दिया।

हेर्मन्न चौंका – वास्तव में ही इक्के की जगह हुक्म की बेगम सामने पड़ी थी। उसे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो रहा था, वह यह नहीं समझ पा रहा था कि कैसे उससे ऐसी भूल हुई।

इसी क्षण उसे ऐसे प्रतीत हुआ कि हुक्म की बेगम अपनी आंखें सिकोड़ रही है और व्यंग्यपूर्वक मुस्करा रही है। असाधारण समानता से वह दंग रह गया...

"बुढ़िया!" वह भयभीत होकर चिल्ला उठा।

चेकालिन्स्की ने जीती हुई रक़म अपनी ओर खींच ली। हेर्मन्न बुत बना खड़ा था। उसके मेज़ से दूर हट जाने पर सभी खिलाड़ी ऊंचे-ऊंचे कहने लगे, "क्या कमाल का खेल था!" चेकालिन्स्की फिर से पत्ते फेंटने लगा, खेल सदा की भांति चलता रहा।

सारांश

हेर्मन्न पागल हो गया। वह ओबुख़ोव अस्पताल के वार्ड न० १७ में है, किसी के प्रश्नों का कभी कोई उत्तर नहीं देता और असाधारण तेज़ी से यही बड़बड़ाता रहता है – "तिक्की, सत्ती, इक्का! तिक्की, सत्ती, बेगम!.."

9*

लीज़ावेता इवानोव्ना की किसी बहुत ही शालीन युवा व्यक्ति से शादी हो गयी। वह किसी सरकारी दफ़्तर में काम करता है और ख़ासा सम्पत्तिशाली है। वह बूढ़ी काउंटेस के भूतपूर्व कारिन्दे का बेटा है। लीज़ावेता इवानोव्ना एक ग़रीब रिश्तेदारिन का पालन-पोषण कर रही है।

तोम्स्की कप्तान हो गया है और प्रिंसेस पोलीना से शादी करने जा रहा है।

कप्तान की बेटी

जवानी में अपनी
इज़्ज़त की लाज रखो।
कहावत

पहला अध्याय

गार्ड-सेना का सार्जेंट

– गार्डों की सेना में वह तो हो जाता कप्तान।
– नहीं ज़रूरत, लेकिन सैनिक बने जवान।
– सैनिक के जीवन की उसको
हो अच्छी पहचान...
– और पिता है उसका कौन?

क्न्याजनिन *

मेरे पिता अन्द्रेई पेत्रोविच ग्रिनेव अपनी जवानी के दिनों में काउंट मीनिख ** के अधीन सेना में काम करते रहे थे और सन् १७... में मानद मेजर के रूप में सेवानिवृत्त हुए। तब से वे सिम्बीर्स्क गुबेर्निया के अपने गांव में रहते थे और यहीं उन्होंने इस क्षेत्र के एक निर्धन कुलीन की बेटी अव्दोत्या वसील्येव्ना यू० से शादी कर ली। मेरे नौ भाई-बहन हुए, किन्तु सभी बचपन में चल बसे।

मैं अभी मां के पेट में ही था कि मुझे हमारे नज़दीकी रिश्तेदार प्रिंस ब० की मेहरबानी से, जो गार्ड सेना में मेजर थे, सेम्योनोव्स्की रेजिमेंट में सार्जेंट की हैसियत से दर्ज कर लिया गया। यदि आशा के विरुद्ध मां बेटे के बजाय बेटी को जन्म देती, तो पिता ने सैन्य-सेवा के लिये हाज़िर न होनेवाले सार्जेंट की मृत्यु की उचित स्थान पर सूचना दे दी होती और इस तरह मामला ख़त्म हो गया होता। मेरी पढ़ाई समाप्त होने तक मुझे छुट्टी पर माना गया। उस ज़माने में हमारी शिक्षा-दीक्षा आज की तरह नहीं होती थी। मैं पांच साल का था,

---

* या० ब० क्न्याजनिन के सुखान्त नाटक 'शेख़ीख़ोर' (१७८६) से। – सं०

** सेनापति और सार्वजनिक कार्यकर्त्ता (१६८३–१७६७) जो येकातेरीना द्वितीय के शासन-परिवर्तन के समय पीटर तृतीय के प्रति निष्ठावान रहा। – सं०

जब समझदारी और सदाचार का परिचय देनेवाले सावेलिच नामक सईस को मेरा शिक्षक बना दिया गया। उसकी देख-रेख में बारह साल का होने पर मैंने रूसी भाषा के लिखने-पढ़ने का ज्ञान प्राप्त कर लिया और शिकारी कुत्ते के लक्षणों को बहुत अच्छी तरह जान-समझ गया। इसी समय मेरे पिता जी ने बोप्रे नाम के एक फ़्रांसीसी महानुभाव को मुझे पढ़ाने के लिये नियुक्त किया, जो साल भर के लिये शराब और ज़ैतून के तेल का भण्डार अपने साथ लेकर मास्को से हमारे यहां आया। सावेलिच को उसका आगमन बहुत ही अखरा। "भगवान की कृपा से," वह बड़बड़ाया, "लगता है कि लड़का अभी तक ढंग से नहलाया-धुलाया जाता रहा है, उसके बाल भी संवारे जाते रहे हैं और उसे खिलाया-पिलाया भी जाता रहा है। फ़ालतू पैसा ख़र्च करने और इस महानुभाव को नियुक्त करने में भला क्या तुक है मानो अपने लोग ही न रहे हों!"

बोप्रे अपने देश में हज्जाम था, बाद में वह प्रशा की फ़ौज में सैनिक रहा और इसके पश्चात pour être outchitel* रूस आ गया। वह शिक्षक शब्द का महत्त्व अच्छी तरह से नहीं समझता था। वह भला, किन्तु चंचल और अत्यधिक व्यसनी आदमी था। औरतों के पीछे भागना उसकी सबसे बड़ी दुर्बलता थी, इस तरह की हरकतों के लिये अक्सर उसकी ठुकाई-पिटाई हो जाती थी और वह कई-कई दिन तक हाय-वाय करता रहता था। इसके अलावा (उसी के शब्दों में) "बोतल से भी उसकी दुश्मनी नहीं थी" यानी शराब में कुछ अधिक ही ग़ोते लगाता था। किन्तु हमारे घर में चूंकि शराब सिर्फ़ दोपहर के खाने के वक़्त, और सो भी केवल एक-एक जाम ही दी जाती थी, और शिक्षक की इसके लिये भी अवहेलना कर दी जाती थी, इसलिये मेरा शिक्षक बोप्रे बहुत जल्द ही रूसी पेय यानी वोदका का आदी हो गया और उसे पाचन के लिये अधिक अच्छी मानते हुए अपने देश की शराबों की तुलना में तरजीह देने लगा। हम दोनों की फ़ौरन पटरी बैठ गयी और यद्यपि अनुबन्ध के अनुसार उसे मुझे फ़्रांसीसी और जर्मन भाषा तथा अन्य सभी विद्याएं सिखानी थीं, किन्तु उसने यही बेहतर

---

* शिक्षक बनने के लिये (फ़्रांसीसी)।

समझा कि मुझसे जल्दी-जल्दी रूसी में बोलना-बतियाना सीख जाये। इसके बाद हम अपनी-अपनी दुनिया में मस्त रहते थे। हमारे बीच गहरी छनती थी। मेरा कोई दूसरा शिक्षक हो, मैं यह नहीं चाहता था। किन्तु भाग्य ने शीघ्र ही हमें अलग कर दिया। यह कैसे हुआ, मैं बताता हूं।

एक रोज़ मोटी और चेचकरू धोबिन पालाश्का और कानी ग्वालिन अकूल्का आपस में सलाह करके एकसाथ ही मेरी मां के पैरों पर जा गिरीं, उन्होंने अपनी पापपूर्ण दुर्बलता को स्वीकार किया और रो-रोकर मेरे शिक्षक के विरुद्ध इस बात की शिकायत की कि उसने उनकी अनुभव-हीनता से लाभ उठाया है। मेरी मां ऐसी बातों के मामले में बड़ी सख़्त थीं और उन्होंने पिता जी से शिकायत कर दी। पिता जी ने झटपट कार्रवाई की। उन्होंने लम्पट फ़्रांसीसी को उसी वक़्त अपने पास बुलवा भेजा। उन्हें बताया गया कि शिक्षक मुझे पढ़ा रहा है। पिता जी मेरे कमरे में आ गये। शिक्षक इस समय भोले-भाले बच्चे की तरह पलंग पर सो रहा था। मैं अपने काम में व्यस्त था। यहां यह बताना भी ज़रूरी है कि मेरे लिये मास्को से भूगोल का मानचित्र मंगवाया गया था। किसी प्रकार के उपयोग के बिना वह दीवार पर लटका हुआ था और अपनी चौड़ाई तथा बढ़िया काग़ज़ के कारण एक अर्से से मुझे अपनी ओर खींचता रहा था। मैंने उसकी पतंग बनाने का फ़ैसला किया और चूंकि बोप्रे सो रहा था, इसलिये इस काम में जुट गया। मैं जिस समय केप आफ़ गुड होप के साथ स्पंज की पूंछ लगा रहा था, पिता जी उसी समय कमरे में आये। भूगोल के मेरे इस अभ्यास को देखकर पिता जी ने मेरा कान उमेठा, फिर लपककर बोप्रे के पास गये, किसी तरह की शिष्टता के बिना झकझोरकर उसे जगाया और भला-बुरा कहने लगे। बोप्रे ने घबराकर उठना चाहा, मगर ऐसा नहीं कर सका – क़िस्मत का मारा फ़्रांसीसी नशे में गड़गच्च था। सब गुनाहों की एक ही सज़ा काफ़ी होती है। पिता जी ने कालर पकड़कर उसे पलंग से उठाया, दरवाज़े से बाहर धक्कर दिया और उसी दिन अपने यहां से उसकी छुट्टी कर दी। सावेलिच को इससे इतनी ख़ुशी हुई कि बयान से बाहर। इस तरह मेरी शिक्षा-दीक्षा का अन्त हो गया।

कबूतरों के पीछे दौड़ते और हमारी जागीर के छोकरों के साथ

मेंढक-कूद का खेल खेलते हुए मैं एक गंवार की तरह बड़ा हुआ। इसी तरह मैं सोलह साल का हो गया। अब मेरे भाग्य ने पलटा खाया।

पतझर के एक दिन मां मेहमानख़ाने में शहदवाला मुरब्बा बना रही थीं और उबलते हुए झाग को देख-देखकर मेरे मुंह में पानी आ रहा था। पिता जी खिड़की के क़रीब बैठे हुए राज-दरबार की वह रिपोर्ट-पुस्तक पढ़ रहे थे, जो हर वर्ष उनके पास आती थी। इस पुस्तक का उन पर हमेशा बहुत प्रभाव पड़ता था, वे उसे बड़ी दिलचस्पी से बार-बार पढ़ते थे और पढ़ते हुए सदा ही बहुत उत्तेजना अनुभव करते थे। पिता जी की रुचियों-अरुचियों और आदतों से परिचित मां इस मुसीबत की मारी रिपोर्ट-पुस्तक को, जितना सम्भव होता, कहीं दूर छिपा देने की कोशिश करतीं और इस तरह वह कई बार महीनों तक पिता जी को दिखाई न देती। किन्तु जब संयोग से वह उन्हें फिर मिल जाती, तो वे घण्टों तक उसे लिये बैठे रहते। इस तरह पिता जी राज-दरबार की इस रिपोर्ट-पुस्तक को पढ़ रहे थे, जब-तब कंधों को झटकते थे और धीरे से यह दोहराते थे – "लेफ़्टिनेंट-जनरल!.. मेरी कम्पनी में तो वह सार्जेंट था!.. दो उच्चतम रूसी पदकों से सम्मानित!.. बहुत समय हो गया क्या कि जब हम..." पिता जी ने आख़िर यह रिपोर्ट-पुस्तक सोफ़े पर फेंक दी और विचारों में खो गये, जो इस बात का संकेत था कि अब कोई न कोई मुसीबत आयेगी।

अचानक उन्होंने मां को सम्बोधित करते हुए पूछा –

"अव्दोत्या वसील्येव्ना, पेत्रूशा कितने साल का हो गया है?"

"सत्रहवां साल चल रहा है उसे," मां ने जवाब दिया, "पेत्रूशा उसी साल जन्मा था जब मौसी नास्तास्या गेरासिमोव्ना की एक आंख जाती रही थी और जब..."

"बस, ठीक है," पिता जी ने मां को बीच में ही टोक दिया, "उसे फ़ौज में भेजने का वक़्त हो गया। बहुत दिनों तक दौड़ लिया वह नौकरानियों के घरों और कबूतरख़ानों के इर्द-गिर्द।"

जल्द ही मैं दूर चला जाऊंगा, इस विचार से मां को ऐसा झटका-सा लगा कि उनके हाथ से चम्मच छूटकर पतीले में गिर गया और गालों पर आंसू की बूंदें लुढ़क आईं। दूसरी ओर, मेरी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था। फ़ौज में जाने का विचार आज़ादी के विचार,

पीटर्सबर्ग की ज़िन्दगी के मज़े के विचार से घुल-मिल गया। मैंने गार्ड सेना के अफ़सर के रूप में अपनी कल्पना की और मेरे मतानुसार, इससे बढ़कर और कोई ख़ुशी नहीं हो सकती थी।

पिता जी न तो अपना इरादा बदलना और न ही यह पसन्द करते थे कि उसे अमली शक्ल देने का काम टाल दिया जाये। चुनांचे मेरे जाने का दिन निश्चित कर दिया गया। उसके एक दिन पहले पिता जी ने कहा कि मेरे भावी बड़े अफ़सर को पत्र लिखना चाहते हैं और उन्होंने मुझसे क़लम-दवात तथा काग़ज़ लाने को कहा।

"अन्द्रेई पेत्रोविच," मां बोलीं, "मेरी ओर से प्रिंस ब० को प्रणाम लिखना मत भूलना। लिखना कि वे पेत्रूशा पर अपना कृपा-भाव बनाये रखें।"

"यह क्या बेकार की बात है!" पिता जी ने नाक-भौंह सिकोड़ते हुए जवाब दिया। "किसलिये भला मैं प्रिंस ब० को पत्र लिखूंगा?"

"तुम्हीं ने तो कहा था कि पेत्रूशा के अफ़सर को पत्र लिखने जा रहे हो।"

"कहा था, तो क्या हुआ?"

"लेकिन पेत्रूशा का बड़ा अफ़सर तो प्रिंस ब० ही है। पेत्रूशा का नाम तो सेम्योनोव्स्की रेजिमेंट में ही दर्ज है।"

"दर्ज है! दर्ज है, तो मुझे इससे क्या मतलब? पेत्रूशा पीटर्सबर्ग नहीं जायेगा। पीटर्सबर्ग में फ़ौज में रहते हुए भला यह क्या सीखेगा? उल्टी-सीधी बातें और पैसा उड़ाना? नहीं, यही अच्छा है कि वह सही तौर पर फ़ौज में रहे, फ़ौजी की मुश्किल ज़िन्दगी का सामना करे, बारूद की गंध सूंघे, फ़ौजी बने, छैला-बांका नहीं। गार्डों की रेजिमेंट में नाम दर्ज है इसका! पासपोर्ट कहां है? मुझे ला दो।"

मां ने मेरा पासपोर्ट ढूंढ़ा जो मेरे नामकरण के समय की कमीज़ के साथ उन्होंने अपनी मंजूषा में रखा हुआ था और कांपते हाथों से उसे पिता जी को दे दिया। पिता जी ने उसे बड़े ध्यान से पढ़ा, मेज़ पर अपने सामने रख लिया और पत्र लिखने लगे।

मेरी जिज्ञासा मुझे बेहद परेशान किये दे रही थी – अगर पीटर्सबर्ग नहीं, तो कहां भेजा जा रहा है मुझे? पिता जी की क़लम पर ही, जो काफ़ी धीरे-धीरे चल रही थी, मेरी नज़र टिकी हुई थी। आख़िर

उन्होंने पत्र समाप्त किया, एक लिफ़ाफ़े में पासपोर्ट और ख़त डालकर उसे मुहरबन्द किया, चश्मा उतारा और मुझे अपने पास बुलाकर कहा, "यह पत्र मेरे पुराने साथी और दोस्त अन्द्रेई कार्लोविच र०. के नाम है। तुम उसके मातहत फ़ौज में काम करने के लिये ओरेनबुर्ग जाओगे।"

इस तरह मेरी बहुत ही मधुर आशाओं पर पानी फिर गया! पीटर्सबर्ग की मौज-मस्ती से भरी हुई ज़िन्दगी के बजाय कहीं बहुत दूर की सुनसान-वीरान जगह पर ऊब-उदासी मेरी राह देख रही थी। एक मिनट पहले तक जिस फ़ौजी नौकरी के बारे में मैं इतने हर्षोल्लास से सोच रहा था, वह अब मुझे बहुत बोझल दुर्भाग्य प्रतीत हो रही थी। किन्तु पिता जी से बहस करना व्यर्थ था। अगली सुबह को लम्बे सफ़र की छतवाली घोड़ा-गाड़ी दरवाज़े के सामने आकर खड़ी हो गयी, मेरा सूटकेस, चीनी के बर्तनों की पेटी, घर के लाड़-प्यार की आख़िरी निशानी के रूप में मीठी पाव रोटियों और कचौड़ियों आदि की पोटली उसमें रख दी गयी। मेरे माता-पिता ने मुझे आशीर्वाद दिया। पिता जी ने कहा, "तो विदा प्योतर। जिसकी अधीनता की क़सम खाओगे, वफ़ादारी से उसकी सेवा करना, अपने अफ़सरों की बात मानना, उनका स्नेह पाने का प्रयास नहीं करना, ख़ुद आगे बढ़कर अपनी सेवा पेश नहीं करना और जब ऐसा करने को कहा जाये, तो मुंह नहीं मोड़ना, यह कहावत याद रखना – नई पोशाक को सहेजो और जवानी में अपनी इज़्ज़त की लाज रखो।" मां ने आंसू बहाते हुए मुझसे अनुरोध किया कि मैं अपनी सेहत का ध्यान रखूं और सावेलिच को मेरी देख-भाल करने को कहा। मुझे ख़रगोश की खाल का कोट और उसके ऊपर लोमड़ी का फ़र-ओवरकोट पहना दिया गया। मैं सावेलिच के साथ घोड़ा-गाड़ी में बैठ गया और आंसू बहाता हुआ अपने सफ़र पर रवाना हो गया।

उसी रात को मैं सिम्बीर्स्क पहुंच गया, जहां ज़रूरी चीज़ें ख़रीदने के लिये हमें एक दिन ठहरना था। चीज़ें खरीदने का काम सावेलिच को सौंप दिया गया था। मैं होटल में ठहरा। सावेलिच सुबह से ही दुकानों के चक्कर लगाने चला गया। खिड़की से गन्दे कूचे को देखते-देखते ऊब महसूस होने पर मैं कमरों के गिर्द चक्कर काटने लगा। बिलियर्ड कक्ष में गया। वहां मुझे लम्बे क़द और लम्बी काली मूंछोंवाला कोई पैंतीस

साल का एक महानुभाव ड्रेसिंग-गाउन पहने दिखाई दिया। उसके हाथ में बिलियर्ड खेलने का डंडा और मुंह में पाइप था। वह खेल की बाज़ियों का हिसाब रखनेवाले के साथ खेल रहा था जिसे जीतने पर वोदका का एक जाम पीने को मिलता था और हारने पर चौपाये की तरह मेज़ के नीचे रेंगना पड़ता था। मैं उनका खेल देखने लगा। वह जितनी अधिक देर तक चलता गया, प्वाइंट गिननेवाले का चौपाये की तरह मेज़ के नीचे रेंगना भी उतना ही बढ़ता गया और आख़िर वह मेज़ के नीचे ही रह गया। महानुभाव ने मानो मुर्दे का मातम करते हुए कुछ ज़ोरदार शब्द कहे और फिर मुझसे बाज़ी खेलने को कहा। मैं खेलना नहीं जानता था, इसलिये इन्कार कर दिया। उसे सम्भवतः यह अजीब-सा लगा। उसने मानो बड़े अफ़सोस से मेरी ओर देखा, लेकिन जल्द ही हम बातचीत करने लगे। मुझे पता चला कि उसका नाम इवान इवानोविच ज़ूरिन है, कि वह हुस्सार-रेजिमेंट का कप्तान है, सिम्बीर्स्क में फ़ौजियों की भर्ती के लिये आया है और इसी होटल में ठहरा हुआ है। ज़ूरिन ने मुझे अपने साथ दोपहर का भोजन करने को आमन्त्रित किया और कहा कि जो कुछ रूखा-सूखा हो, फ़ौजियों की तरह वे दोनों उसे मिलकर खा लेंगे। मैं ख़ुशी से राज़ी हो गया। हम मेज़ पर बैठ गये। ज़ूरिन बहुत ज़्यादा पीता था और यह कहकर मेरा जाम भी भरता जाता था कि अपने को सैन्य-सेवा के लिये तैयार करना ज़रूरी है। वह मुझे फ़ौज के क़िस्से-चुटकले सुनाता रहा जिनके कारण मैं हंसी से लोट-पोट होता रहा और हम पक्के दोस्त बनकर मेज़ पर से उठे। इसके बाद उसने मुझे बिलियर्ड का खेल सिखाने का सुझाव दिया। "हम फ़ौजियों के लिये तो यह एकदम ज़रूरी है। मान लो कि कूच के वक़्त तुम किसी छोटी-सी जगह पर पहुंच जाते हो, भला क्या करोगे वहां? हर वक़्त यहूदियों की ही पिटाई तो नहीं करते रहोगे। चाहे-अनचाहे किसी सराय या होटल में जाकर बिलियर्ड खेलने लगोगे। इसके लिये ज़रूरी है कि तुम्हें खेलना आये!" उसने मुझे पूरी तरह इस बात का यक़ीन दिला दिया और मैं बड़ी लगन से खेल सीखने लगा। ज़ूरिन ख़ूब ऊंचे-ऊंचे मेरा हौसला बढ़ाता, मेरे इतनी जल्दी-जल्दी कामयाबी हासिल करने पर हैरान होता रहा तथा कुछ पाठों के बाद उसने मुझसे बहुत ही छोटा-सा दांव लगाकर खेलने को कहा। सो भी पैसे

हारने-जीतने के लिये नहीं, बल्कि इसलिये कि बेकार ही न खेला जाये, जिसे उसने सबसे बुरी आदत बताया। मैं इसके लिये भी राज़ी हो गया। ज़ूरिन ने पंचमेली शराब का आदेश दिया और यह दोहराते हुए मुझसे पीने का अनुरोध किया कि मुझे अपने को फ़ौजी नौकरी के लिये तैयार करना चाहिये, कि पंचमेली शराब पिये बिना फ़ौजी नौकरी में भला क्या तुक है! मैंने उसकी बात मान ली। इसी बीच हमारा खेल चलता रहा। मैं जितनी अधिक शराब पीता था, उतना ही अधिक दिलेर होता जाता था। बिलियर्ड के गोले हर क्षण ही मेज़ पर से उछलकर नीचे गिरते थे, मैं आपे से बाहर होता जा रहा था, बाज़ियां गिननेवाले को, जो ख़ुदा जाने कैसे गिनती करता था, कोसता था और लगातार दांव बढ़ाता जाता था। थोड़े में यह कि माता-पिता की लगाम से मुक्त हो जानेवाले छोकरे जैसा व्यवहार कर रहा था। इसी बीच अनजाने ही बहुत-सा समय बीत गया। ज़ूरिन ने घड़ी पर नज़र डाली, बिलियर्ड खेलने का डंडा नीचे रख दिया और मुझसे कहा कि मैं एक सौ रूबल हार गया हूं। यह सुनकर मुझे थोड़ी परेशानी हुई। मेरे सारे पैसे सावेलिच के पास थे। मैं क्षमा-याचना करने लगा। ज़ूरिन ने मुझे टोकते हुए कहा, "कोई बात नहीं! परेशान होने की ज़रूरत नहीं। मैं इन्तज़ार कर सकता हूं और फ़िलहाल तो आओ अरीनुश्का के यहां चलकर खाना खायें।"

"कहा ही क्या जाये?" अपना दिन वैसे ही बेवक़ूफ़ी से ख़त्म किया जैसे शुरू किया था। हमने अरीनुश्का के यहां रात का खाना खाया। ज़ूरिन लगातार यह कहते हुए मेरा जाम भरता रहा कि फ़ौजी ज़िन्दगी की आदत डालनी चाहिये। मेज़ से उठने पर मैं बड़ी मुश्किल से ही खड़ा रह पाया। आधी रात को ज़ूरिन मुझे होटल में छोड़ने आया।

सावेलिच हमें ड्योढ़ी में ही मिला। सैनिक सेवा के लिये मेरे विशेष उत्साह के स्पष्ट लक्षण देखकर वह स्तम्भित रह गया। "यह क्या हुआ है तुम्हें, छोटे मालिक?" उसने दयनीय स्वर में कहा, "कहां तुमने इतनी अधिक चढ़ा ली? हे भगवान! आज तक कभी ऐसी बुरी हरकत नहीं हुई थी!" – "चुप रह बुड्ढे तोते!" मैंने हकलाती ज़बान से जवाब दिया, "तुम ज़रूर नशे में हो, जाकर सो रहो...

और मुझे बिस्तर पर लिटा दो।"

अगले दिन मैं जागा तो मेरे सिर में दर्द था और पिछले दिन की घटनाओं की बहुत धुंधली-सी याद थी मुझे। सावेलिच ने, जो चाय का प्याला लिये हुए कमरे में दाख़िल हुआ था, मेरी इस विचार-श्रृंखला को तोड़ा। "बहुत जल्द ही प्योतर अन्द्रेइच," उसने सिर हिलाते हुए मुझसे कहा, "बहुत जल्द ही शराब में डुबकियां लगाने लगे हो। किस पर गये हो तुम? न तो तुम्हारे पिता और न दादा ही पीते थे। रही मां, तो उन्होंने क्वास* के अलावा कभी कुछ पिया ही नहीं। कौन इसके लिये दोषी है? वही, दुष्ट फ़्रांसीसी। जब-तब वह भण्डारिन अन्तीप्येव्ना के पास भागा जाता था और कहता था, 'मदाम, जे वु प्री वोद्क्यु'** तो यह नतीजा है जे वु प्री का! निश्चय ही उसने, उस कुत्ते के पिल्ले ने तुम्हें ऐसी शिक्षा दी है। और बड़ी ज़रूरत थी ऐसे काफ़िर को शिक्षक रखने की मानो मालिक के पास अपने लोगों की कमी हो!"

मुझे शर्म आ रही थी। मैंने मुंह फेर लिया और उससे कहा, "चले जाओ यहां से, सावेलिच, मुझे चाय नहीं चाहिये।" किन्तु सावेलिच जब उपदेश देने लगता था, तो उससे पिण्ड छुड़ाना मुश्किल होता था। "देखते हो न, प्योतर अन्द्रेइच, शराब पीने का क्या नतीजा होता है। दर्द से सिर फटता है, कुछ खाने को मन नहीं होता। पीनेवाला आदमी किसी काम का नहीं रहता... शहद मिलाकर खीरों के अचार का नमकीन पानी पी लो या फिर सबसे अच्छा तो यह होगा कि वोदका का आधा गिलास पीकर नशे का असर दूर कर लो। ले आऊं क्या?"

इसी समय एक छोकरा इ० इ० ज़ूरिन का रुक्क़ा लेकर आया। मैंने उसे खोलकर पढ़ा। उसमें लिखा था –

"प्यारे प्योतर अन्द्रेइच, कृपया इस लड़के के हाथ मुझे वे एक

---

* एक रूसी पेय, जिसका कुछ-कुछ कोका-कोला जैसा ज़ायका होता है। – अनु०

** मदाम, कृपया वोदका दें (फ़्रांसीसी)।

सौ रूबल भेज दीजिये जो आप कल हार गये थे। मुझे पैसों की बेहद ज़रूरत है।

आपकी सेवा को प्रस्तुत

इवान ज़ूरिन।"

मेरे लिये कोई चारा नहीं था। मैंने मुंह पर उदासीनता का नकाब ओढ़ लिया और सावेलिच को सम्बोधित किया जिसके पास "मेरे सारे पैसे और कपड़े-लत्ते थे तथा जो मेरा सारा हिसाब-किताब रखता था,"* कि वह छोकरे को एक सौ रूबल दे दे।

"क्यों! किसलिये?" सावेलिच ने हैरान होकर पूछा। "मुझे उसके देने हैं।" मैंने यथासम्भव शान्ति से उत्तर दिया। "देने हैं!" सावेलिच ने अधिकाधिक हैरान होते हुए मेरे शब्दों को दोहराया, "कब तुम ऋणी भी हो गये, छोटे मालिक? ज़रूर मामला कुछ गड़बड़ है। जो चाहे करो, लेकिन पैसे मैं नहीं दूंगा।"

मैंने सोचा कि अगर इसी निर्णायिक क्षण में इस ज़िद्दी बुड्ढे पर हावी नहीं हो जाऊंगा, तो बाद में मेरे लिये इसकी सरपरस्ती से निजात पाना मुश्किल हो जायेगा और मैंने बड़े गर्व से उसकी ओर देखकर कहा, "मैं तुम्हारा मालिक हूं और तुम मेरे नौकर हो। पैसे मेरे हैं। मैं उन्हें हार गया, क्योंकि मैंने ऐसा चाहा। तुम्हें यही सलाह देता हूं कि ज़्यादा अक्लमन्दी न दिखाओ और तुम्हें जो कहा जाता है, वही करो।"

मेरे शब्दों से सावेलिच ऐसा आश्चर्यचकित हुआ कि उसने हाथ झटके और बुत बना खड़ा रह गया। "तुम बुत बने क्यों खड़े हो!" मैं ग़ुस्से से चिल्लाया। सावेलिच रो पड़ा। "मेरे प्यारे, प्योतर अन्द्रेइच," उसने कांपती आवाज़ में कहा, "इतना दुख नहीं दो कि मेरी जान निकल जाये। मेरी आंखों की रोशनी! मुझ बूढ़े की बात मानो – इस बदमाश को यह लिख भेजो कि तुमने मज़ाक़ किया था, कि हमारे पास तो इतनी रक़म है ही नहीं। एक सौ रूबल! हे मेरे भगवान! लिख दो कि माता-पिता ने तुम्हें सिर्फ़ अख़रोटों से खेलने की इजाज़त दी है..." – "बस,

---

* देनीस फ़ोनवीज़िन (१७४५–१७९२) की 'मेरे नौकरों को सन्देश' कविता से। – सं०

काफ़ी झूठ बोल चुके," मैंने कड़ाई से उसे टोका, "पैसे इधर दे दो वरना तुम्हें यहां से निकाल बाहर करूंगा।"

सावेलिच ने बहुत ही दुखी नज़र से मेरी ओर देखा और मेरे ऋण की रक़म लाने चला गया। मुझे बूढ़े पर तरस आया, किन्तु मैं आज़ाद होना और यह दिखाना चाहता था कि मैं बच्चा नहीं हूं। ज़ूरिन को पैसे भिजवा दिये गये। सावेलिच ने मुझे इस मनहूस होटल से ले जाने की उतावली की। वह यह ख़बर लेकर आया कि घोड़ा-गाड़ी तैयार है। कचोटती आत्मा और मौन-मूक पश्चाताप की भावना के साथ मैं शराब और जुए के अपने गुरु से विदा लिये बिना और उससे फिर कभी न मिलने की आशा करते हुए सिम्बीर्स्क से रवाना हुआ।

दूसरा अध्याय

पथ-प्रदर्शक

ओ री धरती, क्षेत्र पराये
जहां आज मैं आया!
अपनी इच्छा से आ पहुंचा
या घोड़ा ले आया:
मुझे जवानी ले आयी है
औ' यौवन मतवाला,
मुझे नशा भी, हाला।

पुराना गीत

रास्ते में मेरे दिमाग़ में आनेवाले विचार कोई बहुत सुखद नहीं थे। उस समय के मूल्यों को ध्यान में रखते हुए मैंने जितने रूबल हारे थे, वे कुछ कम नहीं थे। मन ही मन मैं यह माने बिना भी नहीं रह सकता था कि सिम्बीर्स्क के होटल में मैंने काफ़ी बेवकूफ़ी की हरकत की थी और सावेलिच के सामने मैं अपने को दोषी अनुभव करता था। यह सब कुछ मुझे यातना दे रहा था। बूढ़ा मुंह फेरे और मुंह फुलाये हुए घोड़ा-गाड़ी के बाक्स पर चुपचाप बैठा था, कभी-

कभार खूं-खां कर लेता था। मैं उससे सुलह करने को बेचैन था और नहीं जानता था कि बात कहां से शुरू करूं। आख़िर मैंने उससे कहा –

"सुनो सावेलिच! बस, काफ़ी नाराज़ हो लिये, आओ सुलह कर लें, मैं दोषी हूं, ख़ुद देख रहा हूं कि दोषी हूं। मैंने कल शैतानी की और तुम्हारे साथ बेकार गुस्ताख़ी से पेश आया। वचन देता हूं कि आगे अधिक बुद्धिमत्ता से काम लूंगा और तुम्हारी बात पर कान दूंगा। तो अब ग़ुस्सा थूक दो, आओ, सुलह कर लें।"

"ओह, छोटे मालिक, प्योतर अन्द्रेइच!" उसने गहरी सांस लेकर उत्तर दिया, "मुझे तो ख़ुद अपने पर ग़ुस्सा आ रहा है, मैं ही पूरी तरह दोषी हूं। किसलिये मैंने तुम्हें होटल में अकेले छोड़ दिया! क्या किया जाये? दिमाग़ में यह ख़्याल घुस गया कि गिरजाघर के पादरी की बीवी से, जो मेरी रिश्तेदार है, मिल आऊं। वहां गया कि जैसे जेल में जा बैठा। बस, मुसीबत आ गयी! .. मालिक-मालकिन को मैं कैसे मुंह दिखाऊंगा? जैसे ही उन्हें यह पता चलेगा कि बेटा पीता और जुआ खेलता है, तो वे क्या कहेंगे?"

बेचारे सावेलिच को तसल्ली देने के लिये मैंने वचन दिया कि भविष्य में उसकी सहमति के बिना मैं एक पैसा भी ख़र्च नहीं करूंगा। वह धीरे-धीरे शान्त हो गया, यद्यपि अभी भी बीच-बीच में सिर हिलाकर बड़बड़ाता जाता था, "एक सौ रूबल! कोई मामूली-सी बात थोड़े ही है!"

मैं अपनी मंज़िल के क़रीब पहुंच रहा था। मेरे सभी ओर सुनसान-वीरान मैदान फैला हुआ था जिसमें जहां-तहां टीले और गड्ढे थे। सभी कुछ बर्फ़ से ढका हुआ था। सूरज डूब रहा था। हमारी घोड़ा-गाड़ी संकरी राह या अधिक सही तौर पर कहा जाये तो किसानों की गाड़ियों द्वारा छोड़े गये निशानों पर चल रही थी। अचानक कोचवान एक तरफ़ को देखने लगा और आख़िर टोपी उतारकर उसने मुझे सम्बोधित करते हुए कहा –

"साहब, क्या हम लौट न चलें?"

"किसलिये?"

"मौसम भरोसे का नहीं – हवा चलने लगी है, देखो तो वह ताज़ा गिरी हुई बर्फ़ को कैसे उड़ा रही है।"

"तो इसमें क्या मुसीबत है!"

"वहां देख रहे हो, क्या है?" (कोचवान ने चाबुक से पूरब की ओर संकेत किया।)

"सफ़ेद स्तेपी और साफ़ आसमान के सिवा मुझे तो कुछ भी नज़र नहीं आ रहा।"

"वह, वह, छोटा-सा बादल।"

वास्तव में ही मुझे गगन के छोर पर छोटा-सा सफ़ेद बादल दिखाई दिया जिसे मैंने शुरू में दूर का टीला समझा था। कोचवान ने मुझे स्पष्ट किया कि यह बादल तूफ़ान का सूचक है।

मैंने इन इलाक़ों में आनेवाले तूफ़ानों के बारे में सुना था और जानता था कि गाड़ियों की पांतों की पांतें बर्फ़ में दब जाती हैं। कोच-वान के विचार से सहमत सावेलिच ने भी लौटने की सलाह दी। किन्तु मुझे हवा बहुत तेज़ प्रतीत नहीं हुई। मुझे आशा थी कि अगली घोड़ा-चौकी तक ठीक समय पर पहुंच जायेंगे और इसलिये मैंने घोड़े तेज़ करने को कहा।

कोचवान घोड़ों को सरपट दौड़ाने लगा, किन्तु वह लगातार पूरब की ओर देखता जाता था। घोड़े हिल-मिलकर दौड़ रहे थे। इसी बीच हवा अधिकाधिक तेज़ होती जा रही थी। छोटी-सी बदली बड़े सफ़ेद बादल में बदल गयी, बादल उमड़-घुमड़कर ऊपर उठा और धीरे-धीरे आकाश पर छा गया। हिमकण गिरने लगे और सहसा उन्होंने बर्फ़ के बड़े-बड़े फाहों का रूप धारण कर लिया। हवा चीख़ने लगी – तूफ़ान आ गया था। आन की आन में काला आकाश हिम-सागर से घुल-मिल गया। सब कुछ आंखों से ओझल हो गया। "तो साहब," कोचवान चिल्ला उठा, "मुसीबत – तूफ़ान आ गया!.."

मैंने घोड़ा-गाड़ी में से बाहर झांककर देखा – सभी ओर अंधेरा और तूफ़ान था। हवा किसी प्राणी की भांति भयावह ढंग से चीख़ रही थी। बर्फ़ ने मुझे और सावेलिच को ढक दिया। घोड़े क़दम-क़दम चल रहे थे और जल्द ही रुककर खड़े हो गये। "तुम रुक क्यों गये?" मैंने झल्लाकर कोचवान से पूछा। "चलते जाने में क्या तुक है?" उसने अपनी सीट से नीचे उतरते हुए उत्तर दिया, "जाने अब ही कहां पहुंच गये हैं, रास्ते का कुछ पता नहीं और सभी ओर घुप्प

अंधेरा है।" मैं उसे कोसने लगा, किन्तु सावेलिच ने उसका पक्ष लिया—"इसकी बात माननी चाहिये थी," उसने बिगड़कर कहा, "सराय में लौट चलते, वहां चाय पीते, सुबह तक आराम करते, तूफ़ान शान्त हो जाता और हम आगे चल देते। आख़िर हमें जल्दी भी क्या है? क्या कहीं शादी में पहुंचना है!" सावेलिच की बात बिल्कुल सही थी। हमारे सामने कोई चारा नहीं था। बर्फ़ बहुत ज़ोर से गिरती जा रही थी। घोड़ा-गाड़ी के आस-पास बर्फ़ का टीला-सा बन गया था। घोड़े सिर झुकाये खड़े थे और जब-तब सिहर उठते थे। कोचवान गाड़ी के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहा था, कोई काम न होने के कारण घोड़ों के साज को ठीक-ठाक कर रहा था। सावेलिच बड़बड़ा रहा था। मैं इस आशा से सभी ओर नज़र घुमाकर देख रहा था कि कहीं कोई घर या रास्ता दिखाई दे जाये, मगर चक्कर काटती बर्फ़ के सिवा मुझे और कुछ नज़र नहीं आया... अचानक कोई काली-सी चीज़ दिखाई दी। "ए कोचवान!" मैंने चिल्लाकर कहा, "देखो तो, वहां वह काला-सा क्या है?" कोचवान बहुत ग़ौर से देखने लगा। "भगवान जाने, मालिक," उसने अपनी सीट पर बैठते हुए कहा, "न तो कोई गाड़ी है और न कोई पेड़ और वह हिलता-डुलता भी लग रहा है। ज़रूर कोई भेड़िया या आदमी होना चाहिये।"

मैंने इस अज्ञात चीज़ की ओर, जो उसी समय हमारी ओर आने लगी, गाड़ी बढ़ाने का आदेश दिया। दो मिनट बाद हम एक व्यक्ति के निकट पहुंच गये। "ए भले मानस!" कोचवान ने ऊंची आवाज़ में उसे सम्बोधित किया, "यहां का रास्ता जानते हो?"

"रास्ता तो यही है, मैं ठोस पट्टी पर खड़ा हूं," राहगीर ने उत्तर दिया, "मगर इससे लाभ क्या है?"

"सुनो, भले आदमी," मैंने उससे कहा, "क्या तुम इस इलाक़े को जानते हो? मुझे किसी ऐसी जगह पर पहुंचा सकते हो जहां रात बितायी जा सके?"

"यह इलाक़ा मेरा ख़ूब जाना-पहचाना है," राहगीर ने जवाब दिया, "भगवान की कृपा से पैदल और घोड़े पर मैं यहां बहुत बार आ-जा चुका हूं। लेकिन देखो, मौसम तो कैसा है। रास्ते से भटका जा सकता है। यहीं रुककर इन्तज़ार करना ज़्यादा अच्छा होगा,

तूफ़ान रुक जाये और आसमान साफ़ हो जाये – तब हम सितारों की मदद से रास्ता ढूंढ़ लेंगे।"

इस व्यक्ति के ऐसे शान्त अन्दाज़ से मेरी दिलजमई हुई। मैंने अपने को भगवान की दया पर छोड़ते हुए स्तेपी में ही रात बिताने का निर्णय कर लिया कि सहसा राहगीर फुर्ती से बाक्स पर जा बैठा और कोचवान से बोला –

"भगवान की कृपा से ठहरने की जगह पास ही में है, गाड़ी को दायीं ओर बढ़ाते चलो।"

"दायें को क्यों बढ़ाऊं गाड़ी?" कोचवान ने नाराज़गी से कहा। "कहां रास्ता दिखाई दे रहा है तुम्हें? यही सोचते हो कि घोड़े पराये हैं, गाड़ी परायी है और इसलिये दौड़ाते चलो।" मुझे कोचवान की बात ठीक प्रतीत हुई।

"सचमुच तुम ऐसा क्यों सोचते हो कि कोई घर पास में ही है?" मैंने पूछा।

"इसलिये कि हवा उधर से आ रही है," राहगीर ने जवाब दिया, "उसमें धुएं की गन्ध है। इसका यही मतलब है कि गांव निकट ही है।"

उसकी तीक्ष्ण बुद्धि और सूझ-बूझ से मैं हैरान रह गया। मैंने कोचवान को गाड़ी बढ़ाने का आदेश दिया। घोड़े गहरी बर्फ़ में धंसते-धंसते चलने लगे। गाड़ी धीरे-धीरे बढ़ रही थी, वह कभी बर्फ़ के टीले पर चढ़ जाती, तो कभी किसी गड्ढे में धंस जाती और कभी एक, तो कभी दूसरी दिशा में धचका खाती। यह तूफ़ानी सागर में सफ़र करने जैसा लगता था। सावेलिच रह-रहकर मेरी बग़ल से टकराता और हाय-वाय करता। मैंने परदा नीचे गिरा दिया, फ़र का कोट ओढ़ लिया और बर्फ़ीली आंधी की लयबद्ध लोरी तथा गाड़ी के हिलने-डोलने से ऊंघ गया।

मैंने एक सपना देखा जिसे कभी नहीं भूल पाया और अपने जीवन की अजीब परिस्थितियों के साथ जब उसकी तुलना करके देखता हूं, तो उसमें कुछ भविष्यवाणी-सी पाता हूं। पाठक मुझे क्षमा करे, क्योंकि सम्भवतः वह अनुभव से यह जानता है कि पूर्वाग्रहों के प्रति अधिकतम तिरस्कार की भावना के बावजूद इन्सान में अंधविश्वास के अधीन

हो जाने की कैसी जन्मजात प्रवृत्ति विद्यमान है।

मैं मन और भावनाओं की ऐसी स्थिति में था, जब यथार्थ सपनों के अधीन होकर कच्ची नींद के अस्पष्ट बिम्बों में उनसे घुल-मिल जाता है। मुझे लगा कि बर्फ़ का तूफ़ान अभी अपना पूरा ज़ोर दिखा रहा है और हम इस बर्फ़ीले रेगिस्तान में रास्ते से भटक रहे हैं... अचानक मुझे फाटक दिखाई दिया और मैं अपनी हवेली के अहाते में दाख़िल हुआ। मुझे जिस पहले विचार ने चिन्तित किया, वह यह था कि मेरे मजबूरन घर लौटने पर पिता जी नाराज़ न हो उठें और इसे जान-बूझकर अपनी आज्ञा का उल्लंघन न मानें। मन में इसी प्रकार की चिन्ता लिये हुए मैं गाड़ी से कूदकर बाहर आया और बहुत ही गहरे दुख में डूबी हुई मां को दरवाज़े पर खड़ी पाया। "शी," उन्होंने मुझे चुप रहने को कहा, "तुम्हारे पिता जी अपनी अन्तिम सांसें ले रहे हैं और तुमसे विदा लेना चाहते हैं।" मैं भयभीत-सा होकर मां के पीछे-पीछे सोने के कमरे में गया। देखता क्या हूं कि कमरे में बहुत मद्धिम रोशनी है और लोग मातमी-सी सूरतें बनाये हुए पलंग के क़रीब खड़े हैं। मैं दबे क़दमों पलंग के क़रीब गया – मां ने पलंग के सामनेवाला थोड़ा-सा पर्दा हटाया और बोलीं, "अन्द्रेई पेत्रोविच, पेत्रूशा आ गया है, तुम्हारी बीमारी की ख़बर पाकर वह लौट आया है, उसे आशीर्वाद दो।" मैं घुटनों के बल हो गया और मैंने रोगी पर अपनी नज़र टिका दी। क्या देखता हूं?.. मेरे पिता जी की जगह काली दाढ़ीवाला एक देहाती बिस्तर पर लेटा हुआ है और ख़ुशमिज़ाजी से मेरी ओर देख रहा है। मैंने कुछ न समझ पाते हुए मां की तरफ़ देखा और कहा, "यह क्या मामला है? यह तो पिता जी नहीं हैं। इस देहाती से भला मैं आशीर्वाद क्यों मांगूं?" – "फिर भी ऐसा ही करो पेत्रूशा," मां ने उत्तर दिया, "यह तुम्हारा धर्म-पिता है। उसका हाथ चूमो और आशीर्वाद लो..." मैं इसके लिये राज़ी नहीं हुआ। तब वह देहाती उछलकर बिस्तर से उठ खड़ा हुआ और अपनी पीठ के पीछे से कुल्हाड़ा निकालकर सभी ओर घुमाने लगा। मैंने भाग जाना चाहा... मगर ऐसा नहीं कर पाया। कमरा लाशों से भरा हुआ था, लाशों से टकराकर मैं ख़ून के डबरों में फिसल रहा था... भयानक देहाती ने मुझे प्यार से पुकारते हुए कहा, "डरो

नहीं, मेरी छत्र-छाया में आ जाओ..." भय और आश्चर्य मुझ पर हावी हो गये... इसी क्षण मेरी आंख खुल गयी। घोड़े खड़े थे, सावेलिच मेरा हाथ हिलाते हुए कह रहा था, "छोटे मालिक, बाहर आ जाओ, हम पहुंच गये।"

"कहां पहुंच गये?" मैंने आंखें मलते हुए पूछा।

"सराय में। भगवान ने मदद की, हम सीधे बाड़ के पास पहुंच गये। बाहर आ जाओ, छोटे मालिक, और जल्दी से भीतर चलकर अपने को गर्माओ।"

मैं घोड़ा-गाड़ी से बाहर निकला। बर्फ़ीली आंधी अब भी चल रही थी, यद्यपि उसका ज़ोर कम हो गया था। ऐसा घुप्प अंधेरा था कि हाथ को हाथ नहीं सूझता था। कोट के पल्ले के नीचे लालटेन छिपाये हुए सराय का मालिक दरवाज़े के पास हमसे मिला और मुझे तंग, किन्तु ख़ासे साफ़-सुथरे कमरे में ले गया। उसमें केवल जलती खपची की हल्की रोशनी थी। दीवार पर बन्दूक़ और कज़्ज़ाकों की ऊंची टोपी लटक रही थी।

सराय का मालिक याइक नदी के इलाक़े का कज़्ज़ाक था, लगभग साठ साल का प्रतीत होता था, किन्तु उसमें ताज़गी और प्रफुल्लता बनी हुई थीं। सावेलिच चीनी के बर्तनों की पेटी लिये हुए मेरे पीछे-पीछे आया, उसने चाय बनाने के लिये आग की व्यवस्था करने को कहा। मुझे पहले कभी भी चाय की इतनी अधिक आवश्यकता नहीं अनुभव हुई थी। सराय का मालिक आग की व्यवस्था करने चला गया।

"हमारा पथ-प्रदर्शक कहां है?" मैंने सावेलिच से पूछा।

"यहां हूं, हुज़ूर," मुझे ऊपर की ओर से आवाज़ सुनाई दी।

मैंने अलावघर के ऊपर नज़र डाली और वहां मुझे काली दाढ़ी और चमकती हुई दो आंखें दिखाई दीं।

"क्यों मेरे भाई, ठिठुर गये?"

"ऐसे घिसे-फटे कोट में ठिठुरूंगा कैसे नहीं! भेड़ की खाल का कोट तो था, मगर अपने पाप को क्या छिपाऊं? कल गिरवी रख दिया – पाला कुछ अधिक ज़ोर का नहीं महसूस हो रहा था।"

सराय का मालिक इसी समय उबलता हुआ समोवार लेकर आया। मैंने अपने पथ-प्रदर्शक को चाय का प्याला पेश किया। देहाती अलावघर से नीचे उतरा। उसकी शक्ल-सूरत मुझे बहुत जंची – उम्र कोई चालीस साल, मझोला क़द, दुबला-पतला और चौड़े-चकले कंधे। उसकी काली दाढ़ी में सफ़ेदी की झलक थी और उसकी बड़ी-बड़ी सजीव आंखें लगातार चंचलता से हिल-डुल रही थीं। उसके चेहरे पर ख़ासा मधुर, मगर धूर्त्ततापूर्ण भाव था। उसके बाल कज़्ज़ाकों के ढंग से कटे हुए थे, वह फटा-पुराना कोट और तातारी ढंग की सलवार पहने था। मैंने चाय का प्याला उसकी तरफ़ बढ़ाया, उसने एक घुंट चखकर मुंह बनाया। "हुज़ूर, मुझ पर इतनी मेहरबानी कीजिये – शराब का एक गिलास लाने का आदेश दे दीजिये, चाय हम कज़्ज़ाकों के पीने की चीज़ नहीं है।" मैंने बड़ी ख़ुशी से उसकी यह इच्छा पूरी कर दी। सराय के मालिक ने अलमारी में से बोतल और गिलास निकाला, उसके क़रीब गया और उसकी आंखों में झांकते हुए बोला, "अरे, तुम फिर से हमारे इलाक़े में आ गये! किसलिये आना हुआ?" मेरे पथ-प्रदर्शक ने अर्थपूर्ण ढंग से आंख मारी और रहस्यमय शब्दों में उत्तर दिया –

"साग-तरकारी के बगीचे में घुसा, पटुआ चुना, बुढ़िया ने कंकड़ फेंका – बग़ल से निकल गया। तुम्हारे यहां क्या हाल है?"

"हमारे यहां!" मेज़बान ने उसी तरह के रूपक में बात जारी रखी। "सन्ध्या की प्रार्थना का घण्टा बजाने का समय हो गया, पर पादरी की पत्नी अनुमति नहीं देती। पादरी मेहमान गया हुआ है, शैतान मौज मना रहे हैं।"

"चुप रहो, चाचा," मेरे आवारा पथ-प्रदर्शक ने आपत्ति की, "बारिश होगी, तो खुमियां भी होंगी, खुमियां होंगी तो टोकरियां भी। और अब (उसने फिर से आंख मारी) कुल्हाड़े को पेटी में टांग लो, वन-रक्षक घूम रहा है। हुज़ूर! आपकी सेहत के लिये!" इतना कहकर उसने गिलास लिया, अपने ऊपर सलीब बनाई और एक ही सांस में उसे पी गया। इसके बाद उसने मेरी ओर सिर झुकाया और अपने सोने की जगह पर चला गया।

चोरों की सी इस बातचीत से तब मेरे पल्ले कुछ नहीं पड़ा था।

किन्तु बाद को मैं यह भांप गया कि याइक कज़्ज़ाकों की फ़ौज * की चर्चा चल रही थी जिन्हें १७७२ के विद्रोह के बाद उन्हीं दिनों वश में किया गया था। सावेलिच बड़ी अप्रसन्नता प्रकट करते हुए यह बातचीत सुन रहा था। वह कभी तो सराय के मालिक और कभी पथ-प्रदर्शक को सन्देह की दृष्टि से देखता। सराय या स्थानीय रूप से 'उमेत' कहलानेवाली यह जगह एक तरफ़ को हटकर, गांव-पुरवे से बिल्कुल दूर, स्तेपी में थी और चोरों के अड्डे से बहुत मिलती-जुलती थी। किन्तु हमारे लिये और कोई रास्ता नहीं था। सफ़र जारी रखने की बात ही नहीं सोची जा सकती थी। सावेलिच की बेचैनी से मुझे बड़ा मज़ा आ रहा था। इसी बीच मैंने सोने की तैयारी कर ली और बेंच पर लेट गया। सावेलिच ने अलावघर के ऊपर सोने का निर्णय किया और सराय का मालिक फ़र्श पर लेट गया। कुछ देर बाद सभी खर्राटे भरने लगे और मैं गहरी नींद सो गया।

सुबह को काफ़ी देर से आंख खुली और मैंने देखा कि बर्फ़ का तूफ़ान थम गया है। सूरज चमक रहा था। असीम स्तेपी में आंखों को चौंधाती हुई बर्फ़ की चादर फैली थी। गाड़ी में घोड़े जोते जा चुके थे। मैंने सराय के मालिक को पैसे दिये जिसने इतने कम पैसे लिये कि सावेलिच ने भी उससे बहस नहीं की और आदत के मुताबिक़ मोल-भाव नहीं किया। पिछले दिन के सन्देह अब पूरी तरह उसके दिमाग़ से ग़ायब हो गये थे। मैंने रास्ता दिखलानेवाले को बुलाया, मदद करने के लिये उसे धन्यवाद दिया और सावेलिच से कहा कि उसे वोदका के लिये पचास कोपेक दे दे। सावेलिच ने नाक-भौंह सिकोड़ी। "वोदका के लिये पचास कोपेक!"

---

*याइक नदी के तट पर अवस्थित क़स्बे में कज़्ज़ाक सेनाओं ने १२ जनवरी १७७२ को विद्रोह किया था जिसे गर्मी में दबा दिया गया था। 'पुगाचोव के विद्रोह के इतिहास' में पुश्किन ने दबा दिये गये कज़्ज़ाकों की मन:स्थिति का यों वर्णन किया है – "'अभी क्या है – आगे देखना!' क्षमा किये गये विद्रोही कहते थे, 'हम मास्को को हिला डालेंगे न...' स्तेपियों और दूर-दराज़ के गांवों में गुप्त बैठकें होती थीं। सब कुछ से ऐसा मालूम होता था कि नया विद्रोह होने को है। सरदार की कमी थी। सरदार मिल गया।" – सं०

उसने कहा, "यह किसलिये? क्या इसीलिये कि उसे घोड़ागाड़ी में बिठाकर सराय तक भी लाये? तुम चाहे कुछ भी क्यों न कहो मालिक, हमारे पास फ़ालतू पचास कोपेक नहीं हैं। सभी को अगर वोदका के लिये पैसे देंगे, तो जल्द ही खुद हमें भूखे रहना पड़ेगा।" सावेलिच के साथ मैं बहस नहीं कर सकता था। मेरे दिये वचन के अनुसार पैसे पूरी तरह उसके अधिकार में थे। फिर भी मुझे इस बात का खेद हो रहा था कि उस व्यक्ति के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने में असमर्थ हूं जिसने यदि मुसीबत से नहीं, तो बहुत ही जटिल स्थिति से मुझे बचा लिया था। "अच्छी बात है," मैंने बड़ी शान्ति से कहा, "अगर पचास कोपेक नहीं देना चाहते, तो मेरे कपड़ों में से उसे कुछ निकाल दो। वह बहुत ही हल्के-फुल्के कपड़े पहने है। उसे ख़रगोश की खाल का मेरा कोट दे दो।"

"सुनो, मेरे प्यारे, प्योतर अन्द्रेइच!" सावेलिच बोला। "ख़रगोश की खाल के तुम्हारे कोट को यह क्या करेगा? यह कुत्ते का पिल्ला अगले ही शराबख़ाने में इसकी शराब पी जायेगा।"

"बुड्ढे, तुम्हें इसकी फ़िक्र करने की ज़रूरत नहीं," आवारा ने कहा, "कि पी डालूंगा या नहीं। ये हुज़ूर मुझे अपना फ़र-कोट देना चाहते हैं, यह उनकी मर्ज़ी है और तुम्हारा नौकर का काम बहस करना नहीं, हुक्म मानना है।"

"तुम्हें ख़ुदा का डर-खौफ़ नहीं है, लुटेरे!" सावेलिच ने झल्लाकर उसे जवाब दिया। "तुम देख रहे हो कि मालिक अभी नादान है, कुछ समझता-बूझता नहीं और तुम उसकी सादगी से लाभ उठाकर उसे लूट लेना चाहते हो। क्या करोगे तुम रईसी फ़र-कोट का? अपने इन मनहूस कन्धों पर तुम उसे खींच-खांचकर भी नहीं चढ़ा पाओगे।"

"कृपया बहस नहीं करो," मैंने अपने इस बुज़ुर्ग से कहा, "इसी समय फ़र-कोट यहां ले आओ।"

"हे भगवान!" सावेलिच ने लम्बी सांस छोड़ी। "ख़रगोश की खाल का कोट लगभग बिल्कुल नया है! किसी और को दिया जाता, तो कोई बात भी बनती, आवारा शराबी को दिया जा रहा है!"

फिर भी ख़रगोश की खाल का कोट आ गया। देहाती उसी समय उसे पहनकर देखने लगा। वास्तव में ही यह कोट, जो मेरे लिये भी

छोटा हो गया था, उसके बदन पर भी कुछ तंग रहा। किन्तु उसने उसकी सीवनें उधेड़कर उसे किसी तरह से पहन लिया। धागों के उधेड़े जाने की आवाज़ सुनकर सावेलिच चीख़ते-चीख़ते रह गया। मेरे उपहार से आवारा तो गद्गद हो गया। उसने मुझे घोड़ा-गाड़ी तक पहुंचाया और सिर झुकाकर कहा –

"बहुत धन्यवाद, हुज़ूर! भगवान आपको आपकी नेकी का फल दे। आपकी इस मेहरबानी को कभी नहीं भूलूंगा।" वह अपने रास्ते चल दिया और मैं सावेलिच की खीझ की ओर कोई ध्यान दिये बिना अपने सफ़र पर आगे चल पड़ा तथा बहुत जल्द ही पिछले दिन की बर्फ़ीली आंधी, रास्ता दिखानेवाले व्यक्ति और ख़रगोश की खाल के कोट के बारे में भूल गया।

ओरेनबुर्ग पहुंचते ही मैं जनरल के सामने हाज़िर हुआ। लम्बे क़द के इस व्यक्ति की बुढ़ापे के कारण पीठ झुक चुकी थी और उसके लम्बे-लम्बे बाल एकदम सफ़ेद थे। उसकी पुरानी, बदरंग वर्दी देखकर आन्ना इओआन्नोव्ना के समय के फ़ौजी की याद हो आयी। जनरल के बात करने के अन्दाज़ में जर्मन लहजे की बड़ी अनुभूति होती थी। मैंने उसे पिता जी का पत्र दिया। पिता जी का नाम सुनकर उसने झटपट मेरी ओर देखा।

"हे पगवान!" उसने कहा। "ऐसा लकता जैसा कुछ ही बक़्त पहले अन्द्रेई पेत्रोविच ख़ुद तुम्हारे समान था और अब कैसा बांखा जवान फेटा है उसका! आह, बक़्त, बक़्त!" उसने पत्र खोला और जर्मन लहजेवाली रूसी भाषा में अपनी टीका-टिप्पणियां करते हुए उसे धीमे-धीमे पढ़ने लगा। "'आदरणीय महानुभाव अन्द्रेई कार्लोविच, आशा करता हूं कि आप श्रीमान...' यह सब कैसी औबचारिकता है? थू, सरम आनी चाहिये उसे! माना – अनुसासन बहुत ज़रूरी है, मगर पुराने कोमराड को कौन ऐसे खत लिखता है? .. 'श्रीमान भूले नहीं होंगे...' हुं... 'और... जब... दिवंगत फ़ेल्डमार्शल मीनिख़... कूच... और कारोलीन्का को भी'... ओह सैतान! उसे हमारी पुरानी सैतानियां भी याद हैं? 'अब काम की बात... आपके पास अपने बदमाश को भेज रहा हूं'... हुं... 'साही के दस्तानों में रखें इसे'... साही के दस्तानों में – क्या मतलब इसका? सायत कोई रूसी कहावत...

क्या मतलब है इसका – 'साही के दस्तानों में रखें?' " उसने मुझे सम्बोधित करते हुए इन शब्दों को दोहराया।

"इसका मतलब है," मैंने जहां तक मुमकिन हुआ, ज़्यादा से ज़्यादा मासूम सूरत बनाकर जवाब दिया, "प्यार से पेश आयें, बहुत अधिक कड़ाई न दिखायें, अधिक छूट दें, साही के दस्तानों में रखें।"

"हुं, समझा... 'और उसे छूट न दें'... नहीं, साफ़ है, साही के दस्तानों में रखने का वह मतलब नहीं जो तुमने बताया... 'उसका पाशपोर्ट भी भेज रहा हूं'... कहां है पाशपोर्ट? यह रहा... 'सेम्योनोव रेजिमेंट में उसे भेज देना।' अच्छी बात है, अच्छी बात है, सब कुछ कर दिया जायेगा... 'अपने ऊंचे पद की ओर ध्यान दिये बिना पुराने साथी और दोस्त के नाते... तुम मुझे गले लगाने की अनुमति दोगे'... ओह, आख़िर तो अक्ल की बात की... आदि, आदि... तो प्यारे," उसने पत्र पढ़ने और मेरा पासपोर्ट एक ओर रखने के बाद मुझसे कहा, "सब कुछ हो जायेगा – तुम्हें... रेजिमेंट में अफ़शर बना दिया जायेगा। बेकार बख़्त बरबाद न हो, इसलिये कल ही बेलोगोर्स्क के दुर्ग में चले जाओ। वहां तुम बहुत भले और ईमानदार आदमी, कप्तान मिरोनोव के अधीन काम करोगे, असली फ़ौजी रंग-ढंग देखोगे, अनुसासन सीख जाओगे। यहां ओरेनबुर्ग में तुम्हारे करने-धरने को कुछ नहीं; जवान आदमी के लिये काहिली बुरी चीज़ है। और आज दोपहर का भोजन मेरे शाथ करने की कृपा करो।"

"बद से बदतर!" मैंने मन ही मन सोचा, "क्या फ़ायदा हुआ मुझे इससे कि मैं जब मां के गर्भ में था, तभी गार्ड-सेना में सार्जेंट के रूप में मेरा नाम दर्ज करवा दिया गया था! कहां जा पहुंचा हूं मैं? ...रेजिमेंट में और सो भी किर्ग़ीज़-कज़ाख़ स्तेपी के सुनसान दुर्ग में!.." मैंने अन्द्रेई कार्लोविच के साथ दोपहर का भोजन किया। हम दोनों के अलावा उसका पुराना सहायक फ़ौजी अफ़सर भी खाने की मेज़ पर मौजूद था। खाने-पीने के मामले में अत्यधिक कड़ी जर्मन मितव्ययता बरती गयी थी। मेरे ख़्याल में अपनी छड़े की मेज़ पर कभी-कभी एक फ़ालतू मेहमान की हाज़िरी के डर से ही मुझे फ़ौरन दुर्ग की तरफ़ खदेड़ दिया गया था। अगले दिन जनरल से विदा लेकर मैं अपने नियुक्ति-स्थान की ओर रवाना हो गया।

तीसरा अध्याय

दुर्ग

छोटी-सी गढ़िया में रहते, हम तो समय बिताते हैं,
हर दिन जीभर पानी पीते, हम तो रोटी खाते हैं,
लेकिन दुश्मन ने यदि चाहा, आये मौज मनाये
यहां कचौड़ी और समोसों की वह दावत खाये :
तो हम भरें तोप में गोले,
उसको मज़ा चखायें, उसका मन बहलायें।

सैनिक गीत

पुराने ज़माने के लोग, मेरे हुज़ूर।

घोंघाबसन्त

बेलोगोर्स्क का दुर्ग ओरेनबुर्ग से चालीस वेर्स्ता दूर था। रास्ता याइक नदी के खड़े तट के साथ-साथ जाता था। नदी अभी जमी नहीं थी और उसकी सीसे के रंग जैसी लहरें सफ़ेद बर्फ़ से ढके तटों के बीच उदास झलक दिखा रही थीं। तटों के दोनों ओर किर्ग़ीज़ स्तेपी फैली हुई थी। मैं ख़्यालों में डूब गया जो अधिकतर उदासीभरे थे। दुर्ग का जीवन मेरे लिये बहुत कम आकर्षण रखता था। मैंने अपने भावी अधिकारी, कप्तान मिरोनोव की कल्पना करने का प्रयास किया। मेरी कल्पना में एक कठोर और चिड़चिड़े बूढ़े के रूप में उसका चित्र उभरा जो अपनी नौकरी के सिवा और कुछ नहीं जानता था तथा हर छोटी-मोटी बात के लिये मुझे हिरासत में लेने तथा सिर्फ़ रोटी और पानी पर रखने का आदेश देने को तैयार था। इसी बीच झुटपुटा होने लगा। हमारी घोड़ा-गाड़ी काफ़ी तेज़ रफ़्तार से जा रही थी। "अभी बहुत दूर है क्या दुर्ग?" मैंने अपने कोचवान से पूछा। "नहीं, बहुत दूर नहीं है," उसने जवाब दिया। "वह तो दिखाई भी दे रहा है।" मैंने दहशत पैदा करनेवाले दुर्ग-प्राचीर, बुर्ज और मीनारें देख

पाने की आशा से सभी ओर दृष्टि दौड़ाई, किन्तु लट्ठों की बाड़ से घिरे हुए लकड़ी के छोटे-छोटे घरों के अतिरिक्त मुझे कुछ भी दिखाई नहीं दिया। एक ओर बर्फ़ से अध-ढकी घास की तीन-चार टालें थीं और दूसरी ओर ख़स्ताहाल पवन चक्की थी जिसके खिलौने जैसे बेजान पंख नीचे लटके हुए थे। "दुर्ग कहां है?" मैंने आश्चर्य से पूछा। "वह रहा," कोचवान ने बस्ती की ओर इशारा करते हुए जवाब दिया और इसी समय हमारी गाड़ी ने उसमें प्रवेश किया। फाटक के पास मुझे लोहे की एक पुरानी तोप रखी दिखाई दी, गलियां तंग और टेढ़ी-मेढ़ी थीं, लकड़ी के घर नीचे-नीचे और अधिकतर पुआल की छतों-वाले थे। मैंने दुर्गपति के यहां चलने का आदेश दिया और एक मिनट बाद हमारी गाड़ी लकड़ी के गिरजे की बग़ल में ऊंची जगह पर बने लकड़ी के घर के सामने जाकर खड़ी हो गयी।

किसी ने मेरा स्वागत-सत्कार नहीं किया। मैंने ड्योढ़ी में जाकर प्रवेश-कक्ष का दरवाज़ा खोला। मेज़ पर बैठा हुआ एक अपंग बूढ़ा हरे रंग की फ़ौजी वर्दी की फटी कोहनी पर नीला पैवंद लगा रहा था। मैंने उससे कहा कि वह मेरे आने की सूचना दे दे। "भीतर चले जाओ, भैया," अपंग ने उत्तर दिया, "वे घर पर ही हैं।" मैं पुराने ढंग से सजे हुए एक साफ़-सुथरे कमरे में दाख़िल हुआ। कोने में रखी हुई अलमारी में चीनी के बर्तन थे, दीवार पर शीशे और चौखटे में जड़ा हुआ अफ़सर का डिप्लोमा तथा उसके निकट ही किस्त्रीन * और ओचाकोव ** पर रूसियों की चढ़ाई तथा 'दुलहन का चुनाव' एवं 'बिल्ले का दफ़न' की भद्दी-सी तस्वीरें भी लटकी हुई थीं। रूईदार जाकेट पहने और सिर पर रूमाल बांधे एक बुढ़िया खिड़की के क़रीब बैठी थी। वह ऊन का गोला बना रही थी जिसके लच्छे को अफ़सर की वर्दी में एक काना बूढ़ा अपने हाथों पर फैलाये हुए था। "क्या बात है, भैया?" अपना काम जारी रखते हुए उसने पूछा। मैंने जवाब दिया कि सैन्य-सेवा के लिये आया हूं और अपने आने की सूचना देने को कप्तान महोदय

* प्रशा का दुर्ग जिस पर रूसी सेना ने १७५८ में अधिकार किया। – सं०

** तुर्की का क़िला जिसे रूसी फ़ौज़ ने १७३७ में क़ब्ज़े में लिया। – सं०

के सामने हाज़िर हुआ हूं। इतना कहकर मैंने काने अफ़सर को दुर्गपति समझते हुए उसे सम्बोधित करना चाहा, किन्तु बुढ़िया ने पहले से तैयार किये गये मेरे शब्दों को बीच में ही टोकते हुए कहा, "इवान कुज़्मिच घर पर नहीं हैं। पादरी गेरासिम के यहां गये हैं। ख़ैर, कोई बात नहीं, मैं उनकी पत्नी हूं। तुम्हारा स्वागत है। बैठो, भैया।" उसने नौकरानी को पुकारा और सार्जेंट को बुलाने का आदेश दिया। बूढ़ा अपनी एक आंख से मुझे जिज्ञासापूर्वक देख रहा था। "मैं यह पूछने की धृष्ठता कर सकता हूं," उसने कहा, "कि आप किस रेजिमेन्ट में थे?" मैंने उसकी जिज्ञासा को शान्त कर दिया। "यह पूछने की भी धृष्ठता कर सकता हूं कि गार्ड-सेना से दुर्ग में क्यों आ गये?" मैंने उत्तर दिया कि बड़े अफ़सरों की ऐसी ही इच्छा थी। "सम्भवत: कोई ऐसी हरकत करने के लिये, जो गार्ड-सेना के अफ़सर को शोभा नहीं देती," चुप न होनेवाले मेरे इस प्रश्नकर्त्ता ने अपनी बात जारी रखी। "बस, काफ़ी बेकार की बातें कर चुके," कप्तान की बीवी ने उससे कहा, "देखते नहीं हो कि नौजवान सफ़र की वजह से थका-हारा हुआ है, उसे परेशान नहीं करो... (हाथों को सीधे रखो...)। और तुम भैया," उसने मुझे सम्बोधित करते हुए कहा, "इस बात के लिये दुखी नहीं होओ कि तुम्हें हमारे इस सुनसान इलाक़े में भेज दिया गया है। न तो तुम पहले हो और न अन्तिम। यहां रहोगे तो इस जगह को चाहने भी लगोगे। अलेक्सेई इवानोविच श्वाबरिन को किसी की हत्या करने के कारण यहां आये हुए चार साल से अधिक समय हो गया है। भगवान जाने, उसने ऐसा क्यों किया। हुआ यह कि एक लेफ़्टिनेंट के साथ वह नगर से बाहर चला गया, दोनों अपने साथ तलवारें ले गये और उन्हें एक-दूसरे के बदन में घोंपने लगे। अलेक्सेई इवानोविच ने उस लेफ़्टिनेंट को बींध डाला और वह भी दो साक्षियों की उपस्थिति में! किया क्या जाये! किसी से भी ऐसे हो सकता है।"

इसी समय जवान और सुघड़-सुगठित सार्जेंट भीतर आया।

"मक्सीमिच!" कप्तान की बीवी ने उससे कहा। "श्रीमान अफ़सर को कोई साफ़-सुथरा फ़्लैट दे दो।"

"जो हुक्म, वसिलीसा येगोरोव्ना," सार्जेंट ने जवाब दिया। "हुज़ूर को इवान पोलेजायेव के यहां ही क्यों न ठहरा दिया जाये?"

"अरे नहीं, मक्सीमिच," कप्तान की बीवी बोली, "पोलेजायेव के यहां तो वैसे ही घिचपिच है, फिर वह मेरा दूर का रिश्तेदार भी है और उसे यह ध्यान रहता है कि हम उसके अफ़सर हैं। श्रीमान अफ़सर को ...आपका नाम और पितृनाम क्या है? प्योतर अन्द्रेइच?.. प्योतर अन्द्रेइच को सेम्योन कूज़ोव के मकान में ले जाओ। उस शैतान ने मेरे तरकारी के बगीचे में अपना घोड़ा छोड़ दिया था। तो मक्सीमिच, और सब कुछ तो ठीक-ठाक है न?"

"भगवान की कृपा से सब ठीक है," कज़्ज़ाक ने जवाब दिया। "सिर्फ़ गर्म पानी के टब के लिये कार्पोरल प्रोख़ोरोव की उस्तीन्या निकूलीना के साथ ग़ुसलख़ाने में झड़प हो गयी।"

"इवान इग्नातिच!" कप्तान की बीवी ने काने बूढ़े से कहा। "प्रोख़ोरोव और उस्तीन्या के झगड़े की छानबीन कर लो कि उनमें से कौन दोषी है और कौन नहीं। और दोनों को सज़ा दो। तो मक्सीमिच, जाओ, भगवान तुम्हारा भला करे। प्योतर अन्द्रेइच, मक्सीमिच आपको आपके घर पर पहुंचा आयेगा।"

मैं सिर झुकाकर बाहर आ गया। सार्जेंट मुझे दुर्ग के छोर तथा ऊंचे नदी-तट पर स्थित घर में ले गया। आधे घर में सेम्योन कूज़ोव का परिवार रह रहा था और बाक़ी आधा मुझे दे दिया गया। उसमें एक ख़ासा साफ़-सुथरा कमरा था, जिसे विभाजन-दीवार बनाकर दो हिस्सों में बांट दिया गया था। सावेलिच वहां रहने-सहने की व्यवस्था करने लगा और मैं छोटी-सी खिड़की से बाहर देखने लगा। मेरे सामने उदास-सी स्तेपी फैली हुई थी। एक ओर को लकड़ी के कुछ घर नज़र आ रहे थे और गली में कुछ मुर्ग़ियां घूम रही थीं। हाथ में कठौता लिये एक बुढ़िया सुअरों को बुला रही थी जो हेल-मेल से ख़ू-ख़ू करते हुए उसकी ओर जा रहे थे। तो मेरी क़िस्मत में ऐसी जगह पर अपनी जवानी बिताना लिखा था! उदासी मुझ पर हावी हो गयी। मैं खिड़की से परे हट गया और सावेलिच के समझाने-बुझाने और लगातार यह दुहराने के बावजूद—"हे भगवान! कुछ भी खाना नहीं चाहता! अगर बेटा बीमार हो गया तो मालकिन क्या कहेंगी?"—मैं रात का भोजन किये बिना ही बिस्तर पर चला गया।

अगली सुबह को मैं कपड़े पहनने ही लगा था कि दरवाज़ा खुला

और नाटे क़द का एक जवान अफ़सर मेरे कमरे में दाखिल हुआ। उसका सांवला चेहरा सुन्दर नहीं, मगर बहुत ही सजीव था। "माफ़ कीजिये," उसने मुझसे फ़्रांसीसी में कहा, "कि औपचारिकता के बिना आपसे जान-पहचान करने आ गया हूं। आपके आने की मुझे कल ख़बर मिली और मेरी इस इच्छा ने कि आख़िर तो किसी इन्सान का मुंह देख पाऊंगा, मुझे ऐसे वश में कर लिया कि मुझसे रहा न गया। यहां कुछ समय तक और रहने के बाद आप यह सब समझ जायेंगे।" मैंने अनुमान लगा लिया कि यह द्वन्द्व-युद्ध के लिये गार्ड-सेना से यहां भेजा गया अफ़सर है। हमने झटपट परिचय कर लिया।

श्वाबरिन ख़ासा समझदार व्यक्ति था। उसकी बातचीत काफ़ी लच्छेदार और दिलचस्प थी। उसने बड़ी चुटकियां ले लेकर दुर्गपति के परिवार, यहां के दूसरे लोगों और क्षेत्र का वर्णन किया जहां क़िस्मत मुझे खींच लाई थी। उसकी बातें सुनते हुए मैं खुलकर हंस रहा था। इसी समय वही अपंग मेरे पास आया जो दुर्गपति के प्रवेश-कक्ष में बैठा हुआ वर्दी की मरम्मत कर रहा था और उसने वसिलीसा येगोरोव्ना की ओर से मुझे उनके यहां भोजन करने को आमन्त्रित किया। श्वाब-रिन ख़ुशी से मेरे साथ हो लिया।

दुर्गपति के घर के निकट हमें मैदान में लम्बी चोटियोंवाले तथा तिकोणी टोपियां पहने कोई बीसेक बूढ़े अपंग सैनिक फ़ौजी कवायद के लिये क़तार में खड़े दिखाई दिये। रात की टोपी और ड्रेसिंग गाउन पहने ऊंचे क़द के प्रफुल्ल बूढ़े दुर्गपति उनके सामने खड़े थे। हमें देखकर वे हमारे पास आये, उन्होंने मुझसे स्नेहपूर्ण कुछ शब्द कहे और फिर से कवायद करवाने लगा। हम यह कवायद देखने के लिये रुक गये, किन्तु दुर्गपति ने अनुरोध किया कि हम वसिलीसा येगोरोव्ना के पास जायें और कहा कि वे स्वयं भी जल्द ही वहां आ जायेंगे। "यहां आपके देखने के लिये कुछ नहीं है," उन्होंने इतना और जोड़ दिया।

वसिलीसा येगोरोव्ना ने बड़ी सहजता और प्रसन्नता से हमारा स्वागत किया और मुझसे ऐसे मिली मानो एक अर्से से मुझे जानती हो। अपाहिज फ़ौजी और पालाशा नौकरानी मेज़ पर खाने-पीने की व्यव-स्था कर रहे थे। "मेरा इवान कुज़िमच तो आज कवायद में कुछ ज़्यादा ही खो गया है!" दुर्गपति की बीवी ने कहा। "पालाशा, साहब को

भोजन करने के लिये बुला लाओ। और माशा कहां है?" इसी समय गोल चेहरे, गुलाबी गालों और सुनहरे बालोंवाली कोई अठारह साल की युवती कमरे में दाख़िल हुई। घबराहट के कारण लाल हुए कानों के पीछे उसके बाल बड़े अच्छे ढंग से संवरे हुए थे। पहली नज़र में वह मुझे बहुत अच्छी नहीं लगी। मैंने मन में पूर्वाग्रह की गांठ रखते हुए उसे देखा था—श्वाबरिन ने कप्तान की बेटी, इसी माशा को पूरी तरह एक बुद्धू लड़की के रूप में मेरे सामने चित्रित किया था। माशा यानी मरीया इवानोव्ना कोने में बैठकर सिलाई करने लगी। इसी बीच बन्दगोभी का शोरबा परोस दिया गया। पति को अभी तक ग़ायब पाकर वसिलीसा येगोरोव्ना ने पालाशा को फिर से उन्हें बुलाने भेजा। "साहब से कहना कि मेहमान उनकी राह देख रहे हैं, शोरबा ठण्डा हो जायेगा। भगवान की कृपा से कवायद कहीं भाग नहीं जायेगी ; बाद में चीख़-चिल्ला लेंगे फ़ौजियों पर।" कुछ ही देर बाद काने बूढ़े फ़ौजी के साथ कप्तान कमरे में आये। "यह क्या बात है, मेरे प्यारे?" पत्नी ने उनसे कहा। "भोजन कभी का परोसा जा चुका है मगर तुम आने का नाम नहीं लेते।"—"सुनो तो वसिलीसा येगोरोव्ना," इवान कुज़्मिच ने उत्तर दिया, "मैं अपना फ़ौजी काम कर रहा था, सैनिकों को शिक्षा दे रहा था।"—"बस, बस, रहने दो।" पत्नी ने आपत्ति की। "यह तो सिर्फ़ कहने की बात है कि तुम सैनिकों को शिक्षा देते हो। न तो वे कभी कुछ सीखेंगे और न तुम ख़ुद ही यह काम अच्छी तरह से जानते हो। घर बैठकर भगवान का नाम जपते, तो ज़्यादा अच्छा होता। प्यारे मेहमानो, मेज़ पर पधारने की कृपा करें।"

हम भोजन करने बैठे। वसिलीसा येगोरोव्ना क्षण भर को भी चुप नहीं हुईं, मुझ पर प्रश्नों की झड़ी लगाये रहीं—मेरे माता-पिता कौन हैं, जीवित हैं या नहीं, कहां रहते हैं और उनकी कितनी सम्पत्ति है? यह सुनकर कि मेरे पिता जी के तीन सौ भूदास हैं, वे कह उठीं, "सच! कितने अमीर लोग हैं इस दुनिया में! इधर, हमारे यहां तो ले-देकर यही एक पालाशा नौकरानी है और भगवान की दया से कुछ बुरी ज़िन्दगी नहीं है हमारी। बस, एक ही चिन्ता है—माशा शादी-ब्याह के लायक़ हो गयी है, लेकिन दहेज के नाम पर क्या है उसके पास? फूटी कौड़ी भी नहीं। कोई भला आदमी मिल जाये,

तो अच्छी बात है। नहीं तो बैठी रहेगी उम्र भर कुंआरी ही।" मैंने मरीया इवानोव्ना की ओर देखा – शर्म से वह बिल्कुल लाल हो गयी थी और इतना ही नहीं, आंसू की एकाध बूंद भी उसकी प्लेट में टपक पड़ी थी। मुझे उस पर तरस आया और मैंने झटपट बातचीत का विषय बदल दिया। "मैंने सुना है," किसी प्रसंग के बिना ही मैं कह उठा, "कि आपके दुर्ग पर बश्कीरी लोग हमला करनेवाले हैं।" – "भैया, किससे सुना है तुमने यह?" इवान कुज़्मिच ने पूछा। "ओरेनबुर्ग में सुनने को मिला था," मैंने जवाब दिया। "बेकार की बात है!" दुर्गपति ने कहा। "हमारे यहां एक अर्से से ऐसा कुछ सुनने में नहीं आ रहा। बश्कीरी लोग डरे हुए हैं और किर्गीज़ियों का भी हमने दिमाग़ ठीक किया हुआ है। वे हमसे नहीं उलझेंगे और अगर उलझेंगे तो उनकी ऐसी तबीयत साफ़ की जायेगी कि दस बरस तक चूं नहीं करेंगे।" – "इस तरह के ख़तरों का शिकार हो सकनेवाले दुर्ग में रहते हुए आपको डर नहीं लगता?" मैंने दुर्गपति की पत्नी को सम्बोधित करते हुए पूछा। "आदत हो गयी है, भैया," उन्होंने उत्तर दिया। "बीस साल हो गये जब हमें यहां भेजा गया था और भगवान ही जानता है कि तब इन कमबख़्त काफ़िरों से मैं कितनी डरती थी! कभी-कभी ऐसा भी होता था कि जैसे ही बन-बिलाव की उनकी टोपियां दिखाई देतीं, उनकी चीख़-चिल्लाहट सुनाई पड़ती, सच मानना, मेरा दिल उसी वक़्त बैठ जाता! मगर अब ऐसी आदत पड़ गयी है कि अगर कोई आकर यह कहता है कि ये शैतान लोग किसी बुरे इरादे से दुर्ग के आस-पास घूम रहे हैं, तो मैं अपनी जगह से टस से मस भी नहीं होती।"

"वसिलीसा येगोरोव्ना बड़ी साहसी महिला हैं," श्वाबरिन ने बड़ी शान से कहा। "इवान कुज़्मिच मेरी इस बात की गवाही दे सकते हैं।"

"अरे हां," इवान कुज़्मिच बोले, "डरनेवाली औरतों में से नहीं है यह।"

"और मरीया इवानोव्ना?" मैंने पूछा, "क्या वह भी आपकी तरह ही साहसी है?"

"कौन, माशा?" मां ने उत्तर दिया, "माशा साहसी नहीं, डरपोक है। अभी तक गोली चलने की आवाज़ नहीं सुन सकती –

सुनते ही सिर से पांव तक कांप उठती है। दो साल पहले इवान कुज़्मिच को क्या सूझी कि मेरे जन्मदिन पर तोप से सलामी दिलवा दी। मेरी यह बिटिया तो डर के मारे मरते-मरते बची। तब से हम कमबख़्त तोप को कभी नहीं चलवाते।"

हम लोग खाने की मेज़ पर से उठे। कप्तान और उनकी पत्नी सोने चले गये। मैं श्वाबरिन के साथ हो लिया और उसी की संगत में मैंने सारी शाम बितायी।

चौथा अध्याय

द्वन्द्व-युद्ध

कृपा करो, सम्मुख आ जाओ अपना खड्ग उठाये।
निश्चय, मेरा खड्ग तुम्हारे आर-पार हो जाये!

क्न्याजनिन

कुछ सप्ताह बीते और बेलोगोर्स्क के दुर्ग में मेरा जीवन न केवल बर्दाश्त करने के लायक़, बल्कि सुखद भी हो गया। दुर्गपति के यहां मुझे एक तरह से घर का आदमी ही समझा जाता था। पति-पत्नी, दोनों ही बहुत सम्माननीय व्यक्ति थे। सैनिक का बेटा होते हुए अफ़सर बन जानेवाले इवान कुज़्मिच अनपढ़ तथा सीधे-सादे, किन्तु बहुत ही ईमानदार और दयालु व्यक्ति थे। उनकी पत्नी उन्हें अपने इशारों पर नचाती थीं जो उनकी नम्र तबीयत के बिल्कुल अनुरूप था। वसिलीसा येगोरोव्ना नौकरी के काम-काज को गिरस्ती के काम-धन्धे की तरह ही मानती थीं और दुर्ग का अपने घर की भांति ही संचालन करती थीं। मरीया इवानोव्ना ने जल्द ही मुझसे घबराना-कतराना बन्द कर दिया। हमारे बीच अच्छी जान-पहचान हो गयी। मैंने उसे समझदार और संवेदनशील लड़की पाया। मुझे पता भी नहीं चला और इस भले परिवार, यहां तक कि काने लेफ़्टिनेंट इवान इग्नातिच से भी मुझे लगाव हो गया, जिसके बारे में श्वाबरिन ने यह कपोल-कल्पना की थी कि वसिलीसा येगोरोव्ना के साथ उसके अनुचित सम्बन्ध हैं, जबकि

इसमें लेशमात्र भी सचाई नहीं थी। किन्तु श्वाबरिन की बला से।

मुझे अफ़सर बना दिया गया था। मेरी ड्यूटी कोई ख़ास थकाने-वाली नहीं थी। भगवान ही जिसका मालिक था, इस तरह के इस दुर्ग में तो न कवायद होती थी, न सैनिक शिक्षण और न ही पहरा-रखवाली। दुर्गपति अपनी इच्छा से ही कभी-कभी अपने सैनिकों को कवायद करवाते थे, किन्तु अभी तक इतनी सफलता नहीं प्राप्त कर सके थे कि उन सबको दायें और बायें पहलू की पक्की जानकारी हो जाती, यद्यपि उनमें से अधिकांश दायें या बायें मुड़ने का आदेश मिलने पर इसलिये अपने ऊपर सलीब का निशान बनाते थे कि उनसे ग़लती न हो जाये। श्वाबरिन के पास कुछ फ़्रांसीसी भाषा की पुस्तकें थीं। मैं उन्हें पढ़ने लगा और मुझमें साहित्यिक रुचि जागृत होने लगी। सुबह के वक़्त मैं पढ़ता, अनुवाद करता और कभी-कभी कविता रचता। दिन का खाना लगभग हमेशा दुर्गपति के यहां ही खाता और आम तौर पर दिन का शेष भाग भी वहीं बिताता। किसी-किसी शाम को पादरी गेरासिम भी अपनी पत्नी अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना के साथ, जो इस इलाक़े में ख़बरों-अफ़वाहों का भण्डार थी, यहां आते। ज़ाहिर है कि श्वाबरिन के साथ मेरी लगभग हर दिन ही मुलाक़ात होती थी, लेकिन जैसे-जैसे वक़्त बीतता जाता था, उसकी बातचीत मेरे लिये अधिकाधिक अप्रिय होती जाती थी। दुर्गपति के परिवार के बारे में उसके हर दिन के मज़ाक़ मुझे अच्छे नहीं लगते थे, ख़ास तौर पर मरीया इवानोव्ना के सम्बन्ध में उसके तीखे-चुभते व्यंग्य। दुर्ग में ऐसे अन्य लोग नहीं थे जिनसे मिला-जुला जा सकता और मुझे इसकी चाह भी नहीं थी।

भविष्यवाणियों के बावजूद बश्कीरियों ने कोई हंगामा नहीं किया। हमारे दुर्ग के सभी ओर शान्ति का बोलबाला था। किन्तु अप्रत्याशित आपसी झगड़े से यह शान्ति भंग हो गयी।

मैं पहले कह चुका हूं कि कुछ साहित्य-सृजन करने लगा था। उस समय को देखते हुए मेरे प्रयोग कुछ बुरे नहीं थे और कुछ वर्ष बाद अलेक्सान्द्र पेत्रोविच सुमारोकोव* ने उनकी बड़ी प्रशंसा भी की।

---

* १८वीं शताब्दी (१७१८–१७७७) के एक नाटककार, कवि और रूसी क्लासिकी साहित्य के एक प्रतिनिधि। – सं०

एक दिन मैंने एक ऐसा गीत रचा जिससे मुझे काफ़ी सन्तोष हुआ। यह तो सर्वविदित है कि सर्जक कभी-कभी सलाह लेने की आड़ में हमदर्द श्रोता को ढूंढ़ा करते हैं। चुनांचे अपने गीत की साफ़ नक़ल तैयार करके मैं श्वाबरिन के पास ले गया। दुर्ग में वही एक ऐसा व्यक्ति था जो कविता का मूल्यांकन कर सकता था। छोटी-सी भूमिका बांधने के बाद मैंने जेब से अपनी नोटबुक निकाली और उसे यह रचना सुनाई –

व्यर्थ यत्न करता हूं मैं तो
अपने मन से प्यार भुलाऊं,
प्यारी माशा से कतराकर
मुक्त हृदय को अपने पाऊं!

जिन आंखों ने मुग्ध किया है,
सम्मुख रहतीं मेरे हर क्षण,
लूट लिया है चैन हृदय का,
विह्वल, विकल किया मेरा मन।

मर्म-वेदना तुमने जानी,
माशा, मुझ पर दया करो तुम,
मुझ पर जादू करनेवाली
मेरी पीड़ा, व्यथा हरो तुम।

"कहो, कैसा लगा तुम्हें मेरा यह गीत?" मैंने अधिकार के रूप में प्रशंसा की आशा करते हुए श्वाबरिन से पूछा। किन्तु मेरा दुर्भाग्य कहिये कि सामान्यतः बड़े शिष्ट श्वाबरिन ने दो टूक कह दिया कि मेरा गीत किसी काम का नहीं।

"भला क्यों?" अपनी खीझ को छिपाते हुए मैंने पूछा। "इस-लिये," उसने जवाब दिया, "कि ऐसी रचनाएं मेरे अध्यापक वसीली किरीलिच त्रेद्याकोव्स्की* को शोभा देती हैं और वे मुझे उनके प्रेम-छन्दों की अत्यधिक याद दिलाती हैं।"

इतना कहकर उसने मेरी नोटबुक ले ली और बड़ी निर्दयता से हर छन्द और शब्द की आलोचना करने और बहुत ही चुभते ढंग से

---

* १८ वीं शताब्दी के कवि और अनुवादक, रूसी छन्दशास्त्र के ज़ोरदार समर्थक, जिनकी कविताओं की उनके समकालीन अक्सर अकारण ही खिल्ली उड़ाते थे। –सं०

मेरा मज़ाक़ उड़ाने लगा। मुझसे यह बर्दाश्त नहीं हुआ, मैंने उसके हाथ से नोटबुक छीन ली और कहा कि भविष्य में कभी भी उसे अपनी रचना नहीं दिखाऊंगा। श्वाबरिन मेरी इस धमकी पर भी हंस दिया।

"देखेंगे," उसने कहा, "तुम अपना यह वचन निभाओगे या नहीं – कवियों को श्रोता की वैसे ही अपेक्षा होती है जैसे इवान कुज़्मिच को भोजन के पहले वोदका की सुराही की। और यह माशा कौन है जिसके सामने तुमने अपनी कोमल भावनायें और प्रेम-वेदना प्रकट की है? कहीं मरीया इवानोव्ना तो नहीं?"

"तुम्हें इससे कोई मतलब नहीं," मैंने नाक-भौंह सिकोड़ते हुए उत्तर दिया, "कोई भी क्यों न हो यह माशा। मुझे न तो तुम्हारी राय की ज़रूरत है और न तुम्हारे अनुमानों की।"

"ओहो! बड़े आत्माभिमानी कवि और विनयशील प्रेमी हो!" मुझे लगातार अधिकाधिक चिढ़ाते हुए श्वाबरिन कहता गया। "तुम मेरी दोस्ताना सलाह पर कान दो – अगर कामयाबी चाहते हो, तो मेरे मशविरे पर अमल करो और गीतों-कविताओं के फेर में नहीं पड़ो।"

"इसका क्या मतलब है जनाब? ज़रा समझाइये तो।"

"बड़ी ख़ुशी से। इसका मतलब है, अगर तुम यह चाहते हो कि झुटपुटा हो जाने पर माशा तुम्हारे पास आया करे, तो प्रेम-कविता के बजाय उसे झुमकों की जोड़ी भेंट करो।"

मेरा ख़ून खौल उठा।

"उसके बारे में तुम ऐसा क्यों कहते हो?" बड़ी मुश्किल से अपने ग़ुस्से पर क़ाबू पाते हुए मैंने पूछा।

"इसलिये," उसने बहुत ही क्रूर व्यंग्य करते हुए उत्तर दिया, "कि अपने अनुभव से उसके आचार-विचार और आदतों को जानता हूं।"

"तुम झूठ बोलते हो, कमीने!" मैं ग़ुस्से से पागल होकर चिल्ला उठा, "बहुत ही बेहयाई से झूठ बोलते हो।"

श्वाबरिन के चेहरे का रंग उड़ गया।

"तुम्हें इसकी क़ीमत चुकानी पड़ेगी," उसने मेरा हाथ दबाते हुए कहा। "बदला लेकर मुझे अपना कलेजा ठण्डा करना होगा।"

"जब चाहो।" मैंने ख़ुश होते हुए जवाब दिया। इस वक़्त मैं

उसके टुकड़े-टुकड़े कर देने को तैयार था।

मैं तत्काल इवान इग्नातिच की ओर रवाना हो गया और उसे हाथ में सूई लिये पाया – दुर्गपति की बीवी के कहने पर जाड़े के लिये खुमियां सुखाने को वह उन्हें धागों में पिरो रहा था।

"अरे, प्योतर अन्द्रेइच!" मुझे देखकर उसने कहा, "पधारिये, पधारिये! कैसे आना हुआ? यह बताने की कृपा कीजिये कि किस काम के सिलसिले में आये हैं?"

मैंने बहुत संक्षेप में उसे बताया कि अलेक्सेई इवानोविच के साथ मेरा झगड़ा हो गया है और चाहता हूं कि इवान इग्नातिच द्वन्द्व-युद्ध के समय मेरी ओर से मध्यस्थ रहे। इवान इग्नातिच ने अपनी एक आंख को फैलाये हुए बहुत ध्यान से मेरी बात सुनी।

"आप यह कहना चाहते हैं," उसने मुझसे कहा, "कि आप अलेक्सेई इवानोविच के बदन में तलवार घोंपना और मुझे उसका साक्षी बनाना चाहते हैं? मैं पूछने की जुर्रत कर सकता हूं, यही बात है न?"

"बिल्कुल यही।"

"सुनिये तो प्योतर अन्द्रेइच! यह क्या सूझी है आपको! अलेक्सेई इवानोविच के साथ आपकी तू-तू मैं-मैं हो गयी? तो क्या मुसीबत है! गाली-गलौज से किसी का क्या बिगड़ता है? उसने आपको गाली दी, आप उसे कोस लीजिये। वह आपकी थूथनी पर घूंसा मारता है, आप उसके कान पर। बस ऐसे ही हिसाब बराबर करके अलग हो जाइये। हम ज़रूर आपकी सुलह करवा देंगे। यह बताने की कृपा करें कि क्या अपने नज़दीकी आदमी के तन में तलवार घोंपना कोई अच्छी बात है? वैसे यह तो कुछ बुरा नहीं होगा कि आप उसके, अलेक्सेई इवानोविच के तन में तलवार घोंप दें। कोई बात नहीं, ख़ुद मुझे भी वह पसन्द नहीं है। लेकिन अगर उसने आपको बींध डाला तो? तब क्या होगा? यह बताने की कृपा करें कि तब कौन उल्लू बनेगा?"

समझदार लेफ़्टिनेंट के तर्क-वितर्क से मैं डगमगाया नहीं। मेरा इरादा ज्यों का त्यों बना रहा।

"जैसा ठीक समझें, वैसा करें," इवान इग्नातिच ने कहा। मुझे गवाह बनकर क्या लेना है? किसलिये? लोग आपस में लड़ते-

भिड़ते हैं, कौन-सी अनोखी बात है यह? भगवान की दया से मैं स्वीडों और तुर्कों से लड़ चुका हूं–सब कुछ देख चुका हूं।"

मैंने इवान इग्नातिच को मध्यस्थ का कर्तव्य समझाने की पूरी कोशिश की, मगर वह उसे किसी भी तरह से समझ नहीं पाया।

"आपकी मर्ज़ी है," उसने कहा। "अगर मुझे इस मामले में दख़ल देना ही है, तो अपनी ड्यूटी बजाते हुए इवान कुज़िमच को यह ख़बर देनी चाहिये कि दुर्ग में एक बुरी बात होनेवाली है जो सरकार के हितों के विरुद्ध है। श्रीमान दुर्गपति को क्या इसे रोकने के लिये क़दम नहीं उठाने चाहिये ..."

मैं डर गया और इवान इग्नातिच की मिन्नत-समाजत करने लगा कि वह दुर्गपति से कुछ न कहे। बड़ी मुश्किल से मैंने उसे मनाया। उसने मुझे ऐसा न करने का वचन दिया और मैं वहां से चलता बना।

सदा की भांति यह शाम भी मैंने दुर्गपति के यहां बिताई। मैंने अपने को रंग और मस्ती में ज़ाहिर करने की कोशिश की, ताकि किसी के दिल में कोई शक-शुबहा न पैदा हो और मुझसे खोद-खोदकर सवाल न पूछे जायें। किन्तु मैं अपने पर वैसा संयम नहीं कर सका, जैसे मेरी जैसी स्थिति में होनेवाले लोग कर पाते हैं और जिसकी वे लगभग हमेशा डींग हांकते हैं। इस शाम को मैं कोमल भावनाओं और भावुकता की धारा में बह रहा था। अन्य दिनों की अपेक्षा मरीया इवानोव्ना मुझे कहीं अधिक अच्छी लग रही थी। यह विचार कि शायद आज उसे आख़िरी बार देख रहा हूं, मेरी दृष्टि में उसे मर्मस्पर्शी बना रहा था। श्वाबरिन भी यहां आ गया। मैंने उसे एक ओर को ले जाकर इवान इग्नातिच के साथ हुई अपनी बातचीत बतायी। "क्या ज़रूरत है हमें मध्यस्थों की?" उसने रुखाई से कहा, "उनके बिना ही काम चला लेंगे।" हमने तय किया कि दुर्ग के निकट भूसे की टालों के पीछे अगले दिन सुबह के सात बजे द्वन्द्व-युद्ध करेंगे। सम्भवत: हम इतने मैत्रीपूर्ण ढंग से बातचीत कर रहे थे कि इवान इग्नातिच ने ख़ुशी की तरंग में हमारा भंडाफोड़ कर दिया।

"बहुत पहले से ऐसा होना चाहिये था," उसने प्रसन्न मुद्रा में मुझसे कहा, "अच्छी लड़ाई से बुरी शान्ति बेहतर है, आदर की तुलना में स्वस्थ होना ज़्यादा अच्छा है।"

"क्या, क्या कहा तुमने, इवान इग्नातिच?" दुर्गपति की बीवी ने पूछा जो दूर कोने में बैठी हुई ताश के पत्तों से नजूम लगा रही थीं, और ये शब्द सुन नहीं पाई थीं।

मेरे चेहरे पर नाराज़गी का भाव देख और अपना वादा याद करके इवान इग्नातिच परेशान हो उठा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या उत्तर दे। श्वाबरिन ने उसकी मदद की।

"इवान इग्नातिच हमारे बीच सुलह का अनुमोदन कर रहा है," उसने कहा।

"किसके साथ तुम्हारा झगड़ा हो गया था, भैया?"

"प्योतर अन्द्रेइच के साथ हमारा ख़ासा ज़ोरदार झगड़ा हो गया था।"

"वह किसलिये?"

"बहुत ही मामूली-सी बात के लिये – गीत को लेकर, वसिलीसा येगोरोव्ना।"

"झगड़े के लिये भी क्या चीज़ चुनी है! गीत!.. कैसे हुआ यह?"

"ऐसे हुआ कि प्योतर अन्द्रेइच ने कुछ ही समय पहले एक गीत रचा और आज उसे मेरे सामने गाने लगा। उधर मैंने अपना मनपसन्द गीत गाना शुरू कर दिया –

ओ बेटी कप्तान की, सुनो, बात पर कान दो,
नहीं घूमने जाओ, आधी रात को...

इसी बात पर झगड़ा हो गया। प्योतर अन्द्रेइच बिगड़ उठा, मगर बाद में उसने यह सोचा कि जो जैसे चाहे, वैसे ही गा सकता है। ऐसे मामला ख़त्म हो गया।"

श्वाबरिन की ऐसी बेहयाई से मैं लगभग आग-बबूला हो गया, लेकिन उसके इन भोंडे कटाक्षों को मेरे सिवा और कोई नहीं समझा। कम से कम इतना तो था ही कि उनकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया। गीत से कवियों की चर्चा चल पड़ी और दुर्गपति ने यह राय ज़ाहिर की कि वे सभी दुराचारी और बड़े पियक्कड़ होते हैं तथा मैत्रीपूर्ण ढंग से मुझे यह सलाह दी कि मैं कवितायें रचने के फेर में न पड़ूं क्योंकि यह

चीज़ फ़ौजी नौकरी के साथ मेल नहीं खाती और इसका कोई अच्छा नतीजा नहीं निकलेगा।

श्वाबरिन की उपस्थिति मेरे लिये असह्य थी। कुछ ही देर बाद मैंने दुर्गपति और उनके परिवार से विदा ली, घर लौटकर अपनी तलवार को अच्छी तरह से देखा, उसकी नोक को जांचा-परखा और सावेलिच को सुबह के छः बजने के फ़ौरन बाद जगा देने को कहकर बिस्तर पर चला गया।

अगले दिन मैं नियत समय पर भूसे की टालों के पीछे जाकर अपने प्रतिद्वन्द्वी की प्रतीक्षा करने लगा। शीघ्र ही वह भी आ गया। "यहां हम पकड़े जा सकते हैं," उसने मुझसे कहा, "इसलिये जल्दी करनी चाहिये।" हमने फ़ौजी कमीज़ें उतार दीं, केवल नीचे के कुरतों में रह गये और अपनी तलवारें निकाल लीं। इसी क्षण टाल के पीछे से अचानक इवान इग्नातिच और पांच अपाहिज फ़ौजी प्रकट हुए। इवान इग्नातिच ने दुर्गपति के सामने चलने को कहा। हमने बहुत दुखी मन से उसका कहना माना, सैनिकों ने हमें घेर लिया और हम इवान इग्नातिच के पीछे-पीछे, जो विजेता की तरह बड़ी अनूठी शान से क़दम बढ़ा रहा था, दुर्ग की ओर चल दिये।

हमने दुर्गपति के घर में प्रवेश किया, इवान इग्नातिच ने दरवाज़ा खोला और उत्साहपूर्वक घोषणा की, "ले आया हूं।" वसिलीसा येगोरोव्ना हमारे सामने थीं। "ओह, मेरे प्यारो! यह सब क्या है? क्यों? किसलिये? हमारे दुर्ग में हत्या की जाये? इवान कुज़्मिच, इन्हें इसी समय गिरफ़्तार करने का हुक्म दो! प्योतर अन्द्रेइच! अलेक्सेई इवानोविच! अपनी तलवारें इधर दे दो, दे दो इधर! पालाशा, इन तलवारों को कोठरी में रख आओ। प्योतर अन्द्रेइच! तुमसे मैंने यह आशा नहीं की थी। तुम्हें शर्म नहीं आती? अलेक्सेई इवानोविच की बात दूसरी है, उसे तो हत्या करने के लिये गार्ड-सेना से अलग किया गया, वह भगवान को नहीं मानता, मगर तुम्हें, तुम्हें क्या हो गया? तुम भी उसी रास्ते पर चलना चाहते हो?"

इवान कुज़्मिच अपनी पत्नी के साथ पूरी तरह सहमत थे और बार-बार यही कहते जाते थे, "सुनते हो न, वसिलीसा येगोरोव्ना बिल्कुल ठीक कह रही हैं। सेना की नियमावली के अनुसार द्वन्द्व-युद्धों

की औपचारिक रूप से मनाही है।" इसी बीच पालाशा हमारी तलवारें लेकर उन्हें कोठरी में रख आई। मैं हंसे बिना नहीं रह सका। श्वाबरिन अपनी शान बनाये रहा। "आपके प्रति अपनी पूरी आदर-भावना के बावजूद," उसने वसिलीसा येगोरोव्ना को सम्बोधित करते हुए रुखाई से कहा, "मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि व्यर्थ ही आप हम लोगों के बारे में निर्णय करने का कष्ट कर रही हैं। यह काम इवान कुज़्मिच का है, उन्हीं को करने दीजिये।" – "ओह, मेरे भैया!" दुर्गपति की पत्नी ने उसकी बात काटी, "क्या पति-पत्नी एक तन और एक ही जान नहीं होते? इवान कुज़्मिच! तुम बैठ-बैठे क्या देख रहे हो? इसी वक़्त इन्हें अलग-अलग कोनों में रोटी और पानी के राशन पर बिठा दो, ताकि इनके दिमाग़ों से बेवक़ूफ़ी का भूत निकल जाये। हां, और पादरी गेरासिम से कहो कि इन पर पूजा-पाठ का दण्ड लगा दें, ताकि ये भगवान से क्षमा मांगें और लोगों के सामने प्रायश्चित करें।"

इवान कुज़्मिच समझ नहीं पा रहे थे कि क्या करें। मरीया इवानोव्ना के चेहरे का तो बिल्कुल रंग उड़ा हुआ था। तूफ़ान धीरे-धीरे शान्त हो गया। वसिलीसा येगोरोव्ना का ग़ुस्सा ठण्डा पड़ गया और उन्होंने हम दोनों को गले मिलने और चूमने के लिये विवश किया। पालाशा ने हमें हमारी तलवारें वापस ला दीं। दुर्गपति के घर से हम दोनों स्पष्टतः सुलह किये हुए बाहर निकले। इवान इग्नातिच हमारे साथ था। "शर्म आनी चाहिये, आपको," मैंने झल्लाकर उससे कहा, "दुर्गपति के पास जाकर हमारे बारे में मुखबिरी की, जबकि मुझसे ऐसा न करने का वादा कर चुके थे?" – "भगवान जानता है, मैंने इवान कुज़्मिच को यह नहीं बताया," उसने उत्तर दिया, "वसिलीसा येगोरोव्ना ने मुझसे यह सब उगलवा लिया। उन्होंने ही दुर्गपति की जानकारी के बिना यह सारी व्यवस्था कर दी। वैसे, भला हो भगवान का कि यह मामला ऐसे ख़त्म हो गया।" इतना कहकर वह घर वापस चला गया और मैं तथा श्वाबरिन ही रह गये। "हमारा क़िस्सा ऐसे ही ख़त्म नहीं हो सकता," मैंने उससे कहा। "बेशक," श्वाबरिन ने जवाब दिया, "अपनी गुस्ताख़ी के लिये आपको अपने ख़ून से क़ीमत चुकानी पड़ेगी। किन्तु हम पर सम्भवतः नज़र रखी जायेगी। हमें कुछ

दिनों तक ढोंग करना पड़ेगा। नमस्ते!" और हम ऐसे अलग हो गये मानो कोई बात ही न हुई हो।

दुर्गपति के घर लौटकर मैं सदा की भांति मरीया इवानोव्ना के पास बैठ गया। इवान कुज़्मिच घर पर नहीं थे। वसिलीसा येगोरोव्ना घर-गिरस्ती के काम में व्यस्त थीं। हम दोनों बहुत धीमे-धीमे बातचीत कर रहे थे। मरीया इवानोव्ना कोमल शब्दों में उस परेशानी के लिये मेरी भर्त्सना कर रही थी जो श्वाबरिन के साथ मेरे झगड़े के कारण हुई थी।

"मेरी तो जान ही निकल गयी," वह बोली, "जब हमें यह बताया गया कि आप दोनों तलवारों से लड़ने का इरादा रखते हैं। मर्द कैसे अजीब होते हैं! एक शब्द के लिये, जिसे वे निश्चय ही एक सप्ताह बाद भूल जायेंगे, एक-दूसरे का गला काटने और न केवल अपने जीवन और आत्मा की ही बलि देने को तैयार हो जाते हैं, बल्कि उन लोगों के सुख-कल्याण की भी, जो... किन्तु मुझे विश्वास है कि झगड़ा आपने आरम्भ नहीं किया होगा। अवश्य अलेक्सेई इवानोविच ही दोषी होगा।"

"आप ऐसा क्यों सोचती हैं, मरीया इवानोव्ना?"

"यों ही... वह हमेशा मज़ाक़ उड़ाता रहता है! अलेक्सेई इवानोविच मुझे अच्छा नहीं लगता। फूटी आंखों नहीं सुहाता। फिर भी यह अजीब बात है कि मैं उसे अच्छी न लगूं, ऐसा मैं नहीं चाहूंगी। मेरे दिल को इससे दुख होगा।"

"मरीया इवानोव्ना, क्या ख़्याल है आपका, आप उसे अच्छी लगती हैं या नहीं?"

मरीया इवानोव्ना हकलायी और उसके चेहरे पर लाली दौड़ गयी।

"मुझे लगता है," उसने कहा, "मैं सोचती हूं कि अच्छी लगती हूं।"

"क्यों आपको ऐसा लगता है?"

"क्योंकि उसने मेरे साथ अपनी सगाई करनी चाही थी।"

"सगाई करनी चाही थी! उसने आपके साथ? कब?"

"पिछले साल। आपके आने के दो महीने पहले।"

"और आप इसके लिये तैयार नहीं हुईं?"

"जैसा कि देख रहे हैं। अलेक्सेई इवानोविच बेशक समझदार आदमी है, अच्छे घर-बार से ताल्लुक़ रखता है, पैसेवाला है। किन्तु जैसे ही यह ख़्याल आता है कि गिरजे में सबके सामने उसे चूमना पड़ेगा... तो मैं हरगिज़ ऐसा नहीं करना चाहती! दुनिया की किसी भी नेमत के लिये नहीं!"

मरीया इवानोव्ना के शब्दों से मेरी आंखें खुल गयीं, बहुत-सी बातें स्पष्ट हो गयीं। श्वाबरिन उसके बारे में हमेशा जो गन्दी बातें कहता था, मैं अब उसका कारण समझ गया था। सम्भवतः एक-दूसरे के प्रति हमारे झुकाव की ओर उसका ध्यान गया था और उसने हमारे बीच खाई पैदा करने की कोशिश की थी। हमारे झगड़े का कारण बननेवाले शब्द मुझे अब और भी घटिया लगे, जब भद्दे तथा अश्लील कटाक्षों के साथ-साथ मुझे उनमें जान-बूझकर की जानेवाली बदनामी भी साफ़ दिखाई दी। मेरे मन में दूसरों पर कीचड़ उछालनेवाले इस गुस्ताख़ को सज़ा देने की इच्छा और भी तीव्र हो गयी तथा मैं बड़ी बेसब्री से उचित अवसर पाने की राह देखने लगा।

मुझे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। अगले दिन जब मैं शोक-गीत रच रहा था और तुक के इन्तज़ार में लेखनी का सिरा कुतर रहा था, श्वाबरिन ने मेरी खिड़की पर दस्तक दी। मैंने क़लम नीचे रख दी और तलवार लेकर उसके पास बाहर चला गया। "मामले को टालने की क्या ज़रूरत है?" श्वाबरिन ने मुझसे कहा, "हम पर नज़र नहीं रखी जा रही है। नदी पर चलते हैं। वहां कोई ख़लल नहीं डाले-गा।" हम चुपचाप चल दिये। खड़ी पगडंडी से नीचे उतरकर हम नदी के बिल्कुल पास रुक गये और हमने तलवारें निकाल लीं। श्वाबरिन मुझसे ज़्यादा दक्ष था, मगर मैं अधिक ताक़तवर और साहसी। इसके अलावा श्रीमान बोप्रे ने, जो कभी सैनिक रह चुका था, मुझे पटेबाज़ी के जो कुछ दांव-पेच सिखाये थे, मैंने अब उन्हीं का उपयोग किया। श्वा-बरिन को यह आशा नहीं थी कि मेरे रूप में उसे ऐसे ज़ोरदार प्रति-द्वन्द्वी का सामना करना पड़ेगा। देर तक हम एक-दूसरे को किसी तरह की हानि नहीं पहुंचा सके और आख़िर यह देखकर कि श्वाबरिन की ताक़त जवाब देती जा रही है, मैं अधिक दिलेरी से उस पर वार करने

लगा और उसे लगभग नदी तक पीछे हटा दिया। सहसा मुझे बहुत ऊंची आवाज़ में अपना नाम सुनाई दिया। मैंने मुड़कर देखा, तो मुझे सावेलिच पहाड़ी पगडंडी से नीचे भागा आता नज़र आया... इसी समय दायें कंधे के नीचे मुझे अपनी छाती में ज़ोर का दर्द महसूस हुआ। मैं गिर पड़ा और बेहोश हो गया।

पांचवां अध्याय

प्रेम

अभी उमरिया छोटी है सुन्दर युवती!
अभी न सोचो, अभी न सोचो शादी की,
पूछो अपने बापू से, तुम अम्मां से ,
बापू से, अम्मां से, रिश्तेदारों से,
अक्ल-समझ तुम थोरी-सी जानो, समझो,
समझ-बूझ भी कुछ दहेज संचित कर लो।

लोक गीत

मुझसे अच्छा मिला अगर कोई तुमको, भूल मुझे तुम जाओगी,
बुरा मिला यदि मुझसे कोई, दिल में मुझे बसाओगी।

लोक गीत

होश आने पर कुछ समय तक मैं यह याद नहीं कर सका और समझ नहीं पाया कि मेरे साथ हुआ क्या था। मैं एक अनजाने-अपरिचित कमरे में लेटा हुआ था और बड़ी कमज़ोरी महसूस कर रहा था। हाथ में मोमबत्ती लिये हुए सावेलिच मेरे सामने खड़ा था। कोई मेरी छाती और कंधे पर बंधी हुई पट्टी को बड़ी सावधानी से खोल रहा था। धीरे-धीरे मेरे विचारों में स्पष्टता आने लगी। मुझे अपना द्वन्द्व-युद्ध याद हो आया और यह भांप गया कि मैं घायल हो गया था। इसी क्षण चूं-चीं करता हुआ दरवाज़ा खुला। "कहो, कैसा है?" किसी ने फुसफुसाकर पूछा और इस आवाज़ से मेरे बदन में झुरझुरी-सी दौड़

गयी। "उसी, पहले जैसी हालत में ही," सावेलिच ने गहरी उसांस छोड़ते हुए कहा, "पांच दिन हो गये, वही मूर्च्छा बनी हुई है।" मैंने करवट लेनी चाही, किन्तु ऐसा नहीं कर सका। "मैं कहां हूं? यहां कौन है?" मैंने बड़ी मुश्किल से पूछा। मरीया इवानोव्ना मेरे पलंग के पास आई और मेरी ओर झुककर उसने पूछा, "कैसी तबीयत है आपकी?" – "भगवान की कृपा है," मैंने बड़ी क्षीण-सी आवाज़ में जवाब दिया। "यह आप हैं मरीया इवानोव्ना? मुझे बताइये..." मुझमें अपनी बात जारी रखने की शक्ति नहीं थी और मैं चुप हो गया। सावेलिच ने हर्षोच्छ्वास छोड़ा। उसके चेहरे पर ख़ुशी झलक उठी। "होश आ गया! होश आ गया!" वह दोहरा रहा था। "भला हो भगवान तुम्हारा! भैया, प्योतर अन्द्रेइच! तुमने तो मुझे डरा ही दिया था! मामूली बात है क्या? पांच दिन तक बेहोशी!.." मरीया इवानोव्ना ने उसे टोक दिया। "उसके साथ ज़्यादा बात नहीं करो, सावेलिच," वह बोली। "वह अभी कमज़ोर है।" वह धीरे से दरवाज़ा बन्द करके बाहर चली गयी। मेरे विचारों में हलचल जारी थी। तो मैं दुर्गपति के घर में था। मरीया इवानोव्ना मेरा हालचाल जानने के लिये आयी थी। मैंने सावेलिच से कुछ प्रश्न पूछने चाहे, किन्तु बुड्ढे ने सिर हिला दिया और कानों में उंगलियां ठूंस लीं। मैंने निराशा से आंखें मूंद लीं और जल्द ही नींद में खो गया।

आंख खुलने पर मैंने सावेलिच को पुकारा और उसकी जगह मरीया इवानोव्ना को अपने सामने पाया। अपनी मृदुल आवाज़ में उसने मेरा अभिवादन किया। इस क्षण मैं जिस मधुर भावना से ओतप्रोत हो गया, उसे व्यक्त नहीं कर सकता। मैंने उसका हाथ पकड़कर अपने होंठों से लगा लिया और उसे ख़ुशी के आंसुओं से तर कर दिया। माशा ने अपना हाथ छुड़ाया नहीं... अचानक उसके होंठों ने मेरे गालों को छुआ और मुझे उनके गर्म और ताज़ा चुम्बन की अनुभूति हुई। मेरे बदन में बिजली-सी दौड़ गई। "मेरी प्यारी, मेरी अच्छी मरीया इवानोव्ना," मैंने उससे कहा, "मेरे सुख के लिये मेरी पत्नी बनना स्वीकार करो।" वह सम्भली। "भगवान के लिये शान्त हो जाइये," अपना हाथ छुड़ाते हुए उसने कहा। "आप अभी ख़तरे से बाहर नहीं हुए हैं, घाव खुल सकता है। और कुछ नहीं तो मेरी ख़ातिर ही अपनी चिन्ता की-

जिये।" इतना कहकर और मुझे ख़ुशी से मदहोश-सा बनाकर वह चली गयी। ख़ुशी ने मुझे नई ज़िन्दगी दे दी। वह मेरी हो जायेगी! वह मुझे प्यार करती है! मेरा रोम-रोम इस विचार से पुलकित हो उठा।

इस क्षण से मेरी तबीयत लगातार बेहतर होने लगी। रेजिमेंट का नाई मेरी चिकित्सा कर रहा था, क्योंकि दुर्ग में कोई दूसरा चिकित्सक नहीं था और, भला हो भगवान का, वह मुझ पर अपने तजरबे नहीं करता था। जवानी और प्रकृति ने मेरे जल्दी से स्वस्थ होने में योग दिया। दुर्गपति का सारा परिवार मेरी देख-भाल करता था। मरीया इवानोव्ना तो मेरे बिस्तर के पास से हटती ही नहीं थी। ज़ाहिर है कि पहला अच्छा अवसर मिलते ही मैंने अपने प्रेम-निवेदन की बात चलाई, जो अधूरी रह गयी थी और मरीया इवानोव्ना ने बड़े सब्र से उसे सुना। उसने किसी प्रकार की झेंप-झिझक के बिना मेरे प्रति अपने हृदय के झुकाव को स्वीकार कर लिया और कहा कि उसके माता-पिता तो उसके सुख-सौभाग्य से ख़ुश होंगे। "लेकिन तुम अच्छी तरह से यह सोच लो," उसने इतना और जोड़ दिया, "कि तुम्हारे माता-पिता की ओर से तो कोई बाधा नहीं होगी?"

मैं सोच में पड़ गया। मां के हृदय की कोमलता के बारे में तो मुझे कोई सन्देह नहीं था, किन्तु पिता जी के मिज़ाज और आचार-विचार को जानते हुए मैंने यह अनुभव किया कि मेरा प्यार उनके हृदय को बहुत नहीं छुएगा और वे इसे एक जवान आदमी की सनक मानेंगे। मैंने सच्चे मन से मरीया इवानोव्ना के सामने इस बात को स्वीकार कर लिया और फिर भी यह तय किया कि पिता जी को यथासम्भव बहुत अच्छे ढंग से पत्र लिखूंगा और उनसे आशीर्वाद देने को कहूंगा। मैंने वह पत्र मरीया इवानोव्ना को दिखाया। उसे वह इतना प्रभावपूर्ण और मर्मस्पर्शी लगा कि सफलता का तनिक भी सन्देह नहीं रहा तथा जवानी और प्रेम की पूरी विश्वसनीयता के साथ उसने अपने को अपने मन की कोमल भावनाओं के अधीन कर दिया।

स्वस्थ होने के पहले ही दिन मैंने श्वाबरिन से सुलह कर ली। द्वन्द्व-युद्ध के लिये मुझे झिड़कते हुए इवान कुज़्मिच ने मुझसे कहा, "ओह, प्योतर अन्द्रेइच! वैसे तो मुझे तुम्हें हिरासत में लेने का आदेश

12—697

देना चाहिये था, किन्तु तुम्हें तो इसके बिना ही काफ़ी सज़ा मिल गयी है। अलेक्सेई इवानोविच तो अनाज की खत्ती में पहरे में बैठा है और उसकी तलवार वसिलीसा येगोरोव्ना ने ताले में बन्द कर रखी है। अच्छा है कि वहां बैठकर अपने किये पर सोचे-विचारे और पछताये।"
मैं इतना अधिक ख़ुश था कि मेरे मन में किसी के लिये मैल नहीं रह सकता था, इसलिये मैं श्वाबरिन को क्षमा कर देने का अनुरोध करने लगा और दयालु दुर्गपति ने अपनी पत्नी की अनुमति लेकर उसे छोड़ देने का निर्णय किया। श्वाबरिन मेरे पास आया, जो कुछ हुआ था, उसने उसके लिये बड़ा अफ़सोस ज़ाहिर किया, यह माना कि सारा दोष उसी का है और मुझसे यह प्रार्थना की कि जो कुछ हुआ था, मैं उसे भूल जाऊं। स्वभाव से ही किसी के प्रति वैर-भाव न रखने के कारण मैंने हमारे बीच हुए झगड़े और उसके द्वारा किये गये घाव के लिये उसे सच्चे मन से क्षमा कर दिया। उसके झूठे लांछनों को मैंने उसके अहंभाव को लगी ठेस और ठुकराये गये प्यार की खीझ माना और बड़ी उदारता से अपने इस अभागे प्रतिद्वन्द्वी को माफ़ कर दिया।

जल्द ही मैं बिल्कुल स्वस्थ होकर अपने क्वार्टर में चला गया। मैं बड़ी बेचैनी-बेसब्री से पिता जी को भेजे गये पत्र के उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था, किसी तरह की आशा नहीं रखता था और मन में पहले से ही आनेवाले निराशा के विचारों को दबाने का प्रयास करता था। वसिलीसा येगोरोव्ना और उनके पति से मैंने अपने मन की बात नहीं कही थी, किन्तु मेरे प्रस्ताव से उन्हें आश्चर्य नहीं होना चाहिये था। कारण कि न तो मरीया इवानोव्ना और न मैं ही उनसे अपनी भावनाओं को छिपाता था और हमें पहले से ही इस बात का यक़ीन था कि वे सहमत होंगे।

आख़िर एक सुबह को सावेलिच ख़त लिये हुए मेरे पास आया। मैंने धड़कते दिल से उसे झपट लिया। उस पर पता पिता जी के हाथ से लिखा हुआ था। इसी चीज़ ने मुझे किसी महत्त्वपूर्ण बात के लिये तैयार कर दिया। कारण कि सामान्यतः मां ही मुझे पत्र लिखती थीं और पिता जी अन्त में कुछ पंक्तियां जोड़ देते थे। देर तक मैंने लिफ़ाफ़ा नहीं खोला और औपचारिकतापूर्ण इस पते को पढ़ता रहा – "मेरे बेटे प्योतर अन्द्रेइच ग्रिनेव को, ओरेनबुर्ग गुबेर्निया, बेलोगोर्स्क दुर्ग"।

मैंने लिखावट से पिता जी के मूड का अनुमान लगाने का यत्न किया। आख़िर मैंने पत्र खोला और पहली पंक्तियां पढ़ते ही यह समझ गया कि सब कुछ चौपट हो गया। पत्र में यह लिखा था –

"मेरे बेटे प्योतर! तुम्हारा वह पत्र, जिसमें तुमने मिरोनोव की बेटी मरीया इवानोव्ना से विवाह करने के लिये हमारा, माता-पिता का आशीर्वाद और सहमति मांगी है, इस मास की १५वीं तिथि को हमें प्राप्त हुआ और मैं न केवल तुम्हें अपना आशीर्वाद और सहमति देने को तैयार नहीं हूं, बल्कि तुम तक पहुंचना और तुम्हारी शैतानियों के लिये तुम्हारे अफ़सरी के पद के बावजूद एक छोकरे की तरह तुम्हारी अच्छी तरह से ख़बर लेना चाहता हूं, क्योंकि तुमने यह दिखा दिया है कि अभी उस तलवार को अपने पास रखने के योग्य नहीं हुए हो जो तुम्हें मातृभूमि की रक्षा के लिये सौंपी गयी है, न कि तुम्हारे ही जैसे किसी ऊधमी के साथ द्वन्द्व-युद्ध करने के लिये। इसी समय अन्द्रेई कार्लोविच को लिखूंगा और यह अनुरोध करूंगा कि तुम्हें बेलोगोर्स्क के दुर्ग से कहीं दूर भेज दे, जहां तुम्हारे सिर से यह भूत उतर जाये। तुम्हारे द्वन्द्व-युद्ध के बारे में, और यह जानकर कि तुम घायल हो गये हो, तुम्हारी मां दुख के कारण बीमार हो गयी और अब बिस्तर थामे है। जाने तुम्हारा क्या बनेगा? भगवान से प्रार्थना करता हूं कि तुम सुधर जाओ, यद्यपि उसकी अपार कृपा की आशा करने का भी साहस नहीं करता हूं।

तुम्हारा पिता अ० ग०"

पत्र को पढ़कर मेरे मन में विभिन्न भावनायें आईं। कठोर वाक्यों से, जिनके मामले में पिता जी ने बड़ी उदारता दिखाई थी, मेरे दिल को गहरी ठेस लगी। मरीया इवानोव्ना की उन्होंने जिस उपेक्षा से चर्चा की थी, वह मुझे न केवल भद्दी, बल्कि अनुचित भी लगी। बेलोगोर्स्क दुर्ग से दूसरी जगह पर भेज दिये जाने के विचार से मैं दहल उठा, किन्तु सबसे अधिक तो मुझे मां की बीमारी की ख़बर पाकर दुख हुआ। इस बात के बारे में तनिक भी सन्देह न करते हुए कि मेरे माता-पिता को मेरे इस द्वन्द्व-युद्ध की ख़बर सावेलिच के ज़रिये ही मिली है, मुझे उस पर ग़ुस्सा आ रहा था। अपने छोटे से कमरे में इधर-उधर चक्कर काटते हुए मैं उसके सामने रुका और रौद्र दृष्टि से उसकी

ओर देखते हुए बोला, "लगता है, तुम्हें इसी से सन्तोष नहीं हुआ कि तुम्हारे कारण मैं घायल हो गया और एक महीने तक मौत के दरवाज़े पर दस्तक देता रहा। तुम मेरी मां की भी जान लेना चाहते हो।" सावेलिच पर तो मानो वज्रपात हुआ। "यह क्या कह रहे हो तुम, छोटे मालिक?" उसने लगभग सिसकते हुए कहा। "मैं कारण हूं तुम्हारे घायल होने का! भगवान जानता है, मैं तो इसीलिये तुम्हारे पास भागा हुआ आ रहा था कि अपनी छाती सामने करके तुम्हें अलेक्सेई इवानोविच की तलवार से बचा लूं! कमबख़्त बुढ़ापा मेरे आड़े आ गया। और तुम्हारी माता जी के साथ मैंने क्या बुराई की है?"—"क्या बुराई की है तुमने?" मैंने प्रश्न करते हुए उत्तर दिया। "किसने तुम्हें मेरी चुगली लिखने को कहा था? क्या तुम्हें मेरी जासूसी करने के लिये मुझ पर तैनात किया गया है?"—"मैंने? मैंने तुम्हारे बारे में चुगली लिखी?" सावेलिच ने आंसू बहाते हुए कहा। "हे मेरे ईश्वर! तो कृपया वह पढ़ लो जो बड़े मालिक ने मुझे लिखा है और तुम जान जाओगे कि कैसी चुगली की है मैंने तुम्हारी।" इतना कहकर उसने जेब से पत्र निकाला और मैंने उसमें यह पढ़ा—

"तुम्हें, बुड्ढे कुत्ते को शर्म आनी चाहिये कि मेरी कड़ी हिदायत के बावजूद तुमने मेरे बेटे प्योतर अन्द्रेइच के बारे में कुछ नहीं लिखा और पराये लोगों को मुझे उसकी शरारतों की सूचना देने को विवश होना पड़ा है। तो इस तरह तुम अपना कर्तव्य निभा रहे हो और अपने मालिक की इच्छा पूरी कर रहे हो? तुम्हें, बुड्ढे कुत्ते को सचाई छिपाने और नौजवान के साथ मिली-भगत करने के लिये सूअरों की देख-भाल के काम में लगाऊंगा। पत्र मिलते ही तुम्हें फ़ौरन यह लिखने का आदेश देता हूं कि अब उसका स्वास्थ्य कैसा है, जिसके बारे में मुझे लिखा गया है कि सुधर रहा है। हां, और यह भी लिखना कि घाव किस जगह पर है तथा उसका ढंग से इलाज हो रहा है या नहीं।"

यह स्पष्ट था कि सावेलिच मेरे सामने दोषी नहीं था और मैंने व्यर्थ ही ताने-बोलियों से तथा सन्देह प्रकट करके उसका अपमान किया था। मैंने उससे क्षमा मांगी, किन्तु बूढ़े को इससे चैन नहीं हुआ। "कैसे दिन देखने पड़े हैं मुझे," वह दोहराता जा रहा था, "क्या-क्या इनाम मिले हैं मुझे अपने मालिकों से! मैं ही बुड्ढा कुत्ता हूं, मैं

ही सूअर-पालक हूं, मैं ही तुम्हारे घाव का कारण हूं? नहीं, मेरे छोटे मालिक प्योतर अन्द्रेइच! मैं नहीं, वह कमबख़्त फ़्रांसीसी ही दोषी है इस सबके लिये – उसी ने तुम्हें लोहे की सलाखें घोंपना और ज़मीन पर पांव पटकना सिखाया है मानो सलाखें घोंपने और पांव पटकने की बदौलत दुष्ट आदमी से बचा जा सकता है! बड़ी ज़रूरत थी उस फ़्रांसीसी को नौकर रखने और उस पर बेकार पैसा ख़र्च करने की!"

तो पिता जी को मेरी हरकत की ख़बर देने की तकलीफ़ किसने उठाई? जनरल ने? किन्तु लगता है कि उसे तो मेरी बहुत फ़िक्र नहीं थी। इवान कुज़्मिच को मेरे द्वन्द्व-युद्ध की सूचना देने की आवश्यकता अनुभव नहीं हुई होगी। मैं अनुमानों में खो गया। श्वाबरिन पर ही मुझे सन्देह हुआ। केवल उसे ही इस चुगली से लाभ हो सकता था, क्योंकि इसके फलस्वरूप मुझे इस दुर्ग से किसी दूसरी जगह भेजा जा सकता था और दुर्गपति के परिवार से मेरा नाता टूट सकता था। मैं इस सब के बारे में मरीया इवानोव्ना को बताने गया। उसके साथ ड्योढ़ी में मेरी भेंट हुई। "आपको क्या हुआ है?" मुझे देखकर उसने कहा, "कितना पीला चेहरा है आपका!" – "सब कुछ ख़त्म हो गया!" मैंने जवाब दिया और उसे पिता जी का पत्र दे दिया। अब उसके चेहरे का रंग उड़ गया। पत्र पढ़कर उसने कांपते हाथ से उसे मुझे लौटा दिया और कांपती आवाज़ में कहा, "लगता है कि मेरी क़िस्मत में यह नहीं लिखा है... आपके माता-पिता मुझे अपने परिवार में नहीं लेना चाहते। भगवान को जो मंज़ूर है, वही हो! भगवान हमसे ज़्यादा अच्छी तरह यह जानता है कि हमारे लिये क्या अच्छा है। हो ही क्या सकता है प्योतर अन्द्रेइच, कम से कम आप सुखी रहें..." – "यह नहीं होगा!" उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुए मैं चिल्ला उठा, "तुम मुझे प्यार करती हो, मैं हर चीज़ के लिये तैयार हूं। चलो, हम तुम्हारे माता-पिता के पांव पकड़ लेते हैं, वे सीधे-सादे लोग हैं, घमण्ड से उनके दिल कठोर नहीं हुए हैं... वे हमें आशीर्वाद दे देंगे, हम शादी कर लेंगे... बाद में, मुझे यक़ीन है कि कुछ वक़्त बीतने पर हम मेरे पिता जी को भी मना लेंगे, मां हमारा पक्ष लेंगी और पिता जी मुझे क्षमा कर देंगे..." – "नहीं, प्योतर अन्द्रेइच," माशा ने जवाब दिया, "तुम्हारे माता-पिता के आशीर्वाद के बिना मैं तुमसे

शादी नहीं करूंगी। उनके आशीर्वाद के बिना तुम सुखी नहीं हो सकोगे। भगवान जैसे चाहता है, हम वैसा ही मान लेते हैं। अगर भाग्य में लिखी पत्नी मिल जाये या किसी दूसरी को प्यार करने लगो, तो भगवान तुम्हारा भला करे। मैं तुम दोनों के लिये प्रार्थना करूंगी..." इतना कहकर वह रो पड़ी और चली गयी। मैंने उसके पीछे-पीछे कमरे में जाना चाहा, किन्तु यह अनुभव किया कि अपनी भावनाओं को वश में करने में असमर्थ हूं और इसलिये अपने यहां लौट आया।

मैं विचारों में गहरा डूबा हुआ था कि अचानक सावेलिच ने आकर मेरे ख़्यालों में खलल डाल दिया। "तो यह लो मालिक," उसने लिखा हुआ एक काग़ज़ मुझे देते हुए कहा, "इसे पढ़कर यह जान लो कि मैं अपने मालिक की निन्दा-चुगली करता हूं और बेटे तथा पिता के बीच झगड़ा करवाना चाहता हूं या नहीं।" मैंने उसके हाथ से काग़ज़ ले लिया। यह उसके द्वारा प्राप्त पत्र का उत्तर था। मैं उसे ज्यों का त्यों यहां दे रहा हूं –

"माननीय अन्द्रेई पेत्रोविच,
मेरे कृपालु स्वामी!

आपका कृपापत्र मुझे मिला जिसमें आपने मुझ पर, अपने इस दास पर क्रोध प्रकट किया है कि आपका, अपने स्वामी का आदेश न मानने के लिये मुझे शर्म आनी चाहिये। किन्तु मैं, बूढ़ा कुत्ता नहीं, आपका सच्चा सेवक हूं, स्वामी का आदेश मानता हूं, सदा तन-मन से आपकी सेवा करता रहा हूं और ऐसा करते हुए ही मेरे बाल सफ़ेद हो गये हैं। प्योतर अन्द्रेइच के घाव के बारे में मैंने आपको कुछ नहीं लिखा, ताकि व्यर्थ आपको न डराऊं, अब यह सुनता हूं कि हमारी स्वामिनी, हमारी माता जी अव्दोत्या वसील्येव्ना घबराहट के कारण बीमार पड़ गयी हैं और उनके स्वास्थ्य के लिये मैं भगवान का नाम जपूंगा। प्योतर अन्द्रेइच को दायें कंधे के नीचे छाती में हड्डी के बिल्कुल नीचे घाव लगा था, डेढ़ इंच गहरा था, वह दुर्गपति के घर में रहा, जहां हम उसे नदी-तट से लाये थे और स्थानीय नाई स्तेपान परामोनोव उसकी चिकित्सा करता रहा। भगवान की कृपा से प्योतर अन्द्रेइच अब स्वस्थ है और उसके बारे में अच्छा लिखने के सिवा और कुछ

लिख ही नहीं सकता। सुना है, उसके अफ़सर उससे ख़ुश हैं और वसिलीसा येगोरोव्ना उसे बेटे की तरह मानती हैं। उसके साथ अगर ऐसी अजीब बात हो गयी है, तो यह जवानी के लिये कोई अपमान नहीं – चार टांगें होने पर भी घोड़ा ठोकर खा जाता है। आपने यह लिखने की भी कृपा की है कि मुझे सूअर चराने भेजेंगे, तो यह आप स्वामी जैसा चाहें, कर सकते हैं। दासवत आपको शीश नवाता हूं।

आपका निष्ठावान दास
अर्ख़ीप सावेल्येव"।

इस भले बूढ़े का पत्र पढ़ते हुए मैं कई बार मुस्कराये बिना न रह सका। पिता जी के पत्र का उत्तर देने लायक़ मेरी स्थिति नहीं थी और माता जी के मन को शान्त करने के लिये मुझे सावेलिच का पत्र काफ़ी प्रतीत हुआ।

इस दिन से मेरी स्थिति में परिवर्तन हो गया। मरीया इवानोव्ना मेरे साथ लगभग नहीं बोलती थी और हर प्रकार मुझसे कन्नी काटने का प्रयत्न करती थी। दुर्गपति के घर का मेरे लिये कोई आकर्षण नहीं रहा। धीरे-धीरे मुझे अपने घर में अकेले बैठने की आदत हो गयी। वसिलीसा येगोरोव्ना नें शुरू में ऐसा करने के लिये मुझे कुछ बुरा-भला कहा, किन्तु मेरी ज़िद्द देखकर उन्होंने मुझे मेरे हाल पर छोड़ दिया। केवल फ़ौजी काम-काज के सिलसिले में ही मैं इवान कुज़िमच के पास यदा-कदा जाता। श्वाबरिन से कभी-कभार और मन मारकर ही मिलता, क्योंकि उसमें अपने प्रति छिपे हुए शत्रुभाव को अनुभव करता जिससे मेरे सन्देहों की पुष्टि होती। मेरा जीवन असह्य हो उठा। मैं उदासीभरे विचारों में डूबा रहने लगा जो निठल्लेपन और एकाकीपन का फल होते हैं। एकाकीपन में मेरा प्यार दहक उठा और मेरे लिये अधिकाधिक बोझल बनने लगा। पुस्तकें पढ़ने और कुछ रचने में मेरी रुचि जाती रही। मेरे मन पर गहरी निराशा छा गयी। मुझे डर लगता कि या तो मैं पागल हो जाऊंगा या ऐय्याशी में डूब जाऊंगा। मेरे पूरे जीवन पर बहुत महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालनेवाली अप्रत्याशित घटनाओं ने सहसा मेरी आत्मा को बहुत ज़ोरदार और हितकर झटका दिया।

छठा अध्याय

पुगाचोव का दल-बल

तुम सुनो ध्यान से युवा लोग
हम बूढ़े तुम्हें सुनायें जो।

गीत

इससे पहले कि मैं उन अजीब घटनाओं का वर्णन करूं, जिनका मैं साक्षी बना, मुझे उस स्थिति के बारे में कुछ शब्द कहने होंगे जो १७७३ के अन्त में ओरेनबुर्ग के गुबेर्निया में थी।

इस विशाल और समृद्ध गुबेर्निया में अनेक अर्ध-सभ्य जातियां रहती थीं जिन्होंने कुछ ही समय पहले रूसी ज़ारों की सत्ता स्वीकार की थी। उनके जब-तब विद्रोह करने, क़ानून-क़ायदे और सभ्य जीवन के अभ्यस्त न हो पाने तथा उनकी सनकों और क्रूरता के कारण सरकार को उन्हें अपने अधीन रखने के लिये उन पर लगातार कड़ी नज़र रखनी पड़ती थी। सुविधाजनक माने जानेवाले स्थानों पर, जहां एक ज़माने से याइक नदी-तटों पर बसे हुए अधिकतर कज़्ज़ाक लोग ही रहते थे, गढ़-गढ़ियां बनाई गयी थीं। किन्तु यही याइक कज़्ज़ाक, जिन पर इस सारे क्षेत्र की शान्ति और सुरक्षा को बनाये रखने की ज़िम्मेदारी थी, पिछलें कुछ समय से सरकार के लिये बेचैनी का कारण बन गये थे, ख़तरनाक लोग हो गये थे। १७७२ में उनके प्रमुख नगर में विद्रोह हुआ। इसका कारण वे कठोर क़दम थे, जो मेजर-जनरल त्रा-उबेन्बेर्ग ने फ़ौजों को पूरी तरह अपने अधीन करने के लिये उठाये थे। इसका नतीजा हुआ था त्राउबेन्बेर्ग की निर्दयतापूर्ण हत्या, प्रशासन में मनमाने परिवर्तन। अन्त में बड़ा दमन-चक्र चलाकर तथा कड़ी सज़ायें देकर इस विद्रोह को कुचला गया।

ये सारी घटनायें मेरे बेलोगोर्स्क के दुर्ग में आने के कुछ समय पहले घटीं। सब कुछ शान्त हो चुका था या कम से कम ऐसा प्रतीत होता था। अधिकारियों ने मक्कार विद्रोहियों के बनावटी पश्चाताप पर बहुत आसानी से विश्वास कर लिया जो अपने दिलों में बदले

की आग छिपाये हुए फिर से गड़बड़ शुरू करने के लिये अच्छे मौक़े के इन्तज़ार में थे।

तो मैं अपनी कहानी की ओर लौटता हूं।

एक शाम को (यह १७७३ के अक्तूबर महीने के आरम्भ की बात है) मैं घर में अकेला बैठा हुआ पतझर की हवा की चीख़-चिल्लाहट सुन रहा था और खिड़की में से चांद के पास से भागे जा रहे बादलों को देख रहा था। इसी समय दुर्गपति ने मुझे बुलवा भेजा। मैं फ़ौरन गया। दुर्गपति के यहां श्वाबरिन, इवान इग्नातिच और कज़्ज़ाक सार्जेंट पहले से ही मौजूद थे। कमरे में न तो वसिलीसा येगोरोव्ना थीं और न ही मरीया इवानोव्ना। दुर्गपति ने कुछ परेशानी ज़ाहिर करते हुए मेरा अभिवादन किया। उन्होंने दरवाज़े को ताला लगाकर बन्द किया, सार्जेंट के सिवा, जो दरवाज़े के पास खड़ा था, हम सभी को बिठाया और जेब से एक काग़ज़ निकालकर हम सभी को सम्बोधित करते हुए कहा, "महानुभावो, बड़ा महत्त्वपूर्ण समाचार है! जनरल साहब ने जो लिखा है, उसे सुनिये।" इतना कहकर उन्होंने चश्मा चढ़ा लिया और यह पढ़ा –

"बेलोगोर्स्क के दुर्गपति श्रीमान कप्तान मिरोनोव को।

सर्वथा गुप्त।

इसके द्वारा आपको सूचित करता हूं कि जेल से भाग जानेवाले दोन तटवर्ती कज़्ज़ाक और विधर्मी येमेल्यान पुगाचोव ने, जिसने दिवंगत सम्राट पीटर तृतीय का नाम धारण करने की अक्षम्य धृष्ठता की है, चोर-उचक्कों का एक गिरोह जमा करके याइक गांवों में गड़बड़ी पैदा की है, कुछ दुर्गों पर अधिकार करके उन्हें नष्ट कर दिया है, सभी जगह लूट-मार और हत्यायें की हैं। अतः यह पत्र पाते ही आप, श्रीमान कप्तान, उल्लिखित दुष्ट और झूठे दावेदार के विरुद्ध आवश्यक उपाय करें और यदि वह आपके अधीन दुर्ग पर आक्रमण करे, तो संभव होने पर उसे पूर्णतः नष्ट कर डालें।"

"आवश्यक उपाय करें!" दुर्गपति ने चश्मा उतारते और काग़ज़ को तह करते हुए कहा। "यह कह देना बड़ा आसान है। वह दुष्ट तो स्पष्टतः काफ़ी शक्तिशाली है और हमारे पास, कज़्ज़ाकों को

छोड़कर, जिन पर बहुत भरोसा नहीं किया जा सकता, तुम्हारी भर्त्सना नहीं कर रहा हूं, मक्सीमिच (सार्जेंट व्यंग्यपूर्वक मुस्करा दिया), कुल एक सौ तीस सैनिक हैं। किन्तु हमारे सामने और कोई चारा नहीं है, महानुभावो! अच्छी तरह अपनी ड्यूटी बजायें, सन्तरी और रात के पहरेदार तैनात कर दें। आक्रमण होने पर फाटक बन्द कर लें और सैनिकों को मैदान में ले आयें। मक्सीमिच, तुम अपने कज़्ज़ाकों पर कड़ी नज़र रखो। तोप की ख़ूब जांच-पड़ताल करके अच्छी तरह से साफ़ करवा लिया जाये। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि इस सारी चीज़ को गुप्त रखा जाये, ताकि दुर्ग में किसी को भी समय से पहले इसकी कानों कान खबर न मिले।"

ऐसे आदेश देने के बाद इवान कुज़्मिच ने हम लोगों से जाने को कहा। हमने जो कुछ सुना था, मैं उसी पर विचार करता हुआ श्वाबरिन के साथ बाहर निकला। "तुम्हारे ख़्याल में क्या अन्त होगा इसका?" मैंने उससे पूछा। "भगवान जाने," उसने उत्तर दिया, "देखा जायेगा। फ़िलहाल तो कोई ख़ास बात नज़र नहीं आती। अगर ..." इतना कहकर वह सोच में डूब गया और खोया-खोया सा एक फ़्रांसीसी प्रेम-गीत की धुन पर सीटी बजाने लगा।

हमारी पूरी सावधानी के बावजूद पुगाचोव के प्रकट होने की बात सारे दुर्ग में फैल गयी। इवान कुज़्मिच अपनी पत्नी का यद्यपि बहुत आदर करते थे, तथापि फ़ौजी नौकरी के सिलसिले में उन्हें सौंपे गये राज़ को किसी भी हालत में अपनी बीवी को नहीं बताते थे। जनरल का ख़त मिलने पर उन्होंने बड़ी चालाकी से यह कहकर पत्नी को पादरी गेरासिम के यहां भेज दिया मानो पादरी के पास ओरेनबुर्ग से कोई अनूठी ख़बर आयी है जिसे वह बड़े राज़ की तरह छिपाये हैं। वसिलीसा येगोरोव्ना उसी समय पादरी की बीवी के पास जाने को तैयार हो गयीं और इवान कुज़्मिच की सलाह के मुताबिक़ माशा को भी अपने साथ ले गयीं, ताकि उसे अकेली रहने पर ऊब महसूस न हो।

घर का एकच्छत्र स्वामी रह जाने पर इवान कुज़्मिच ने हम सभी को फ़ौरन बुलवा भेजा और पालाश्का को कोठरी में बन्द कर दिया, ताकि वह हमारी बातचीत न सुन सके।

वसिलीसा येगोरोव्ना पादरी की बीवी से कोई भी ख़बर हासिल किये बिना घर लौटीं और उन्हें पता चला कि उनकी अनुपस्थिति में इवान कुज़िमच के यहां बैठक हुई तथा पालाश्का को ताला लगाकर कोठरी में बन्द कर दिया गया था। उन्हें फ़ौरन यह सूझ गया कि पति ने उन्हें धोखा दिया है और वे कुरेद-कुरेदकर उनसे सवाल पूछने लगीं। किन्तु इवान कुज़िमच ने अपने को पत्नी के ऐसे प्रश्न-प्रहार के लिये तैयार कर लिया था। तनिक भी घबराये बिना उन्होंने बड़ी प्रफुल्लता से अपनी जीवन-संगिनी के प्रश्नों के उत्तर दिये, "सुनो तो, हमारी औरतों के दिमाग़ों में फूस से चूल्हे जलाने की बात समा गई है और चूंकि इससे कोई मुसीबत हो सकती है, इसलिये मैंने यह कड़ा आदेश दे दिया है कि वे घास-फूस से नहीं, बल्कि सूखी टहनियों और झाड़-झंखाड़ से ही चूल्हे जलायें।" – "मगर तुमने पालाश्का को ताला लगाकर कोठरी में क्यों बन्द किया?" बीवी ने पूछा। "किसलिये बेचारी नौकरानी हमारे लौटने तक कोठरी में बैठी रही?" इवान कुज़िमच ऐसे सवाल के लिये तैयार नहीं थे, गड़बड़ा गये और उन्होंने बहुत ही अटपटा-सा जवाब दे दिया। वसिलीसा येगोरोव्ना अपने पति की मक्कारी को समझ गयीं, किन्तु यह जानते हुए कि उनसे कुछ भी नहीं उगलवा सकेंगी, उन्होंने अपने सवाल करने बन्द कर दिये और खीरों के अचार की चर्चा करने लगीं जिसे अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना एक ख़ास ही ढंग से तैयार करती थी। वसिलीसा येगोरोव्ना को सारी रात नींद नहीं आई और वे किसी भी तरह इस बात का अनुमान नहीं लगा पाईं कि उनके पति के दिमाग़ में ऐसी क्या चीज़ थी जिसके बारे में उनके लिये जान-कारी पाना अनुचित था।

अगले दिन सुबह की प्रार्थना के बाद गिरजाघर से लौटते हुए उनकी इवान इग्नातिच पर नज़र पड़ी, जो तोप के मुंह में से बच्चों द्वारा ठूंसे गये चिथड़े, कंकड़-पत्थर, चैलियां और हड्डियां आदि निकाल रहा था। "युद्ध की ऐसी तैयारियों का क्या अर्थ हो सकता है?" वसि-लीसा येगोरोव्ना सोचने लगीं, "कहीं किर्ग़ीज़ियों के हमले का तो अन्देशा नहीं है? क्या इवान कुज़िमच मुझसे ऐसी मामूली-सी बात छिपायेगा?" उन्होंने अपने नारी-हृदय को व्यथित करनेवाले रहस्य को इवान इग्नातिच से जानने का पक्का इरादा बनाकर उसे पुकारा।

वसिलीसा येगोरोव्ना ने उस न्यायाधीश की भांति, जो शुरू में उत्तर देनेवाले से उसे असावधान बनाने के लिये इधर-उधर के सवाल पूछता है, घरेलू कामकाज के बारे में कुछ टीका-टिप्पणियां कीं। इसके पश्चात कुछ मिनट तक चुप रहने के बाद गहरी सांस ली और सिर हिलाते हुए बोलीं –

"हे भगवान! खबर तो कैसी है! क्या होगा अब?"

"कोई चिन्ता न करें आप!" इवान इग्नातिच ने उत्तर दिया। "भगवान की दया चाहिये – हमारे पास बहुत सैनिक हैं, बारूद की कुछ कमी नहीं और तोप मैंने साफ़ कर दी है। पुगाचोव के दांत खट्टे कर ही देंगे। भगवान की कृपादृष्टि रही तो कुछ नहीं बनेगा उसका!"

"यह पुगाचोव है कौन?" वसिलीसा येगोरोव्ना ने पूछा।

इवान इग्नातिच की समझ में अब यह आया कि उसने भंडाफोड़ कर दिया है और फ़ौरन चुप हो गया। किन्तु देर हो चुकी थी। वसिलीसा येगोरोव्ना ने उसे यह वचन देकर कि किसी को कुछ नहीं बतायेंगी, उससे सारी बात जान ली।

वसिलीसा येगोरोव्ना ने अपना वचन निभाया और पादरी की पत्नी के अतिरिक्त किसी से भी एक शब्द नहीं कहा। पादरी की पत्नी से भी उन्होंने केवल इसलिये इसकी चर्चा की कि उसकी गाय अभी कहीं स्तेपी में चर रही थी और उचक्कों के हत्थे चढ़ सकती थी।

शीघ्र ही सभी पुगाचोव की चर्चा करने लगे। उसके बारे में तरह-तरह की बातें होने लगीं। दुर्गपति ने सार्जेंट को आस-पास के गांवों और दुर्गों से अधिकतम जानकारी हासिल करने के लिये भेजा। सार्जेंट ने दो दिन बाद लौटकर यह बतलाया कि दुर्ग से लगभग साठ वेर्स्ता की दूरी पर उसने बेशुमार अलाव जलते देखे और बश्कीरियों से यह सुना कि सेनाओं का कोई बहुत बड़ा दल-बादल उमड़ा आ रहा है। वैसे वह निश्चित रूप से कुछ नहीं कह सकता था, क्योंकि आगे जाते हुए उसे डर महसूस हुआ था।

दुर्ग के कज़्ज़ाकों के बीच असाधारण उत्तेजना दिखाई देती थी। वे सभी दल बनाकर गलियों में जमा होते, आपस में खुसर-फुसर करते और किसी घुड़सवार या दुर्ग के सैनिक को देखकर इधर-उधर बिखर जाते। उनके बीच जासूसों को भेजा गया। कल्मीक जाति के ईसाई

धर्म ग्रहण कर लेनेवाले युलाई ने दुर्गपति को महत्त्वपूर्ण सूचना दी। युलाई के मतानुसार सार्जेंट ने ग़लत ख़बरें दी थीं। धूर्त कज़्ज़ाक ने लौटने पर अपने साथियों से यह कहा था कि वह विद्रोहियों के पास हो आया है, उनके सरदार से मिला है जिसने उसे अपना हाथ चूमने दिया और वह देर तक उससे बातें करता रहा। दुर्गपति ने सार्जेंट को फ़ौरन पहरे में रख दिया और उसकी जगह युलाई की नियुक्ति कर दी। कज़्ज़ाकों को यह समाचार स्पष्टतः बहुत बुरा लगा। उन्होंने ऊंचे-ऊंचे अपना ग़ुस्सा ज़ाहिर किया और दुर्गपति के आदेशों को पूरा करते हुए इवान इग्नातिच ने ख़ुद अपने कानों से उन्हें यह कहते सुना, "अब जल्द ही तुम्हारी बारी आनेवाली है दुर्ग के चूहे!" दुर्गपति ने उसी दिन हिरासत में लिये गये सार्जेंट से पूछताछ करनी चाही, मगर वह सम्भवतः अपने हमख़्यालों की मदद से भाग निकला था।

एक नई परिस्थिति से दुर्गपति की चिन्ता और बढ़ गयी। उकसाने-भड़कानेवाले इश्तिहारों के साथ एक बश्कीरी पकड़ा गया था। इस मामले को लेकर दुर्गपति ने फिर से अपने अफ़सरों की बैठक बुलानी चाही और इसीलिये कोई अच्छा-सा बहाना बनाकर अपनी बीवी को फिर से कहीं भेज देना चाहा। किन्तु इवान कुज़िमच चूंकि बहुत ही सीधे-सरल, सच्चे और ईमानदार आदमी थे, इसलिये उन्हें पहले भी उपयोग में लाये गये उपाय के अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझा।

"सुनो तो, वसिलीसा येगोरोव्ना," उन्होंने खांसते हुए बीवी से कहा, "सुनने में आया है कि फ़ादर गेरासिम को शहर से..." – "बस, काफ़ी झूठ बोल लिया, इवान कुज़िमच," बीवी ने उन्हें बीच में ही टोक दिया, "मतलब यह है कि तुम फिर से अफ़सरों की बैठक बुलाना और मेरे बिना येमेल्यान पुगाचोव के बारे में सोच-विचार करना चाहते हो। लेकिन इस बार तुम्हारी दाल नहीं गलेगी।" इवान कुज़िमच आंखें फाड़-फाड़कर देखते रह गये। "अगर तुम्हें सब कुछ मालूम ही है," उन्होंने कहा, "तो कृपया यहीं रहो, हम तुम्हारे सामने ही सोच-विचार कर लेंगे।" – "यह हुई अक़्ल की बात," पत्नी ने जवाब दिया, "तुमसे चालाकी करते नहीं बनेगी, बुलाओ अफ़सरों को।"

हम फिर से एकत्रित हुए। इवान कुज़िमच ने अपनी पत्नी की उपस्थिति में पुगाचोव का आह्वान-पत्र पढ़ा जो किसी अर्ध-शिक्षित

कज़्ज़ाक द्वारा लिखा गया था। उस लुटेरे ने बहुत जल्द ही हमारे दुर्ग पर आक्रमण करने के इरादे की घोषणा की थी, कज़्ज़ाकों और सैनिकों को अपने गिरोह में शामिल होने की दावत दी थी और कमांडरों को यह सलाह दी थी कि वे उसका विरोध न करें, अन्यथा उन्हें मृत्यु-दण्ड दिया जायेगा। यह आह्वान-पत्र भद्दे, किन्तु ज़ोरदार वाक्यों में लिखा हुआ था और साधारण लोगों पर उसका भयानक प्रभाव होना चाहिये था।

"कैसा बदमाश है!" दुर्गपति की बीवी ने कहा। "हमें ऐसी सलाह देने की भी जुर्रत करता है! उसका स्वागत करें और उसके पैरों पर झण्डा रख दें! कुत्ते का पिल्ला! क्या वह यह नहीं जानता कि चालीस साल से हम फ़ौजी नौकरी कर रहे हैं और भगवान की कृपा से बहुत कुछ देख-भाल चुके हैं? क्या ऐसे कमांडर भी होंगे जो इस उठाईगीरे की बातों पर कान देंगे?"

"ऐसे कमांडर तो शायद ही होंगे," इवान कुज़्मिच ने उत्तर दिया। "मगर सुना है कि उस दुष्ट ने कई दुर्गों पर अधिकार कर भी लिया है।"

"लगता है कि वह सचमुच शक्तिशाली है," श्वाबरिन ने राय ज़ाहिर की।

"हम अभी उसकी असली शक्ति जान लेंगे," दुर्गपति ने कहा। "वसिलीसा येगोरोव्ना, मुझे खत्ती की चाबी दो। इवान इग्नातिच, उस बश्कीरी को यहां लाओ और युलाई से कोड़े लाने को कहो।"

"ज़रा रुको, इवान कुज़्मिच," दुर्गपति की बीवी ने अपनी जगह से उठते हुए कहा। "मैं माशा को घर से कहीं बाहर ले जाती हूं वरना चीख़-चिल्लाहट सुनकर वह डर जायेगी। और सच बात तो यह है कि इस तरह की जांच-पड़ताल में मुझे ख़ुद भी कोई दिलचस्पी नहीं है। तो मैं चली।"

पुराने वक़्तों में क़ानूनी मामलों में यातना देने की प्रथा ने इतनी गहरी जड़ जमा रखी थी कि इसे ख़त्म करने का कल्याणकारी आदेश बहुत समय तक काग़ज़ी कार्रवाई ही बना रहा। ऐसा सोचा जाता था कि अपराधी के अपराध का पूरी तरह भण्डाफोड़ करने के लिये यह ज़रूरी है कि वह स्वयं उसे स्वीकार करे। यह विचार न केवल निराधार,

बल्कि विवेकपूर्ण क़ानूनी तर्क-वितर्क के बिल्कुल विरुद्ध भी था। कारण कि यदि अपराधी न होने का प्रमाण नहीं माना जाता, तो उसका उसे स्वीकार कर लेना उसके अपराधी होने का और भी कम प्रमाण होना चाहिये। पुराने न्यायाधीश तो अब भी कभी-कभी इस बात के लिये खेद प्रकट करते सुनाई देते हैं कि इस बर्बर परम्परा का अन्त कर दिया गया। हमारे समय में न तो न्यायाधीशों और न अभियुक्तों को ही यातना देने की आवश्यकता के बारे में कोई सन्देह था। इसलिये दुर्गपति के आदेश से हम में से किसी को न तो हैरानी और न परेशानी ही हुई। इवान इग्नातिच बश्कीरी को लाने चला गया जो खत्ती में बन्द था और जिसकी चाबी दुर्गपति की बीवी के पास थी। कुछ मिनट बाद बन्दी को ड्योढ़ी में लाया गया। दुर्गपति ने उसे अपने सामने पेश करने का आदेश दिया।

बश्कीरी ने बड़ी मुश्किल से दहलीज़ लांघी (उसके पैरों में बेड़ी थी) और अपनी ऊंची टोपी उतारकर दरवाज़े के पास खड़ा हो गया। मैं उसे देखकर कांप उठा। इस आदमी को मैं कभी नहीं भूल सकूंगा। वह कोई सत्तर साल का लग रहा था। उसकी न तो नाक थी और न कान ही। उसका सिर मुंडा हुआ था, दाढ़ी की जगह कुछ सफ़ेद बाल लटक रहे थे। वह नाटा और दुबला-पतला था तथा उसकी पीठ कुछ झुकी हुई थी, किन्तु उसकी छोटी-छोटी आंखों में अभी भी चिंगारी की चमक थी।

"अरे!" उसकी भयानक निशानियों से १७४१ के विद्रोह* के लिये दण्डप्राप्त एक अपराधी को पहचानकर दुर्गपति ने कहा। "देख रहा हूं कि पुराने भेड़िये हो, हमारे जाल में पहले भी फंस चुके हो। तुम्हारे सिर पर जिस तरह रंदा फिरा है, उससे पता चलता है कि तुम पहली बार विद्रोह नहीं कर रहे हो। ज़रा नज़दीक आकर बताओ कि किसने तुम्हें यहां भेजा है?"

बूढ़ा बश्कीरी चुप रहकर ख़ाली-ख़ाली आंखों से दुर्गपति को ताकता रहा।

"तुम बोलते क्यों नहीं?" इवान कुज़्मिच ने पूछना जारी रखा।

---

* १७४१ में बश्कीरिया के विद्रोह से अभिप्राय है जिसे ज़ारशाही सरकार ने निर्दयता से कुचल दिया था। – सं०

"या फिर तुम रूसी नहीं समझते? युलाई, तुम इससे अपनी भाषा में पूछो कि किसने उसे हमारे दुर्ग में भेजा है?"

युलाई ने तातारी भाषा में इवान कुज़्मिच का प्रश्न दोहराया। किन्तु बश्कीरी पहले जैसी मुद्रा बनाये ताकता रहा और उसने उत्तर में एक भी शब्द नहीं कहा।

"याकशी,"* दुर्गपति ने कहा, "अभी तुम्हारी ज़बान खुल जायेगी। तो सैनिको! इसका यह बेहूदा धारीदार चोगा उतारकर इसकी पीठ की चमड़ी उधेड़ो। युलाई, देखो, अच्छी तरह से!"

दो पंगु सैनिक बश्कीरी के कपड़े उतारने लगे। उस क़िस्मत के मारे के चेहरे पर घबराहट झलक उठी। उसने बच्चों द्वारा पकड़ लिये गये जानवर की तरह सभी ओर नज़र दौड़ाई। जब एक पंगु ने उसके दोनों हाथ पकड़े और उन्हें अपनी गर्दन के पास टिकाकर बूढ़े को अपने कंधों पर ऊपर उठाया और युलाई ने कोड़ा ऊपर उठाया, तो बश्कीरी धीमी-सी तथा मिन्नत करती आवाज़ में कराह उठा तथा सिर झुकाकर उसने मुंह खोल दिया जिसमें ज़बान की जगह उसका छोटा-सा टुकड़ा हिल रहा था।

मैं जब यह याद करता हूं कि हमारे ही समय में ऐसा हुआ था और मैं सम्राट अलेक्सान्द्र के विनयशील शासन** के समय तक जीवित हूं, तो मैं द्रुत गति से शिक्षा की सफलता और मानव-प्रेम के नियमों के प्रचार-प्रसार से आश्चर्य चकित हुए बिना नहीं रह सकता। नौजवान! यदि मेरी टिप्पणियां तुम्हारे हाथों में आ जायें, तो याद रखना कि वही परिवर्तन सबसे अच्छे और पक्के होते हैं जो किसी भी प्रकार की हिंसा-पूर्ण उथल-पुथल के बिना नैतिकता के सुधार द्वारा किये जाते हैं।

हम सभी स्तम्भित रह गये।

"तो," दुर्गपति ने कहा, "स्पष्ट है कि हम इससे कुछ नहीं

---

* अच्छा। – अनु०

** "विनयशील शासन" में निहित व्यंग्य तब स्पष्ट हो जाता है, जब हम पुश्किन द्वारा एक पद में दिये गये वर्णन को स्मरण करते हैं जिसमें उसे "दुर्बल और कपटी शासक ... एक गंजा छैला ... भाग्य की कृपा से ख्याति के मज़े लूटनेवाला काहिल" कहा गया है। – अनु०

जान पायेंगे। युलाई, बश्कीरी को खत्ती में वापस ले जाओ। महानु-भावो, तो हम कुछ और बातचीत कर लेते हैं।"

हम अपनी स्थिति के बारे में कुछ और विचार-विमर्श करने लगे कि अचानक वसिलीसा येगोरोव्ना हांफती और बहुत ही परेशान हाल कमरे में दाखिल हुईं।

"तुम्हें क्या हुआ है?" दुर्गपति ने हैरान होकर पूछा।

"हाय, मुसीबत आ गयी!" वसिलीसा येगोरोव्ना ने उत्तर दिया। "निज्नेओज़ेर्नाया दुर्ग पर आज सुबह क़ब्ज़ा कर लिया गया है। फ़ादर गेरासिम का नौकर अभी-अभी वहां से लौटा है। उसने अपनी आंखों से दुर्ग पर अधिकार होते देखा। वहां के दुर्गपति और सभी अफ़सरों को सूली दे दी गयी है। सभी सैनिकों को बन्दी बना लिया गया है। ये बदमाश किसी समय भी यहां आ सकते हैं।"

इस अप्रत्याशित समाचार से मुझे बहुत ही परेशानी हुई। निज्ने-ओज़ेर्नाया दुर्ग के शान्त और विनम्र युवा दुर्गपति से मैं परिचित था। दो महीने पहले वह ओरेनबुर्ग से अपने दुर्ग की ओर जाते हुए अपनी जवान बीवी के साथ इवान कुज़्मिच के यहां ठहरा था। निज्नेओज़ेर्नाया दुर्ग हमारे दुर्ग से कोई पच्चीस वेर्स्ता दूर था। अब किसी भी वक़्त पुगाचोव हमारे दुर्ग पर हमला कर सकता था। मरीया इवानोव्ना का क्या बनेगा, इस बात की सजीव कल्पना करते ही मेरा दिल बैठ गया।

"इवान कुज़्मिच, मेरी बात सुनिये!" मैंने दुर्गपति से कहा। "अपनी आख़िरी सांस तक दुर्ग की रक्षा करना हमारा कर्तव्य है, यह बात तो साफ़ ही है। लेकिन हमें नारियों की सुरक्षा की चिन्ता अवश्य करनी चाहिये। अगर रास्ता अभी खुला है, तो उन्हें ओरेनबुर्ग अथवा दूर के किसी ऐसे विश्वसनीय दुर्ग में भेज दीजिये जहां ये बदमाश न पहुंच पायें।"

इवान कुज़्मिच ने पत्नी को सम्बोधित करते हुए कहा –

"हां, सुनो तो माशा की मां, क्या सचमुच यह अच्छा नहीं रहेगा कि जब तक हम विद्रोहियों से निपट न लें, तुम दोनों कहीं दूर चली जाओ।"

"बेकार की बात है!" वसिलीसा येगोरोव्ना ने उत्तर दिया। "कौनसा ऐसा दुर्ग है जहां गोली नहीं पहुंचेगी? हमारा बेलोगोर्स्क

किसलिये भरोसे का नहीं है? भगवान की दया से इसमें रहते हुए हमारा बाईसवां साल चल रहा है। हमने बश्कीरी भी देखे और किर्गीज़ भी। पुगाचोव से भी निपट लेंगे!"

"अच्छी बात है," इवान कुज़्मिच ने उत्तर दिया, "अगर तुम्हें हमारे दुर्ग पर भरोसा है, तो यहीं रहो। मगर माशा के बारे में ज़रूर कुछ सोचना चाहिये। अगर हम बच गये या कुमक आ गयी, तब तो अच्छा है। लेकिन अगर दुष्टों ने दुर्ग पर अधिकार कर ही लिया, तब?"

"तब ..." इतना कहकर वसिलीसा येगोरोव्ना हकलाईं और बहुत ही परेशानी ज़ाहिर करते हुए ख़ामोश हो गयीं।

"नहीं, वसिलीसा येगोरोव्ना," दुर्गपति ने यह देखकर कि शायद ज़िन्दगी में पहली बार उनके शब्दों का असर हुआ है अपनी बात जारी रखी। "माशा का यहां रहना ठीक नहीं होगा। उसे ओरेनबुर्ग में उसकी धर्म-माता के पास भेज देते हैं – वहां सेनायें और तोपें भी काफ़ी हैं और दीवार भी पत्थर की है। तुम्हें भी वहीं जाने की सलाह दूंगा – तुम बूढ़ी औरत हो और अगर उन्होंने दुर्ग पर अधिकार कर ही लिया, तो सोचो कि तुम्हारा क्या होगा।"

"अच्छी बात है," दुर्गपति की बीवी ने कहा, "ऐसा ही सही, हम माशा को भेज देंगे। मुझसे तो स्वप्न में भी ऐसी आशा नहीं करना – हरगिज़ नहीं जाऊंगी। बुढ़ापे में मैं तुमसे अलग होकर किसी अजनबी जगह पर अपनी अकेली की क़ब्र बनवाऊं, यह नहीं होने का। एकसाथ जिये हैं, एकसाथ मरेंगे।"

"सो तय हो गया," दुर्गपति ने कहा। "लेकिन देर नहीं करो। माशा के लिये सफ़र की तैयारी कर दो। उसे कल तड़के ही रवाना कर देंगे, रक्षक-दस्ता भी साथ दे देंगे, यद्यपि हमारे पास फ़ालतू लोग बिल्कुल नहीं हैं। लेकिन माशा है कहां?"

"अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना के यहां," दुर्गपति की बीवी ने जवाब दिया। उसने जैसे ही निज्नेओज़ेर्नाया दुर्ग पर क़ब्ज़ा हो जाने की बात सुनी, उसे ग़श आ गया। मुझे डर है कि कहीं बीमार न हो गयी हो। हे भगवान, कैसे दिन देखने के लिये जिन्दा रह गये हम!"

वसिलीसा येगोरोव्ना बेटी के जाने की तैयारी करने चली गयीं।

दुर्गपति के यहां बातचीत जारी रही, मगर मैंने उसमें कोई हिस्सा नहीं लिया और न कुछ सुना ही। मरीया इवानोव्ना शाम के भोजन के समय आई, पीला, रुआंसा चेहरा लिये हुए। हमने मौन साधे रहकर ही खाना खाया, हर दिन की तुलना में मेज़ पर से जल्दी उठे और दुर्गपति के परिवार से विदा लेकर अपने-अपने घर को चल दिये। मैंने जान-बूझकर अपनी तलवार वहीं छोड़ दी और उसे लेने के लिये वापस आया। मुझे ऐसी पूर्वानुभूति हो रही थी कि मरीया इवानोव्ना वहां मुझे अकेली ही मिलेगी। वास्तव में ऐसा ही हुआ। वह दरवाज़े पर ही मुझसे मिली और उसने मेरी तलवार मुझे सौंप दी। "तो विदा, प्योतर अन्द्रेइच!" उसने आंसू बहाते हुए मुझसे कहा। "मुझे ओरेनबुर्ग भेजा जा रहा है। आप ज़िन्दा और सुखी रहें। हो सकता है कि भगवान की कृपा से हमारी फिर कभी भेंट हो जाये, अगर ऐसा न हो, तो..." इतना कहकर वह सिसकने लगी। मैंने उसे अपनी बांहों में भर लिया।

"विदा, मेरी जान," मैंने कहा, "विदा, मेरी प्यारी, मेरे दिल की रानी! मेरे साथ चाहे कुछ भी क्यों न गुज़रे, यह विश्वास रखना कि अन्तिम सांस लेते हुए मैं तुम्हारे ही बारे में सोचूंगा और तुम्हारे लिये ही प्रार्थना करूंगा!" मेरी छाती से चिपकी हुई माशा सिसक रही थी। मैंने बहुत ही भाव-विह्वल होकर उसे चूमा और झटपट कमरे से बाहर चला गया।

सातवां अध्याय

आक्रमण

सिर मेरे, ओ सिर मेरे,
फ़ौजी सेवा करनेवाले सिर मेरे!
पूरे तैंतीस वर्ष कि तुमने सेवा की,
दौलत नहीं जमा की, जानी नहीं ख़ुशी,
नहीं किसी ने पीठ ठोंक कुछ भला कहा,
बना न अफ़सर बस, सैनिक ही बना रहा,
सिर्फ़ यही जीवन में हासिल कर पाये –

13*

दो ऊंचे खम्भे औ' बीच कड़ी उनके,
रेशम का फंदा, गर्दन में पड़ जाये।

लोक गीत

इस रात को मैं न तो सोया और न मैंने कपड़े ही उतारे। मेरा यह इरादा था कि पौ फटते ही दुर्ग के फाटक पर चला जाऊंगा, जहां से मरीया इवानोव्ना को ओरेनबुर्ग के लिये जाना था, और वहां उससे अन्तिम बार विदा ले लूंगा। मैं अपनी आत्मा में बहुत बड़ा परिवर्तन अनुभव कर रहा था – अपनी आत्मा की उत्तेजना मुझे उस उदासी की तुलना में कहीं कम बोझल अनुभव हो रही थी जिसमें मैं कुछ समय पहले डूबा रहा था। बिछोह-वेदना के साथ-साथ मेरे भीतर अभी तक अस्पष्ट, किन्तु मधुर आशायें, ख़तरे की विह्वलतापूर्ण प्रत्याशा और उदात्त महत्त्वाकांक्षा की भावनाएं घुल-मिल गयी थीं। रात कब गुज़र गयी, इसका पता भी नहीं चला। मैं घर से बाहर निकलने ही वाला था कि मेरा दरवाज़ा खुला और दफ़ादार ने मुझे यह सूचना दी कि हमारे कज़्ज़ाक रात के वक़्त दुर्ग से भाग गये, युलाई को ज़बर्दस्ती अपने साथ ले गये और यह कि अजनबी घुड़सवार दुर्ग के आस-पास घूमते दिखाई देते हैं। इस ख़्याल से मेरा दिल बैठ गया कि मरीया इवानोव्ना दुर्ग से नहीं जा पायेगी। मैंने दफ़ादार को जल्दी-जल्दी कुछ हिदायतें दीं और फ़ौरन दुर्गपति की ओर भाग चला।

पौ फट रही थी। मैं गली में बहुत तेज़ी से क़दम बढ़ाता जा रहा था कि किसी को अपना नाम पुकारते सुना। मैं रुका। "कहां जा रहे हैं आप?" इवान इग्नातिच ने मेरे क़रीब आकर पूछा। "इवान कुज़्मिच दुर्ग-प्राचीर पर हैं और मुझे आपको बुला लाने के लिये भेजा है। पुगाचोव आ गया है।" – "मरीया इवानोव्ना चली गयी या नहीं?" मैंने धड़कते दिल से पूछा। "नहीं जा पायी," इवान इग्नातिच ने उत्तर में कहा, "ओरेनबुर्ग का रास्ता काट दिया गया है और दुर्ग घेरे में है। हालत अच्छी नहीं है, प्योतर अन्द्रेइच!"

हम दुर्ग-प्राचीर पर गये। यह प्रकृति द्वारा बनायी गयी ऊंची जगह थी और इसे बाड़ से मज़बूत कर दिया गया था। सारे दुर्गवासी वहां जमा थे। सैनिक बन्दूकें लिये तैयार खड़े थे। तोप को पिछली शाम

ही वहां पहुंचा दिया गया था। दुर्गपति मिरोनोव अपने थोड़े से सैनिकों के सामने इधर-उधर आ-जा रहे थे। ख़तरे की निकटता से पुराने योद्धा में असाधारण स्फूर्ति आ गयी थी। दुर्ग से कुछ ही दूर कोई बीसेक घुड़सवार स्तेपी में जाते दिखाई दे रहे थे। वे कज़्ज़ाक प्रतीत होते थे, किन्तु उनके बीच बश्कीरी भी थे जिन्हें उनकी बन-बिलाव की ऊंची टोपियों और तरकशों से आसानी से पहचाना जा सकता था। दुर्गपति अपनी फ़ौज के गिर्द चक्कर लगाते हुए कह रहे थे, "तो जवानो, आज हम सम्राज्ञी माता के लिये डटकर लड़ेंगे और सारी दुनिया को यह दिखा देंगे कि हम वीर और शपथ के प्रति निष्ठावान लोग हैं!" सैनिकों ने बहुत ज़ोर से अपना उत्साह प्रकट किया। श्वाबरिन मेरी बग़ल में खड़ा था और एकटक शत्रु को देख रहा था। स्तेपी में नज़र आनेवाले घुड़-सवार दुर्ग में हलचल देखकर एक जगह पर इकट्ठे हो गये और आपस में बातचीत करने लगे। दुर्गपति ने इवान इग्नातिच को आदेश दिया कि तोप का मुंह उनकी ओर कर दे और उन्होंने स्वयं पलीते को आग लगाई। गोला भनभनाया और किसी को हानि पहुंचाये बिना उनके सिरों के ऊपर से गुज़र गया। घुड़सवार बिखर गये, उसी क्षण घोड़ों को सरपट दौड़ाते हुए नज़र से ओझल हो गये और स्तेपी निर्जन हो गयी।

इसी समय वसिलीसा येगोरोव्ना और उनके साथ माशा भी, जो मां से अलग नहीं रहना चाहती थी, यहां आ गयीं। "तो?" दुर्गपति की बीवी ने पूछा, "लड़ाई कैसी चल रही है? दुश्मन क़हां है?" – "दुश्मन दूर नहीं है," इवान कुज़्मिच ने जवाब दिया। "भगवान ने चाहा तो सब कुछ ठीक हो जायेगा। क्यों, तुम्हें डर लग रहा है माशा?" – "नहीं, पापा," मरीया इवानोव्ना ने उत्तर दिया, "घर में अकेली रहने पर और ज़्यादा डर लगता है।" इतना कहकर उसने मेरी ओर देखा और किसी तरह से मुस्करा दी। यह याद आने पर कि पिछले दिन मुझे उसके हाथ से अपनी तलवार मिली थी, मेरा हाथ अनजाने ही उसकी मूठ पर चला गया मानो मैं अपनी प्यारी की रक्षा को तैयार हूं। मेरे दिल में जैसे आग-सी धधक रही थी। मैंने उसके रक्षक के रूप में अपनी कल्पना की। मैं यह प्रमाणित करने को बेचैन था कि उसके विश्वास के योग्य हूं और बड़ी बेसब्री से निर्णायक क्षण की प्रतीक्षा करने लगा।

इसी वक़्त दुर्ग से कोई आध वेर्स्ता की दूरी पर स्थित ऊंचाई पर घुड़सवारों के नये दल दिखाई दिये और शीघ्र ही स्तेपी में बर्छियों तथा तीर-कमानों से लैस लोगों की बड़ी भीड़ जमा हो गयी। इनके बीच लाल अंगरखा पहने तथा हाथ में नंगी तलवार लिये एक व्यक्ति सफ़ेद घोड़े पर सवार था – यही पुगाचोव था। वह रुका, लोग उसके इर्द-गिर्द जमा हो गये और, जैसा कि स्पष्ट था, उसके आदेश पर चार व्यक्ति भीड़ से अलग होकर सरपट घोड़े दौड़ाते हुए दुर्ग के पास आ गये। हमने उनमें अपने ग़द्दारों को पहचान लिया। उनमें से एक अपनी टोपी के नीचे एक काग़ज़ दबाये था और दूसरे की बर्छी पर युलाई का सिर टंगा हुआ था जिसे उसने ज़ोर से झटका देकर बाड़ के ऊपर से हमारे पास फेंक दिया। बेचारे कल्मीक का सिर दुर्गपति के क़दमों पर आकर गिरा। ग़द्दारों ने चिल्लाकर कहा, "गोली नहीं चलाइये! हमारे महाराज के सामने आ जाइये। महाराज यहां हैं!"

"अभी चखाता हूं मैं तुम्हें मज़ा!" इवान कुज़्मिच चिल्लाये। "जवानो! चलाओ गोली!" हमारे सैनिकों ने गोलियों की बौछार की। ख़त लिये हुए कज़्ज़ाक काठी पर लड़खड़ाया और घोड़े से नीचे गिर गया, बाक़ी कज़्ज़ाक अपने घोड़ों को पीछे दौड़ा ले गये। मैंने मरीया इवानोव्ना की ओर देखा। ख़ून से लथपथ युलाई के सिर से चकित और गोलियां दग़ने की आवाज़ से बहरी-सी हुई वह लगभग बेहोश लग रही थी। दुर्गपति ने दफ़ादार को बुलाया और उसे मृत कज़्ज़ाक के हाथ से काग़ज़ लाने का हुक्म दिया। दफ़ादार मैदान में गया और मरे हुए कज़्ज़ाक के घोड़े की लगाम थामे हुए लौटा। उसने पत्र दुर्गपति को दिया। इवान कुज़्मिच ने उसे मन ही मन पढ़ा और फिर फाड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर डाले। विद्रोहियों ने इसी बीच अपने को स्पष्टतः हमले के लिये तैयार कर लिया था। कुछ ही देर बाद गोलियां हमारे कानों के पास सनसनाने लगीं और कुछ तीर हमारे क़रीब धरती में और क़िलेबन्दी के बाड़ों में आकर धंस गये। "वसिलीसा येगोरोव्ना!" दुर्गपति ने कहा। "यहां औरतों का काम नहीं है, माशा को ले जाओ। देखती नहीं हो कि लड़की का दम निकला जा रहा है।"

गोलियों के कारण परास्त हुई वसिलीसा येगोरोव्ना ने स्तेपी की ओर देखा, जहां बहुत हलचल दिखाई दे रही थी। इसके बाद उन्होंने

पति को सम्बोधित करते हुए कहा, "इवान कुज़्मिच, जीना-मरना तो भगवान के हाथ में है – माशा को आशीर्वाद दो। माशा, पिता के पास जाओ!"

ज़र्द चेहरा लिये और कांपती हुई माशा इवान कुज़्मिच के पास गयी, घुटनों के बल हो गयी और उसने झुककर पिता को प्रणाम किया। बूढ़े दुर्गपति ने उसके ऊपर तीन बार सलीब का निशान बनाया, उसे उठाया और चूमने के बाद बदली हुई आवाज़ में उससे कहा, "सकुशल रहो, बेटी मेरी! भगवान का नाम लो – वह तुम्हारी मदद करेगा। अगर कोई भला आदमी मिल जाये, तो भगवान तुम दोनों को प्यार और सद्‌बुद्धि दे। ऐसे ही जीना, जैसे मैं और तुम्हारी मां वसिलीसा येगोरोव्ना जिये हैं। तो विदा, माशा। वसिलीसा येगोरोव्ना, जल्दी से ले जाओ इसे।" (माशा पिता के गले से लगकर रो पड़ी।) "आओ, हम भी एक-दूसरे को चूम लें," दुर्गपति की बीवी ने रोते हुए कहा। "तो विदा, मेरे इवान कुज़्मिच। अगर मैंने किसी तरह से तुम्हारा दिल दुखाया हो, तो क्षमा कर देना!" – "विदा, विदा, मेरी प्यारी!" अपनी बूढ़ी पत्नी को गले लगाकर दुर्गपति ने कहा। "बस, काफ़ी है! जाओ, घर जाओ, अगर समय मिल जाये, तो माशा को सराफ़ान* पहना देना।" दुर्गपति की पत्नी और बेटी चली गयीं। मैं मरीया इवानोव्ना को देखता जा रहा था – उसने मुड़कर मेरी ओर देखा और सिर झुकाकर विदा ली। इवान कुज़्मिच ने अब हमारी ओर दृष्टि घुमाई और उनका ध्यान पूरी तरह से शत्रु पर केन्द्रित हो गया। घोड़ों पर सवार विद्रोही अपने सरदार को घेरे हुए थे और वे अचानक घोड़ों से नीचे उतरने लगे। "अब मज़बूती से डटे रहना," दुर्गपति ने कहा, "धावा बोला जायेगा..." इसी क्षण भयानक चीख़-चिल्लाहट सुनाई दी, विद्रोही तेज़ी से दुर्ग की ओर दौड़ने लगे। हमारी तोप में छर्रे भरे हुए थे। दुर्गपति ने विद्रोहियों को अधिक से अधिक निकट आ जाने दिया और फिर अचानक तोप दाग़ दी। छर्रे भीड़ के ठीक बीचोंबीच जाकर गिरे। विद्रोही दायें-बायें बिखरे और पीछे हटने लगे। सिर्फ़ उनका सरदार ही अकेला आगे खड़ा रहा... वह तलवार

---

* रूसी किसान औरतों की पोशाक। – अनु०

हिलाता हुआ बड़े जोश से उन्हें प्रेरित करता प्रतीत हो रहा था... क्षण भर को शान्त होनेवाली चीख़-पुकार फिर से सुनाई देने लगी। "तो जवानो," दुर्गपति ने कहा, "अब फाटक खोल दो और नगाड़े पर चोट लगाओ। जवानो! धावा बोलने के लिये मेरे पीछे-पीछे आगे बढ़ो!"

दुर्गपति, इवान इग्नातिच और मैं क्षण भर में ही दुर्ग की फ़सील के बाहर पहुंच गये, मगर दहशत में आई हुई दुर्ग-सेना टस से मस नहीं हुई। "तुम वहीं क्यों खड़े हो, जवानो?" इवान कुज़्मिच ने चिल्लाकर कहा। "मरना है, तो मरना है–हम फ़ौजियों का यही धर्म है!" इसी क्षण विद्रोही हम पर चढ़ आये और दुर्ग में घुस गये। नगाड़ा बन्द हो गया, दुर्ग-सेना ने हथियार डाल दिये। रेल-पेल में मुझे नीचे गिरा दिया गया, किन्तु मैं उठा और विद्रोहियों के साथ ही दुर्ग में दाख़िल हुआ। दुर्गपति, जिनके सिर पर चोट आई थी, बदमाशों की भीड़ से घिरे हुए थे जो उन्हें चाबियां देने को मजबूर कर रहे थे। मैं दुर्गपति की मदद करने के लिये लपका, किन्तु कुछ हट्टे-कट्टे कज़्ज़ाकों ने मुझे पकड़ लिया और यह कहते हुए "तो चखिये मज़ा हमारे महाराज की बात न मानने का!" मुझे कमरबन्दों से कस दिया। हमें गलियों में से घसीटकर ले जाया गया। बस्ती के लोग नमक और रोटी लेकर घरों से बाहर आ गये। गिरजाघर का घण्टा बजने लगा। सहसा भीड़ में बहुत ऊंचे यह सुनाई दिया कि महाराज चौक में हैं और बंदियों के वहां लाये जाने तथा वफ़ादारी की क़सम खाने की राह देख रहे हैं। लोगों की भीड़ उस तरफ़ उमड़ पड़ी और हमें भी घसीटकर वहीं ले जाया गया।

पुगाचोव दुर्गपति के घर के ओसारे में कुर्सी पर बैठा था। वह कज़्ज़ाकों के ढंग का लाल अंगरखा पहने था जिस पर गोटा लगा था। सुनहरी कलगी लगी सेबल की ख़ाल की ऊंची टोपी उसकी चमकती आंखों पर खिंची हुई थी। उसका चेहरा मुझे जाना-पहचाना प्रतीत हुआ। कज़्ज़ाक मुखिया उसे घेरे हुए थे। फ़ादर गेरासिम, जो कांप रहा था और जिसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं, हाथों में सलीब थामे ओसारे के पास खड़ा था और ऐसा लगता था मानो कुछ ही समय बाद दी जानेवाली क़ुर्बानियों की माफ़ी के लिये चुपचाप उसकी

मिन्नत कर रहा था। चौक में जल्दी-जल्दी सूली बनाई जा रही थी। जब हम निकट पहुंचे, तो बश्कीरियों ने लोगों को खदेड़ दिया और हमें पुगाचोव के सामने पेश किया। घण्टा बजना बन्द हो गया और गहरी ख़ामोशी छा गयी। "दुर्गपति कौन है?" नक़ली सम्राट ने पूछा। हमारे सार्जेंट ने भीड़ में से आगे आकर इवान कुज़िमच की तरफ़ इशारा किया। पुगाचोव ने कोप-दृष्टि से बूढ़े दुर्गपति की तरफ़ देखा और बोला, "मेरा, अपने सम्राट का विरोध करने की तुम्हें कैसे हिम्मत हुई?" घाव के कारण दुर्बल हुए दुर्गपति ने अपनी बची-बचायी शक्ति बटोरी और दृढ़ता से उत्तर दिया, "तुम मेरे लिये सम्राट नहीं, चोर-उचक्के और झूठे दावेदार हो, सुना तुमने!" पुगाचोव की ग़ुस्से से भौंहें चढ़ गयीं और उसने सफ़ेद रूमाल हिलाया। कई कज़्ज़ाकों ने बूढ़े कप्तान को पकड़ लिया और सूली के पास घसीट ले गये। अपंग बश्कीरी, जिससे हमने एक दिन पहले पूछताछ की थी, सूली के शहतीर पर तैनात था। वह अपने हाथ में रस्सी लिये था और एक मिनट बाद मैंने बेचारे इवान कुज़िमच को सूली पर लटकते पाया। इसके बाद इवान इग्नातिच को पुगाचोव के सामने लाया गया। "मुझ सम्राट, प्योतर फ़्योदोरोविच के सामने वफ़ादारी की क़सम खाओ!" पुगाचोव ने उससे कहा। "तुम हमारे लिये सम्राट नहीं हो," अपने कप्तान के शब्द दोहराते हुए इवान इग्नातिच ने उत्तर दिया। "चचा, तुम चोर-उचक्के और झूठे दावेदार हो!" पुगाचोव ने फिर से रूमाल हिलाया और भला लेफ़्टिनेंट अपने बूढ़े अफ़सर की बग़ल में ही सूली पर लटक गया।

अब मेरी बारी थी। मन ही मन अपने भले साथियों के उत्तर दोहराने की तैयारी करते हुए मैं बड़े साहस से पुगाचोव की ओर देख रहा था। इसी समय मैंने विद्रोही मुखियाओं के बीच कज़्ज़ाकों के ढंग से बाल कटवाये और कज़्ज़ाकों का अंगरखा पहने श्वाबरिन को देखा और मुझे इतनी हैरानी हुई कि बयान से बाहर। उसने पुगाचोव के क़रीब आकर उसके कान में कुछ शब्द कहे। "इसे सूली दे दो!" मेरी ओर देखे बिना ही पुगाचोव ने कहा। मेरी गर्दन में फंदा डाल दिया गया। मैं मन ही मन प्रार्थना और अपने सभी पापों का प्रायश्चित तथा भगवान से यह अनुरोध करने लगा कि वह मेरे सभी प्रियजन की

रक्षा करे। मुझे सूली के नीचे खींच ले गये। "डरो नहीं, डरो नहीं," मेरे हत्यारे लगातार दोहराते जा रहे थे और वे शायद सचमुच ही मेरी हिम्मत बढ़ाना चाहते थे। अचानक मैंने किसी को यह चीखते सुना – "रुक जाओ, दुष्टो! रुक जाओ!.." जल्लाद रुक गये। देखता क्या हूं कि सावेलिच पुगाचोव के क़दमों पर गिरा हुआ है। "दयालु पिता!" बेचारा सावेलिच गिड़गिड़ा रहा था। "मेरे स्वामी के इस बच्चे की जान लेकर तुम्हें क्या मिलेगा? इसे छोड़ दो, इसके बदले में तुम्हें दौलत मिल जायेगी और लोगों के सामने मिसाल पेश करने तथा उनमें दहशत पैदा करने के लिये अगर चाहो, तो मुझ बुड्ढे को सूली दे सकते हो।" पुगाचोव ने इशारा किया और मुझे उसी समय खोलकर छोड़ दिया गया। "हमारे महाराज आपकी जान बख़्शते हैं," मुझसे कहा गया। कह नहीं सकता कि अपनी जान बच जाने से मुझे ख़ुशी हुई या नहीं, किन्तु यह भी नहीं कह सकता कि मुझे इसका अफ़सोस हुआ। बहुत ही धुंधली-धुंधली-सी भावनायें आ रही थीं उस वक़्त मेरे दिल-दिमाग़ में। मुझे फिर से उस नक़ली सम्राट के सामने लाया गया और घुटनों के बल होने को विवश किया गया। पुगाचोव ने उभरी हुई नसोंवाला हाथ मेरी ओर बढ़ाया। "चूमो, हाथ को चूमो!" मुझे अपने आस-पास से आवाज़ें सुनाई दीं। किन्तु ऐसे नीचतापूर्ण अपमान की तुलना में मैंने कड़े से कड़े दण्ड को बेहतर माना होता। "भैया, प्योतर अन्द्रेइच!" मेरे पीछे खड़ा और मुझे आगे की ओर धकियाता हुआ सावेलिच फुसफुसाया, "ज़िद्द नहीं करो! तुम्हारा इसमें क्या जाता है? थूको और चूम लो नीच ... (छिः!) मेरा मतलब उसका हाथ चूम लो।" मैं टस से मस नहीं हुआ। पुगाचोव ने व्यंग्यपूर्वक यह कहते हुए हाथ नीचे कर लिया – "लगता है कि जनाब का ख़ुशी के मारे दिमाग़ ठिकाने नहीं रहा। इसे उठाकर खड़ा कर दीजिये।" मुझे खड़ा किया गया और मुक्त छोड़ दिया गया। मैं आगे जारी रहनेवाले इस भयानक तमाशे को देखता रहा।

दुर्गवासी वफ़ादारी की क़सम खाने लगे। वे बारी-बारी से आते, सलीब को चूमते और फिर उस नक़ली सम्राट के सामने सिर झुकाते। दुर्ग के सैनिक भी वहीं खड़े थे। अपनी कुंठित कैंची लिये हुए दुर्ग का दर्ज़ी

उनकी चोटियां काट रहा था। अपने को झटककर वे पुगाचोव का हाथ चूमते जो उन्हें क्षमा-दान देता और अपने गिरोह में शामिल कर लेता। यह सब कुछ लगभग तीन घण्टे तक चलता रहा। आख़िर पुगाचोव अपनी कुर्सी से उठा और अपने सलाहकारों से घिरा हुआ ओसारे से नीचे उतरा। उसके लिये बढ़िया साज़ से सजा हुआ सफ़ेद घोड़ा लाया गया। दो कज़्ज़ाकों ने सहारा देकर उसे ज़ीन पर बिठाया। उसने फ़ादर गेरासिम से कहा कि दिन का भोजन वह उसके यहां करेगा। इसी समय एक नारी की चीख़ सुनाई दी। कुछ लुटेरे वसिलीसा येगोरोव्ना को ओ-सारे में घसीट लाये। उनके बाल अस्त-व्यस्त थे और वह एकदम नंगी थीं। उनमें से एक ने तो उनकी रूईदार जाकेट भी पहन ली थी। दूसरे लोग रोयों से भरे हुए गद्दे, सन्दूक़, चीनी के बर्तन, गिलाफ़-चादरें और दूसरी चीज़ें उठाये ला रहे थे। "भले लोगो!" बेचारी बूढ़ी वसिलीसा येगोरोव्ना चिल्ला रही थीं। "मुझे शान्ति से मर जाने दो! प्यारे लोगो, मुझे इवान कुज़िमच के पास पहुंचा दो।" अचानक उन्होंने सूली की ओर देखा और अपने पति को पहचान लिया। "नीच दुष्टो," वह ग़ुस्से से पागल होकर चिल्ला उठीं। "यह तुमने क्या किया है उसके साथ? मेरी आंखों की रोशनी, इवान कुज़िमच, मेरे वीर सैनिक! न प्रशा की संगीन तुम्हारा कुछ बिगाड़ सकी, न तुर्की की गोली। न इन्साफ़ की सच्ची लड़ाई में तुम खेत रहे, एक भगोड़े अपरा-धी के हाथों मारे गये!" – "बन्द करो इस चुड़ैल बुढ़िया की ज़बान।" पुगाचोव ने कहा। इसी वक़्त एक जवान कज़्ज़ाक ने उनके सिर पर तलवार से वार किया और वह ओसारे की पैड़ी पर निर्जीव होकर गिर पड़ीं। पुगाचोव ने घोड़ा बढ़ाया; लोगों की भीड़ उसके पीछे-पीछे भागने लगी।

आठवां अध्याय

बिन बुलाया मेहमान

बिन बुलाया मेहमान
तातार से भी बदतर।

कहावत

चौक ख़ाली हो गया। मन पर पड़ी इतनी भयानक छापों के कारण बेहद परेशान हुआ मैं एक ही जगह पर खड़ा था और अपने विचारों को व्यवस्थित नहीं कर पा रहा था।

मरीया इवानोव्ना का क्या हुआ, यह बात मुझे सब से अधिक व्यथित कर रही थी। कहां है वह? कैसी है वह? कहीं छिप पाई या नहीं? उसके छिपने की जगह भरोसे की है या नहीं?.. मन को अत्यधिक चिन्तित करनेवाले ऐसे विचारों को लिये हुए ही मैं दुर्गपति के घर में दाख़िल हुआ... वहां बरबादी का नज़ारा था – कुर्सियां, मेज़ें, सन्दूक़ तोड़-फोड़ डाले गये थे, बर्तन टूटे-फूटे पड़े थे, सब कुछ लूटा जा चुका था। मैं भागता हुआ सोने के कमरे की ओर ले जानेवाला छोटा-सा ज़ीना चढ़ गया और जीवन में पहली बार मरीया इवानोव्ना के कमरे में प्रवेश किया। मैंने उसका बिस्तर देखा जिसे उचक्कों ने ख़ूब अच्छी तरह से उथला-पुथला था, अलमारी को तोड़ा और लूट लिया गया था, देव-प्रतिमा के सामने दीपक की बत्ती अभी तक धीरे-धीरे सुलग रही थी। खिड़कियों के बीच की दीवार पर लटकनेवाला दर्पण सही-सलामत था... कुंआरी कन्या के इस बहुत ही साधारण, छोटे-से और शांत कमरे की स्वामिनी कहां थी? मेरे मस्तिष्क में एक भयानक-सा विचार कौंध गया – अपनी कल्पना में मैंने उसे लुटेरों के हाथों में देखा... मेरा दिल बैठ गया... मैं फूट-फूटकर रोने लगा और मैंने ऊंची आवाज़ में अपनी प्यारी का नाम लिया... इसी समय हल्की-सी आहट सुनाई दी और अलमारी के पीछे से कांपती तथा पीला-ज़र्द चेहरा लिये हुए पालाशा सामने आई।

"ओह, प्योतर अन्द्रेइच!" उसने हताशा से हाथ झटकते हुए कहा। "कैसा मनहूस दिन है आज! कैसी भयानक चीज़ों का सामना करना पड़ा!"

"मरीया इवानोव्ना कहां है?" मैंने अधीरता से पूछा। "क्या हुआ मरीया इवानोव्ना का?"

"छोटी मालकिन ज़िन्दा हैं," पालाशा ने उत्तर दिया। "अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना के यहां छिपी हुई हैं।"

"पादरी के यहां!" मैं भयभीत होकर चिल्ला उठा। "हे भगवान! पुगाचोव भी वहीं पर है!.."

मैं पागलों की तरह कमरे से बाहर भागा, आन की आन में सड़क पर आ गया, कुछ भी सोचे-विचारे बिना, कुछ भी देखे-सुने और अनुभव किये बिना दौड़ता हुआ पादरी के घर जा पहुंचा। वहां हो-हल्ला, ठहाके और गाने सुनाई दे रहे थे... पुगाचोव अपने साथियों के साथ दावत उड़ा रहा था। पालाशा भी मेरे पीछे-पीछे दौड़ती हुई यहीं आ पहुंची। मैंने उसे अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना को धीरे-से बुला लाने को भेजा। क्षण भर बाद हाथ में ख़ाली बोतल लिये हुए पादरिन ड्योढ़ी में मेरे पास आई।

"भगवान के लिये यह बताइये कि मरीया इवानोव्ना कहां है?" मैंने बेहद उत्तेजना से पूछा।

"वह, मेरी प्यारी, मेरे यहां बीच की ओट के पीछे मेरे पलंग पर लेटी हुई है। ओह, प्योतर अन्द्रेइच, मुसीबत का पहाड़ टूटते-टूटते बचा। बड़ी कृपा है भगवान की कि बुरी घड़ी टल गयी – वह बदमाश दिन का भोजन करने बैठा ही था कि मेरी उस बेचारी बच्ची की आंख खुल गयी और वह कराह उठी!.. मेरी तो जान ही निकल गयी। उसने कराहने की आवाज़ सुन ली – 'बुढ़िया, कौन तुम्हारे यहां कराह रहा है?' मैंने सिर झुकाकर चोर से कहा, 'मेरी भानजी हुज़ूर, उसकी बीमारी का दूसरा हफ़्ता चल रहा है।' – 'जवान है तुम्हारी भानजी?' – 'जवान है हुज़ूर।' – 'बुढ़िया, मुझे दिखाओ तो अपनी भानजी।' मेरा दिल बहुत ज़ोर से धड़कने लगा, मगर हो ही क्या सकता था। 'जैसी आपकी इच्छा हुज़ूर, लेकिन लड़की तो उठकर आपकी सेवा में उपस्थित नहीं हो सकती।' – 'कोई बात नहीं बुढ़िया, मैं ख़ुद जाकर उसे देख लेता हूं।' और वह दुष्ट सचमुच कमरे की ओट के पीछे चला गया। और क्या बताऊं तुम्हें! उसने पर्दा हटाया और अपनी बाज़ जैसी पैनी नज़र से उसे देखा। मगर कोई बात नहीं... भगवान

ने बड़ी दया की! यक़ीन मानना, मैंने और मेरे पति ने घोर यन्त्रणायें सहकर मरने के लिये अपने को तैयार भी कर लिया था। ख़ुशक़िस्मती कहिये, मेरी उस प्यारी बच्ची ने उसे पहचाना नहीं। हे भगवान, कैसा दिन दिखाया है तुमने! कुछ कहते नहीं बनता! बेचारे इवान कुज़्मिच! कौन सोच सकता था ऐसी बात!.. और वसिलीसा येगोरोव्ना? इवान इग्नातिच भी? उसके साथ भला ऐसा सुलूक क्यों किया गया? आप पर कैसे रहम कर दिया उसने? और वह अलेक्सेई इवानोविच श्वाबरिन भी ख़ूब है? कज़्ज़ाकों की तरह बाल कटवा लिये और अब उन्हीं के साथ हमारे यहां बैठा हुआ दावत उड़ा रहा है! बड़ा चलता पुर्ज़ा है! जैसे ही मैंने बीमार भानजी के बारे में कहा, वैसे ही, यक़ीन मानिये, उसने मेरी ओर ऐसे देखा मानो छुरी मेरे आर-पार कर दी हो, लेकिन भंडाफोड़ नहीं किया, इसके लिये ही शुक्रिया उसका।" इसी समय नशे में धुत्त मेहमानों की चीख़-पुकार और फ़ादर गेरासिम की आवाज़ सुनाई दी। मेहमान शराब मांग रहे थे, मेज़बान अपनी पत्नी को पुकार रहा था। पादरिन ने हड़बड़ाते हुए कहा, "अपने घर जाइये, प्योतर अन्द्रेइच, आपका यहां रुकना ठीक नहीं। बदमाशों की पिलाई चल रही है। कहीं किसी शराबी के हत्थे चढ़ गये, तो बहुत बुरा होगा। विदा प्योतर अन्द्रेइच। जो होगा, सो होगा। शायद भगवान रक्षा करेगा।"

पादरिन चली गयी। कुछ शान्त होकर मैं अपने घर की ओर चल दिया। चौक के पास से गुज़रते हुए मुझे कुछ बश्कीरी दिखाई दिये जो सूली के आसपास जमा थे और लटकते हुए मुर्दों के बूट उतार रहे थे। यह अनुभव करते हुए कि उन्हें मना करने में कोई तुक नहीं, मैंने बड़ी मुश्किल से अपने ग़ुस्से पर क़ाबू पाया। अफ़सरों के घरों को लूटते हुए लुटेरे दुर्ग में जहां-तहां भागे फिर रहे थे। हर जगह पीते-पिलाते विद्रोहियों का चीख़ना-चिल्लाना सुनाई दे रहा था। मैं घर पहुंचा। सावेलिच दहलीज़ पर ही मेरी राह देख रहा था।

"भला हो भगवान का!" मुझे देखकर वह चिल्ला उठा। "मैं सोचने लगा था कि बदमाशों ने तुम्हें फिर से पकड़ लिया। भैया, प्योतर अन्द्रेइच! यक़ीन मानोगे, शैतान के बच्चे हमारे यहां से सब कुछ लूट ले गये – कपड़े-लत्ते, गिलाफ़-चादर, चीज़ें, बर्तन –

कुछ भी तो नहीं छोड़ा। भाड़ में जाये यह सब कुछ! भगवान की यही बड़ी कृपा है कि तुम्हें ज़िन्दा छोड़ दिया! इनके सरदार को तो पहचाना तुमने, मालिक?"

"नहीं, नहीं पहचाना। कौन है वह?"

"क्या कहते हो मालिक? तुम उस शराबी को भूल गये जिसने सराय में तुमसे ख़रगोश की खाल का कोट ठग लिया था? कोट बिल्कुल नया था, मगर उस जंगली ने पहनते वक़्त उसे उधेड़ डाला था!"

मैं दंग रह गया। वास्तव में ही पुगाचोव और उस तूफ़ानी रात के मेरे मार्गदर्शक के बीच बहुत समानता थी। मुझे विश्वास हो गया कि पुगाचोव वही व्यक्ति था तथा यह समझने में देर न लगी कि क्यों मुझ पर दया की गयी थी। परिस्थितियों के ऐसे अजीब उलट-फेर पर मैं आश्चर्यचकित हुए बिना न रह सका—एक आवारा को भेंट किये गये बालक के फ़र-कोट ने मुझे सूली के फंदे से बचा लिया और एक सराय से दूसरी में भटकते रहनेवाला पियक्कड़ अब दुर्गों की नाका-बन्दियां कर रहा था और राज्य की नींव हिला रहा था।

"कुछ खाना चाहोगे न?" सावेलिच ने अपनी आदत के मुताबिक़ पूछा। "घर में तो कुछ भी नहीं, जाकर ढूंढ़ता-ढांढ़ता हूं और तुम्हारे खाने के लिये किसी तरह कुछ तैयार कर दूंगा।"

अकेला रह जाने पर मैं अपने विचारों में खो गया। मुझे क्या करना चाहिये? इस दुष्ट के अधीन दुर्ग में ही रहना या उसके गिरोह में शामिल हो जाना अफ़सर को शोभा नहीं देता था। मेरा कर्तव्य इस बात की मांग करता था कि मैं वहां जाऊं, जहां इस समय की कठिन परि-स्थितियों में मातृभूमि के लिये मेरी सेवा उपयोगी हो सकती थी... किन्तु प्रेम बहुत ज़ोर से यह सलाह देता था कि मैं मरीया इवानोव्ना के पास रहूं, उसका रक्षक और संरक्षक बनूं। यद्यपि मैं पहले से ही यह देख रहा था कि परिस्थितियों में निश्चय ही और बहुत शीघ्र परिवर्तन होगा, तथापि मरीया इवानोव्ना की स्थिति के ख़तरे की कल्पना करके कांपे बिना नहीं रह सकता था।

एक कज़्ज़ाक के भागते हुए भीतर आने और यह घोषणा करने से मेरी विचार-शृंखला टूटी कि "महान सम्राट ने तुम्हें अपने यहां आने का आदेश दिया है"।

"कहां है वह?" आदेश-पालन के लिये तत्पर होते हुए मैंने पूछा।

"दुर्गपति वाले घर में," कज़्ज़ाक ने जवाब दिया। "भोजन के बाद हमारे महाराज ग़ुसल करने गये और अब आराम कर रहे हैं। हुज़ूर, सभी बातों से पता चलता है कि बहुत बड़ी हस्ती हैं वह। भोजन के वक़्त उन्होंने सूअर के दो तले हुए बच्चे खाये और वह इतना गर्म भाप-स्नान करते हैं कि तरास कूरोच्किन भी बर्दाश्त न कर सका, उसने तन साफ़ करने का झाड़ू फ़ोमका बिक्बायेव को दे दिया और फिर ख़ुद बड़ी मुश्किल से ठण्डे पानी की बदौलत होश में आया। यही कहना चाहिये कि हमारे महाराज के सभी रंग-ढंग बड़े निराले हैं... और सुनने में आया है कि ग़ुसलघर में उन्होंने अपनी छाती पर अपने सम्राट-चिह्न दिखाये – एक ओर तो पांच कोपेक के सिक्के जितना बड़ा दो सिर वाला उक़ाब और दूसरी ओर अपना चित्र।"

मैंने कज़्ज़ाक के मत का खण्डन करना आवश्यक नहीं समझा और पुगाचोव के साथ अपनी भेंट तथा इस बात की पहले से ही कल्पना करने का प्रयास करते हुए कि इसका क्या अन्त होगा, कज़्ज़ाक के साथ दुर्गपति के घर की ओर चल दिया। पाठक बहुत आसानी से ही यह अनुमान लगा सकता है कि मेरा मन बेचैन था।

जब मैं दुर्गपति के घर पहुंचा, तो झुटपुटा होने लगा था। लटकती लाशोंवाली सूली अब काली और बहुत भयानक लग रही थी। बेचारी वसिलीसा येगोरोव्ना की लाश अभी भी ओसारे के नीचे, जहां दो कज़्ज़ाक पहरा दे रहे थे, पड़ी हुई थी। मुझे बुलाकर लानेवाला कज़्ज़ाक मेरे बारे में सूचना देने गया और उल्टे पांव लौटकर मुझे उस कमरे में ले गया जहां पिछली शाम को मैंने इतने प्यार से मरीया इवानोव्ना से विदा ली थी।

मेरी आंखों के सामने बड़ा असाधारण-सा दृश्य था – मेज़पोश से ढकी मेज़ पर सुराहियां और गिलास रखे थे और कोई दसेक कज़्ज़ाक मुखियों के साथ, जो ऊंची टोपियां और रंगीन क़मीज़ें पहने थे तथा जिनके तोबड़े लाल और आंखें चमक रही थीं, पुगाचोव मेज़ के पास बैठा था। नये शामिल हुए ग़द्दार – यानी श्वाबरिन और हमारा सार्जेंट इनमें नहीं थे। "अरे, हुज़ूर आप हैं!" मुझे देखकर पुगाचोव ने कहा। "कृपया पधारिये, हमारे लिये बड़े गौरव की बात है, बैठिये।" वे

लोग एक-दूसरे के साथ तनिक सट गये। मैं चुपचाप मेज़ के सिरे पर बैठ गया। मेरी बग़ल में बैठे हुए जवान, सुघड़-सुडौल और सुन्दर कज़्ज़ाक ने मेरे लिये शराब का गिलास भर दिया जिसे मैंने छुआ भी नहीं। मैं यहां एकत्रित लोगों को जिज्ञासा से देखने लगा। मेज़ पर कोहनी टिकाये और काली दाढ़ी को अपनी चौड़ी मुट्ठी पर फैलाये पुगाचोव मुख्य स्थान पर बैठा था। तीखे और ख़ासे प्यारे नाक-नक्शे वाले उसके चेहरे पर क्रूरता की झलक तक नहीं थी। वह रह-रहकर पचासेक साल के एक व्यक्ति को सम्बोधित करता था और कभी तो उसे काउंट, कभी तिमोफ़ेइच और कभी चाचा कहता था। सभी साथियों की तरह एक-दूसरे के साथ पेश आते थे और अपने सरदार के प्रति कोई ख़ास आदर-सत्कार नहीं दिखा रहे थे। सुबह के हमले, विद्रोह की सफलता और भावी गतिविधियों के बारे में बातचीत चल रही थी। हर कोई अपनी डींग हांक रहा था, अपनी राय ज़ाहिर करता था और बेरोक-टोक पुगाचोव की बात काटता था। इस अजीब क़िस्म की युद्ध-परिषद में ओरेनबुर्ग पर हमला करने का फ़ैसला किया गया—यह बड़ा साहसपूर्ण निर्णय था जो आपदपूर्ण सफलता के चरम-बिन्दु तक पहुंचता-पहुंचता रह गया। अगले दिन कूच करने की घोषणा की गयी। "तो बन्धुओ," पुगाचोव ने कहा, "बिस्तर पर जाने के पहले आओ मेरा मनपसन्द गीत गा लें। चुमाकोव! शुरू करो!" मेरी बग़ल में बैठे कज़्ज़ाक ने पतली-सी आवाज़ में बजरे खींचनेवालों का एक उदासीभरा गीत शुरू किया और सभी मिलकर गाने लगे—

हरे-भरे प्यारे बलूत, तुम नहीं करो सरसर,
मुझे सोचना, ख़लल न डालो, बोझ बड़ा मन पर,
रौद्र ज़ार के न्यायालय में कल मुझको जाना—
जो कुछ पूछेगा वह मुझसे, होगा बतलाना।
पूछेगा यह ज़ार—"मुझे तुम इतना बतलाओ:
ओ किसान के बेटे, किसके संग मिल चोरी की,
जब डाके डाले, तब किसने तेरा साथ दिया,
बुहत अधिक थे साथी, जिनको तूने साथ लिया?"
"न्यायप्रिय सम्राट, तुम्हें मैं सब कुछ बतलाता,
सब कुछ सच-सच कहूं, ज़रा भी कपट न कर पाता।
सिर्फ़ चार थे मेरे साथी—

पहला तो था – रात अन्धेरी,
दूजा – तेज़ छुरी यह मेरी,
और तीसरा साथी तो था – बढ़िया घोड़ा,
चौथा साथी – धनुष कसा यह मेरा,
मेरे सन्देशों के वाहक तेज़ तीर थे।"
न्याय-धर्म का प्यारा, ज़ार कहेगा तब यह –
"ओ किसान के बेटे, है शाबाश, तुम्हें है
जाना तुमने चोरी करना, उत्तर देना!
भैया, इसके लिये करूं सम्मान तुम्हारा –
महल खुले मैदान बीच मैं बनवाऊंगा,
दो खम्भों के बीच कड़ी मैं डलवाऊंगा।"

सूली के बारे में इस साधारण लोक-गीत ने, जिसे उन्हीं लोगों ने गाया था जिनके भाग्य में सूली लिखी थी, मेरे मन पर कितनी गहरी छाप अंकित की, यह बयान करना मुमकिन नहीं। उनके रौद्र चेहरे, सधी हुई आवाज़ें, उनकी वह उदासी भरी अभिव्यक्ति जिससे वे उन शब्दों को गाते थे जो स्वयं ही बहुत अभिव्यक्तिपूर्ण थे – इन सब चीज़ों ने मुझे अजीब, काव्यमय भय से झकझोर डाला।

मेहमानों ने शराब का एक-एक गिलास और पिया, मेज़ पर से उठे और पुगाचोव से विदा लेकर जाने लगे। मैंने भी ऐसा ही करना चाहा, किन्तु पुगाचोव ने मुझसे कहा, "बैठो, मैं तुम से कुछ बातचीत करना चाहता हूं।" हम दोनों ही रह गये।

कुछ मिनट तक हम दोनों ख़ामोश रहे। पुगाचोव मुझे एकटक देख रहा था, धूर्त्तता और उपहास का अद्भुत भाव लिये अपनी बायीं आंख को कभी-कभी सिकोड़ लेता था। आख़िर वह ऐसी निश्छल प्रफुल्लता से खुलकर हंस दिया कि कारण न जानते हुए मैं ख़ुद भी उसकी ओर देखकर हंसने लगा।

"तो जनाब?" उसने मुझसे कहा, "यह स्वीकार कर लो कि जब मेरे जवानों ने तुम्हारी गर्दन में सूली का फंदा डाला, तो तुम्हारे पैरों तले की धरती खिसक गयी थी? सम्भवतः होश-हवास गुम हो गये थे... अगर तुम्हारा नौकर न आता, तो तुम सूली पर लटक गये होते। उस बुड्ढे-खूसट को मैंने देखते ही पहचान लिया। जनाब ने यह

तो कभी नहीं सोचा होगा कि तुम्हें रास्ता दिखानेवाला व्यक्ति स्वयं महान सम्राट है?" (इतना कहकर वह अपने चेहरे पर बहुत रोबीला और रहस्यपूर्ण भाव ले आया)। "तुम मेरे सम्मुख बहुत अपराधी हो," वह कहता गया, "किन्तु मैंने तुम्हारी नेकी के लिये, इस चीज़ के लिये तुम्हें माफ़ कर दिया कि तुमने उस वक़्त मेरी मदद की थी जब मैं अपने दुश्मनों की नज़र से छिपने के लिये मजबूर था। मगर अभी तो क्या है और आगे देखना! जब अपना राज्य प्राप्त कर लूंगा, तो तुम्हारे लिये और बहुत कुछ करूंगा! निष्ठा से मेरी सेवा करने का वचन देते हो?"

इस बदमाश का प्रश्न और उसका ऐसा साहस, मुझे ये दोनों चीज़ें इतनी मनोरंजक प्रतीत हुईं कि मैं मुस्कराये बिना न रह सका।

"किसलिये मुस्करा रहे हो?" उसने नाक-भौंह सिकोड़कर मुझसे पूछा। "या तुम यह विश्वास नहीं करते कि मैं महान सम्राट हूं? साफ़-साफ़ जवाब दो।"

मैं उलझन में पड़ गया—एक आवारा को सम्राट मान लेना मेरे बस की बात नहीं थी—मुझे लगा कि यह अक्षम्य कायरता होगी। उसके मुंह पर उसे धोखेबाज़ कहना मौत को बुलावा देना था। ग़ुस्से की पहली झोंक में सूली के फंदे के नीचे और सभी की आंखों के सामने मैं जो करने को तैयार था, वह अब मुझे व्यर्थ डींग मारना प्रतीत हो रहा था। मैं दुविधा में पड़ गया। पुगाचोव निष्ठुरता का भाव लिये मेरे उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था। आख़िर (आज भी मैं बहुत आत्मसन्तोष से इस क्षण को याद करता हूं) मानवीय दुर्बलता पर कर्तव्य-भावना की विजय हुई। मैंने पुगाचोव को उत्तर दिया, "सुनो, मैं तुमसे सब कुछ सच-सच कहे देता हूं। ख़ुद ही सोचो, क्या मैं तुम्हें सम्राट मान सकता हूं? तुम चतुर व्यक्ति हो—मेरे ऐसा करने पर तुमने स्वयं यह जान लिया होता कि मैं मक्कारी कर रहा हूं।"

"तो तुम्हारे ख़्याल में मैं कौन हूं?"

"भगवान ही जानता है। लेकिन तुम कोई भी क्यों न हो, तुम एक भयानक खिलवाड़ कर रहे हो।"

पुगाचोव ने झटपट मेरी ओर देखा।

"तो तुम यह विश्वास नहीं करते," उसने कहा, "कि मैं सम्राट

प्योतर फ़्योदोरोविच हूं? ख़ैर, ठीक है। किन्तु क्या साहसी को ही सफलता नहीं मिलती? क्या पुराने वक़्तों में ग्रीश्का ओत्रेप्येव* ने राज नहीं किया था? मेरे बारे में जो भी चाहो, सोचो, मगर मेरा साथ दो। मैं कौन हूं, तुम्हें इससे क्या लेना-देना? किसी के नाम से क्या फ़र्क़ पड़ता है? वफ़ादारी और ईमानदारी से मेरी सेवा करो और मैं तुम्हें फ़ील्डमार्शल और प्रिंस बना दूंगा। क्या ख़्याल है तुम्हारा?"

"नहीं," मैंने दृढ़ता से जवाब दिया। "मैं जन्मजात कुलीन हूं, मैंने सम्राज्ञी के प्रति निष्ठावान रहने की शपथ ली है – तुम्हारी सेवा नहीं कर सकता। अगर तुम सचमुच ही मेरी भलाई चाहते हो, तो मुझे ओरेनबुर्ग जाने दो।"

पुगाचोव सोचने लगा।

"अगर जाने दूं," उसने कहा, "तो कम से कम यह वचन तो देते हो कि मेरे विरुद्ध नहीं लड़ोगे?"

"मैं तुम्हें यह वचन कैसे दे सकता हूं?" मैंने उत्तर दिया। "ख़ुद ही जानते हो कि अपनी मर्ज़ी का मालिक नहीं हूं – अगर मुझे तुम्हारे ख़िलाफ़ लड़ने का हुक्म मिलेगा, तो ऐसा करूंगा, और कोई चारा नहीं। अब तो तुम ख़ुद बड़े अधिकारी हो – अपने अधीनों से आज्ञा-पालन की मांग करते हो। जब मेरी सेवा की आवश्यकता होगी और अगर मैं उससे इन्कार करूंगा, तो यह कैसा लगेगा? मेरी जान तुम्हारी मुट्ठी में है, मुझे छोड़ दोगे तो तुम्हें धन्यवाद दूंगा, सूली दिलवा दोगे तो भगवान तुम्हारी करनी का निर्णय करेगा – मैंने तुमसे सचाई कह दी।"

मेरी निश्छल, दो टूक बात से पुगाचोव दंग रह गया।

"ऐसा ही सही," मेरे कंधे पर हाथ मारते हुए उसने कहा। "दण्ड दिया जाये तो दण्ड, और अगर क्षमा किया जाये तो क्षमा।

---

* ग्रीश्का ओत्रेप्येव – एक भगोड़ा साधु जिसने ज़ार इवान रौद्र का बेटा, प्रिंस द्मीत्री होने का ढोंग किया था। पोलैंडी हस्तक्षेपकारियों का यह कठपुतला, "झूठा द्मीत्री" १६०५ और १६०६ में ग्यारह महीने तक शासन करता रहा था। – सं०

जहां तुम्हारा मन चाहे, वहां जाओ और जो चाहो, वह करो। कल मुझसे विदा लेने आ जाना और अब जाकर सो जाओ। मुझे भी नींद आ रही है।"

मैं पुगाचोव के कमरे से बाहर सड़क पर आ गया। रात शान्त और पाले से ठण्डी-ठिठुरी हुई थी। चांद-सितारे ख़ूब चमक रहे थे, चौक और सूली को रोशन कर रहे थे। दुर्ग में सब कुछ शान्त था, अन्धेरा छाया था। केवल मदिरालय में रोशनी थी और रात को देर तक पीने-पिलानेवालों का चीख़ना-चिल्लाना सुनाई दे रहा था। मैंने पादरी के घर की ओर देखा। उसके शटर और फाटक-दरवाज़े बन्द थे। वहां सब कुछ शान्त प्रतीत हो रहा था।

मैं घर लौटा और सावेलिच को अपनी अनुपस्थिति के कारण दुख में घुलते पाया। मुझे आज़ाद कर दिया गया है, इस ख़बर से उसे इतनी ख़ुशी हुई कि बयान से बाहर। "भला हो तुम्हारा भगवान।" उसने सलीब का निशान बनाते हुए कहा। "सुबह होते ही हम दुर्ग से चल देंगे और कहीं भी चले जायेंगे। मैंने तुम्हारे खाने के लिये कुछ तैयार कर दिया है, उसे खा लो और सुबह तक चैन से सोये रहो।"

मैंने सावेलिच की इस सलाह पर अमल किया और बड़े मन से भोजन करके मानसिक और शारीरिक रूप से बेहद थका-टूटा हुआ फ़र्श पर ही गहरी नींद सो गया।

नौवां अध्याय

जुदाई

बहुत मधुर था, मेरी प्यारी, तुमसे मिलना,
बहुत दुखद, ज्यों हृदय गंवाना रहा बिछुड़ना।

हेरास्कोव

ढोल की आवाज़ से तड़के ही मेरी आंख खुल गयी। मैं लोगों के एकत्रित होने के स्थान की ओर चल दिया। पुगाचोव के लोग-

बाग वहां सूली के क़रीब, जहां अभी तक पिछले दिन की लाशें लटक रही थीं, क़तारों में खड़े हो रहे थे। कज़्ज़ाक घोड़ों पर सवार थे और फ़ौजी बन्दूकें लिये खड़े थे। झण्डे लहरा रहे थे। कुछ तोपें, जिनमें मैंने हमारी तोप भी पहचान ली, तोप-गाड़ियों पर लाद दी गयी थीं। सारे दुर्गवासी भी यहीं थे, नकली सम्राट का इन्तज़ार कर रहे थे। दुर्गपति के घर के ओसारे के क़रीब एक कज़्ज़ाक किर्गीज़ी नस्ल के एक बहुत ही बढ़िया सफ़ेद घोड़े की लगाम थामे खड़ा था। मैंने दुर्गपति की बीवी की लाश को नज़रों से ढूंढ़ने की कोशिश की। अब उसे एक तरफ़ को हटाकर चटाई से ढंक दिया गया था। आख़िर पुगाचोव ड्योढ़ी से बाहर निकला। लोगों ने टोपियां उतार लीं। ओसारे में रुककर पुगाचोव ने सबका अभिवादन किया। उसके एक मुखिया ने तांबे के सिक्कों की थैली पकड़ा दी और वह मुट्ठियां भर-भरकर उन्हें बिखेरने लगा। लोग शोर मचाते हुए उन्हें उठाने के लिये लपके और किसी-किसी का हाथ-पांव भी टूट गया। पुगाचोव के प्रमुख विद्रोही साथी उसे घेरे हुए थे। श्वाबरिन भी उनमें खड़ा था। हमारी नज़रें मिलीं। मेरी नज़र में तिरस्कार देखकर उसने दिली ग़ुस्से तथा बनावटी उपहास के भाव से मुंह फेर लिया। भीड़ में मुझे पहचानकर पुगाचोव ने मेरी ओर सिर झुकाया और मुझे अपने पास बुलाया। "सुनो," उसने मुझसे कहा, "अभी ओरेनबुर्ग जाओ और मेरी ओर से गवर्नर तथा सभी जनरलों को यह बता दो कि एक हफ़्ते बाद मेरी राह देखें। उन्हें यह सलाह देना कि बाल-सुलभ स्नेह के साथ मेरा स्वागत करें और मेरी बात मानें, वरना वे कठोर दण्ड से नहीं बच सकेंगे। हुज़ूर, तुम्हारी यात्रा शुभ रहे।" इसके बाद उसने श्वाबरिन की तरफ़ इशारा करते हुए लोगों से कहा, "यह तुम लोगों का नया दुर्गपति है – इसकी हर बात मानो और वह तुम्हारे तथा दुर्ग के लिये मेरे सामने ज़िम्मेदार है।" ये शब्द सुनकर मेरा दिल दहल गया – श्वाबरिन को दुर्गपति बना दिया गया; मरीया इवानोव्ना उसके हाथों में रह गयी! हे भगवान, उसका क्या होगा! पुगाचोव ओसारे से नीचे उतरा। उसके लिये घोड़ा लाया गया। उन कज़्ज़ाकों का इन्तज़ार किये बिना, जो घोड़े पर सवार होने में उसकी सहायता करना चाहते थे, वह फुर्ती से उस पर चढ़ गया।

इसी वक़्त मैंने क्या देखा कि मेरा सावेलिच भीड़ में से आगे आया और पुगाचोव के पास जाकर उसने एक काग़ज़ उसकी ओर बढ़ा दिया। मेरे लिये यह अनुमान लगाना कठिन था कि इसका क्या नतीजा होगा। "यह क्या है?" पुगाचोव ने बड़ी शान से पूछा। "पढ़ लो, और तब जान जाओगे", सावेलिच ने उत्तर दिया। पुगाचोव ने काग़ज़ ले लिया और बड़ी गम्भीर मुद्रा बनाकर उसे देर तक देखता रहा। "क्या ग़ज़ब की लिखावट है तुम्हारी?" आख़िर उसने कहा। "हमारी राजसी दृष्टि भी यहां कुछ नहीं पढ़ पा रही। मेरा प्रथम सेक्रेटरी कहां है?"

दफ़ादार की वर्दी पहने एक नौजवान भागता हुआ पुगाचोव के पास आया। "इसे ऊंचे-ऊंचे पढ़ो," नक़ली सम्राट ने काग़ज़ देते हुए कहा। मैं यह जानने को बहुत उत्सुक था कि मेरे इस बुज़ुर्ग को पुगाचोव के नाम क्या लिखने की सूझी है। सेक्रेटरी अक्षर जोड़-जोड़कर ऊंची आवाज़ में पढ़ने लगा –

"मोटी दरेस और धारीदार रेशमी कपड़े के दो गाउन – छः रूबल।"

"क्या मतलब है इसका?" पुगाचोव ने माथे पर बल डालकर पूछा।

"आगे पढ़ने को कहिये," सावेलिच ने इतमीनान से जवाब दिया।

सेक्रेटरी आगे पढ़ने लगा –

"महीन, हरे ऊनी कपड़े की वर्दी – सात रूबल।"

"सफ़ेद कपड़े का पतलून – पांच रूबल।"

"कफ़ोंवाली एक दर्जन हालैंडी क़मीज़ें – दस रूबल।"

"चीनी के बर्तनों सहित पेटी – ढाई रूबल ..."

"यह सब क्या बकवास है?" पुगाचोव ने टोक दिया। "मुझे क्या मतलब है चीनी के बर्तनों सहित पेटी, पतलून और कफ़ों से?"

सावेलिच ने खांसकर गला साफ़ किया और समझाने लगा –

"हुज़ूर, यह मेरे मालिक की उन चीज़ों की सूची है जिन्हें दुष्ट लोग चुरा ले गये हैं ..."

"कौन-से दुष्ट लोग?" पुगाचोव ने ग़ुस्से से गरजकर पूछा।

"माफ़ी चाहता हूं, ज़बान ग़ोता खा गयी", सावेलिच ने जवाब

दिया। "दुष्ट हैं या नहीं, तुम्हारे जवानों ने सब कुछ छान मारा और हमारी सारी चीज़ें उठा ले गये। बुरा नहीं मानो – घोड़े की चार टांगें होती हैं, मगर वह भी कभी-कभी ठोकर खा जाता है। अन्त तक पढ़ने को कह दो।"

"अन्त तक पढ़ डालो," पुगाचोव ने कहा। सेक्रेटरी ने पढ़ना जारी रखा –

"एक छींट की और दूसरी तफ़्ते की रेशमी रज़ाई – चार रूबल।"

"लाल कपड़ेवाला लोमड़ी की खाल का कोट – चालीस रूबल।"

"इसके अलावा ख़रगोश की खाल का कोट जो हुज़ूर को सराय में दिया गया – १५ रूबल।"

"यह और क्या बकवास है!" ग़ुस्से से धधकती आंखों की चमक दिखाते हुए पुगाचोव चिल्ला उठा।

मैं यह खुलकर मानता हूं कि अपने इस बेचारे बुज़ुर्ग के लिये मेरा दिल डर गया। उसने फिर से स्पष्टीकरण देना चाहा, मगर पुगाचोव ने उसे बीच में ही टोक दिया –

"ऐसी फ़ुज़ूल की बातें लेकर तुम्हें मेरे पास आने की जुर्रत कैसे हुई?" उसने सेक्रेटरी के हाथों से काग़ज़ झपटते और उसे सावेलिच के मुंह पर फेंकते हुए चिल्लाकर कहा। "मूर्ख बुड्ढा! इन्हें लूट लिया गया – बड़ी आफ़त आ गयी? बूढ़े-खूसट, तुम्हें मेरे और मेरे जवानों के लिये उम्र भर भगवान से इसलिये दुआ मांगनी चाहिये कि तुम और तुम्हारा मालिक उनके साथ सूली पर नहीं लटक रहे हो जिन्होंने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया... ख़रगोश की खाल का कोट! दूंगा तुम्हें मैं ख़रगोश की खाल का कोट! क्या तुम यह नहीं जानते कि मैं कोट बनवाने के लिये ज़िन्दा ही तुम्हारी खाल उधड़वा सकता हूं?"

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी," सावेलिच ने उत्तर दिया, "मैं ठहरा ग़ुलाम आदमी और मालिक की दौलत के लिये जवाबदेह हूं।"

पुगाचोव स्पष्टतः अच्छे मूड में था। उसने मुंह फेरा तथा एक भी शब्द कहे बिना अपना घोड़ा आगे बढ़ा ले चला। श्वाबरिन और दूसरे मुखिया उसके पीछे-पीछे हो लिये। पूरा गिरोह व्यवस्थित ढंग से दुर्ग से बाहर निकला। लोग-बाग पुगाचोव को विदा करने उसके पीछे-पीछे चल दिये। मैं और सावेलिच ही चौक में रह गये। मेरा

यह बुज़ुर्ग अपनी सूची हाथ में लिये था और बहुत अफ़सोस से उसे देख रहा था।

मेरे साथ पुगाचोव के अच्छे रवैये को देखकर उसने इससे फ़ायदा उठाना चाहा था, लेकिन अपने इस नेक इरादे में उसे कामयाबी नहीं मिली। ग़लत ढंग से अपना जोश दिखाने के लिये मैंने उसे डांटना-फटकारना चाहा, मगर अपनी हंसी को नहीं रोक पाया।

"हंसो, मालिक, हंसो," सावेलिच ने कहा। "लेकिन जब नये सिरे से सारी गिरस्ती जमानी होगी, तब देखेंगे कि हंसी आयेगी या नहीं।"

मैं मरीया इवानोव्ना से मिलने के लिये झटपट पादरी के घर की ओर चल दिया। पादरिन ने मुझे बुरा समाचार सुनाया। मरीया इवानोव्ना को पिछली रात को बहुत ज़ोर का बुख़ार चढ़ गया था। वह बेहोश और सरसाम की हालत में थी। पादरिन मुझे उसके कमरे में ले गयी। मैं दबे पांव उसके पलंग के पास गया। उसके चेहरे पर हुए परिवर्तन से मैं हैरान रह गया। उसने मुझे पहचाना नहीं। पादरी गेरासिम और उसकी नेक बीवी की बातों पर कान न देते हुए, जो संभवतः मुझे तसल्ली दे रहे थे, मैं देर तक उसके सामने खड़ा रहा। क्षुब्ध करनेवाले विचार मेरे मन में घूम रहे थे। क्रूर विद्रोहियों के बीच छोड़ दी गयी इस बेचारी, असहाय यतीम की स्थिति और अपनी बेबसी से मैं भयभीत हो रहा था। सबसे अधिक तो श्वाबरिन मेरी कल्पना को यातना प्रदान कर रहा था। अब, जब उसे नक़ली सम्राट से सत्ता मिल गई थी, वह उस दुर्ग का सरदार बन गया था, जहां क़िस्मत की मारी वह मासूम लड़की रह गयी थी जिससे उसे नफ़रत थी, तो वह उसके साथ मनमाना सुलूक कर सकता था। मैं क्या करता? कैसे उसे सहायता देता? किस तरह चोर-उचक्कों से उसे निजात दिलवाता? केवल एक ही उपाय था – मैंने इसी समय ओरेनबुर्ग जाने का निर्णय किया, ताकि बेलोगोर्स्क दुर्ग को जल्दी से जल्दी मुक्त करवा सकूं और इस काम में यथाशक्ति सहयोग दूं। मैंने पादरी और अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना से विदा ली, मन के उमड़ते प्यार से उसको उसके हाथों में सौंपा जिसे अपनी पत्नी मानता था। मैंने अपनी अभागी-असहाय मरीया का हाथ अपने हाथ में लेकर उसे आंसुओं से तर

करते हुए चूमा। "अलविदा", पादरिन ने दरवाज़े तक मेरे साथ आते हुए कहा, "अलविदा, प्योतर अन्द्रेइच। शायद अच्छे दिन आयेंगे और हम मिलेंगे। हमें भूलियेगा नहीं और अक्सर ख़त लिखियेगा। बेचारी मरीया इवानोव्ना को तो अब आपके सिवा न तो कोई तसल्ली देनेवाला है और न उसका कोई संरक्षक ही है।"

चौक में आकर मैं क्षणभर को रुका, मैंने सूली की तरफ़ देखा, नतमस्तक हुआ, दुर्ग से बाहर निकला और सावेलिच के साथ, जो लगातार मेरे पीछे-पीछे आ रहा था, ओरेनबुर्ग की ओर जानेवाली सड़क पर चल दिया।

मैं अपने ख़्यालों में खोया हुआ चला जा रहा था कि अचानक मुझे अपने पीछे घोड़े की टापें सुनाई दीं। मैंने मुड़कर देखा, तो दुर्ग की ओर से एक कज़्ज़ाक को सरपट घोड़ा दौड़ाते आते पाया। वह एक बश्कीरी घोड़े की लगाम थामे हुए उसे अपने साथ ला रहा था और दूर से ही मुझे कुछ इशारे कर रहा था। मैं रुक गया और शीघ्र ही मैंने हमारे सार्जेंट को पहचान लिया। मेरे नज़दीक पहुंचकर वह अपने घोड़े से नीचे उतरा और मुझे दूसरे घोड़े की लगाम पकड़ाते हुए बोला, "हुज़ूर! हमारे महाराज ने आपके लिये घोड़ा और अपना यह फ़र-कोट भेजा है" (ज़ीन के साथ भेड़ की खाल का कोट बंधा हुआ था)। "इसके अलावा," वह रुका और हिचकिचाया, "उसने आपके लिये... पचास कोपेक... भी भेजे हैं... पर मैं उन्हें रास्ते में ही कहीं खो बैठा हूं, माफ़ी चाहता हूं, हुज़ूर।" सावेलिच ने उसको तिरछी नज़र से देखा और बड़बड़ाया—"रास्ते में खो बैठा हूं! तुम्हारी भीतर वाली जेब में क्या खनक रहा है? बेहया कहीं का!"—"क्या खनक रहा है मेरी जेब में?" ज़रा भी झेंपे बिना सार्जेंट ने वाक्य दोहराया। "भगवान तुम्हारा भला करे, बाबा! पचास कोपेक नहीं, यह तो लगाम खनक रही है।"—"ख़ैर, ठीक है," मैंने इस बहस का अन्त करते हुए कहा। "उसे मेरी ओर से धन्यवाद देना जिसने तुम्हें भेजा है, लौटते समय खोये हुए पचास कोपेक को ढूंढ़ने की कोशिश करना और उनकी वोदका पी लेना।"—"बहुत, बहुत शुक्रिया, हुज़ूर," उसने अपना घोड़ा मोड़ते हुए जवाब दिया, "हमेशा आपके लिये ख़ुदा से दुआ मांगूंगा।" इतना कहकर वह एक हाथ से जेब को

सम्भाले हुए घोड़े को सरपट वापस दौड़ा ले चला और क्षण भर बाद नज़र से ओझल हो गया।

भेड़ की खाल का कोट पहनकर मैं घोड़े पर सवार हो गया और सावेलिच को मैंने अपने पीछे बिठा लिया। "देखा मालिक," बुड्ढे ने कहा, "व्यर्थ ही मैंने उस लुटेरे को अपनी अर्ज़ी नहीं दी थी – उचक्के को शर्म आई, यद्यपि लम्बी टांगोंवाला यह बश्कीरी घोड़ा और भेड़ की खाल का कोट उस सबकी आधी क़ीमत के बराबर भी नहीं है जो उन शैतान के बच्चों ने हमारे यहां से चुरा लिया और जो तुमने खुद उसे दे दिया था। फिर भी ये काम आयेंगे, भागते भूत की लंगोटी ही सही।"

दसवां अध्याय

शहर की नाकाबन्दी

> डाल पड़ाव चरागाहों में औ' पर्वत पर,
> दृष्टि उकाब सरीखी डाली शहर, नगर पर,
> हुक्म दिया – दीवार बना, सब भेद छिपाओ,
> रात हुई तो धावा बोला, दल-बल लेकर।
>
> **हेरास्कोव**

ओरेनबुर्ग के निकट पहुंचने पर हमें मुंडे सिरों और जल्लाद की चिमटियों द्वारा कुरूप बनाये गये चेहरोंवाले क़ैदियों की भीड़ दिखाई दी। वे दुर्ग के पंगु सैनिकों की निगरानी में क़िलेबन्दी के नज़दीक काम कर रहे थे। उनमें से कुछ ठेलों में भरकर खाई से कूड़ा-करकट निकाल रहे थे, दूसरे फावड़ों से ज़मीन खोद रहे थे। राज लोग प्राचीर के ऊपर ईंटें ढो-ढोकर नगर-दीवार की मरम्मत कर रहे थे। फाटक पर सन्तरियों ने हमें रोका और पासपोर्ट मांगे। किन्तु सार्जेंट को जैसे ही यह मालूम हुआ कि मैं बेलोगोर्स्क दुर्ग से आ रहा हूं, वह मुझे सीधे जनरल के पास ले गया।

जनरल बाग़ में थे। वे पतझर से पातहीन हुए सेबों के पेड़ों को

ध्यान से देख रहे थे और बूढ़े माली की सहायता से उन्हें बड़े प्यार से भूसे से ढक रहे थे। उनके चेहरे पर चैन, अच्छे स्वास्थ्य और खुश-मिज़ाजी की झलक थी। मुझे देखकर उन्हें खुशी हुई और वे उन भयानक घटनाओं के बारे में पूछ-ताछ करने लगे जिनका मैं साक्षी रहा था। मैंने उन्हें सब कुछ बताया। बूढ़े जनरल बहुत ध्यान से मेरी बातें सुनते और साथ ही सूखी टहनियां भी काटते रहे। "बेचारा मिरोनोव!" मेरा दर्दभरा क़िस्सा ख़त्म हो जाने पर जनरल ने कहा। "उसके लिये बड़ा अफ़सोस है — बहुत अच्छा अफ़सर था। मदाम मिरोनोवा भी भली महिला थीं, खुम्मियों का अचार डालने में तो कमाल हासिल था उन्हें! और कप्तान की बेटी माशा का क्या हुआ?" मैंने बताया कि वह पादरिन के पास दुर्ग में ही रह गयी है। "हाय, हाय, हाय!" जनरल कह उठे। "बहुत बुरा हुआ, बहुत बुरा हुआ यह। उन चोर-लुटेरों के अनुशासन पर बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता। क्या बनेगा उस बेचारी लड़की का?" उत्तर में मैंने कहा कि बेलोगोर्स्क दुर्ग दूर नहीं है और सम्भवतः जनरल साहब मुसीबत के मारे दुर्गवासियों को मुक्ति दिलाने के लिये फ़ौरन वहां फ़ौजें भेज देंगे। जनरल ने संशय से सिर हिलाया। "देखा जायेगा, देखा जायेगा," उन्होंने कहा। "इस बारे में सोच-विचार करने के लिये हमारे पास अभी समय है। मेरे यहां चाय का प्याला पीने के लिये आने की कृपा करना। आज मेरे घर पर युद्ध-परिषद की बैठक होगी। तुम हमें उस निकम्मे पुगाचोव और उसकी सेना के बारे में भरोसे की सूचना दे सकोगे। फ़िलहाल तुम जाकर आराम करो।"

मुझे जो क्वार्टर दिया गया था और जहां सावेलिच आवश्यक व्यवस्था कर रहा था, मैं वहां पहुंचा और बड़ी बेचैनी से नियत समय की प्रतीक्षा करने लगा। पाठक तो बड़ी आसानी से यह कल्पना कर सकता है कि मैं उस परिषद की बैठक में जाने से नहीं चूका जो मेरे भाग्य के लिये इतना अधिक महत्त्व रखती थी। नियत समय पर मैं जनरल के यहां पहुंच गया।

नगर का एक अधिकारी, यदि मैं भूल नहीं कर रहा हूं, किमखाब का अंगरखा पहने थलथल और लाल-लाल गालोंवाला चुंगी का डायरे-क्टर मुझसे पहले ही वहां मौजूद था। वह इवान कुज़्मिच के बारे

में, जिसे उसने अपना मित्र बताया, मुझसे पूछ-ताछ करने लगा, अक्सर अतिरिक्त प्रश्न तथा उपदेशात्मक टीका-टिप्पणियां करते हुए मुझे टोकता जाता था, जो उसे यदि युद्ध-कला का जानकार नहीं, तो कम से कम समझदार और जन्मजात कुशाग्र बुद्धिवाला व्यक्ति अवश्य प्रकट करती थीं। इसी बीच अन्य आमन्त्रित लोग भी जमा हो गये। जनरल को छोड़कर उनमें सेना से सम्बन्धित एक भी आदमी नहीं था। जब सभी लोग बैठ गये और सबके सामने चाय का प्याला आ गया, तो जनरल ने बहुत स्पष्ट रूप से और विस्तारपूर्वक सारी स्थिति पर प्रकाश डाला।

"तो महानुभावो," जनरल कहते गये, "अब हमें यह तय करना है कि हम विद्रोहियों के विरुद्ध आक्रमणात्मक या रक्षात्मक कार्रवाई करें? इन दोनों विधियों के पक्ष-विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। दुश्मन का जल्दी से मुंह तोड़ने के लिये आक्रमणात्मक कार्रवाई ज़्यादा उम्मीद बंधवाती है, रक्षात्मक कार्रवाई अधिक विश्वसनीय है और उसमें कम जोखिम होती है... सो हम उचित क्रम में यानी सबसे छोटे पदवाले की राय जानने से इस काम को आरम्भ करते हैं। तो श्रीमान छोटे लेफ़्टिनेंट!" जनरल ने मुझे सम्बोधित करते हुए अपनी बात जारी रखी, "हमारे सामने अपना मत प्रकट करने की कृपा करें।"

मैं उठकर खड़ा हो गया और आरम्भ में पुगाचोव और उसके गिरोह का संक्षिप्त वर्णन करने के बाद मैंने यह कहा कि नक़ली सम्राट नियमित सेना के सामने नहीं टिक सकेगा।

नगर-अधिकारियों को स्पष्टतः मेरा मत अच्छा नहीं लगा। उन्हें इसमें युवा आदमी की गर्ममिज़ाजी और ढिठाई दिखाई दी। खुसर-फुसर होने लगी और मुझे किसी के द्वारा दबी ज़बान में कहे गये "दूध पीता बच्चा है" शब्द साफ़ सुनाई दिये। जनरल ने मुझे सम्बोधित करते हुए मुस्कराकर कहा —

"श्रीमान छोटे लेफ़्टिनेंट! युद्ध-परिषदों की बैठकों में प्रारम्भिक मत आक्रमणात्मक कार्रवाई के पक्ष में ही व्यक्त किये जाते हैं — यह स्वाभाविक क्रम है। अब हम दूसरों से अपने मत प्रकट करने को कहेंगे। श्रीमान कौंसिलर! अपनी राय ज़ाहिर कीजिये।"

किमख़ाब का अंगरखा पहने बुज़ुर्ग ने जल्दी से चाय का तीसरा प्याला, जिसमें काफ़ी रम डाली गयी थी, ख़त्म किया और जनरल को यह जवाब दिया –

"हुज़ूर, मेरे ख़्याल में हमें न तो आक्रमणात्मक और न रक्षात्मक कार्रवाई ही करनी चाहिये।"

"आप यह क्या कह रहे हैं श्रीमान कौंसिलर?" जनरल ने हैरान होते हुए आपत्ति की। "रणनीति में अन्य कोई उपाय नहीं है – रक्षात्मक या आक्रमणात्मक कार्रवाई ..."

"हुज़ूर, ख़रीदने की नीति पर चलिये।"

"हुं ... हुं! बहुत समझदारी की राय है आपकी! ख़रीदने की नीति पर भी चला जा सकता है और हम आपकी इस सलाह का भी उपयोग करेंगे। उस निकम्मे के सिर के लिये हम गुप्त कोश से ... सत्तर या एक सौ रूबल की घोषणा कर सकते हैं ..."

"और तब," चुंगी के डायरेक्टर ने जनरल को टोकते हुए कहा, "अगर ये उचक्के अपने सरदार की मुश्कें बांधकर उसे हमारे हवाले न कर दें, तो आप मुझे कौंसिलर नहीं, किर्ग़ीज़ी भेड़ कह सकते हैं।"

"हम इसके बारे में और सोच-विचार करेंगे और गहराई में जायेंगे," जनरल ने उत्तर दिया। "पर कोई सैनिक उपाय भी करना चाहिए। महानुभावो, सभी उचित क्रम से अपने मत प्रकट करें।"

सभी ने मेरे विरुद्ध मत प्रकट किया। हर किसी ने यही कहा कि सेनाओं पर भरोसा नहीं किया जा सकता, सफलता का विश्वास नहीं हो सकता, सावधानी बरतनी चाहिये आदि, आदि। सबका यही ख़्याल था कि मैदान में सामने आकर हथियारों से कामयाबी की आज़-माइश करने के बजाय क़िले की मज़बूत पथरीली दीवार के पीछे और तोपों की छाया में रहना कहीं अधिक समझदारी की बात होगी। सभी लोगों के विचार सुनने के बाद जनरल ने पाइप में से राख झाड़ी और बोले –

"महानुभावो! मुझे यह कहना होगा कि मैं पूरी तरह से श्रीमान छोटे लेफ़्टिनेंट के मत का समर्थन करता हूं, क्योंकि यह मत सूझबूझ की रणनीति के सभी नियमों पर आधारित है, जो लगभग हमेशा ही रक्षात्मक कार्रवाई पर आक्रमणात्मक कार्रवाई को तरजीह देती है।"

जनरल इतना कहकर रुके और पाइप में तम्बाकू भरने लगे। मेरे स्वाभिमान की विजय हो गयी थी। मैंने गर्व से सरकारी कर्मचारियों की ओर देखा, जो असन्तोष और बेचैनी ज़ाहिर करते हुए आपस में खुसर-फुसर कर रहे थे।

"किन्तु महानुभावो," जनरल ने गहरी सांस के साथ-साथ तम्बाकू के धुएं का घना बादल-सा छोड़ते हुए अपनी बात जारी रखी, "जब हमारी कृपालु सम्राज्ञी द्वारा मेरे हाथों में सौंपे गये प्रान्त की सुरक्षा का प्रश्न सम्मुख हो, तो मैं अपने ऊपर इतनी बड़ी ज़िम्मेदारी लेने की हिम्मत नहीं कर सकता। इसलिये मैं बहुमत के साथ अपनी सहमति प्रकट करता हूं जिसके अनुसार शहर के भीतर रहते हुए नाकाबन्दी का इन्तज़ार करना कहीं अधिक समझदारी और कम जोखिम का काम होगा और दुश्मन के हमलों को तोपों और (यदि ऐसा सम्भव हो) तो जवाबी धावों से नाकाम बनाना चाहिये।

सरकारी कर्मचारियों ने अब मेरी ओर उपहासपूर्ण दृष्टि से देखा। परिषद की बैठक समाप्त हो गयी। मैं सम्मानीय जनरल की इस दुर्बलता पर अफ़सोस किये बिना न रह सका कि उन्होंने अपनी आस्था के विरुद्ध रणनीति से अनभिज्ञ और अनुभवहीन लोगों के मत का अनुकरण करने का निर्णय किया था।

इस विख्यात परिषद की बैठक के कुछ दिन बाद हमें पता चला कि पुगाचोव अपने वादे के मुताबिक़ ओरेनबुर्ग के नज़दीक आता जा रहा है। शहर की दीवार की ऊंचाई से मैंने विद्रोहियों की सेना को देखा। मुझे ऐसे लगा कि अन्तिम आक्रमण के बाद, जिसका मैं साक्षी रहा था, पुगाचोव का लशकर दस गुना बढ़ गया था। उसके पास तोपें भी थीं जो उसने क़ब्ज़े में कर लिये गये छोटे दुर्गों से हासिल की थीं। युद्ध-परिषद के निर्णय को याद करते हुए मैं अभी से ही यह देख रहा था कि ओरेनबुर्ग की दीवारों में लम्बे अर्से तक बन्द रहना पड़ेगा और इसलिये मुझे खीझ-निराशा से रुलाई आ रही थी।

मैं ओरेनबुर्ग की नाकेबन्दी का वर्णन नहीं करूंगा जो पारिवारिक टिप्पणियों की नहीं, इतिहास की थाती है। संक्षेप में इतना ही कहूंगा कि स्थानीय अधिकारियों की असावधानी के कारण यह नगरवासियों के लिये विनाशकारी सिद्ध हुई। उन्हें भुखमरी और सभी तरह की

मुसीबतें सहनी पड़ीं। इस बात की आसानी से कल्पना की जा सकती है कि ओरेनबुर्ग का जीवन असह्य था। सभी मरे मन से अपने भाग्य-निर्णय की प्रतीक्षा कर रहे थे। महंगाई के कारण, जो वास्तव में ही भयानक थी, सभी हाय-तोबा करते थे। नगरवासी अपने अहातों में आकर गिरनेवाले तोप के गोलों के आदी हो गये थे। पुगाचोव के धावों में भी लोगों की आम जिज्ञासा नहीं रही थी। ऊब के मारे मेरा दम निकलता था। वक़्त बीतता जा रहा था। बेलोगोर्स्क से कोई पत्र नहीं आया था। सभी रास्ते कटे हुए थे। मरीया इवानोव्ना से मेरा बिछोह बहुत बोझल होता जा रहा था। उसका क्या हुआ, यह अस्पष्टता मुझे बड़ी यातना देती थी। घुड़सवारी ही मेरे मनबहलाव का एकमात्र साधन थी। पुगाचोव की मेहरबानी से मेरे पास अच्छा घोड़ा था जिसे मैं अपनी थोड़ी-सी ख़ुराक का हिस्सा खिला देता था और जिस पर सवार होकर मैं हर दिन पुगाचोव के घुड़सवारों के साथ बन्दूकों की लड़ाई में हिस्सा लेने के लिये शहर से बाहर जाता था। इस तरह की लड़ाई में आम तौर पर बदमाशों का ही पलड़ा भारी रहता जो ख़ूब खाते और ख़ूब शराब पीते थे तथा जिनके पास बढ़िया घोड़े भी थे। नगर की मरियल-सी घुड़सेना उनसे पार पाने में असमर्थ थी। कभी-कभी हमारी भूखी पैदल फ़ौज भी मैदान में उतरती, मगर बहुत गहरी बर्फ़ बिखरे हुए घुड़सवारों का कामयाबी से मुक़ाबला करने में उसके लिये बाधा सिद्ध होती। क़िले की फ़सील से तोपें व्यर्थ ही दहाड़तीं, मगर मैदान में जाकर धंस जातीं और घोड़ों के बेहद कमज़ोर होने के कारण हिल-डुल न पातीं। ऐसा रंग-ढंग था हमारी सैनिक कार्रवाई का! और यह नतीजा था ओरेनबुर्ग के सरकारी कर्मचारियों की सावधानी और समझदारी का!

एक बार जब हमें दुश्मन की काफ़ी बड़ी भीड़ को तितर-बितर करने और भगाने में किसी तरह कामयाबी मिल गयी, तो मैं घोड़ा दौड़ाता हुआ अपने साथियों से पिछड़ गये एक कज़्ज़ाक के पास जा पहुंचा। मैं अपनी तुर्की तलवार से उस पर भरपूर वार करने ही वाला था कि वह अचानक टोपी उतारकर चिल्ला उठा –

"नमस्ते, प्योतर अन्द्रेइच! भगवान की कृपा से कैसे हैं आप?"

मैंने उसकी तरफ़ देखा और हमारे दुर्ग के सार्जेंट को पहचान

लिया। उसे देखकर मुझे इतनी ख़ुशी हुई कि बयान नहीं कर सकता।

"नमस्ते, मक्सीमिच," मैंने कहा। "बहुत समय हो गया तुम्हें बेलोगोर्स्क से आये हुए?"

"नहीं, भैया प्योतर अन्द्रेइच। कल ही लौटा हूं। आपके लिये मेरे पास ख़त है।"

"कहां है वह?" मैं बहुत ही बेचैनी से चिल्ला उठा।

"मेरे पास है," भीतर की जेब में हाथ डालते हुए मक्सीमिच ने उत्तर दिया। "मैंने पालाशा से वादा किया था कि इसे किसी न किसी तरह आप तक पहुंचा दूंगा।" तह किया हुआ एक काग़ज़ मुझे देकर वह सरपट घोड़ा दौड़ाता हुआ चला गया। मैंने काग़ज़ खोला और धड़कते दिल से यह पढ़ा –

"भगवान की ऐसी ही इच्छा थी और उसने सहसा मुझसे मेरे माता-पिता छीन लिये: इस धरती पर अब न तो मेरा कोई सगा-सम्बन्धी है और न ही रक्षक-संरक्षक। यह जानते हुए कि आप हमेशा मेरी भलाई चाहते रहे हैं और हर किसी की सहायता करने को तैयार हैं, मैं आप ही से यह अनुरोध कर रही हूं। भगवान से यही प्रार्थना है कि यह पत्र किसी तरह आप तक पहुंच जाये! मक्सीमिच ने वादा किया है कि वह इसे आप तक पहुंचा देगा। पालाशा ने मक्सीमिच से यह भी सुना है कि धावों के वक़्त वह अक्सर आपको दूर से देखता है और यह कि आप अपनी जान की बिल्कुल चिन्ता नहीं करते तथा उनके बारे में नहीं सोचते जो आंसू बहाते हुए आपकी रक्षा के लिये भगवान से प्रार्थना करते रहते हैं। मैं लम्बे अर्से तक बीमार रही और जब स्वस्थ हुई तो अलेक्सेई इवानोविच ने, जो मेरे दिवंगत पिता की जगह अब यहां दुर्गपति है, पुगाचोव को मेरे बारे में सूचित कर देने की धमकी देकर पादरी गेरासिम को मुझे उसे सौंपने के लिये विवश कर दिया। मैं सन्तरियों के पहरे में अपने घर में रह रही हूं। अलेक्सेई इवानोविच मुझे अपने साथ शादी करने को मजबूर कर रहा है। वह कहता है कि उसने मेरी ज़िन्दगी बचाई है, क्योंकि अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना के इस धोखे का भंडाफोड़ नहीं किया जिसने बदमाशों से यह कहा था कि मैं मानो उसकी भानजी हूं। अलेक्सेई इवानोविच जैसे व्यक्ति की पत्नी बनने के बजाय मैं मर जाना कहीं बेहतर मानती हूं। वह मेरे

साथ बड़ा क्रूर व्यवहार करता है और यह धमकी देता है कि अगर मैं अपना इरादा नहीं बदलूंगी और उसकी बीवी बनने को राज़ी नहीं हो जाऊंगी, तो वह मुझे उस दुष्ट के डेरे पर ले जायेगा और तब मेरा भी लिज़ावेता ख़ार्लोवा * जैसा ही हाल होगा। मैंने अलेक्सेई इवानोविच से प्रार्थना की है कि वह मुझे सोचने-विचारने का कुछ समय दे। वह तीन दिन तक और इन्तज़ार करने को राज़ी हो गया है। अगर तीन दिन बाद मैं उससे शादी नहीं करूंगी, तो मुझ पर किसी तरह से रहम नहीं किया जायेगा। प्यारे प्योतर अन्द्रेइच! केवल आप ही मेरे एकमात्र रक्षक हैं, मुझ असहाय की रक्षा कीजिये। जनरल और सभी कमांडरों से अनुरोध कीजिये कि हमारी सहायता को जल्दी से जल्दी सेनायें भेजें, और यदि सम्भव हो, तो स्वयं भी आ जाइये। मैं हूं आपकी आज्ञा-कारिणी असहाय यतीम

मरीया मिरोनोवा।"

यह पत्र पढ़कर मैं तो मानो पागल हो गया। बड़ी बेरहमी से अपने बेचारे घोड़े को एड़ लगाता हुआ मैं उसे नगर की ओर बढ़ा ले चला। रास्ते में मैं असहाय मरीया की मदद करने के लिये तरह-तरह की तरकीबें सोचता रहा, मगर कुछ भी नहीं सोच पाया। घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ मैं नगर में पहुंचा, सीधे जनरल की तरफ़ चल दिया और कुछ भी सोचे-विचारे बिना भागता हुआ उनके सामने जा पहुंचा।

फेनिज पाइप से कश खींचते हुए जनरल कमरे में इधर-उधर आ-जा रहे थे। मुझे देखकर रुके। शायद मेरी सूरत देखकर उन्हें हैरानी हुई होगी और उन्होंने चिन्ता प्रकट करते हुए मेरे इस तरह हड़बड़ी में आने का कारण जानना चाहा।

"हुज़ूर," मैंने उनसे कहा, "आपको अपने सगे पिता की तरह मानते हुए आपके पास आया हूं। भगवान के लिये मेरा अनुरोध पूरा करने से इन्कार नहीं कीजिये – मेरे समूचे जीवन के सुख-सौभाग्य की बात है।"

---

* नीज्नेओज़ेर्नाया दुर्गपति मेजर ख़ार्लोव की पत्नी। मेजर ख़ार्लोव की पुगाचोव ने हत्या कर दी थी। – सं०

"क्या बात है, भैया?" आश्चर्यचकित बूढ़े ने पूछा। "क्या कर सकता हूं मैं तुम्हारे लिये? बोलो।"

"हुज़ूर, मुझे सैनिकों की एक कम्पनी और पचासेक कज़्ज़ाक अपने साथ लेकर बेलोगोर्स्क दुर्ग जाने और उसे साफ़ करने की आज्ञा दीजिये।"

जनरल यह मानते हुए कि मेरा दिमाग़ चल निकला है (और इसमें उनसे लगभग भूल भी नहीं हुई थी) मुझे एकटक देखते रहे।

"क्या मतलब? क्या मतलब है बेलोगोर्स्क दुर्ग को साफ़ करने से आपका?" आख़िर जनरल ने पूछा।

"कामयाबी की गारंटी करता हूं," मैंने बड़े जोश से जवाब दिया। "बस, आप मुझे जाने दीजिये।"

"नहीं, मेरे नौजवान," उन्होंने सिर हिलाते हुए कहा। "इतने बड़े फ़ासले पर शत्रु के लिये मुख्य सेना-केन्द्र से आपका सम्पर्क काट देना और आप पर पूरी तरह विजय प्राप्त कर लेना आसान होगा। सम्पर्क कट जाने पर..."

मैं इस बात से डर गया कि जनरल रणनीति पर विचार-विनिमय आरम्भ करने जा रहे हैं और इसलिये मैंने झटपट उन्हें टोका।

"कप्तान मिरोनोव की बेटी ने मुझे पत्र लिखा है," मैंने जनरल से कहा। "उसने सहायता की प्रार्थना की है। श्वाबरिन उसे मजबूर कर रहा है कि वह उससे शादी करे।"

"सच? ओह, यह श्वाबरिन बड़ा Schelm* है और अगर मेरे हत्थे चढ़ गया तो हुक्म दूंगा कि चौबीस घण्टे के भीतर उस पर मुक़दमा चलाकर फ़ैसला किया जाये और हम उसे क़िले की दीवार के सामने खड़ा करके गोली से उड़वा देंगे! किन्तु फ़िलहाल तो सब्र से काम लेना होगा..."

"सब्र से काम लेना होगा!" मैं पागलों की तरह चिल्ला उठा। "और वह इसी बीच मरीया इवानोव्ना से शादी कर लेगा!.."

"अरे, यह तो कोई बड़ी मुसीबत नहीं होगी," उन्होंने मेरी बात काटी। "उसके लिये फ़िलहाल श्वाबरिन की बीवी बन जाना

---

* बदमाश (जर्मन)।

बेहतर होगा। इस वक़्त वह उसकी रक्षा कर सकता है। जब हम उसे गोली से उड़ा देंगे, तो भगवान की कृपा से कोई वर भी मिल जायेगा। प्यारी विधवाएं कुंवारियां नहीं बैठी रहतीं, मेरा मतलब यह कि किसी लड़की की तुलना में विधवा को अधिक जल्दी से पति मिल जाता है।"

"श्वाबरिन उससे शादी कर ले, इसके बजाय तो मैं मर जाना कहीं बेहतर समझूंगा!" मैं दीवानों की तरह कह उठा।

"ओह, हो, हो!" बूढ़े जनरल ने अर्थपूर्ण ढंग से उत्तर दिया। "अब समझा, लगता है कि तुम खुद मरीया इवानोव्ना के प्रेम में गहरे डूबे हुए हो। यह दूसरी बात है! बेचारा नौजवान! लेकिन सैनिकों की कम्पनी और पचास कज़्ज़ाक मैं तुम्हें किसी हालत में भी नहीं दे सकता। ऐसी मुहिम बेसमझी की बात होगी। मैं अपने ऊपर इसकी ज़िम्मेदारी नहीं ले सकता।"

मैंने निराशा से सिर झुका लिया, हताशा मुझ पर हावी हो गयी। अचानक मेरे दिमाग़ में एक ख़्याल कौंध गया। वह ख़्याल क्या था, पाठक इसके बारे में, जैसा कि पुराने उपन्यासकार कहा करते थे, अगले अध्याय में जान जायेंगे।

ग्यारहवां अध्याय

विद्रोही गांव

बेशक जन्मजात वह क्रोधी, पर उस क्षण था तृप्त बबर,
बड़े प्यार से पूछा उसने –
"कहो किसलिये आये हो तुम,
किस कारण, इस जगह, इधर?"

अ० सुमारोकोव

जनरल के यहां से मैं जल्दी-जल्दी अपने क्वार्टर में आया। सावेलिच ने सदा की भांति उपदेश और उलाहने देने शुरू किये। "इन शराबी लुटेरों के साथ लड़ने के लिये जाने की भी तुम्हें क्या सूझती है, मालिक! यह भी कोई कुलीनों का काम है? कौन जाने, कब व्यर्थ ही तुम्हारी

जान पर आ बने! तुर्कों और स्वीडन वालों से लड़ने जाते, तो कोई बात भी थी, लेकिन अब जिनसे जूझने जाते हो उनका तो नाम लेते भी शर्म आती है।"

मैंने उसे टोकते हुए पूछा कि मेरे पास कुल कितने पैसे हैं?

"पैसे तो हैं तुम्हारे पास," उसने ख़ुशी ज़ाहिर करते हुए जवाब दिया। "लुटेरों ने वहां चाहे सब कुछ छान मारा था, फिर भी मैंने कुछ तो छिपा ही लिया।" इतना कहकर उसने जेब से चांदी के सिक्कों से भरी बुनी हुई थैली निकाली।

"तो सावेलिच," मैंने उससे कहा, "अब यह आधी रक़म तुम मुझे दे दो और आधी ख़ुद ले लो। मैं बेलोगोर्स्क दुर्ग को जा रहा हूं।"

"भैया, प्योतर अन्द्रेइच।" दयालु बूढ़े ने कांपती आवाज़ में कहा। "क्या तुम्हें भगवान का डर-ख़ौफ़ नहीं? कैसे तुम ऐसे वक़्त में, जब सभी ओर दुश्मन छाये हुए हैं, वहां जाने की बात सोच सकते हो! अगर तुम्हें ख़ुद पर रहम नहीं आता, तो अपने माता-पिता पर ही रहम करो। क्यों तुम वहां जाना चाहते हो? किसलिये? थोड़ा सब्र करो – हमारी फ़ौजें आ जायेंगी, इन बदमाशों को पकड़ लेंगी और तब जहां तुम्हारा मन माने, जा सकते हो।"

किन्तु मैं तो पक्का इरादा बना चुका था।

"अब सोच-विचार करने में कोई तुक नहीं," मैंने बूढ़े को जवाब दिया। "मुझे जाना ही होगा, मैं जाये बिना रह ही नहीं सकता। दुखी न होओ, सावेलिच, भगवान दयालु है, शायद हम फिर मिलेंगे! तुम न तो किसी बात का संकोच करना और न कंजूसी ही। तुम्हें जिस भी चीज़ की ज़रूरत हो ख़रीद लेना, चाहे कितनी ही क़ीमत क्यों न देनी पड़ी। ये पैसे मैं तुम्हें भेंट करता हूं। अगर तीन दिन बाद मैं न लौटूं..."

"यह तुम क्या कह रहे हो, मालिक?" सावेलिच ने मुझे टोक दिया। "मैं तुम्हें अकेले जाने दूंगा! यह तो तुम सपने में भी मुझसे नहीं कहना। अगर तुमने जाने का ही फ़ैसला कर लिया है, तो मैं चाहे पैदल ही तुम्हारे पीछे-पीछे जाऊं, मगर तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूंगा। तुम क्या सोचते हो कि मैं तुम्हारे बिना अकेला पत्थर की दीवार के पीछे बैठा रहूंगा! मेरा क्या दिमाग़ ख़राब हुआ है? तुम कुछ भी

क्यों न कहो मालिक, मैं तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूंगा।"

मैं जानता था कि सावेलिच से बहस करना बेकार है और इसलिये मैंने उससे सफ़र की तैयारी करने को कह दिया। आध घण्टे बाद मैं अपने बढ़िया घोड़े पर सवार हो गया और सावेलिच मरियल-सी लंगड़ी घोड़ी पर, जो उसे एक नगरवासी ने इसलिये मुफ़्त भेंट कर दी थी कि उसके पास उसे खिलाने-पिलाने को कुछ नहीं था। हम नगर के फाटक पर पहुंचे, सन्तरियों ने हमें जाने दिया। हम ओरेनबुर्ग से बाहर आ गये।

झुटपुटा होने लगा था। मेरा रास्ता बेर्दा गांव से होकर जाता था, जहां अब पुगाचोव के लोगों की छावनी थी। सीधा रास्ता बर्फ़ से ढका हुआ था, मगर सारी स्तेपी में घोड़ों के सुमों के निशान दिखाई दे रहे थे, जो हर दिन नये हो जाते थे। मैं तेज़ दुलकी चाल से घोड़े को दौड़ा रहा था। सावेलिच बड़ी मुश्किल से मेरे पीछे-पीछे आ पा रहा था और दूर से ही लगातार चिल्लाकर मेरी मिन्नत करता था – "धीरे, धीरे दौड़ाओ घोड़े को, मालिक। मेरी मनहूस घोड़ी तुम्हारे लम्बी टांगोंवाले शैतान का साथ नहीं दे सकती। कहां जाने की जल्दी में हो? अगर दावत पर जाते होते तो दूसरी बात थी, मगर सच मानना, कुल्हाड़े के नीचे सिर रखने जा रहे हो... भैया प्योतर अन्द्रेइच... प्योतर अन्द्रेइच!.. मेरी जान नहीं लो!.. हे भगवान, मेरे मालिक का बेटा यों ही अपनी जान गंवाने जा रहा है!"

शीघ्र ही बेर्दा की बत्तियां जगमगा उठीं। हम खाइयों-खड्डों के निकट पहुंचे जो इस गांव की मानो प्राकृतिक क़िलेबन्दियां थीं। सावेलिच मेरे पीछे-पीछे अपनी घोड़ी बढ़ाता आ रहा था और लगातार दर्दभरी आवाज़ में गिड़गिड़ाता तथा मेरी मिन्नत-समाजत करता जा रहा था। मुझे आशा थी कि इस गांव के गिर्द चक्कर काटकर सही-सलामत आगे निकल जाऊंगा कि अचानक अन्धेरे में लट्ठ लिये पांच किसानों को अपने सामने देखा। पुगाचोव की छावनी की यह अग्रिम चौकी थी। उन्होंने हमें ललकारा। चूंकि मैं गुप्त संकेत-शब्द नहीं जानता था, इसलिये मैंने चुपचाप उनके पास से निकल जाना चाहा। किन्तु उन्होंने मुझे उसी क्षण घेर लिया और एक ने मेरे घोड़े की लगाम पकड़ ली। मैंने झटपट तलवार निकाली और किसान के सिर पर

वार किया। टोपी ने उसे बचा लिया, किन्तु वह लड़खड़ा गया और उसने लगाम छोड़ दी। दूसरे किसान घबराकर भाग निकले। मैंने इस मौक़े का फ़ायदा उठाया, घोड़े को एड़ लगायी और उसे सरपट दौड़ा ले चला।

रात घिरती आ रही थी और उसका अन्धेरा मुझे हर तरह के ख़तरे से बचा सकता था कि अचानक मुड़कर देखने पर मैंने बूढ़े सावेलिच को ग़ायब पाया। बेचारा अपनी लंगड़ी घोड़ी पर उन बदमाशों से बचकर नहीं निकल पाया था। तो मैं क्या करता? कुछ मिनट तक इन्तज़ार करने और इस बात का पक्का यक़ीन हो जाने पर कि उसे रोक लिया गया है, मैंने घोड़े को मोड़ा और उसकी मदद को चल दिया।

मुझे खाई के निकट पहुंचने पर दूर से ही शोर, चीख़-पुकार और अपने सावेलिच की आवाज़ सुनाई दी। मैंने घोड़े को तेज़ किया और शीघ्र ही अपने को उन पहरा देनेवाले किसानों के निकट पाया जिन्होंने मुझे कुछ मिनट पहले रोका था। सावेलिच उनके बीच था। उन्होंने बूढ़े को उसकी मरियल घोड़ी से नीचे खींच लिया था और उसकी मुश्कें बांधने ही वाले थे। मुझे देखकर किसान खिल उठे। वे चीख़ते हुए मुझ पर झपटे और आन की आन में उन्होंने मुझे घोड़े से नीचे खींच लिया। उनमें से एक ने, जो सम्भवतः उनका मुखिया था, हमसे कहा कि इसी क्षण वे हमें अपने महाराज के पास ले जायेंगे। "हमारे महाराज ही," उसने इतना और जोड़ दिया, "यह हुक्म देंगे कि तुम दोनों को अभी सूली दी जाये या दिन निकलने तक इन्तज़ार किया जाये।" मैंने किसी तरह का विरोध नहीं किया, सावेलिच ने भी मेरा अनुकरण किया और पहरेदार विजेताओं की तरह हमें ले चले।

खाई लांघकर हम गांव में पहुंचे। सभी झोंपड़ों में बत्तियां जल रही थीं। सभी जगह शोर-शराबा और हल्ला-गुल्ला सुनाई दे रहा था। सड़क पर मुझे बहुत से लोग मिले, किन्तु अंधेरे में किसी का भी हमारी ओर ध्यान नहीं गया और ओरेनबुर्ग के अफ़सर के रूप में किसी ने भी मुझे नहीं पहचाना। हमें सीधे चौराहे के नुक्कड़वाले घर के सामने ले जाया गया। फाटक के पास शराब से भरे लकड़ी के पीपे और दो तोपें रखी थीं। "यह रहा महल," एक किसान ने कहा, "हम अभी

आपके बारे में सूचना देंगे।" वह घर में चला गया। मैंने सावेलिच की ओर देखा: बूढ़ा मन ही मन भगवान से प्रार्थना करता हुआ अपने ऊपर सलीब का निशान बना रहा था। मुझे काफ़ी देर इन्तज़ार करना पड़ा। आख़िर किसान लौटकर मुझसे बोला, "भीतर जाओ, हमारे महाराज ने कहा है कि अफ़सर को भीतर भेज दिया जाये।"

मैं घर या महल में, जैसा कि किसान उसे कहते थे, गया। उसमें चर्बी की दो बत्तियां जल रही थीं और दीवारों पर सुनहरा काग़ज़ चिपका हुआ था। वैसे बेंचें, मेज़, रस्सी से लटकती हुई हाथ-मुंह धोने की चिलमची, कील पर लटकता हुआ तौलिया, कोने में रखा चिमटा और अंगीठी के सामने चौड़ी जगह पर रखे मिट्टी के बर्तन— सभी कुछ साधारण किसानी घर जैसा था। पुगाचोव लाल अंगरखा पहने, ऊंची टोपी डाटे और कूल्हों पर बड़ी शान से हाथ रखे देव-प्रतिमाओं के नीचे बैठा था। उसके कुछ मुख्य साथी बनावटी अधीनता का सा दिखावा करते हुए उसके निकट खड़े थे। साफ़ नज़र आ रहा था कि ओरेनबुर्ग के अफ़सर के आने की ख़बर ने विद्रोहियों में बड़ी जिज्ञासा पैदा कर दी थी और उन्होंने अपने पूरे ठाट-बाट के साथ मुझसे मिलने की तैयारी की थी। पुगाचोव ने मुझे देखते ही पहचान लिया। उसकी बनावटी शान यकायक ग़ायब हो गयी। "अरे, आप हैं हुज़ूर!" उसने बड़े उत्साह से कहा। "क्या हालचाल है? यहां कैसे आना हुआ?" मैंने जवाब दिया कि अपने काम से जा रहा था और आपके लोगों ने मुझे रोक लिया। "किस काम से?" उसने मुझसे पूछा। क्या जवाब दूं, मैं यह नहीं जानता था। पुगाचोव ने यह मानते हुए कि मैं दूसरे लोगों के सामने बताना नहीं चाहता, अपने साथियों से बाहर जाने को कहा। दो को छोड़कर, जो अपनी जगह से नहीं हिले, बाक़ी सबने उसके आदेश का पालन किया। "तुम्हें जो कुछ भी कहना है किसी तरह की झिझक के बिना इनके सामने कहो।" पुगाचोव ने मुझसे कहा, "मैं इनसे कुछ भी नहीं छिपाता हूं।" मैंने इस नक़ली सम्राट के राज़दानों को कनखियों से देखा। उनमें से एक था नाटा-सा, झुकी पीठ और सफ़ेद दाढ़ीवाला बूढ़ा। उसमें तो इस चीज़ के सिवा कोई ख़ास बात नहीं थी कि वह अपने भूरे कोट के कंधे पर नीला रिबन डाले था। लेकिन उसके साथी को ज़िन्दगी भर नहीं भूल सकूंगा।

लम्बा-तड़ंगा, मोटा-तगड़ा, चौड़े-चकले कंधे। मुझे वह कोई पैंतालीस साल का लगा। लाल रंग की घनी दाढ़ी, चमकती हुई भूरी आंखें, नासिकाओं के बिना नाक और माथे तथा गालों पर लाल रंग के धब्बे उसके चेचकरू चौड़े चेहरे को ऐसा भाव प्रदान करते थे कि बयान से बाहर। वह लाल कमीज़, किर्गीज़ी चोग़ा और कज़्ज़ाकी शलवार पहने था। पहला (जैसा कि मुझे बाद में पता चला) फ़रार दफ़ादार बेलोबोरोदोव था और दूसरा अफ़ानासी सोकोलोव (जिसे ख़्लोपूशा के नाम से पुकारा जाता था) निर्वासित अपराधी था जो तीन बार साइबेरिया की खानों से भाग चुका था। मेरे मन में भारी उथल-पुथल पैदा करनेवाली भावनाओं के बावजूद मैं संयोग से जिन लोगों की संगत में आ गया था, उन्होंने मेरी कल्पना को अत्यधिक वशीभूत कर लिया। किन्तु पुगाचोव ने प्रश्न दोहराकर फिर से मेरा ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया – "तो बोलो, किसलिये तुम ओरेनबुर्ग से आये हो?"

मेरे दिमाग़ में एक अजीब-सा ख़्याल आया – मुझे लगा कि दूसरी बार पुगाचोव से मिला देनेवाली मेरी क़िस्मत ने मानो ऐसा मौक़ा दिया है कि मैं अपने इरादे को अमली शक्ल दूं। मैंने इस मौक़े का फ़ायदा उठाने का फ़ैसला किया और अपने फ़ैसले पर सोच-विचार किये बिना पुगाचोव के सवाल का जवाब दिया –

"मैं एक यतीम लड़की को बचाने के लिये, जिसके साथ वहां बुरा बर्ताव किया जा रहा है, बेलोगोर्स्क जा रहा था।"

पुगाचोव की आंखों में बिजली-सी कौंध गई।

"मेरे लोगों में से किसे यतीम लड़की के साथ बुरा बर्ताव करने की हिम्मत हुई?" वह चिल्ला उठा। "वह चाहे कितना ही धूर्त्त क्यों न हो, मेरे इन्साफ़ से नहीं बच सकेगा। बोलो, कौन है वह अपराधी?"

"श्वाबरिन," मैंने जवाब दिया। "वह उस लड़की को बन्दी बनाये हुए है जिसे तुमने पादरिन के यहां बीमारी की हालत में देखा था और उससे ज़बर्दस्ती शादी करना चाहता है।"

"मैं उस श्वाबरिन की अक़्ल ठिकाने करूंगा," पुगाचोव ने रौद्र रूप धारण करते हुए कहा। "उसे मालूम हो जायेगा कि मनमानी और लोगों के साथ बुरा बर्ताव करने का क्या नतीजा होता है। मैं उसे सूली दे दूंगा।"

"कुछ कहने की इजाज़त दो," ख़्लोपूशा ने खरखरी-सी आवाज़ में कहा। "श्वाबरिन को दुर्गपति बनाने में भी तुमने जल्दी की और अब सूली देने की भी जल्दी कर रहे हो। एक कुलीन को कज़्ज़ाकों के सिर पर बिठाकर तुम उनकी बेइज़्ज़ती कर चुके हो और अब उसके बारे में पहली निन्दा-चुगली सुनते ही उसे सूली देकर कुलीनों को नहीं डराओ।"

"कोई ज़रूरत नहीं है उन पर रहम करने की, उन्हें रुतबे देने की!" नीले रिबन वाले बूढ़े ने कहा। "श्वाबरिन को सूली देने में कोई हर्ज नहीं, लेकिन साथ ही इस अफ़सर साहब से अच्छी तरह यह पूछ लेना भी कुछ बुरा नहीं होगा कि किसलिये यहां पधारा है। अगर वह तुम्हें सम्राट नहीं मानता तो तुमसे इन्साफ़ की उम्मीद क्यों रखता है? अगर सम्राट मानता है, तो आज तक ओरेनबुर्ग में तुम्हारे जानी दुश्मनों की बग़ल में क्यों बैठा रहा? क्या तुम्हारे लिये यह हुक्म देना ठीक नहीं होगा कि इसे फ़ौजी दफ़्तर में ले जाया जाये और वहां लोहे की सलाखें गर्मायी जायें? मेरा दिल कहता है कि इस हज़रत को ओरेनबुर्ग के अफ़सरों ने हमारे पास भेजा है।"

शैतान बुड्ढे की दलील मुझे काफ़ी वज़नी लगी। यह सोचकर कि मैं किन लोगों के हाथों में हूं, मेरे रोंगटे खड़े हो गये। पुगाचोव मेरी घबराहट ताड़ गया।

"तो हुज़ूर?" उसने मेरी ओर आंख मारते हुए कहा, "लगता है कि मेरा फ़ील्डमार्शल अक़्ल की बात कह रहा है। क्या ख़्याल है तुम्हारा?"

पुगाचोव द्वारा ली गयी इस चुटकी से फिर मेरी हिम्मत बंध गयी। मैंने शान्ति से जवाब दिया कि मैं पूरी तरह से उसके रहम पर हूं और वह मेरे साथ जैसा भी चाहे, बर्ताव कर सकता है।

"अच्छी बात है," पुगाचोव बोला। "अब यह बताओ कि तुम्हारे नगर की कैसी हालत है?"

"भगवान की कृपा से सब कुछ ठीक-ठाक है," मैंने जवाब दिया।

"सब कुछ ठीक-ठाक है?" पुगाचोव ने मेरे शब्दों को दोहराया। "और लोग भूख से मर रहे हैं!"

नक़ली सम्राट सच कह रहा था। लेकिन मैंने वफ़ादारी की क़सम

निभाते हुए यक़ीन दिलाना शुरू किया कि ये सब झूठी अफ़वाहें हैं और ओरेनबुर्ग में रसद की कोई कमी नहीं है।

"देख रहे हो," बूढ़े ने मेरी बात पकड़ी, "वह तुम्हारी आंखों में साफ़-साफ़ धूल झोंक रहा है। वहां से भागकर आनेवाले सभी लोग यह कहते हैं कि वहां भुखमरी और महामारी फैली हुई है, कि लोग जानवरों की लाशें खाते हैं और उनके मिल जाने पर भी अल्लाह का शुक्र करते हैं। मगर यह हज़रत यक़ीन दिला रहा है कि वहां सब कुछ ठीक-ठाक है। अगर श्वाबरिन को सूली देना चाहते हो तो उसी सूली पर इस छैले को भी लटका दो, ताकि किसी को भी एक-दूसरे से ईर्ष्या न हो।"

ऐसा प्रतीत हुआ कि इस दुष्ट बुड्ढे के शब्दों से पुगाचोव का मन कुछ डांवांडोल हो गया है। मेरी ख़ुशक़िस्मती थी कि ख़्लोपूशा अपने साथी की बात का विरोध करने लगा।

"बस, काफ़ी है, नाऊमिच," उसने कहा। "तुम तो सभी का गला घोंटने और काटने पर उतारू रहते हो। क्या ख़ूब सूरमा हो तुम भी? जाने कहां जान अटकी हुई है तुम्हारी। ख़ुद क़ब्र में पैर लटकाये हुए हो, मगर दूसरों की जान लेने पर उतारू रहते हो। क्या कम ख़ून के धब्बे हैं तुम्हारी आत्मा पर?"

"और तुम तो बड़े दूध के धोये हो?" बेलोबोरोदोव ने आपत्ति की। "तुम में कहां से रहम आ गया?"

"बेशक, मैं भी गुनाहगार हूं," ख़्लोपूशा ने जवाब दिया, "यह हाथ (इतना कहकर उसने हड़ीली मुट्ठी भींच ली और आस्तीन ऊपर चढ़ाकर बालों से ढकी हुई बांह दिखाई) भी ईसाइयों का ख़ून बहाने के लिये अपराधी है। मगर मैंने दुश्मनों की जान ली, मेहमानों की नहीं। मैं चौराहे पर या घने जंगल में अपने शिकार को मारता हूं, अंगीठी के क़रीब घर पर नहीं। मैं लट्ठ और फ़रसे से वार करता हूं, औरतों जैसी निन्दा-चुगलियों से काम नहीं लेता।"

बुड्ढे ने मुंह फेर लिया और बड़बड़ाया – "नककटा!"

"तुम वहां क्या बड़बड़ा रहे हो, बुड्ढे खूसट?" ख़्लोपूशा चिल्ला उठा। "मैं तुम्हें चखाऊंगा नककटा होने का मज़ा। ज़रा सब्र करो, तुम्हारा वक़्त भी आ जायेगा। ख़ुदा ने चाहा, तो तुम्हारी नाक भी

चिमटी की नज़र हो जायेगी... फ़िलहाल तो इतनी ही ख़ैर मनाओ कि कहीं मैं तुम्हारी दाढ़ी न नोच लूं!"

"ए मेरे जनरलो!" पुगाचोव ने बड़ी शान से कहा। "बस, काफ़ी नोक-झोंक हो गयी। अगर ओरेनबुर्ग के सभी कुत्ते एक ही सूली पर लटक जायें, तो इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ेगा। लेकिन अगर हमारे कुत्ते एक-दूसरे पर झपटेंगे, तो बहुत बुरा होगा। सुलह कर लीजिये।"

ख़्लोपूशा और बेलोबोरोदोव चुप्पी साधे हुए रुखाई से एक-दूसरे की ओर देखते रहे। मुझे इस बातचीत को बदलने की ज़रूरत महसूस हुई जिसका मेरे लिये बहुत ही बुरा अन्त हो सकता था। मैंने पुगाचोव को सम्बोधित करते हुए ख़ुशमिज़ाजी से कहा –

"अरे, हां! घोड़े और भेड़ की खाल के कोट के लिये मैं तो तुम्हें धन्यवाद देना ही भूल गया। तुम्हारी इस मदद के बिना मैं शहर तक न पहुंच पाता और रास्ते में ही ठिठुरकर रह गया होता।"

मेरी यह चाल कामयाब रही। पुगाचोव खिल उठा।

"नेकी के बदले में नेकी करनी चाहिये," पुगाचोव ने आंख मारते और सिकोड़ते हुए कहा। "अच्छा, अब यह बताओ कि उस लड़की से तुम्हारा क्या वास्ता है जिसके साथ श्वाबरिन बुरा बर्ताव कर रहा है? कहीं उसने तुम्हारे दिल में तो घर नहीं कर रखा है? बोलो?"

"वह मेरी मंगेतर है," हवा का रुख़ अपने हक़ में देखते और सचाई को छिपाने की ज़रूरत न महसूस करते हुए मैंने पुगाचोव को जवाब दिया।

"तुम्हारी मंगेतर!" पुगाचोव चिल्ला उठा। "तुमने पहले क्यों नहीं कहा? हम तुम्हारी शादी करेंगे और तुम्हारी शादी की दावत उड़ायेंगे!" इसके बाद उसने बेलोबोरोदोव को सम्बोधित करते हुए कहा, "सुनो, फ़ील्डमार्शल! इन हुज़ूर के साथ हमारी पुरानी दोस्ती है। आओ, अब सब एकसाथ खाना खायें। रात से प्रभात भला। कल सुबह देखा जायेगा कि हम इसके साथ क्या बर्ताव करें।"

मैंने ख़ुशी से इस सम्मान से इन्कार कर दिया होता, मगर कोई चारा नहीं था। दो जवान कज़्ज़ाक लड़कियों ने, जो इस घर के मालिक की बेटियां थीं, मेज़ पर सफ़ेद मेज़पोश बिछा दिया, डबल रोटी और मछली का शोरबा और शराब तथा बियर की कुछ सुराहियां ले आईं।

मैं दूसरी बार पुगाचोव और उसके दुष्ट साथियों की संगत में खाने की एक ही मेज़ पर बैठा था।

अपनी इच्छा के विरुद्ध मैं जिस रंग-रस का साक्षी बना हुआ था, वह काफ़ी रात तक जारी रहा। आख़िर नशा मेरे साथियों पर हावी होने लगा। पुगाचोव अपनी जगह पर बैठा हुआ ही ऊंघने लगा, उसके साथी उठे और उन्होंने मुझे उसे छोड़कर बाहर चलने का इशारा किया। मैं उनके साथ बाहर आ गया। ख़्लोपूशा के हुक्म के मुताबिक़ सन्तरी मुझे फ़ौजी दफ़्तर में ले गये। सावेलिच भी वहीं था और मुझे उसके साथ छोड़कर उन्होंने बाहर से ताला लगा दिया। बूढ़ा सावेलिच घटना-चक्र से इतना चकित था कि उसने मुझसे कुछ भी पूछ-ताछ नहीं की। वह अंधेरे में लेट गया, देर तक आहें भरता तथा आह-ओह करता रहा और आख़िर खर्राटे लेने लगा। मैं ख़्यालों में खो गया, जिन्होंने क्षण भर को भी मुझे पलक नहीं झपकने दी।

अगली सुबह को पुगाचोव ने मुझे बुलवा भेजा। मैं उसके पास गया। उसके घर के बाहर तीन तातारी घोड़ों से जुती हुई स्लेज खड़ी थी। सड़क पर लोगों की भीड़ थी। पुगाचोव से मेरी ड्योढ़ी में भेंट हुई। वह सफ़री कपड़े – फ़र-कोट और किर्ग़ीज़ी टोपी पहने था। पिछली शाम के उसके साथी उसे घेरे हुए थे और उनके चेहरों पर चापलूसी का ऐसा भाव था जो मेरे द्वारा पिछले दिन देखे गये भाव से सर्वथा भिन्न था। पुगाचोव ने प्रसन्नतापूर्वक मुझसे हाथ मिलाया और स्लेज में बैठने को कहा।

हम स्लेज में सवार हो गये। "बेलोगोर्स्क दुर्ग को चलो!" पुगाचोव ने चौड़े कन्धोंवाले तातार कोचवान से कहा जो तीनों घोड़ों को हांकने के लिये स्लेज में तैयार खड़ा था। मेरा दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। घोड़े चल पड़े, घण्टियां बज उठीं और स्लेज हवा से बातें करने लगी...

"रुको! रुको!" ज़ोर से आवाज़ सुनाई दी जो मेरी बहुत ही जानी-पहचानी थी। मैंने सावेलिच को हम लोगों की ओर भागे आते देखा। पुगाचोव ने स्लेज रोकने का आदेश दिया। "भैया, प्योतर अन्द्रेइच!" बूढ़े ने चिल्लाकर कहा। "बुढ़ापे में मुझे नहीं छोड़ो इन बद..." – "अरे बुड्ढे खूसट!" पुगाचोव ने उससे कहा। "भगवान ने हमें फिर मिला दिया। बैठ जाओ, कोचवान की सीट पर।" – "धन्यवाद

महाराज, धन्यवाद हुज़ूर!" सावेलिच ने बैठते हुए कहा। "बूढ़े आदमी की चिन्ता करने और उसके दिल को तसल्ली देने के लिये भगवान तुम्हें सौ बरस तक ज़िन्दा रखे। जब तक जीता रहूंगा, भगवान से तुम्हारे लिये प्रार्थना करूंगा और ख़रगोश की खाल के कोट की अब कभी याद नहीं दिलाऊंगा।"

ख़रगोश की खाल के कोट की चर्चा से पुगाचोव सचमुच ही आग-बबूला हो सकता था। लेकिन ख़ुशक़िस्मती कहिये कि नकली सम्राट ने या तो यह सुना नहीं या फिर बेमौक़े के इस इशारे की तरफ़ जान-बूझकर कोई ध्यान नहीं दिया। घोड़े तेज़ी से दौड़ने लगे – लोग रास्ते में रुक-रुककर दोहरे होते हुए उसका अभिवादन करते। पुगाचोव जवाब में दायें-बायें सिर हिलाता जा रहा था। आन की आन में हम गांव से बाहर आ गये और स्लेज बढ़िया रास्ते पर तेज़ी से बढ़ चली।

इस बात की आसानी से कल्पना की जा सकती है कि इस क्षण मैं क्या अनुभव कर रहा था। कुछ घण्टे बाद मैं उससे मिलनेवाला था जिसे मैं अपने लिये मानो खो ही चुका था। मैं हमारे मिलन-क्षण की कल्पना कर रहा था... मैं उस व्यक्ति के बारे में भी सोच रहा था जिसके हाथों में मेरा भाग्य था और जो किसी अजीब कारणवश अदृश्य सूत्रों से मेरे साथ जुड़ा हुआ था। मुझे उस आदमी की बेसमझी की क्रूरता, ख़ून के प्यासे रवैये का भी ध्यान आया जो अब मेरे दिल की रानी का रक्षक होनेवाला था! पुगाचोव को यह मालूम नहीं था कि वह कप्तान मिरोनोव की बेटी है। ग़ुस्से से पगलाया हुआ श्वाबरिन उसे यह सब कुछ बता सकता था। किसी और तरीक़े से भी पुगाचोव को सारी सचाई मालूम हो सकती थी... तब क्या होगा मरीया इवानोव्ना का? मुझे अपने सारे शरीर में झुरझुरी-सी महसूस हुई, मेरे रोंगटे खड़े हो गये...

पुगाचोव ने यह प्रश्न करके सहसा मेरी विचार-शृंखला को भंग कर दिया –

"हुज़ूर, किन ख़्यालों में खो गये?"

"ख़्यालों में खोये बिना रह ही कैसे सकता हूं," मैंने उसे जवाब दिया। "मैं फ़ौजी अफ़सर और कुलीन हूं। अभी कल तक मैं तुम्हारे विरुद्ध लोहा ले रहा था, आज तुम्हारे साथ एक ही स्लेज में जा रहा

हूं और मेरी ज़िन्दगी की ख़ुशी तुम पर निर्भर है।"

"तो क्या डर लगता है तुम्हें?" पुगाचोव ने पूछा।

मैंने जवाब दिया कि जब एक बार वह मुझे माफ़ कर चुका है, तो मैं केवल उसका दया-पात्र होने की ही नहीं, बल्कि उसकी सहायता पाने की भी आशा रखता हूं।

"तुम ठीक कहते हो, भगवान की क़सम, बिल्कुल ठीक कहते हो!" नक़ली सम्राट ने कहा। "तुमने देखा था न कि मेरे लोग तुम्हें कैसी नज़र से देखते थे। वह बुड्ढा तो आज भी इस बात की रट लगाये हुए था कि तुम जासूस हो, तुम्हें यातना और सूली देनी चाहिये। लेकिन मैं नहीं माना," उसने आवाज़ धीमी करके, ताकि सावेलिच और तातार उसकी बात न सुन सकें, इतना और जोड़ दिया, "क्योंकि तुम्हारा शराब का गिलास और ख़रगोश की खाल का कोट नहीं भूला था। देखते हो न, मैं दूसरों के ख़ून का वैसा ही प्यासा नहीं हूं, जैसा कि तुम्हारे लोग मेरे बारे में कहते हैं।"

बेलोगोर्स्क दुर्ग पर जब क़ब्ज़ा किया गया था और तब क्या हुआ था, मुझे वह सब याद हो आया, लेकिन पुगाचोव की बात का खण्डन करना मैंने आवश्यक नहीं समझा और कुछ भी नहीं कहा।

"मेरे बारे में ओरेनबुर्ग में क्या कहा जा रहा है?" कुछ देर चुप रहने के बाद पुगाचोव ने पूछा।

"कहा जा रहा है कि तुमसे मोर्चा लेना लोहे के चने चबाने के बराबर है। निश्चय ही तुमने अपनी धाक मनवा ली है।"

नक़ली सम्राट के चेहरे पर अहंभाव की तुष्टि झलक उठी।

"हां!" उसने ख़ुश होते हुए कहा। "मैं लड़ता तो ख़ूब डटकर हूं। तुम्हारे ओरेनबुर्ग में युज़ेयेवा के निकट हुई लड़ाई के बारे में जानते हैं या नहीं? चालीस जनरल मार डाले गये, चार पलटनें बन्दी बना ली गयीं। क्या ख़्याल है तुम्हारा, प्रशा का बादशाह मेरे मुक़ाबले में डटा रह सकता?"

इस उचक्के का डींग हांकना मुझे दिलचस्प लगा।

"तुम्हारा अपना क्या ख़्याल है इस बारे में?" मैंने उससे पूछा, "तुम फ़्रेडरिक से निपट लेते?"

"फ़्योदोर फ़्योदोरोविच* से? क्यों नहीं? तुम्हारे जनरलों से तो मैं निपट लेता हूं और उन्होंने उसे पीट डाला था। अभी तक तो मेरे हथियारों ने मेरा साथ दिया है। अभी क्या है, जब मास्को पर चढ़ाई करूंगा, तब देखना।"

"तुम्हारा ख़्याल है कि तुम मास्को पर भी चढ़ाई कर पाओगे?"

नक़ली सम्राट कुछ देर को सोच में डूब गया और धीमे से बोला—

"भगवान ही जानता है। मेरी राह तंग है, विस्तार की कमी है। मेरे जवानों के दिमाग़ों में सभी तरह की उल्टी-सीधी बातें आती हैं। वे चोर-उचक्के हैं। मुझे हर वक़्त अपने कान खड़े रखने चाहिये। पहली नाकामी होते ही वे अपनी गर्दन बचाने के लिये मेरा सिर कटवा देंगे।"

"यही तो बात है!" मैंने पुगाचोव से कहा। "क्या तुम्हारे लिये वक़्त रहते उनसे पिंड छुड़ा लेना और अपने को सम्राज्ञी की दया पर छोड़ देना ज़्यादा अच्छा नहीं होगा?"

पुगाचोव बड़ी कटुता से मुस्कराया।

"नहीं," उसने जवाब दिया, "मेरे लिये क़दम पीछे हटाने के मामले में देर हो चुकी है। मुझे माफ़ नहीं किया जायेगा। जैसे शुरू किया था, वैसे ही जारी रखूंगा। कौन जाने? शायद कामयाबी मिल जाये! ग्रीश्का ओत्रेप्येव ने तो आख़िर मास्को पर शासन किया ही था।"

"उसका अन्त क्या हुआ था, यह तो जानते हो न? उसे खिड़की से बाहर फेंका गया था, उसके टुकड़े-टुकड़े किये गये थे, उसे जलाया गया था, उसकी राख को तोप में भरकर उड़ाया गया था!"

"सुनो," पुगाचोव ने एक अजीब उत्साह से ओतप्रोत होकर कहा। "तुम्हें वह क़िस्सा सुनाता हूं जो एक कल्मीक बुढ़िया ने मुझे बचपन में सुनाया था। एक बार उक़ाब ने कौवे से पूछा— 'कौवे, तुम इस दुनिया में तीन सौ साल तक जीते रहते हो, जबकि मैं कुल

* पुगाचोव ने व्यंग्यपूर्वक प्रशा के बादशाह फ़्रेडरिक द्वितीय को रूसी नाम से सम्बोधित किया है। रूस और प्रशा के बीच सातवर्षीय युद्ध में पुगाचोव सैनिक था। इस युद्ध में रूस ने प्रशा को पराजित किया और १७६० में रूसी सेना बर्लिन में दाख़िल हुई। —सं०

तैंतीस वर्ष तक ही जी पाता हूं, भला क्यों?' – 'इसलिये पक्षीराज,' कौवे ने उसे जवाब दिया, 'कि तुम ताज़ा ख़ून पीते हो और मैं मुर्दा गोश्त पर ज़िन्दा रहता हूं।' उक़ाब ने कुछ देर सोचा और बोला, 'अच्छी बात है, मैं भी ऐसा ही करके देखता हूं।' सो उक़ाब और कौवा उड़ चले। उन्होंने एक मरा हुआ घोड़ा देखा – दोनों नीचे उतरकर उसकी लाश पर जा बैठे। कौवा मांस नोचकर खाने और उसकी तारीफ़ करने लगा। उक़ाब ने एक बार चोंच मारी, दूसरी बार चोंच मारी, पंख फड़फड़ाये और कौवे से कहा, 'नहीं, भैया कौवे, तीन सौ साल तक लाश का गोश्त खाने के बजाय एक बार ताज़ा ख़ून पी लेना कहीं बेहतर है और फिर भगवान जो करे, वही ठीक है!' तो कैसा है यह कल्मीक क़िस्सा?"

"बड़ा दिलचस्प है," मैंने जवाब दिया। "किन्तु मेरी नज़र में हत्या और लूट-मार से जीना भी लाश खाने के बराबर है।"

पुगाचोव ने मुझे हैरानी से देखा और कोई जवाब नहीं दिया। अपने-अपने ख़्यालों में खोये हुए हम दोनों ख़ामोश रहे। तातार कोचवान ने कोई उदासी भरा गीत गाना शुरू कर दिया। सावेलिच कोचवान की सीट पर ऊंघते हुए डोल रहा था। जाड़े की साफ़-सपाट सड़क पर स्लेज उड़ी जा रही थी... अचानक मुझे बाड़ और गिरजे की घण्टे वाली मीनार सहित याइक नदी के खड़े तट पर छोटा-सा गांव दिखाई दिया और कोई पन्द्रह मिनट बाद हमने बेलोगोर्स्क दुर्ग में प्रवेश किया।

बारहवां अध्याय

यतीम

> पेड़ सेब का जैसे अपना –
> नहीं फुनगियां, नहीं नई शाखायें उस पर,
> हाल यही अपनी दुलहन का –
> नहीं पिता हैं, और न मां का स्नेह-छतर।

कौन करे उसका शृंगार?
दे आशीष, उसे दे प्यार?

विवाह-गीत

स्लेज दुर्गपति के घर के निकट पहुंच गयी। लोगों ने पुगाचोव की स्लेज की घण्टियों की आवाज़ पहचान ली और उनके दल के दल हमारे पीछे-पीछे दौड़ने लगे। श्वाबरिन ने बाहर ओसारे में आकर नक़ली सम्राट का स्वागत किया। वह कज़्ज़ाकों की तरह कपड़े पहने था और उसने दाढ़ी बढ़ा ली थी। ग़द्दार ने पुगाचोव को सहारा देकर स्लेज से उतारा और दास सरीखी भावाभिव्यक्तियों द्वारा अपनी प्रसन्नता और निष्ठा व्यक्त की। मुझे देखकर वह घबरा-सा गया, किन्तु शीघ्र ही उसने अपने को सम्भाल लिया और यह कहते हुए मेरी ओर हाथ बढ़ाया – "और तुम भी हमारे हो गये? बहुत पहले ही ऐसा कर लेना चाहिये था!" मैंने मुंह फेर लिया और कोई उत्तर नहीं दिया।

चिर-परिचित कमरे में जाने पर, जहां अतीत के करुण समाधि-लेख की तरह दिवंगत दुर्गपति का डिप्लोमा अभी तक दीवार पर लटका हुआ था, मेरा दिल टीस उठा। पुगाचोव उसी सोफ़े पर बैठ गया जहां अपनी बीवी की बड़बड़ सुनते हुए इवान कुज़्मिच ऊंघ जाया करते थे। श्वाबरिन ख़ुद उसके लिये वोदका लेकर आया। पुगाचोव ने एक जाम पी लिया और मेरी ओर संकेत करते हुए उससे कहा, "इन हुज़ूर की भी ख़ातिरदारी करो!" श्वाबरिन ट्रे लिये हुए मेरे पास आया, लेकिन मैंने दूसरी बार उसकी ओर से मुंह फेर लिया। वह बेहद परेशान नज़र आ रहा था। अपनी सहज बुद्धि से उसने निश्चय ही यह अनुमान लगा लिया था कि पुगाचोव उससे नाराज़ है। वह उससे डरता था और मेरी ओर अविश्वास से देखता था। पुगाचोव ने दुर्ग की स्थिति और शत्रु-सेनाओं आदि के बारे में पूछ-ताछ की और फिर अचानक उससे यह प्रश्न किया –

"यह बताओ, भैया, किस लड़की को तुम बन्दी बनाये हुए हो? उसे मुझे दिखाओ तो।"

श्वाबरिन का चेहरा मुर्दे की तरह पीला हो गया।

"महाराज," वह कांपती आवाज़ में बोला... – "महाराज,

वह बन्दी नहीं है... वह बीमार है... अपने कमरे में लेटी हुई है।"

"मुझे उसके पास ले चलो," नक़ली सम्राट ने अपनी जगह से उठते हुए कहा। टाल-मटोल करना सम्भव नहीं था। श्वाबरिन पुगाचोव को मरीया इवानोव्ना के कमरे की ओर ले चला। मैं उनके पीछे-पीछे हो लिया। श्वाबरिन ज़ीने में रुका।

"महाराज!" वह बोला। "आप मुझे कुछ भी करने का हुक्म दे सकते हैं, लेकिन किसी पराये आदमी को मेरी बीवी के कमरे में नहीं जाने दीजिये।"

मैं सिर से पांव तक कांप उठा।

"तो तुमने शादी कर ली!" मैंने श्वाबरिन से कहा और इस क्षण में उसके टुकड़े-टुकड़े कर डालने को तैयार था।

"बस, काफ़ी है!" पुगाचोव ने मुझे चुप करवा दिया। "यह मेरा मामला है। और तुम," उसने श्वाबरिन को सम्बोधित करते हुए कहा, "बहुत होशियारी दिखाने और बहानेबाज़ी करने की कोशिश नहीं करो। वह तुम्हारी बीवी है या नहीं, मैं जिसको चाहूंगा, उसके पास ले जाऊंगा। हुज़ूर, तुम आओ मेरे साथ।"

कमरे के दरवाज़े के क़रीब श्वाबरिन फिर से रुका और टूटती-सी आवाज़ में बोला –

"महाराज, आपको पहले से ही आगाह कर देना चाहता हूं कि उसे बहुत ज़ोर का बुख़ार है और वह तीन दिन से सरसाम में लगातार बड़बड़ा रही है।"

"दरवाज़ा खोलो!" पुगाचोव ने कहा।

श्वाबरिन अपनी जेबें टटोलने लगा और बोला कि चाबी अपने साथ लाना भूल गया है। पुगाचोव ने दरवाज़े पर ठोकर मारी, ताला टूट गया, दरवाज़ा खुल गया और हम भीतर दाख़िल हुए।

मैंने कमरे में नज़र डाली और सकते में आ गया। किसान औरतों के ढंग की फटी-पुरानी पोशाक पहने दुबली-पतली, पीले चेहरे और अस्त-व्यस्त बालोंवाली मरीया इवानोव्ना फ़र्श पर बैठी थी। उसके सामने रोटी के टुकड़े से ढकी हुई पानी की गागर रखी थी। मुझे देखकर वह चौंकी और चीख़ उठी। तब मेरी क्या हालत हुई थी – मुझे याद नहीं।

पुगाचोव ने श्वाबरिन की ओर देखा और कटु व्यंग्य-बाण छोड़ते हुए कहा –

"ख़ूब अच्छा अस्पताल है तुम्हारा!" इसके बाद मरीया इवानोव्ना के पास जाकर उसने पूछा, "मेरी प्यारी, मुझे यह बताओ कि तुम्हारा पति तुम्हें किस बात की सज़ा दे रहा है? किस कारण अपराधी हो तुम उसके सम्मुख?"

"मेरा पति!" मरीया इवानोव्ना ने इन शब्दों को दोहराया। "यह मेरा पति नहीं है। मैं कभी भी इसकी पत्नी नहीं बनूंगी! अगर कोई मुझे इसके चंगुल से निजात नहीं दिलायेगा, तो मैं मर जाना बेहतर समझूंगी और मर जाऊंगी।"

पुगाचोव ने जलती नज़र से श्वाबरिन की ओर देखा।

"तुमने मुझे धोखा देने की हिम्मत की!" उसने कहा। "जानते हो कमीने, तुम्हारे साथ कैसा सुलूक किया जाना चाहिये?"

श्वाबरिन घुटनों के बल हो गया... इस क्षण तिरस्कार की भावना ने मेरे ग़ुस्से और घृणा की जगह ले ली। मैं एक फ़रार कज़्ज़ाक के पैरों पर पड़े हुए कुलीन को तिरस्कारपूर्वक देख रहा था। पुगाचोव कुछ नर्म पड़ गया।

"इस बार तुम्हें माफ़ करता हूं," उसने श्वाबरिन से कहा, "लेकिन याद रखना कि अगर तुमने फिर ऐसी हरकत की, तो तुम्हें इस अपराध की भी सज़ा दी जायेगी।" इसके बाद मरीया इवानोव्ना को सम्बोधित करते हुए वह स्नेहपूर्वक बोला, "बाहर जाओ, सुन्दरी, मैं तुम्हें मुक्त करता हूं। मैं सम्राट हूं।"

मरीया इवानोव्ना ने झटपट पुगाचोव की तरफ़ देखा और उसे यह भांपते देर न लगी कि उसके सामने उसके माता-पिता का हत्यारा खड़ा है। उसने दोनों हाथों से मुंह ढंक लिया और मूर्च्छित होकर गिर गयी। मैं उसकी ओर लपका, किन्तु इसी क्षण मेरी पुरानी परिचिता पालाशा बेधड़क कमरे में दाख़िल हुई और अपनी मालकिन की देख-भाल करने लगी। पुगाचोव कमरे से बाहर चला गया और हम तीनों नीचे मेहमानख़ाने में आ गये।

"तो हुज़ूर?" पुगाचोव ने हंसते हुए कहा। "सुन्दरी को तो हमने मुक्त करवा लिया! क्या ख़्याल है, अब पादरी को बुलवाकर

तुम्हारे साथ उसे अपनी भानजी की शादी करने को कहा जाये? मैं धर्म-पिता का कर्तव्य निभाऊंगा और श्वाबरिन बनेगा दूल्हे का साथी। खूब छककर पियेंगे और जी भरकर मौज मनायेंगे!"

मुझे जिस बात की शंका थी, वही हुई। पुगाचोव का यह प्रस्ताव सुनकर श्वाबरिन आपे से बाहर हो गया।

"महाराज!" वह पागलों की तरह चिल्ला उठा। "मैं कुसूरवार हूं: मैंने आपके सामने झूठ बोला, लेकिन ग्रिनेव भी आपको धोखा दे रहा है। यह लड़की यहां के पादरी की भानजी नहीं: इवान मिरोनोव की बेटी है जिसे इस दुर्ग पर अधिकार करने के समय सूली दी गयी थी।"

पुगाचोव ने अपनी दहकती आंखें मेरे चेहरे पर टिका दीं।

"यह और क्या मामला है?" उसने हैरान होते हुए पूछा।

"श्वाबरिन ने तुमसे सच कहा है," मैंने दृढ़ता से उत्तर दिया।

"तुमने तो मुझे यह नहीं बताया," पुगाचोव ने कहा, जिसका चेहरा मुरझा सा गया था।

"तुम खुद ही सोचो," मैंने उसे उत्तर दिया, "क्या मैं तुम्हारे लोगों के सामने ऐसा कह सकता था कि मिरोनोव की बेटी ज़िन्दा है? वे तो उसे नोच खाते। किसी हालत में भी उसकी जान न बच पाती!"

"हां, यह भी सच है," पुगाचोव ने हंसते हुए कहा। "मेरे उन पियक्कड़ों ने बेचारी लड़की पर रहम न किया होता। पादरिन ने अच्छा ही किया कि उन्हें चकमा दे दिया।"

"मेरी बात सुनो," पुगाचोव का अच्छा मूड देखकर मैंने अपनी बात आगे बढ़ाई। "तुम्हें क्या कहकर सम्बोधित करूं, मैं यह नहीं जानता और जानना भी नहीं चाहता... किन्तु भगवान जानता है कि तुमने मेरे लिये जो कुछ किया है, मैं उसके बदले में खुशी से अपनी जान तक दे सकता हूं। केवल मुझसे उस बात की मांग न करो जो मेरी मान-मर्यादा और ईसाई के नाते मेरी आत्मा की आवाज़ के विरुद्ध है। तुम मेरे उद्धारक हो। तुमने जैसे आरम्भ किया था, वैसे ही अन्त भी करो – इस बेचारी यतीम लड़की के साथ हमें जहां भी भगवान ले जाये, वहीं जाने दो। और तुम कहीं भी क्यों न होगे, कैसे भी क्यों न

होगे, हम हर दिन तुम्हारी पापी आत्मा के उद्धार के लिये भगवान से प्रार्थना करेंगे ..."

पुगाचोव की कठोर आत्मा पसीज गयी।

"जैसा तुम चाहते हो, वैसा ही सही!" उसने कहा। "सज़ा देता हूं तो सज़ा देता हूं और माफ़ करता हूं, तो माफ़ करता हूं– मेरा यही उसूल है। अपनी इस हसीना को जहां चाहो, वहां ले जाओ। भगवान तुम दोनों को प्यार और सद्बुद्धि दे!"

इतना कहकर उसने श्वाबरिन को सम्बोधित करते हुए आदेश दिया कि वह मुझे उसके अधीन सभी दुर्गों और नगर-द्वारों को लांघने का अनुमति-पत्र लिख दे। पूरी तरह से पराजित श्वाबरिन बुत बना खड़ा था। पुगाचोव दुर्ग देखने चल दिया। श्वाबरिन उसके साथ गया और मैं सफ़र की तैयारी का बहाना करके यहीं रुक गया।

मैं मरीया इवानोव्ना के कमरे की ओर भाग गया। दरवाज़ा बन्द था। मैंने दस्तक दी। "कौन है?" पालाशा ने पूछा। मैंने अपना नाम बताया। दरवाज़े के पीछे से मरीया इवानोव्ना की प्यारी-सी आवाज़ सुनाई दी–"ज़रा रुकिये, प्योतर अन्द्रेइच! मैं कपड़े बदल रही हूं। आप अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना के यहां चले जाइये–मैं भी अभी वहां आ जाऊंगी।"

उसकी बात मानते हुए मैं पादरी गेरासिम के घर की ओर चल दिया। पादरी और पादरिन मुझसे मिलने के लिये बाहर आ गये। सावेलिच ने उन्हें मेरे बारे में पहले से ही सूचना दे दी थी। "नमस्ते, प्योतर अन्द्रेइच," पादरिन ने कहा। "भगवान की कृपा से फिर भेंट हो गयी। कैसा हालचाल है? हम तो आपको हर दिन याद करते थे। प्यारी मरीया इवानोव्ना को तो आपके बिना बहुत कुछ सहना पड़ा!.. हां भैया, यह तो बताइये कि पुगाचोव के साथ आपने कैसे पटरी बिठा ली? आपकी जान कैसे बख़्श दी उसने? और कुछ नहीं तो इसी के लिये हम उस बदमाश को धन्यवाद दे सकते हैं।"–"बस, बस, काफ़ी है, बुढ़िया," पादरी गेरासिम ने उसे टोका। "जो कुछ जानती हो, सभी कुछ कह डालना तो ज़रूरी नहीं। बहुत बोलना अच्छा नहीं होता। भैया प्योतर अन्द्रेइच! कृपया, भीतर आइये! बहुत, बहुत दिनों बाद मिल रहे हैं!"

पादरिन ने घर में उपलब्ध खाने-पीने की सभी चीज़ें मेरे सामने लाकर रख दीं। साथ ही वह लगातार बातें भी करती जाती थी। उसने मुझे बताया कि श्वाबरिन ने कैसे मरीया इवानोव्ना को उसके हवाले कर देने के लिये विवश किया, मरीया इवानोव्ना कैसे फूट-फूटकर रोई और कैसे वह उनसे अलग नहीं होना चाहती थी, कैसे मरीया इवानोव्ना ने पालाशा (बड़ी साहसी लड़की है, जिसने सार्जेंट को भी अपने इशारों पर नचाया) के ज़रिये उसके साथ सम्पर्क बनाये रखा और कैसे उसने मरीया इवानोव्ना को मुझे पत्र लिखने की सलाह दी आदि। दूसरी ओर, मैंने संक्षेप में उसे अपनी कहानी सुनाई। यह सुनकर कि पुगाचोव को उनके द्वारा दिये गये धोखे की जानकारी है, पादरी और पादरिन ने अपने ऊपर सलीब का निशान बनाया। "भगवान का ही भरोसा है हमें तो!" अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना ने कहा। "दुख के बादलों को दूर भगा दो, प्रभु। और अलेक्सेई इवानोविच, क्या कहने हैं उसके! ख़ूब है वह!" इसी क्षण दरवाज़ा खुला और पीले चेहरे पर मुस्कान लिये हुए मरीया इवानोव्ना भीतर आई। उसने किसान युवती की पोशाक उतार दी थी और पहले की तरह ढंग की सादी-सी पोशाक पहने थी।

मैंने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और देर तक मेरे मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला। हम दोनों इतना कुछ कहना चाहते थे कि कुछ भी नहीं कह पा रहे थे। हमारे मेज़बानों ने अनुभव किया कि हमें अब उनकी सुध नहीं थी और इसलिये उन्होंने हमें अकेले छोड़ दिया। हमें दीन-दुनिया की ख़बर नहीं रही। हम बातें करते जाते थे और उनका अन्त नहीं होने को आ रहा था। मरीया इवानोव्ना ने मुझे वह सब कुछ बताया जो दुर्ग पर अधिकार होने के बाद उसे सहन करना पड़ा था। उसने अपनी स्थिति की सारी भयानकता और उन सभी मुसीबतों-आज़माइशों का वर्णन किया जिनका कमीने श्वाबरिन ने उसे शिकार बनाया था। हमने पहले के अच्छे और सुखी समय को भी याद किया... हम दोनों रोये... आख़िर मैं उसे भविष्य की योजना बताने लगा। पुगाचोव के अधीन और श्वाबरिन द्वारा शासित दुर्ग में उसके लिये रहना सम्भव नहीं था। दुश्मन के घेरे में सभी तरह की मुसीबतें सहते हुए ओरेनबुर्ग जाने की भी बात नहीं सोची जा सकती

थी। मरीया इवानोव्ना का दुनिया में कोई सगा-सम्बन्धी नहीं था। मैंने उससे कहा कि वह मेरे माता-पिता के पास गांव चली जाये। शुरू में उसने हिचकिचाहट ज़ाहिर की – मेरे पिता जी का उसके प्रति अच्छा रवैया नहीं था, उसे यह मालूम था और यही चीज़ उसके मन में भय पैदा करती थी। मैंने उसकी शंका को दूर कर दिया। मैं जानता था कि मेरे पिता अपनी मातृभूमि के लिये वीरगति को प्राप्त हुए सम्माननीय योद्धा की बेटी को अपने यहां शरण देना अपना सौभाग्य और कर्तव्य मानेंगे। "प्यारी मरीया इवानोव्ना!" मैंने आखिर कहा। "मैं तुम्हें अपनी पत्नी मानता हूं। अजीब परिस्थितियों ने हमें सदा के लिये अटूट बन्धन में बांध दिया है और दुनिया की कोई भी ताक़त हमें अलग नहीं कर सकती।" मरीया इवानोव्ना ने बड़ी सरलता से, किसी तरह की कृत्रिम झेंप या टालमटोल प्रकट किये बिना मेरी बात सुनी। वह महसूस कर रही थी कि उसका भाग्य मेरे भाग्य से जुड़ चुका है। किन्तु उसने यह दोहराया कि मेरे माता-पिता की सहमति के बिना वह मेरी पत्नी नहीं बनेगी। मैंने उसकी बात नहीं काटी। हमने भावविह्वल और प्रेम-विभोर होकर एक-दूसरे को चूमा और इस तरह हमारे बीच सब कुछ तय हो गया।

एक घण्टे बाद सार्जेंट पुगाचोव के टेढ़े-मेढ़े हस्ताक्षरोंवाला अनुमति-पत्र लेकर आया और यह बताया कि उसने मुझे अपने पास बुलाया है। मैंने उसे सफ़र के लिये तैयार पाया। इस व्यक्ति से अलग होते हुए, जो मेरे सिवा सभी के लिये भयानक, दरिन्दा और दुष्ट-कमीना था, मैंने क्या अनुभव किया, मैं यह बता नहीं सकता। लेकिन सचाई को कह ही क्यों न दूं? इस क्षण बहुत ही सहानुभूति हो रही थी मुझे उससे। मैं बेहद चाहता था कि उसे उन दुष्टों के बीच से निकाल लूं जिनकी वह अगुवाई कर रहा था और वक़्त रहते उसे सूली के फंदे से बचा लूं। किन्तु श्वाबरिन और हमारे आस-पास जमा लोगों की भीड़ ने मुझे वह सब कुछ कहने नहीं दिया जो इस वक़्त मेरे दिल में उमड़-घुमड़ रहा था।

हम मित्रों की भांति अलग हुए। भीड़ में अकुलीना पम्फ़ीलोव्ना को देख उसने उंगली दिखाकर उसे धमकाया और अर्थपूर्ण ढंग से आंख मारी। इसके बाद वह स्लेज में जा बैठा, बेर्दा चलने का आदेश दिया

और जब घोड़े चल पड़े तो फिर एक बार स्लेज से सिर बाहर निकालकर चिल्लाया – "तो विदा, हुज़ूर! शायद फिर कभी मुलाक़ात हो जाये।" सचमुच हमारी मुलाक़ात हुई, लेकिन किन परिस्थितियों में!..

पुगाचोव चला गया। मैं बहुत देर तक उस सफ़ेद स्तेपी को देखता रहा जिसमें उसकी स्लेज तेज़ी से बढ़ी जा रही थी। लोग-बाग अपनी-अपनी राह चलते बने। श्वाबरिन भी ग़ायब हो गया। मैं पादरी के घर में लौट आया। हमारे जाने की पूरी तैयारी हो चुकी थी, मैं देर नहीं करना चाहता था। दुर्गपति की पुरानी घोड़ा-गाड़ी पर हमारा सारा सामान लादा जा चुका था। कोचवानों ने आन की आन में घोड़े जोत दिये। मरीया इवानोव्ना गिरजे के पीछे दफ़नाये गये अपने माता-पिता की क़ब्रों से विदा लेने गयी। मैंने उसके साथ जाना चाहा, किन्तु उसने अनुरोध किया कि उसे अकेली ही रहने दिया जाये। कुछ मिनट बाद वह मूक आंसू बहाती हुई चुपचाप वापस आ गयी। घोड़ा-गाड़ी लाई गयी। पादरी गेरासिम और उसकी पत्नी बाहर आकर खड़े हो गये। मरीया इवानोव्ना, पालाशा और मैं – हम तीनों घोड़ा-गाड़ी में बैठ गये। सावेलिच कोचवान की बग़ल में जा बैठा। "नमस्ते, मेरी प्यारी मरीया इवानोव्ना! नमस्ते, प्योतर अन्द्रेइच, हमारे बांके सूरमा!" दयालु पादरिन ने कहा। "यात्रा शुभ हो और भगवान तुम दोनों को सुख-सौभाग्य दे!" हम रवाना हो गये। दुर्गपति के घर की खिड़की में मुझे श्वाबरिन खड़ा दिखाई दिया। उसके चेहरे पर उदासी भरा क्रोध झलक रहा था। मैं पराजित शत्रु पर अपनी विजय का प्रदर्शन नहीं करना चाहता था और इसलिये मैंने नज़र दूसरी ओर कर ली। आख़िर हम दुर्ग के फाटक से बाहर निकले और हमेशा के लिये बेलोगोर्स्क दुर्ग से विदा हो गये।

तेरहवां अध्याय

गिरफ़्तारी

बुरा नहीं मानें हुज़ूर, मुझको कर्तव्य निभाना है –
जेल आपको इसी घड़ी, अब मुझको तो भिजवाना है।

— जाने को तैयार, बात पर साफ़ मुझे कर लेने दें,
क्या कारण है, मुझको मन की शंकायें हर लेने दें।

क्न्याजनिन

अपने दिल की रानी से, जिसके बारे में मैं आज सुबह ही इतनी यातनापूर्ण चिन्ता में घुल रहा था, ऐसे अप्रत्याशित मेल हो जाने पर मुझे हक़ीक़त का यक़ीन नहीं हो रहा था और मैं यही कल्पना कर रहा था कि जो कुछ घटा है, वह केवल सपना है। ख़्यालों में डूबी-खोई-सी मरीया इवानोव्ना कभी मेरी ओर, तो कभी सड़क की ओर देखती थी और ऐसे लगता था कि अभी तक उसके होश-हवास ठीक नहीं हुए हैं, वह पूरी तरह सम्भल नहीं पाई है। हम दोनों ख़ामोश थे। हमारे हृदय बहुत क्लान्त थे। हमें पता भी नहीं चला कि दो घण्टे बीत गये और हम पुगाचोव के ही अधीन एक अन्य दुर्ग में पहुंच गये। यहां हमने घोड़े बदले। पुगाचोव द्वारा नियुक्त किये गये इस दुर्ग के दढ़ियल कज़्ज़ाक दुर्गपति ने जिस तेज़ी से घोड़े बदलवाये, जैसे हमारी लल्लो-चप्पो की, उससे मैं यह समझ गया कि हमारी स्लेज के बातूनी कोचवान की बदौलत मुझे यहां पुगाचोव का कृपा-पात्र मान लिया गया है।

हम आगे चल दिये। झुटपुटा होने लगा था। हम उस बस्ती के निकट पहुंच रहे थे, जहां दढ़ियल दुर्गपति के शब्दों में एक शक्तिशाली दस्ता पड़ाव डाले था और वह नक़ली सम्राट की सेना में शामिल होने जा रहा था। पहरेदारों ने हमें रोका। यह पूछा जाने पर कि कौन जा रहा है, कोचवान ने ऊंची आवाज़ में जवाब दिया, "अपनी पत्नी सहित महाराज का मित्र"। अचानक हुस्सारों की भीड़ ने धुआंधार गालियां बकते हुए हमें घेर लिया। "बाहर निकल, शैतान के दोस्त!" मुच्छल सार्जेंट-मेजर ने मुझसे कहा। "अभी तुम्हारी और तुम्हारी बीवी की ख़ातिर की जायेगी!"

घोड़ा-गाड़ी से नीचे उतरकर मैंने यह मांग की कि मुझे उनके सबसे बड़े अफ़सर के पास ले जाया जाये। मुझ अफ़सर को अपने सामने देखकर फ़ौजियों ने गालियां बकना बन्द कर दिया। सार्जेंट-मेजर मुझे मेजर के पास ले गया। सावेलिच बड़बड़ाता हुआ मेरे पीछे-पीछे बना रहा — "ले लो मज़ा महाराज का मित्र होने का! गढ़े से बचे, खाई

में गिरे... हे भगवान! क्या अन्त होगा इस सब का?" घोड़ा-गाड़ी धीरे-धीरे हमारे पीछे-पीछे आती रही।

पांच मिनट बाद हम रोशनी से जगमगाते घर के नज़दीक पहुंच गये। सार्जेंट-मेजर मुझे पहरे में छोड़कर मेरे बारे में सूचना देने गया। उसने उसी वक़्त लौटकर मुझे बताया कि मेजर साहब के पास मुझसे मिलने का वक़्त नहीं है, उन्होंने हुक्म दिया है कि मुझे जेल भेज दिया जाये और श्रीमती जी को उनके पास लाया जाये।

"क्या मतलब है इसका?" मैं ग़ुस्से से बौखलाकर चिल्ला उठा। "क्या उसका दिमाग़ चल निकला है?"

"मालूम नहीं, हुज़ूर," सार्जेंट-मेजर ने जवाब दिया। "हां, उन बड़े हुज़ूर ने हुक्म दिया है कि आप हुज़ूर को जेल भेज दिया जाये और श्रीमती जी को उन बड़े हुज़ूर के पास ले जाने का हुक्म दिया गया है, हुज़ूर!"

मैं दरवाज़े की तरफ़ लपका। सन्तरियों ने मुझे रोकने की कोशिश नहीं की और मैं भागता हुआ उस कमरे में घुस गया जहां छः हुस्सार अफ़सर जुआ खेल रहे थे। मेजर ख़ज़ांची था। कितनी हैरानी हुई तब मुझे जब मैंने उसे देखते ही पहचान लिया। यह इवान इवानोविच ज़ूरिन था, जिसने कभी सिम्बीर्स्क के होटल में मुझसे पैसे जीत लिये थे।

"यह क्या देख रहा हूं?" मैं चिल्ला उठा। "इवान इवानोविच? यह तुम्हीं हो क्या?"

"अरे वाह, प्योतर अन्द्रेइच! यहां कैसे आना हुआ? कहां से आ टपके? बहुत ख़ूब, मेरे भाई। तो बाज़ी हो जाये?"

"शुक्रिया। यही ज़्यादा अच्छा होगा कि तुम मेरे कहीं ठहरने का इन्तज़ाम करने का हुक्म दो।"

"कहीं ठहरने का क्या सवाल पैदा होता है? मेरे यहां ठहरो।"

"ऐसा नहीं कर सकता – मैं अकेला नहीं हूं।"

"तो अपने दोस्त को भी यहीं ले आओ।"

"मैं दोस्त के साथ नहीं... एक महिला के साथ हूं।"

"महिला के साथ! कहां तुमने उसे अपने गले बांध लिया? अरे, भैया! (इतना कहकर ज़ूरिन ने ऐसे अर्थपूर्ण ढंग से सीटी बजायी कि सभी ठठाकर हंस पड़े और मैं बिल्कुल चकरा गया।)

"ख़ैर," ज़ूरिन ने अपनी बात जारी रखी, "ऐसा ही सही। रहने की जगह का इन्तज़ाम हो जायेगा। मगर अफ़सोस की बात है... हमने पहले की तरह मौज उड़ाई होती... अरे, सुनो तो! पुगाचोव की उस सहेली को यहां क्यों नहीं लाया जा रहा? या वह ज़िद्दी है? उससे कह देना चाहिये कि डरे नहीं, कि रईसज़ादा बहुत ही शरीफ़ है, किसी तरह उसके दिल को ठेस नहीं लगायेगा। अगर बहुत हंगामा करे, तो उसे धकेलकर ले आओ।"

"यह तुम क्या कह रहे हो?" मैंने ज़ूरिन से कहा। "कैसी पुगाचोव की सहेली? वह तो शहीद हुए कप्तान मिरोनोव की बेटी है। मैं उसे रिहा करवाकर लाया हूं और अब पिता जी के पास गांव ले जा रहा हूं और वहीं छोड़ आऊंगा।"

"क्या कहा! तो क्या तुम्हारे बारे में ही मुझे अभी सूचना दी गयी थी? कृपया यह बताओ कि यह सब क्या क़िस्सा है?"

"बाद में सब कुछ बताऊंगा। भगवान के लिये अभी तो उस बेचारी लड़की को तसल्ली दो जिसे तुम्हारे हुस्सारों ने बुरी तरह डरा दिया है।"

ज़ूरिन ने उसी समय सारी व्यवस्था कर दी। अनजाने ही हो जानेवाली इस भूल के लिये उसने ख़ुद बाहर जाकर मरीया इवानोव्ना से माफ़ी मांगी और सार्जेंट-मेजर को उसे बस्ती के सबसे अच्छे मकान में ले जाकर टिकाने का आदेश दिया। मैं ज़ूरिन के साथ ही ठहर गया।

हमने रात का भोजन किया और जब हम दोनों ही रह गये तो मैंने उसे अपनी सारी दास्तान सुनाई। ज़ूरिन बहुत ध्यान से मेरी बातें सुनता रहा। मेरे सब कुछ कह लेने पर उसने सिर हिलाते हुए कहा –

"यह सब तो अच्छा है भैया, मगर एक बात अच्छी नहीं – तुम्हारे सिर पर यह शादी का भूत क्यों सवार हुआ है? मैं ईमानदार अफ़सर हूं, तुम्हें धोखा नहीं देना चाहता – मेरी बात पर यक़ीन करो कि शादी निरी बकवास चीज़ है। क्या लेना है तुम्हें बीवी और बच्चों के फेर में पड़कर? गोली मारो। मेरी बात मानो – कप्तान की बेटी से तुम अपना पिंड छुड़ा लो। सिम्बीर्स्क जाने का रास्ता मैंने दुश्मनों से साफ़ कर दिया है और वहां कोई ख़तरा नहीं। कल ही उसे अपने माता-पिता के पास रवाना कर दो और ख़ुद मेरी पलटन में ही रह

जाओ। तुम्हारे ओरेनबुर्ग लौटने में कोई तुक नहीं। अगर फिर से विद्रोहियों के हत्थे चढ़ गये, तो शायद ही फिर उनके पंजे से निकल पाओगे। इस तरह यह मुहब्बत का जनून भी अपने आप ही दिमाग़ से निकल जायेगा और सारी बात ठीक हो जायेगी।"

यद्यपि मैं ज़ूरिन के साथ पूरी तरह सहमत नहीं था, तथापि यह अनुभव करता था कि अफ़सर के नाते मेरी प्रतिष्ठा और मेरा कर्तव्य यह मांग करते हैं कि मैं सम्राज्ञी की सेनाओं में डटा रहूं। मैंने ज़ूरिन की सलाह पर अमल करने का फ़ैसला किया – मरीया इवानोव्ना को गांव भेज दूंगा और ख़ुद उसकी पलटन में ही रह जाऊंगा।

सावेलिच सोने के लिये मेरे कपड़े बदलवाने को आया। मैंने उससे कहा कि वह अगले दिन ही मरीया इवानोव्ना को साथ लेकर गांव जाने की तैयारी कर ले। उसने हठ करते हुए विरोध किया –

"यह क्या कह रहे हो, मालिक? मैं तुम्हें छोड़कर कैसे जा सकता हूं? कौन तुम्हारी देख-भाल करेगा? तुम्हारे माता-पिता क्या कहेंगे?"

मैं अपने इस बुज़ुर्ग की हठधर्मी से परिचित था, इसलिये मैंने प्यार और मन की सच्ची बात कहकर उसका दिल जीतने का फ़ैसला किया।

"मेरे दोस्त, अर्ख़ीप सावेलिच!" मैंने उससे कहा। "मुझे इन्कार नहीं करो, मुझ पर एहसान करो! मुझे यहां देख-भाल करनेवाले की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, लेकिन अगर मरीया इवानोव्ना तुम्हारे बिना अकेली जायेगी, तो मेरा दिल बहुत परेशान रहेगा। उसकी सेवा करते हुए तुम मेरी भी सेवा करोगे, क्योंकि मैंने यह पक्का इरादा बना लिया है कि सम्भव होते ही मैं उससे शादी कर लूंगा।"

यह सुनकर सावेलिच ने इतनी हैरानी से हाथ झटके कि बयान से बाहर।

"'शादी कर लूंगा!'" उसने मेरे शब्द दोहराये। "बेटा शादी करना चाहता है! लेकिन तुम्हारे पिता क्या कहेंगे, माता क्या सोचेंगी?"

"वे मान जायेंगे, ज़रूर मान जायेंगे," मैंने जवाब दिया, "मरीया इवानोव्ना को समझ भर लेने की देर है। मैं तुम पर भी भरोसा करता हूं। मेरे माता-पिता तुम पर यक़ीन करते हैं, तुम भी हमारी वकालत करोगे न?"

बूढ़े का दिल पसीज गया।

"ओह, मेरी आंखों की रोशनी, प्योतर अन्द्रेइच!" उसने जवाब दिया। "बेशक तुम शादी के मामले में जल्दी कर रहे हो, फिर भी मरीया इवानोव्ना इतनी भली हैं कि ऐसा अवसर हाथ से जाने देना पाप होगा। सो वही हो, जो तुम चाहते हो! मैं इस फ़रिश्ते को घर पहुंचा दूंगा और बड़ी नम्रता से तुम्हारे माता-पिता से कहूंगा कि ऐसी दुलहन के लिये दहेज ज़रूरी नहीं।"

मैंने साव्रेलिच को धन्यवाद दिया और ज़ूरिन के कमरे में अपने बिस्तर पर जा लेटा। अत्यधिक उत्साहित और भाव-विह्वल होने के कारण मैं ख़ूब बतियाता रहा। शुरू में ज़ूरिन बहुत ख़ुशी से मेरे साथ बातें करता रहा, मगर धीरे-धीरे उसके मुंह से निकलनेवाले शब्द कम होते गये और उनके बीच सिलसिला टूटता चला गया। आख़िर मेरे किसी सवाल का जवाब देने के बजाय उसने खर्राटे लेना शुरू किया और उसकी नाक बजने लगी। मैं चुप हो गया और कुछ देर बाद ख़ुद भी सो गया।

अगली सुबह को मैं मरीया इवानोव्ना के पास पहुंचा। मैंने उससे अपने दिल की बात कही। उसे ठीक मानते हुए वह मेरे साथ फ़ौरन सहमत हो गयी। ज़ूरिन की पलटन उसी दिन नगर से रवाना होनेवाली थी। देर करना सम्भव नहीं था। मैंने उसी क्षण मरीया इवानोव्ना से विदा ली और अपने माता-पिता के नाम एक ख़त देते हुए उसे सावेलिच की देख-रेख में छोड़ दिया। मरीया इवानोव्ना रो पड़ी। "तो विदा, प्योतर अन्द्रेइच!" उसने धीमी-सी आवाज़ में कहा। "फिर कभी हमारी मुलाक़ात होगी या नहीं, यह तो भगवान ही जानता है। लेकिन मैं तुम्हें कभी नहीं भूलूंगी, आख़िरी सांस तक तुम ही मेरे दिल में बसे रहोगे।" मैं कोई जवाब नहीं दे पाया। हमारे आस-पास बहुत-से लोग थे। मैं उनके सामने अपने हृदय को उद्वेलित करनेवाले भाव व्यक्त नहीं करना चाहता था। आख़िर वह रवाना हो गयी। मैं उदास और गुमसुम-सा ज़ूरिन के पास वापस आ गया। उसने मुझे रंग में लाने की कोशिश की और मैं ख़ुद भी ऐसा ही चाहता था। हमने हो-हल्ला करते और मौज मनाते हुए दिन बिताया और शाम को हमारी पलटन यहां से चल दी।

यह फ़रवरी के अन्त की बात है। जंगी कार्रवाइयों को मुश्किल बनानेवाला जाड़ा ख़त्म हो रहा था और हमारे जनरल मिल-जुलकर क़दम उठाने की तैयारियां कर रहे थे। पुगाचोव अभी भी ओरेनबुर्ग की नाकाबन्दी किये हुए था। इसी बीच हमारे दस्ते उसके निकट जमा होकर सभी दिशाओं से इन दुष्टों के गढ़ की ओर बढ़ते जा रहे थे। विद्रोही गांव हमारी सेनाओं को देखते ही अधीनता स्वीकार कर लेते थे, लुटेरों के गिरोह सभी जगह हमें देखते ही भाग उठते थे और हर चीज़ इस बात का विश्वास दिलाती थी कि जल्द सब कुछ अच्छे ढंग से समाप्त हो जायेगा।

शीघ्र ही प्रिंस गोलीत्सिन ने ततीश्चेव दुर्ग के निकट पुगाचोव के छक्के छुड़ा दिये, उसके गिरोहों को तितर-बितर कर दिया, ओरेनबुर्ग को घेरे से मुक्त करवा लिया और ऐसे प्रतीत हुआ मानो पुगाचोव के विद्रोह पर अन्तिम और निर्णायक चोट कर दी गयी है। ज़ूरिन को उस समय विद्रोही बश्कीरियों के विरुद्ध भेजा गया था और ये हमें देखने के पहले ही भाग जाते थे। वसन्त ने हमें एक तातार गांव में रुके रहने के लिये विवश कर दिया था। नदियों में बाढ़ आ गयी थी और रास्ते लांघना सम्भव नहीं था। हम अपने निठल्लेपन को इस विचार से तसल्ली देते थे कि चोर-लुटेरों और जंगलियों के विरुद्ध इस ऊबभरी तथा मामूली-सी लड़ाई का जल्द ही अन्त हो जायेगा।

किन्तु पुगाचोव गिरफ़्तार नहीं हुआ था। वह साइबेरिया के कार-ख़ानों में नमूदार हुआ, वहां उसने नये गिरोह जमा किये और फिर से अपनी काली करतूतें शुरू कर दीं। पुनः उसकी सफलताओं के समाचार फैलने लगे। हमें साइबेरिया के दुर्गों के मटियामेट किये जाने की ख़बरें मिलीं। जल्द ही कज़ान पर पुगाचोव के क़ब्ज़े और नक़ली सम्राट के मास्को की ओर कूच करने के समाचार ने घृणित विद्रोही के कुछ न कर सकने की आशा संजोये हुए चैन से सो रहे हमारे सेना-संचालकों की निद्रा भंग कर दी। ज़ूरिन को वोल्गा लांघने का आदेश मिला।

अपने अभियान और युद्ध के अन्त का मैं वर्णन नहीं करूंगा। केवल इतना ही कहूंगा कि दुख-मुसीबतों की कोई हद नहीं थी। हम विद्रोहियों द्वारा बरबाद किये गये गांवों में से गुज़रते थे और बेचारे गांववाले जो कुछ बचा पाये थे, वह भी अनिच्छापूर्वक उनसे छीन लेते थे।

प्रशासन नाम की कहीं कोई चीज़ नहीं रही थी। ज़मींदारों ने जंगलों में जाकर पनाह ली थी। लुटेरों के गिरोह सभी जगह लूट-मार कर रहे थे। अलग-अलग सैनिक अधिकारी मनमाने ढंग से लोगों को दण्ड देते और क्षमा करते थे। इस पूरे क्षेत्र की, जहां यह आग भड़की हुई थी, बहुत बुरी हालत थी... भगवान न करे कि किसी को बेमानी और निर्मम रूसी विद्रोह को देखना पड़े!

पुगाचोव भाग खड़ा हुआ था और इवान इवानोविच मिख़ेलसोन* उसका पीछा कर रहा था। जल्द ही हमें यह पता चला कि उसे पूरी तरह से कुचल दिया गया है। आख़िर ज़ूरिन को नक़ली सम्राट के गिरफ़्तार कर लिये जाने का समाचार और साथ ही यह आदेश मिला कि वह आगे बढ़ना बन्द कर दे। लड़ाई ख़त्म हो गयी थी। आख़िर तो मैं अपने माता-पिता के पास जा सकता था! यह विचार कि उनसे गले मिल सकूंगा, मरीया इवानोव्ना को देख सकूंगा, जिससे कोई समाचार नहीं मिला था, मुझे ख़ुशी से दीवाना-सा बना रहा था। मैं बालक की तरह उछलता-कूदता था। ज़ूरिन हंसता और कंधे झटककर कहता, "नहीं, तुम्हारा बुरा हाल होगा! शादी करोगे और बरबाद हो जाओगे!"

किन्तु इसी बीच एक अजीब-सी भावना मेरी ख़ुशी में ज़हर घोल रही थी। दुष्ट पुगाचोव का, जिसने इतनी बड़ी संख्या में निर्दोष लोगों के ख़ून से अपने हाथ रंगे थे और अब उसे जो दण्ड मिलनेवाला था, उसका भी मुझे बरबस ध्यान आ रहा था। "येमेल्या, येमेल्या!" मैं दुखी मन से सोचता, "क्यों तुम किसी संगीन या गोली का निशाना नहीं बन गये? तुम्हारे लिये इससे बेहतर और कुछ नहीं हो सकता था।" मैं उसके बारे में भला सोचता कैसे नहीं? उसके बारे में मेरे मन में आनेवाला विचार उस दया-भाव के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ था जो उसके जीवन के एक भयानक क्षण में उसने मेरे प्रति दिखाया

---

* लेफ़्टिनेंट कर्नल (१७४०–१८०७), जिसने त्सारीत्सिन और चोर्नी यार के बीच २५ अगस्त, १७७४ को हुई लड़ाई में पुगाचोव को पूरी तरह से पराजित किया था। –सं०

था और यह भी कि कैसे उसने मेरे दिल की रानी को नीच श्वाबरिन से निजात दिलवाई थी।

जूरिन ने मुझे घर जाने की छुट्टी दे दी। कुछ दिन बाद मैं फिर से अपने परिवार में पहुंचनेवाला था, फिर से अपनी मरीया इवानोव्ना से मेरी भेंट होनेवाली थी... अचानक मानो बिजली टूटी जिसने मुझे स्तम्भित कर दिया।

मेरे जाने के दिन, ठीक उसी क्षण जब मैं सफ़र के लिये रवाना होने को तैयार हो रहा था, जूरिन हाथ में एक काग़ज़ और चेहरे पर गहरी चिन्ता का भाव लिये हुए मेरे पास आया। मेरे दिल में फांस-सी चुभी। मुझे मालूम नहीं कि किस चीज़ से, लेकिन मैं डर ज़रूर गया। उसने मेरे अर्दली को बाहर भेज दिया और बोला कि उसे मुझसे कुछ काम है। "क्या बात है?" मैंने घबराकर पूछा। "छोटी-सी अप्रिय बात है," उसने काग़ज़ मुझे पकड़ाते हुए उत्तर दिया। "इसे पढ़ो, मुझे अभी-अभी मिला है।" मैं पढ़ने लगा – यह सभी सैनिक विभागाध्यक्षों के नाम भेजा गया गुप्त आदेश था कि मुझे, मैं जहां भी होऊं, फ़ौरन गिरफ़्तार करके फ़ौजी पहरे में कज़ान भेज दिया जाये, जहां पुगाचोव के मामले की जांच-पड़ताल करने का आयोग नियुक्त किया गया था।

काग़ज़ मेरे हाथ से नीचे गिरते-गिरते रह गया। "कुछ भी नहीं हो सकता!" जूरिन ने कहा। "आदेश का पालन करना मेरा कर्तव्य है। सम्भवतः पुगाचोव के साथ तुम्हारे मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की ख़बर किसी तरह सरकार तक पहुंच गयी है। मुझे आशा है कि इस मामले का कोई बुरा नतीजा नहीं होगा और आयोग के सामने तुम अच्छी तरह से अपनी सफ़ाई दे सकोगे। दिल छोटा नहीं करो और रवाना हो जाओ।" मेरे मन में किसी तरह की अपराध-भावना नहीं थी और फ़ौजी अदालत के सामने जाने में मुझे किसी तरह का डर नहीं महसूस हो रहा था। किन्तु मधुर मिलन के क्षणों को, सो भी शायद कई महीनों के लिये स्थगित करने के विचार से मैं कांप उठा। घोड़ा-गाड़ी तैयार थी। जूरिन ने मैत्रीपूर्ण ढंग से मुझसे विदा ली। मुझे घोड़ा-गाड़ी में बिठा दिया गया, नंगी तलवारें लिये हुए दो हुस्सार मेरे साथ बैठ गये और घोड़ा-गाड़ी बड़ी सड़क पर चल दी।

चौदहवां अध्याय

मुक़दमा

लोगों में यों फैलती ख़बर
जैसे बढ़ती हुई लहर।

कहावत

मुझे इस बात का विश्वास था कि अपनी इच्छानुसार ओरेनबुर्ग से मेरा अनुपस्थित रहना ही मेरा मुख्य अपराध था। मैं बड़ी आसानी से अपनी सफ़ाई पेश कर सकता था, क्योंकि शत्रु से जूझने के लिये दुर्ग से बाहर जाने की न केवल कभी मनाही नहीं की गयी थी, बल्कि इसे हर तरह से प्रोत्साहित किया जाता था। मुझ पर ज़रूरत से ज़्यादा जोश दिखाने का अपराध लगाया जा सकता था, मगर अनुशासन भंग करने का नहीं। किन्तु पुगाचोव के साथ मेरे हेल-मेल की अनेक गवाह पुष्टि कर सकते थे और मेरे ऐसे सम्बन्ध कम से कम काफ़ी सन्देहपूर्ण अवश्य प्रतीत हो सकते थे। रास्ते भर मैं उन प्रश्नों पर विचार करता रहा जो मुझसे पूछे जा सकते थे, अपने जवाबों के बारे में भी सोचता रहा और अदालत के सामने सब कुछ सच-सच कह देने को ही अपनी सफ़ाई का सबसे सीधा-सादा और साथ ही विश्वसनीय उपाय मानते हुए मैंने यही करने का निर्णय किया।

मैं जलकर ख़ाक हुए और सुनसान कज़ान में पहुंचा। सड़कों पर मकानों की जगह राख और जली चीज़ों के ढेर लगे थे और छतों तथा खिड़कियों के बिना धुएं से काली हुई दीवारें खड़ी थीं। तो पुगाचोव अपने पीछे ऐसे निशान छोड़ गया था! भस्म हुए नगर के बीचोंबीच बिल्कुल क्षतिहीन रह गये दुर्ग में मुझे ले जाया गया। हुस्सारों ने मुझे सन्तरियों के अफ़सर के हवाले कर दिया। उसने लुहार को बुला लाने का आदेश दिया। मेरे पैरों में बेड़ियां डालकर उन्हें अच्छी तरह से कस दिया गया। इसके बाद मुझे जेलख़ाने में ले जाकर ख़ाली दीवारों और लोहे का जंगला लगी छोटी-सी खिड़की वाली तंग तथा अंधेरी कोठरी में अकेला छोड़ दिया गया।

इस तरह का आरम्भ किसी अच्छी बात की आशा नहीं बंधवाता

था। फिर भी मैंने न तो हिम्मत हारी और न उम्मीद ही छोड़ी। मैंने सभी दुखियों-पीड़ितों को सान्त्वना देनेवाले मार्ग का सहारा लिया और पहली बार सच्चे, किन्तु विदीर्ण मन से प्रार्थना के सुख का मधु-पान किया और इस बात की चिन्ता किये बिना कि मेरे साथ क्या होगा, चैन की नींद सो गया।

अगले दिन जेल के चौकीदार ने यह कहते हुए मुझे जगा दिया कि जांच-आयोग के सामने बुलाया गया है। दो सैनिकों के साथ अहाते को लांघकर हम दुर्गपति के घर में दाखिल हुए, सैनिक प्रवेश-कक्ष में ही रुक गये और मुझे अकेले ही भीतर जाने दिया।

मैंने काफ़ी बड़े हॉल में प्रवेश किया। काग़ज़ों से ढकी मेज़ के पीछे दो व्यक्ति बैठे थे – कठोर और रुखा-सा दिखनेवाला बुज़ुर्ग जनरल और गार्ड सेना का जवान कप्तान, जिसकी उम्र कोई अट्ठाईस साल थी, प्रियदर्शी, चुस्त-फुर्तीला और स्वाभाविक ढंग से व्यवहार करनेवाला। खिड़की के पास एक ख़ास मेज़ के पीछे कान में क़लम अटकाये काग़ज़ पर झुका हुआ और मेरा बयान लिखने को तैयार मुंशी बैठा था। पूछ-ताछ शुरू हुई। मुझसे मेरा नाम और ओहदा पूछा गया। जनरल ने प्रश्न किया कि क्या मैं अन्द्रेई पेत्रोविच ग्रिनेव का बेटा तो नहीं हूं? मेरा उत्तर सुनने के बाद उसने बड़ी कठोरता से कहा, "बड़े अफ़सोस की बात है कि ऐसे सम्माननीय व्यक्ति का ऐसा नालायक़ बेटा है!" मैंने शान्ति से जवाब दिया कि मुझ पर चाहे कैसे भी आरोप क्यों न लगाये जायें, मुझे आशा है कि मैं ईमानदारी से सचाई बयान करके उन्हें ग़लत सिद्ध कर दूंगा। मेरा यह आत्मविश्वास उसे अच्छा नहीं लगा।

"तुम बहुत तेज़ हो, भैया," उसने नाक-भौंह सिकोड़ते हुए कहा, "किन्तु हमने तुमसे भी कहीं ज़्यादा तेज़ देखे हैं!"

तब जवान कप्तान ने मुझसे पूछा कि किन परिस्थितियों में और किस समय मैंने पुगाचोव की नौकरी की और उसने मुझे क्या काम सौंपे थे?

मैंने गुस्से से जवाब दिया कि एक अफ़सर और अभिजात होने के नाते मैं पुगाचोव की कभी नौकरी नहीं कर सकता था और उसके लिये कुछ भी करने को तैयार नहीं हो सकता था।

17*

"तो भला किस तरह उस नक़ली सम्राट ने," जिरह करनेवाले कप्तान ने आपत्ति की, "एक अभिजात और अफ़सर को बख़्श दिया, जबकि उसके बाक़ी सभी साथियों की निर्दयता से हत्या कर दी गयी थी? कैसे इसी अफ़सर और अभिजात ने विद्रोहियों के साथ बैठकर दावत उड़ाई और बदमाशों के सरदार से तोहफ़े – फ़र-कोट, घोड़ा और पचास कोपेक लिये? यदि ग़द्दारी या कम से कम कमीनी और अपराधपूर्ण कायरता इस अजीब दोस्ती की बुनियाद नहीं थी, तो और क्या कारण था इसका?"

गार्ड-सेना के अफ़सर के शब्दों से मेरे दिल को बड़ी ठेस लगी और मैं ख़ूब जोश से अपनी सफ़ाई पेश करने लगा। मैंने बताया कि बर्फ़ के तूफ़ान के वक़्त कैसे पुगाचोव से स्तेपी में मेरी जान-पहचान हुई, कैसे बेलोगोर्स्क दुर्ग पर अधिकार करने के समय उसने मुझे पहचानकर क्षमा कर दिया। मैंने कहा, यह सच है कि उस नक़ली सम्राट से फ़र-कोट और घोड़ा लेते हुए मुझे शर्म नहीं आई, किन्तु बदमाशों से बेलोगोर्स्क दुर्ग की रक्षा के लिये मैंने अपनी पूरी ताक़त लगाई। अन्त में मैंने अपने जनरल का हवाला दिया जो ओरेनबुर्ग की भयानक क़िलेबन्दी के समय मेरे जोश की गवाही दे सकता था।

कठोर बूढ़े जनरल ने मेज़ पर से खुला हुआ पत्र उठाया और उसे ऊंचे-ऊंचे पढ़ने लगा –

"महामान्य, छोटे लेफ़्टिनेंट ग्रिनेव से सम्बन्धित आपकी पूछ-ताछ के उत्तर में, जिसने मानो हाल के विद्रोह में भाग लिया और सैनिक नियमों तथा वफ़ादारी की क़सम का उल्लंघन करते हुए बदमाशों के सरदार के साथ सम्बन्ध स्थापित किया, मैं सादर यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि छोटा लेफ़्टिनेंट पिछले, १७७३ के अक्तूबर महीने से इस वर्ष के फ़रवरी महीने की २४ तारीख़ तक ओरेनबुर्ग में सैनिक ड्यूटी पर रहा, इसी दिन शहर से ग़ायब हो गया और उसके बाद मेरी कमान में नहीं लौटा। भगोड़ों से सुनने को मिला है कि वह गांव में पुगाचोव के साथ था और उसके साथ बेलोगोर्स्क गया जहां वह पहले फ़ौजी ड्यूटी पर रहा था। जहां तक उसके आचरण का प्रश्न है, तो मैं यह कह सकता हूं..." यहां उसने पत्र पढ़ना बन्द कर दिया और कठोरतापूर्वक मुझसे कहा, "अब तुम्हें क्या कहना है अपनी सफ़ाई में?"

मैंने जैसे अपना बयान शुरू किया था, वैसे ही जोश और निष्कपटता से मरीया इवानोव्ना के साथ अपना सम्बन्ध और बाक़ी सब कुछ भी स्पष्ट करना चाहा। किन्तु सहसा मैंने एक अदम्य वितृष्णा अनुभव की। मेरे दिमाग़ में यह बात आई कि अगर मैं मरीया इवानोव्ना का नाम ले दूंगा तो आयोग उसे पूछ-ताछ के लिये बुला लेगा और बदमाशों के घटिया लांछनों के साथ उसका नाम जोड़ने तथा उनके सामने ख़ुद उसके आने के विचार से मैं ऐसे विह्वल हो उठा कि मेरी ज़बान लड़-खड़ा और गड़बड़ा गई।

मेरे भाग्य-निर्णायिकों के दिलों में, जो कुछ अनुकूल भाव दिखाते हुए मेरे उत्तर सुनने लगे थे, मेरी घबराहट देखकर फिर से मेरे विरुद्ध पूर्वाग्रह जाग उठे। गार्ड-सेना के अफ़सर ने यह मांग की कि मुझे मुख्य मुखबिर के आमने-सामने किया जाये। जनरल ने हुक्म दिया कि "पिछले दिन के बदमाश" को भीतर लाया जाये। मैं अपने अभियोक्ता के प्रकट होने की प्रतीक्षा करते हुए बड़ी उत्सुकता से दरवाज़े की तरफ़ देखने लगा। कुछ मिनट बाद बेड़ियां खनखनाईं, दरवाज़ा खुला और श्वाबरिन भीतर आया। मैं उसमें हुआ परिवर्तन देखकर दंग रह गया। वह बेहद दुबला हो गया था और उसके चेहरे का रंग बिल्कुल पीला था। कुछ ही समय तक राल की तरह काले उसके बाल अब एकदम सफ़ेद हो गये थे और उसकी लम्बी दाढ़ी बिखरी हुई थी। उसने क्षीण, किन्तु दृढ़ आवाज़ में अपना अभियोग दोहराया। उसके कथनानुसार पुगाचोव ने मुझे जासूस बनाकर ओरेनबुर्ग भेजा था, मैं हर दिन इसलिये मुठभेड़ को दुर्ग से बाहर जाता था कि शहर में जो कुछ हो रहा था, उसका लिखित ब्योरा भेज सकूं, कि आख़िर मैं खुलकर नक़ली सम्राट का साथ देने लगा, एक के बाद एक दुर्ग में उसके साथ जाने लगा, ताकि अपने जैसे ग़द्दार साथियों को हर सम्भव तरीक़े से तबाह कर सकूं, उनके पद छीन सकूं और झूठे दावेदार द्वारा दिये जानेवाले इनाम पा सकूं। मैंने चुपचाप उसका बयान सुना और मुझे एक बात की ख़ुशी हुई – इस कमीने ने मरीया इवानोव्ना का नाम नहीं लिया था। शायद उसने इसलिये ऐसा किया था कि उसका विचार आने पर, जिसने तिरस्कारपूर्वक उसे ठुकरा दिया था, उसके आत्माभिमान को ठेस लगी या फिर इसलिये कि उसके दिल में भी कहीं उसी भावना की चिंगारी

छिपी हुई थी जिसने मुझे चुप रहने को विवश किया था। कारण कुछ भी रहा हो, बेलोगोर्स्क के दुर्गपति की बेटी का नाम जांच-आयोग के सामने नहीं लिया गया। मेरा इरादा और भी ज़्यादा पक्का हो गया। और जब निर्णायकों ने यह पूछा कि मैं श्वाबरिन के बयान का कैसे खण्डन कर सकता हूं, तो मैंने जवाब दिया कि अपने पहले स्पष्टीकरण को ज्यों का त्यों रखना चाहता हूं और अपनी सफ़ाई में और कुछ भी नहीं जोड़ सकता। जनरल ने हम दोनों को ले जाने का आदेश दिया। हम एकसाथ बाहर निकले। मैंने शान्ति से श्वाबरिन की ओर देखा, किन्तु उससे एक भी शब्द नहीं कहा। वह द्वेषपूर्वक हंसा, बेड़ियां ऊपर उठाते हुए मुझसे आगे निकल गया और तेज़ी से बढ़ गया। मुझे फिर से जेल की कोठरी में ले जाकर बन्द कर दिया गया और इसके बाद फिर कभी पूछ-ताछ के लिये नहीं बुलाया गया।

अपने पाठकों को मुझे जो कुछ और बताना है, मैं उसका भुगत-भोगी नहीं हूं। किन्तु ये बातें मैंने इतनी अधिक बार सुनी हैं कि उनकी हर छोटी-छोटी तफ़सील मेरे मानसपट पर ऐसे अंकित हो गयी है मानो अदृश्य रूप से मैं इनका साक्षी रहा हूं।

मेरे माता-पिता ने उसी हार्दिकता से मरीया इवानोव्ना को स्वीकार किया जो पिछली सदी के लोगों का विशेष लक्षण थी। वे इसी बात के लिये भगवान के आभारी थे कि उन्हें एक यतीम को शरण और स्नेह देने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। जल्द ही उन्हें उससे सच्चा लगाव हो गया, क्योंकि उसे जान-समझकर प्यार न करना सम्भव नहीं था। मेरा प्यार पिता जी को अब कोरी सनक नहीं प्रतीत होता था और मां तो केवल यही चाहती थीं कि उनका पेत्रूशा कप्तान की प्यारी बेटी से शादी कर ले।

मेरी गिरफ़्तारी की ख़बर से मेरे परिवार के सभी लोग हैरान रह गये। पुगाचोव के साथ मेरी अजीब जान-पहचान का मरीया इवानोव्ना ने इतनी सरलता से वर्णन किया कि इससे उन्हें न केवल कोई चिन्ता नहीं हुई, बल्कि इसने उन्हें अक्सर सच्चे दिल से हंसने को भी मजबूर किया। पिता जी इस बात पर विश्वास नहीं करना चाहते थे कि उस नीचतापूर्ण विद्रोह से, जिसका उद्देश्य गद्दी उलटना और कुलीनों का नाश करना था, मेरा कोई वास्ता था। उन्होंने बड़ी कड़ाई से

सावेलिच से पूछ-ताछ की। बुज़ुर्ग सावेलिच ने यह नहीं छिपाया कि छोटे मालिक की येमेल्यान पुगाचोव के यहां ख़ातिरदारी हुई थी और वह उस बदमाश का कृपा-पात्र था, किन्तु क़सम खाई कि किसी तरह की ग़द्दारी की बात उसने नहीं सुनी थी। बूढ़े माता-पिता शान्त हो गये और बड़ी बेसब्री से कोई अच्छी ख़बर सुनने का इन्तज़ार करने लगे। मरीया इवानोव्ना बहुत ज़्यादा परेशान थी, किन्तु उसने मौन साध रखा था क्योंकि उसमें नम्रता और सावधानी के गुण तो अपनी चरम सीमा पर पहुंचे हुए थे।

कुछ सप्ताह बीत गये... अचानक पिता जी को पीटर्सबर्ग के एक हमारे रिश्तेदार प्रिंस ब... का पत्र मिला। प्रिंस ने उन्हें मेरे बारे में लिखा था। शुरू की कुछ रस्मी पंक्तियों के बाद उन्होंने बताया था कि दुर्भाग्य से, विद्रोहियों के मंसूबों में मेरे सहभाग के बारे में सन्देह बहुत ठोस सिद्ध हुआ और मुझे उसका उपयुक्त दण्ड मिलना चाहिये था, किन्तु पिता जी की सेवाओं और उनके बुढ़ापे को ध्यान में रखते हुए सम्राज्ञी ने अपराधी बेटे को क्षमा करने और सूली का कलंकपूर्ण दण्ड देने के बजाय साइबेरिया के किसी दूरस्थ स्थान पर सदा के लिये जा बसने की सज़ा देने का निर्णय किया है।

इस अप्रत्याशित आघात ने मेरे पिता जी की लगभग जान ही नहीं ले ली। उनकी सामान्य दृढ़ता जाती रही और उनका दुख (सामान्यतः मूक) कटु शिकवे-शिकायतों में व्यक्त होने लगा। "यह क्या है!" वे आपे से बाहर होते हुए दोहराते, "मेरे बेटे ने पुगाचोव के काले कारनामों में हिस्सा लिया! हे ईश्वर, कैसे बुरे दिन देखने लिखे थे मेरे नसीब में! सम्राज्ञी ने उसकी जान बख़्श दी! क्या इससे मेरा दुख कुछ कम हो सकता है? मौत की सज़ा भयानक नहीं – मेरे एक पूर्वज ने उस चीज़ की रक्षा करते हुए, जिसे अपनी आत्मा के लिये पावन मानते थे, अपने प्राण दे दिये। मेरे पिता जी वोलीन्स्की और ख्रुश्चेव* के साथ शहीद हुए। लेकिन कुलीन अपनी क़सम के प्रति

---

* अर्तेमी वोलीन्स्की, आन्ना इओआनोव्ना के शासन (१७३०–१७४०) में एक मन्त्री, जिसने सम्राज्ञी के कृपापात्र और रूसी दरबार के एक नीचतम भाड़े के विदेशी टट्टू बिरोन के विरुद्ध षड्यन्त्र का निर्देशन किया। अन्द्रेई ख्रुश्चेव, एडमिरॉल्टी के एक सलाहकार, षड्यन्त्र में भागीदार, जिसे वोलीन्स्की के साथ सूली दी गयी। – सं०

निष्ठावान न रहे, चोर-लुटेरों, हत्यारों और भगोड़े भू-दासों का साथ दे!. डूब गया हमारे कुल का नाम और उसकी प्रतिष्ठा!.." पिता जी की हताशा से भयभीत मां उनके सामने रोने की हिम्मत नहीं कर पाती थीं और यह कहकर कि अफ़वाहें झूठी हैं और लोगों का मत भी डांवांडोल है, उन्हें तसल्ली देने का प्रयास करती थीं। किन्तु मेरे पिता जी को चैन नहीं मिला।

मरीया इवानोव्ना सबसे अधिक यातना सह रही थी। इस बात का विश्वास करते हुए कि मैं जब भी चाहता, अपने को निरपराध सिद्ध कर सकता था, वह सचाई का अनुमान लगा रही थी और मेरे दुर्भाग्य के लिये अपने को दोषी मान रही थी। वह सभी से अपने आंसुओं और व्यथा को छिपाती और साथ ही मुझे बचाने के उपायों के बारे में भी लगातार सोचती रहती।

एक शाम को पिता जी सोफ़े पर बैठे हुए दरबारी सूचना-पुस्तक के पृष्ठ उलट रहे थे। किन्तु उनके विचार कहीं दूर चक्कर काट रहे थे और इस सूचना-पुस्तक को पढ़ते हुए आम तौर पर उनके दिल पर जैसा प्रभाव पड़ता था, इस समय ऐसा नहीं हो रहा था। वे फ़ौजी कूच की एक पुरानी धुन पर सीटी बजा रहे थे। माता जी चुपचाप ऊनी स्वैटर बुन रही थीं और जब-तब उनके आंसुओं की बूंदें उस स्वैटर पर टपक पड़ती थीं। अचानक मरीया इवानोव्ना ने, जो वहीं बग़ल में बैठी हुई बुनाई कर रही थी, यह घोषणा की कि एक ज़रूरी काम से उसे पीटर्सबर्ग जाना होगा और वह अनुरोध करती है कि उसके वहां जाने की व्यवस्था कर दी जाये। माता जी बहुत परेशान हो उठीं। "क्या ज़रूरत आ पड़ी है तुम्हें पीटर्सबर्ग जाने की? मरीया इवानोव्ना, क्या तुम भी हमें छोड़ जाने की तो नहीं सोच रही हो?" मरीया इवानोव्ना ने जवाब दिया कि उसका पूरा भविष्य इसी यात्रा पर निर्भर है, कि वह वफ़ादारी के लिये शहीद हो जानेवाले आदमी की बेटी के नाते प्रभावशाली और सत्तासम्पन्न लोगों की सरपरस्ती और मदद हासिल करने जा रही है।

मेरे पिता जी ने सिर झुका लिया – बेटे के तथाकथित अपराध की याद दिलानेवाला हर शब्द उनके दिल पर भारी गुज़रता था, उनके सीने में चुभता हुआ-सा व्यंग्य-बाण लगता था। "जाओ बेटी,

तुम भी जाओ!" उन्होंने आह भरते हुए कहा। "हम तुम्हारे सुख-सौभाग्य के मार्ग में रोड़ा नहीं अटकाना चाहते। भगवान तुम्हें एक बदनाम ग़द्दार के बजाय पति के रूप में कोई भला आदमी दे।" इतना कहकर वे कमरे से बाहर चले गये।

माता जी के साथ अकेली रह जाने पर मरीया इवानोव्ना ने उन्हें अपनी कुछ योजनाएं स्पष्ट कीं। माता जी ने आंसू बहाते हुए उसे गले लगा लिया और भगवान से प्रार्थना की कि उसे अपने इरादों में कामयाबी मिले। मरीया इवानोव्ना के सफ़र की तैयारी की गयी और कुछ दिन बाद वह अपनी वफ़ादार पालाशा और सेवानिष्ठ सावेलिच के साथ, जिसे मैंने ज़बर्दस्ती अपने से अलग कर दिया था और जो अपने को कम से कम इस विचार से तसल्ली देता था कि मेरी भावी पत्नी की सेवा कर रहा है, रवाना हो गयी।

मरीया इवानोव्ना सही-सलामत सोफ़ीया* पहुंच गयी और डाक-चौकी पर यह जानकारी पाकर कि सम्राज्ञी और उनके दरबारी इस समय त्सार्स्कोये सेलो में हैं, उसने वहीं रुकने का निर्णय किया। उसे बीच की दीवार के पीछे ठहरने के लिये थोड़ी-सी जगह दे दी गयी। डाक-चौकी के मुंशी की बीवी उसी क्षण उसके साथ बतियाने लगी। उसने बताया कि वह दरबार में आतिशदान गर्मानेवाले की भानजी है और उसने उसे दरबारी जीवन के सभी रहस्यों की जानकारी दे दी। उसने उसे बताया कि सम्राज्ञी आम तौर पर किस वक़्त जागती हैं, कॉफ़ी पीती हैं, सैर करती हैं और उस समय कौनसे दरबारी उनके साथ होते हैं, पिछले दिन खाने की मेज़ पर उन्होंने क्या कुछ कहा, शाम को किससे मिलीं – थोड़े में यही कि आन्ना व्लास्येव्ना की बातचीत ऐतिहासिक महत्त्व की टिप्पणियों के कुछ पृष्ठों के समान थी और भावी पीढ़ियों के लिये बहुत मूल्यवान हो सकती थी। मरीया इवानोव्ना बहुत ध्यान से उसकी बातें सुनती रही। वे बाग़ में घूमने गयीं। आन्ना व्लास्येव्ना ने हर वीथी और हर पुल की कहानी सुनाई तथा सैर करने के बाद वे दोनों बहुत ख़ुश-ख़ुश डाक-चौकी पर वापस आईं।

---

* त्सार्स्कोये सेलो के पार्क के पीछे फ़ौजी बस्ती, जो १८०८ से त्सार्स्कोये सेलो का भाग है। – सं०

अगले दिन मरीया इवानोव्ना तड़के ही जागी, उसने कपड़े पहने और दबे पांव बाग़ में चली गयी। सुबह बहुत सुहावनी थी, पतझर की ताज़ा सांसों से पीली हुई लाइम वृक्षों की फुनगियां धूप में चमक रही थीं। निश्चल, चौड़ी झील चमचमा रही थी। अभी-अभी जागनेवाले हंस-हंसिनियां तटवर्ती झाड़ियों के नीचे से निकलकर बड़ी शान से झील में तैर रहे थे। मरीया इवानोव्ना उस प्यारी चरागाह के पास से गुज़र रही थी, जहां काउंट प्योतर अलेक्सान्द्रोविच रुम्यान्त्सेव की कुछ ही समय पहले की विजयों के सम्मान में एक स्मारक बनाया गया था। अचानक अंग्रेज़ी नस्ल का एक छोटा-सा कुत्ता भौंकने लगा और उसकी ओर भाग आया। मरीया इवानोव्ना डरकर वहीं रुक गयी। इसी समय एक औरत की प्यारी-सी आवाज़ सुनाई दी – "डरो नहीं, यह काटेगा नहीं"। मरीया इवानोव्ना को स्मारक के सामने बेंच पर एक महिला बैठी दिखाई दी। मरीया इवानोव्ना बेंच के दूसर सिरे पर बैठ गयी। महिला उसे एकटक देखती जा रही थी। मरीया इवानोव्ना ने भी कनखियों से उस पर कुछ बार नज़र डालकर उसे सिर से पांव तक देख लिया। महिला सुबह के समय का सफ़ेद फ़्राक, रात की टोपी और रूईदार जाकेट पहने थी। उसकी उम्र चालीस के क़रीब प्रतीत हो रही थी। उसके भरे हुए और लाल-लाल चेहरे पर रोब और चैन तथा नीली-नीली आंखों एवं हल्की मुस्कान में अवर्णनीय आकर्षण था। महिला ने ही मौन भंग किया।

"आप तो सम्भवतः यहां की रहनेवाली नहीं हैं?" उसने कहा।

"जी, बिल्कुल ठीक। मैं कल ही प्रान्तीय नगर से आई हूं।"

"अपने परिवार वालों के साथ?"

"जी, नहीं। अकेली आई हूं।"

"अकेली! लेकिन आपकी उम्र तो अभी बहुत कम है।"

"मेरे न तो पिता और न मां ही हैं।"

"आप निश्चय ही किसी काम से आई होंगी?"

"जी, हां। मैं सम्राज्ञी को अपना आवेदन-पत्र देने आई हूं।"

"आप यतीम हैं और इसलिये सम्भवतः अन्याय और ज़्यादती के ख़िलाफ़ शिकायत करने आई हैं?"

"जी, नहीं। मैं न्याय नहीं, कृपा-अनुकम्पा के लिये अनुरोध करने आई हूं।"

"कृपया यह बताइये कि आप हैं कौन?"

"मैं कप्तान मिरोनोव की बेटी हूं।"

"कप्तान मिरोनोव! उसी कप्तान मिरोनोव की, जो ओरेनबुर्ग प्रदेश के एक दुर्गपति थे?"

"जी, बिल्कुल ठीक।"

ऐसे लगा कि महिला द्रवित हो उठी थी।

"अगर मैं किसी तरह से आपके मामलों में दख़ल दे रही हूं तो क्षमा चाहूंगी," उसने और भी अधिक प्यार भरी आवाज़ में कहा, "लेकिन दरबार में मेरा आना-जाना बना रहता है। मुझे बताइये कि आप किस बात का अनुरोध करना चाहती हैं और बहुत सम्भव है कि मैं आपकी मदद कर सकूं।"

मरीया इवानोव्ना ने खड़ी होकर बड़े आदर से महिला को धन्यवाद दिया। इस अज्ञात महिला की हर चीज़ बरबस मन को छूती थी और भरोसा पैदा करती थी। मरीया इवानोव्ना ने तह किया हुआ एक काग़ज़ जेब से निकाला और अपनी इस अपरिचित संरक्षिका को दे दिया जो मन ही मन उसे पढ़ने लगी।

शुरू में वह ध्यान और सहानुभूति से पढ़ती रही, किन्तु अचानक उसका चेहरा कुछ बदल-सा गया और मरीया इवानोव्ना, जो नज़रों से ही उसकी हर भंगिमा को देख रही थी, उसके चेहरे के कठोर भाव से, जो क्षण भर पहले इतना मधुर और शान्त था, भयभीत हो उठी।

"आप ग्रिनेव के लिये अनुरोध कर रही हैं?" महिला ने रुखाई से पूछा। "सम्राज्ञी उसे क्षमा नहीं कर सकतीं। उसने अज्ञानता या भोलेपन से नक़ली सम्राट का साथ नहीं दिया, बल्कि दुराचारी और भयानक दुष्ट के रूप में ऐसा किया।"

"ओह, यह झूठ है!" मरीया इवानोव्ना कह उठी।

"झूठ कैसे है!" महिला ने ग़ुस्से से लाल होते हुए आपत्ति की।

"झूठ है, भगवान की क़सम झूठ है! मैं सब कुछ जानती हूं, सब कुछ आपको बताती हूं। उसके साथ जो कुछ बीती है, वह सब मेरे कारण ही। यदि उसने फ़ौजी अदालत में अपनी सफ़ाई नहीं दी, तो

भी केवल इसलिये कि मुझे इस मामले में नहीं उलझाना चाहता था।"

इसके बाद मरीया इवानोव्ना ने बड़े जोश से वह सब कुछ कह सुनाया जो हमारे पाठकों को मालूम है।

महिला ने बहुत ध्यान से उसकी बात सुनी।

"आप कहां ठहरी हैं?" उसने बाद में पूछा और आन्ना व्लास्येव्ना के यहां ठहरने के बारे में जानकर मुस्कराते हुए बोली –

"हां। जानती हूं उसे! तो अब विदा, किसी से भी हमारी भेंट की चर्चा नहीं कीजियेगा। मुझे आशा है कि आपको अपने पत्र के उत्तर की देर तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी।"

इतना कहकर वह उठी और बन्द वीथी में चली गयी, जबकि मरीया इवानोव्ना ख़ुशी भरी उम्मीद लिये हुए आन्ना व्लास्येव्ना के पास लौट आई।

आन्ना व्लास्येव्ना ने पतझर के दिनों में तड़के ही सैर को जाने के लिये उसकी लानत-मलामत की, जो उसके शब्दों में, जवान लड़की के लिये हानिकारक था। वह समोवार ले आई और चाय की चुस्कियां लेते हुए दरबार के बारे में अपने अन्तहीन क़िस्से-कहानियां शुरू ही करनेवाली थी कि अचानक दरवाज़े के सामने शाही बग्घी आकर रुकी और शाही हरकारे ने भीतर आते हुए यह घोषणा की कि सम्राज्ञी ने मिरोनोव की बेटी को अपने पास बुलाया है।

आन्ना व्लास्येव्ना अत्यधिक चकित होकर दौड़-धूप करने लगी। "हे भगवान!" वह चिल्लाई। "सम्राज्ञी आपको महल में बुला रही हैं। उन्हें आपके बारे में कैसे मालूम हो गया? अरे, आप कैसे सम्राज्ञी के सामने जायेंगी? आपको तो शायद दरबारी तौर-तरीक़े भी नहीं आते!.. क्या मैं आपके साथ चलूं? मैं आपको थोड़ा-बहुत तो समझा-बुझा ही सकती हूं। सफ़र का फ़्राक पहने हुए भला आप कैसे जायेंगी? क्या दाई के यहां से उसकी पीली पोशाक न मंगवा दूं?" हरकारे ने कहा कि सम्राज्ञी ने मरीया इवानोव्ना को अकेली और जो कुछ पहने हों, उसी पोशाक में आ जाने के लिये कहा है। अब कोई चारा नहीं था – मरीया इवानोव्ना बग्घी में बैठ गयी और आन्ना व्लास्येव्ना की सलाहों तथा शुभकामनाओं के साथ महल की ओर रवाना हो गयी।

मरीया इवानोव्ना को हम दोनों के भाग्य-निर्णय की पूर्वानुभूति

हो रही थी। उसका दिल बहुत ज़ोर से धड़कता और फिर मानो उसकी धड़कन बन्द हो जाती। कुछ मिनट बाद बग्घी महल के सामने जा खड़ी हुई। मरीया इवानोव्ना घबराहट अनुभव करती हुई ज़ीना चढ़ने लगी। उसके सामने दरवाज़े खुलते जाते थे। उसने अनेक सुन्दर और ख़ाली कमरे लांघे–हरकारा उसे रास्ता दिखाता जा रहा था। आख़िर एक बन्द दरवाज़े के सामने पहुंचकर उसने कहा कि अभी उसके बारे में सूचना देगा और उसे अकेली छोड़कर भीतर चला गया।

सम्राज्ञी के सामने जाने के ख़्याल से उसे ऐसी दहशत महसूस हुई कि वह बड़ी मुश्किल से अपने पैरों पर खड़ी रह पा रही थी। एक मिनट बाद दरवाज़ा खुला और उसने सम्राज्ञी के शृंगार-कक्ष में प्रवेश किया।

सम्राज्ञी शृंगार की मेज़ पर बैठी थीं। कुछ दरबारी उन्हें घेरे हुए थे और उन्होंने बड़े आदर से मरीया इवानोव्ना को आगे जाने दिया। सम्राज्ञी ने बड़े स्नेह से उसे सम्बोधित किया और मरीया इवानोव्ना ने उनमें उस महिला को पहचान लिया जिसके साथ कुछ ही मिनट पहले उसने बहुत खुलकर बातचीत की थी। सम्राज्ञी ने उसे अपने पास बुलाया और मुस्कराकर कहा, "मुझे प्रसन्नता है कि मैं अपना वचन निभा सकी और आपका अनुरोध पूरा कर पाई। आपका मामला तय हो गया। मुझे इस बात का यक़ीन हो गया कि आपका मंगेतर निरपराध है। यह पत्र ले लीजिये और स्वयं ही इसे अपने भावी ससुर तक पहुंचाने का कष्ट कीजिये।"

मरीया इवानोव्ना ने कांपते हाथ से पत्र लिया और रोते हुए सम्राज्ञी के पैरों पर गिर पड़ी। सम्राज्ञी ने उसे उठाकर चूमा और बातचीत करने लगी। "मुझे मालूम है कि आप धनी नहीं हैं," वह बोली, "किन्तु कप्तान मिरोनोव की बेटी की मैं ऋणी हूं। आप भविष्य की कोई चिन्ता न करें। आपकी सुख-समृद्धि का दायित्व मैं अपने ऊपर लेती हूं।"

बेचारी यतीम को दुलराकर सम्राज्ञी ने उसे विदा किया। मरीया इवानोव्ना उसी बग्घी में वापस आ गयी। बहुत बेसब्री से उसके लौटने की प्रतीक्षा कर रही आन्ना व्लास्येव्ना ने उस पर प्रश्नों की बौछार कर दी। मरीया इवानोव्ना ने जैसे-तैसे प्रश्नों के जवाब दिये। आन्ना

व्लास्येव्ना यद्यपि उसकी बुरी याददाश्त से नाखुश थी, तथापि उसने इसे उसकी प्रान्तीय झेंप-शर्म मानते हुए उसे उदारता से क्षमा कर दिया। मरीया इवानोव्ना पीटर्सबर्ग को देखने के लिये रुके बिना उसी दिन ही गांव वापस चली गयी...

प्योतर अन्द्रेइच ग्रिनेव की पाण्डुलिपि यहां समाप्त हो जाती है। परिवार में प्रचलित कथा से यह पता चलता है कि १७७४ के अन्त में उसे सम्राज्ञी के आदेशानुसार जेल से रिहा कर दिया गया, कि वह पुगाचोव को मृत्यु-दण्ड देने के समय वहां उपस्थित था, कि पुगाचोव ने उसे पहचानकर उसकी ओर सिर झुकाया जो एक मिनट बाद निर्जीव और ख़ून से लथ-पथ हुआ लोगों को दिखाया गया। कुछ ही समय बाद प्योतर अन्द्रेइच ने मरीया इवानोव्ना से शादी कर ली। उनके वंशज सिम्बीर्स्क गुबेर्नियां में फल-फूल रहे हैं। ...से तीस वेर्स्ता की दूरी पर एक गांव है जिसके दस ज़मींदार मालिक हैं। वहीं, एक हवेली के एक भाग में येकतेरीना द्वितीय के हाथ का लिखा शीशे और चौखटे में जड़ा हुआ पत्र रखा है। वह प्योतर अन्द्रेइच के पिता के नाम है, उसमें उनके बेटे को निरपराध बताया गया है तथा कप्तान मिरोनोव की बेटी के दिल-दिमाग़ की तारीफ़ की गयी है। प्योतर अन्द्रेइच ग्रिनेव की पाण्डुलिपि हमें उनके पोते से मिली, जिसे यह मालूम हो गया था कि हम उनके दादा द्वारा वर्णित समय पर खोज-कार्य कर रहे हैं। उनके रिश्तेदारों की अनुमति से हमने प्रत्येक अध्याय के लिये उचित आदर्श-वाक्य चुनकर तथा कुछ नामों को बदलने की स्वतन्त्रता लेते हुए उसे अलग से छापने का निर्णय किया।

प्रकाशक

१६ अक्तूबर, १८३६

परिशिष्ट

छोड़ा हुआ अध्याय*

हम वोल्गा के तट के निकट पहुंच रहे थे। हमारी रेजिमेंट ने ...गांव में पहुंचकर रात के लिये वहां पड़ाव डाल लिया। गांव के मुखिया ने मुझे बताया कि उस पार के सभी गांवों ने विद्रोह कर दिया है, कि सभी जगहों पर पुगाचोव के गिरोह घूम रहे हैं। इस ख़बर ने मुझे बेहद परेशान कर दिया। हमें अगली सुबह को उस पार जाना था। मैं अधीर हो उठा। मेरे पिता जी का गांव नदी के उस पार तीस वेर्स्ता की दूरी पर था। मैंने पूछा कि उस पार ले जानेवाला कोई मांझी मिल सकता है या नहीं। यहां के सभी किसान मछुए भी थे, नावें बहुत-सी थीं। मैंने ग्रिनेव के पास जाकर उसके सामने अपना इरादा ज़ाहिर किया—"जोखिम नहीं उठाओ," उसने मुझसे कहा, "अकेले जाना ख़तरनाक है। सुबह तक इन्तज़ार करो। हम ही सबसे पहले उस पार चले जायेंगे और कोई ज़रूरत आ पड़े, इसलिये ५० हुस्सार भी तुम्हारे माता-पिता के यहां अपने साथ ले जायेंगे।"

किन्तु मैं अपनी बात पर अड़ा रहा। नाव तैयार थी। मैं दो मांझियों को लेकर उसमें सवार हो गया। वे नाव बढ़ा ले चले।

आकाश निर्मल था। चांद चमक रहा था। मौसम शान्त था। वोल्गा मन्द-मन्थर गति से बह रही थी। धीरे-धीरे हिलती-डोलती नाव अंधेरे में काली दिखती लहरों पर तेज़ी से चली जा रही थी। मैं कल्पनाओं से ओत-प्रोत विचारों में खो गया। कोई आध घण्टा बीता। हम नदी के मध्य में पहुच गये थे... अचानक मांझी आपस में खुसुर-फुसुर करने लगे। "क्या बात है?" मैंने सम्भलते हुए पूछा। "मालूम नहीं, भगवान

---

* सेंसर को ध्यान में रखते हुए 'कप्तान की बेटी' उपन्यास की प्रकाशन के लिये तैयार की गयी पाण्डुलिपि में यह अध्याय शामिल नहीं किया गया था और पाण्डुलिपि के रूप में ही सुरक्षित रखा गया। इसलिये स्वयं पुश्किन ने इसे 'छोड़ा हुआ अध्याय' कहा है। इस अध्याय में कुछ पात्रों के नाम भी बदल दिये गये हैं। ग्रिनेव यहां बुलानिन है और ज़ूरिन ग्रिनेव।

जाने," एक ही दिशा में देखते हुए दोनों ने जवाब दिया। मेरी नज़र भी उसी दिशा में घूम गयी और मुझे अंधेरे में वोल्गा में नीचे की ओर बही आती कोई चीज़ दिखाई दी। यह अपरिचित चीज़ निकट आती जा रही थी। मैंने मांझियों से रुककर उसका इन्तज़ार करने को कहा। चांद बादलों की ओट में हो गया। बही आ रही छाया-सी और भी अस्पष्ट हो गयी। वह मेरे निकट आ चुकी थी, मगर मैं अभी भी यह नहीं जान पा रहा था कि वह क्या है। "यह क्या चीज़ हो सकती है," मांझी एक-दूसरे से कह रहे थे, "ये न तो पाल हैं और न मस्तूल ..." अचानक चांद बादल के पीछे से सामने आ गया और मेरे सामने एक भयानक दृश्य उभरा। एक बेड़े पर सूली तैरती चली आ रही थी और उसके साथ तीन लाशें लटक रही थीं। एक विचित्र-सी जिज्ञासा मेरे मन पर हावी हो गयी। मैंने लाशों के चेहरे देखने चाहे।

मेरे आदेश पर मांझियों ने उस बेड़े को हुक से रोक लिया और मेरी नाव तैरती सूली से टकराई। मैं कूदकर उस पर गया और मैंने अपने को भयानक खम्भों के बीच पाया। चांद के प्रखर प्रकाश ने इन क़िस्मत के मारों के विकृत चेहरों को रोशन कर दिया। उनमें से एक बूढ़ा चुवाश था, दूसरा कोई बीस साल का हट्टा-कट्टा रूसी किसान। किन्तु तीसरे को देखकर मैं अत्यधिक आश्चर्यचकित हुआ और दुख से चीख़े बिना न रह सका – यह वान्या था, बेचारा वान्या जो अपनी बेवकूफ़ी के कारण पुगाचोव के साथ हो गया था। इनके ऊपर एक काला तख़्ता ठोंक दिया गया था जिस पर मोटे-मोटे सफ़ेद अक्षरों में लिखा था – "चोर और विद्रोही"। मांझी उदासीनता से लाशों को देखते और हुक से बेड़े को थामे हुए मेरा इन्तज़ार कर रहे थे। मैं नाव पर लौट आया। सूली वाला बेड़ा नदी में नीचे की ओर बहने लगा। सूली देर तक अंधेरे में काली-सी झलक देती रही। आख़िर वह ग़ायब हो गयी और मेरी नाव ऊंचे तथा खड़े तट पर जा लगी ...

मैंने मांझियों को ख़ूब पैसे दिये। उनमें से एक मुझे घाट के निकटवर्ती गांव के विद्रोही मुखिया के पास ले गया। मैं उसके साथ घर में गया। मुखिया यह सुनकर कि मुझे घोड़े चाहिये, मेरे साथ काफ़ी रुखाई से पेश आया। किन्तु मांझी ने धीमे-से उससे कुछ शब्द कहे

स्वचित्र। स्याही। १८२९।

प्योतर व्याजेम्स्की (१७९२–१८७८)। रूसी कवि, समालोचक और पत्रकार। जीवन के अन्तिम वर्षों में ज़ार के एक प्रमुख कर्मचारी। तीसरे दशक में पुश्किन और उनसे घनिष्ठ सम्बन्ध रखनेवाले प्रगतिशील साहित्यकारों के निकट रहे।
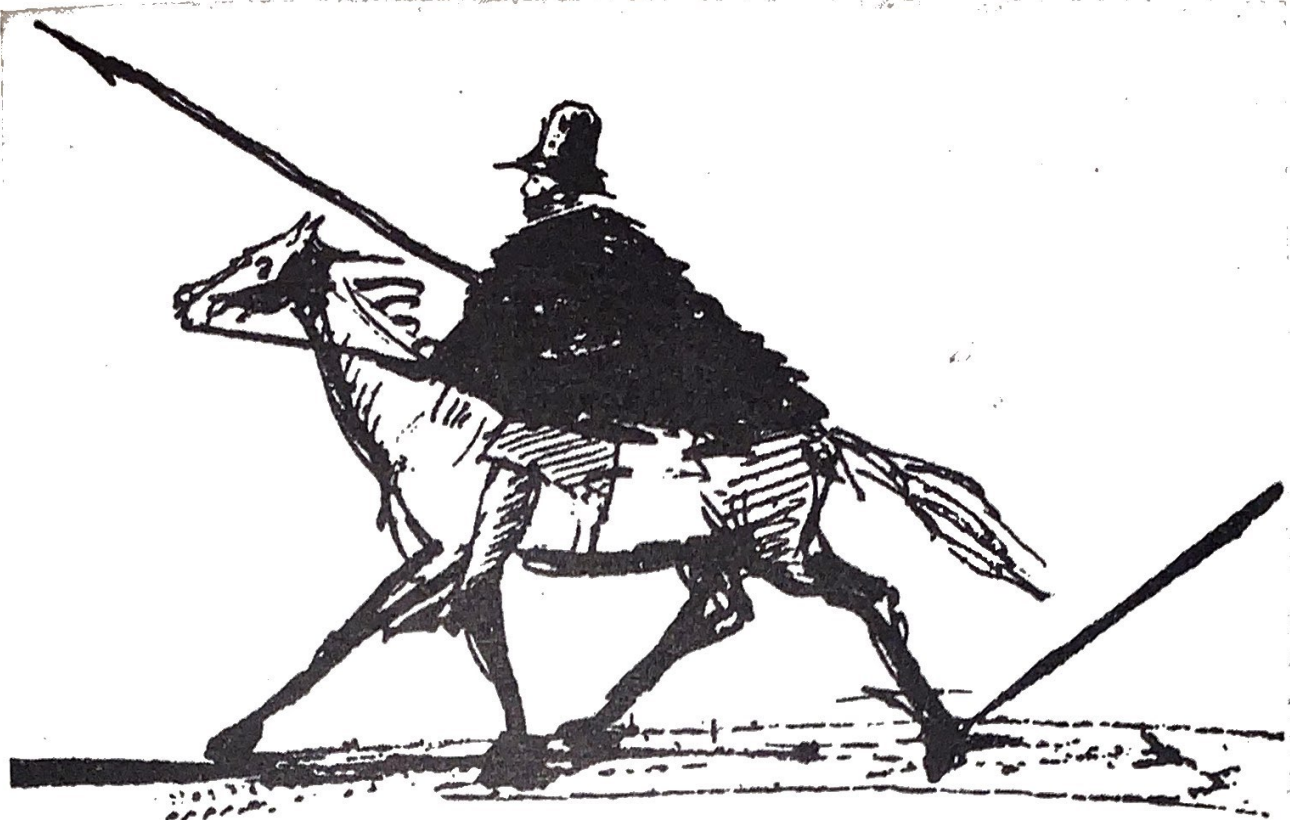
स्वचित्र। स्याही। १८२६। पुश्किन ने अपने को कज़्ज़ाकों का झबरीला लबादा पहने और हाथ में बर्छी लिये चित्रित किया है। इस चित्र का आधार १४ जून, १८२६ की वह घटना है, जब काकेशिया में यात्रा करते हुए महाकवि को एक फ़ौजी झड़प में हिस्सा लेना पड़ा।

येकातेरीना उशाकोवा (१८०९–१८७२)। मास्को के एक सुसंस्कृत तथा कुलीन उशाकोव परिवार की सबसे बड़ी बेटी। तीसरे दशक में पुश्किन इस परिवार में अक्सर जाते थे और उनका बड़ा आदर-सत्कार होता था। पुश्किन और उशाकोव के बीच सुखद और मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। जलरंग-चित्र। १८३०-४०।

आन्ना ओलेनिना (१८०८–१८८८)। ललित कला अकादमी के अध्यक्ष अलेक्सेई ओलेनिन की बेटी। पुश्किन इसे बहुत चाहते थे, उन्होंने इससे विवाह करना चाहा, मगर यह प्रस्ताव ठुकरा दिया गया। रेखाचित्र। १८३३।

बोल्दीनो गांव। नीज्नी नोव्गोरोद गुबेर्निया में महाकवि के पिता की जागीर। १८३० की पतझर में पुश्किन पड़ोस के कीस्तेनेव्का गांव का क़ब्ज़ा लेने गये जो पिता ने बेटे की शादी के मौक़े पर उन्हें उपहार में दे दिया था। बोल्दीनो में बिताये गये तीन महीनों के दौरान पुश्किन ने पांच 'लघु त्रासदियां', 'बेल्किन की कहानियां', 'कोलोमना में एक घर' खण्ड-काव्य, तीस कवितायें और अनेक लेख लिखे।
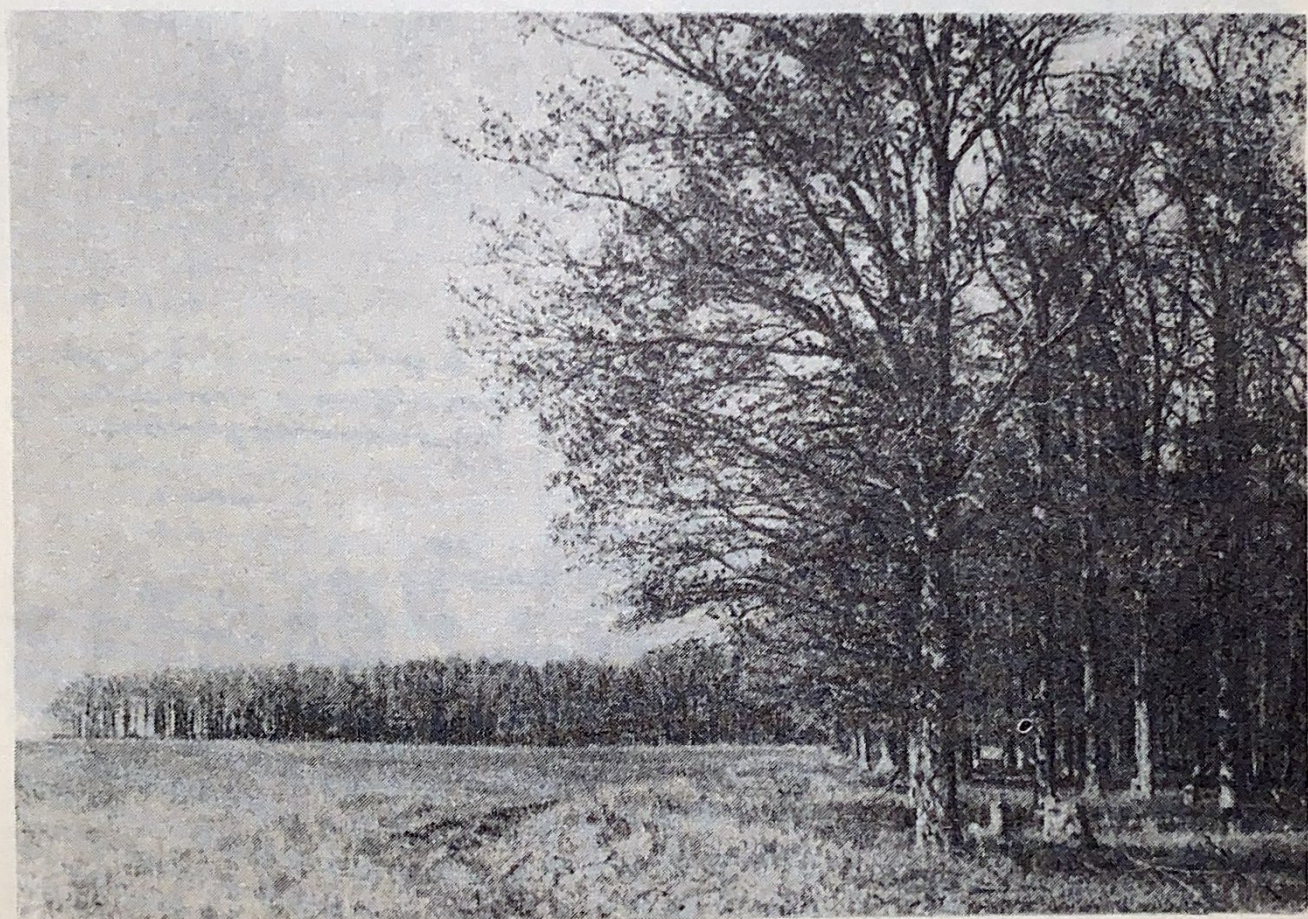
बोल्दीनो के आस-पास की झांकी। 'लूचीन्निक' नामक वन, जहां महाकवि को सैर करना अच्छा लगता था।
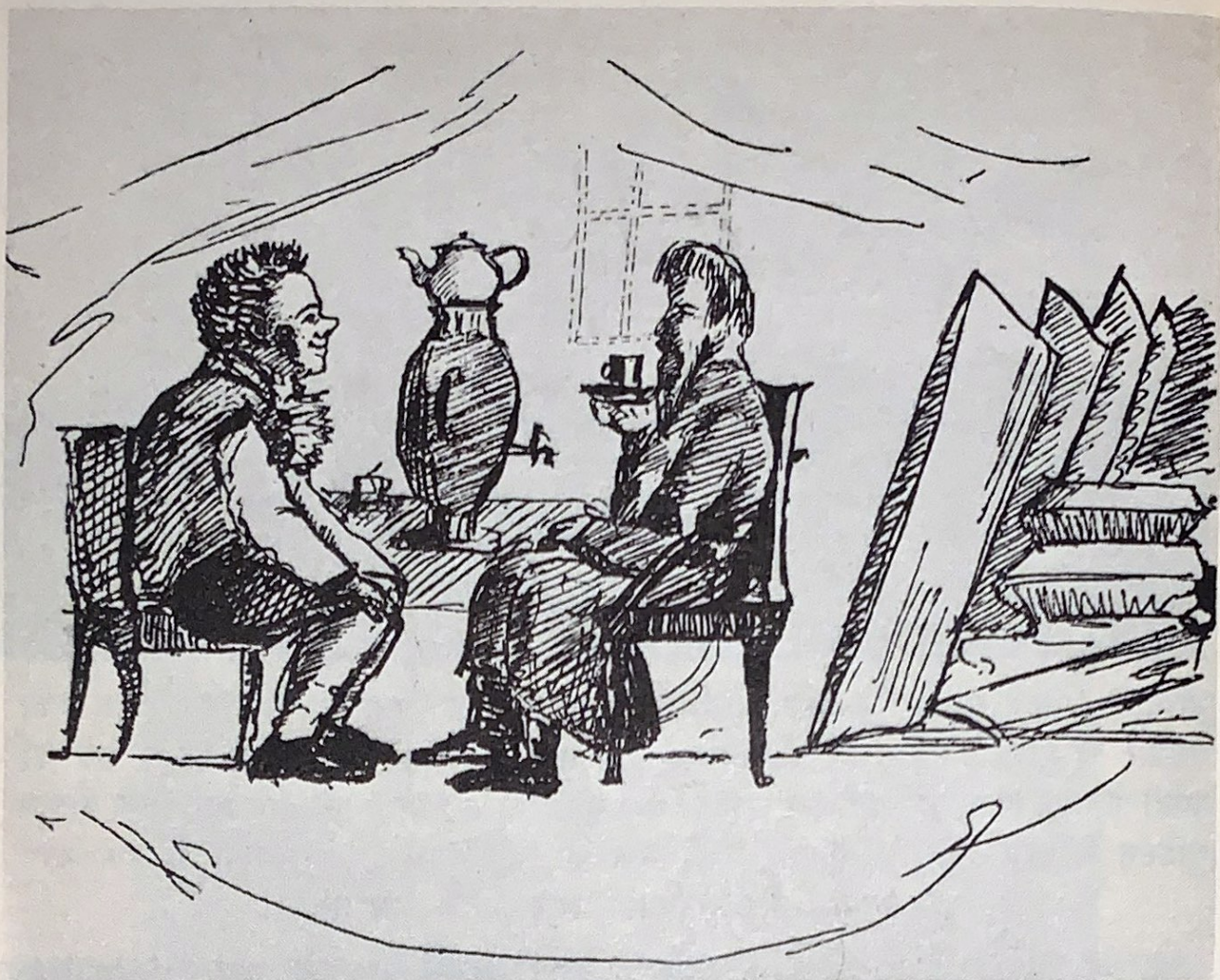
‘ताबूतसाज़’ कहानी के लिये पुश्किन द्वारा बनाये गये चित्रों सहित पाण्डुलिपि। १८३०।
मोची गोतलिब शूल्त्स और ताबूतसाज़ अद्रियान प्रोखोरोव चाय पी रहे हैं।

‘ताबूतसाज़’ कहानी के लिये पुश्किन द्वारा बनाया गया एक अन्य रेखाचित्र। १८३०।
“मातमी जुलूस।”

पीटर्सबर्ग। शस्त्रागार। लीथोग्राफ़। १८२०-३०।

नताल्या गोलीत्सिना (१७४१–१८३७)। मास्को के गवर्नर-जनरल दमीत्री गोलीत्सिन की मां। ऊंचे कुलीन समाज की एक विशिष्ट महिला जिसे Princess Moustache (मूंछोंवाली प्रिंसेस) का उपनाम दिया गया था। पुश्किन ने 'हुक्म की बेगम' कहानी में बूढ़ी काउंटेस का चित्रण करने के लिये इस महिला के लक्षणों का उपयोग किया। लघु चित्र। १८१०-२०।

निकोलाई गोगोल (१८०९–१८५२)। महान रूसी लेखक। रूसी साहित्य में आलोचनात्मक यथार्थवाद के जन्मदाता। पुश्किन ने गोगोल की प्रतिभा का ऊंचा मूल्यांकन किया था। "यह है वास्तविक हर्ष-उल्लास, सहज और स्वाभाविक, किसी भी तरह की बनावट और कृत्रिमता के बिना," पुश्किन ने गोगोल के कहानी-संग्रह 'दिकानका गांव के निकट शामें' की समालोचना करते हुए लिखा था। लीथोग्राफ़। १८३४।

देनीस दवीदोव (१७८४–१८३९)। कवि और हुस्सार, जो अद्भुत साहस और निडरता के लिये विख्यात थे। पुश्किन उनके स्वभाव की मौलिकता के लिये उन्हें विशेष महत्त्व देते थे। प० सोकोलोव द्वारा बनाया गया जलरंग-चित्र। १८३६।

पुश्किन। प० सोकोलोव द्वारा बनाया गया जलरंग-चित्र। १८३६।

नताल्या पुश्किना, विवाहपूर्व गोंचारोवा (१८१२–१८६३)। महाकवि की पत्नी। नताल्या बहुत ही सुन्दर थीं, उनके समकालीनों ने उनके रूप की भूरि-भूरि प्रशंसा की। अपनी भावी पत्नी को समर्पित 'सौन्दर्य-देवी' कविता में पुश्किन ने लिखा था:

तुम हो निर्मलतम सुन्दरता, तुम निर्मलतम रूप-छटा,
मैंने जो चाहा, सो पाया
स्रष्टा ने है अब तो मेरी तुम्हें बनाया।

अ० ब्र्यूल्लोव द्वारा बनाया गया जलरंग-चित्र। १८३१।

पीटर्सबर्ग के निकट त्सारस्कोये सेलो (ज़ार का गांव)। पार्क। १८३१ में पुश्किन ने त्सारस्कोये सेलो में एक बंगला किराये पर लिया। उन्हें "अद्भुत उपवनों" में, जो स्कूल के ज़माने से उन्हें बहुत प्रिय थे, पत्नी के साथ घूमना बहुत अच्छा लगता था। मार्तीनोव द्वारा बनाया गया चित्र। १८२०-३०।

अलेक्सान्द्रा स्मिर्नोवा, विवाहपूर्व रोस्सेत कुलनाम (१८०६–१८८२)। सम्राज्ञी की सेविका-संगिनी। पुश्किन की मित्र। पुश्किन इसकी समझ-बूझ और स्वतंत्र चिन्तन को ऊंचा आंकते थे। १८२०-३० के लघु चित्र से।
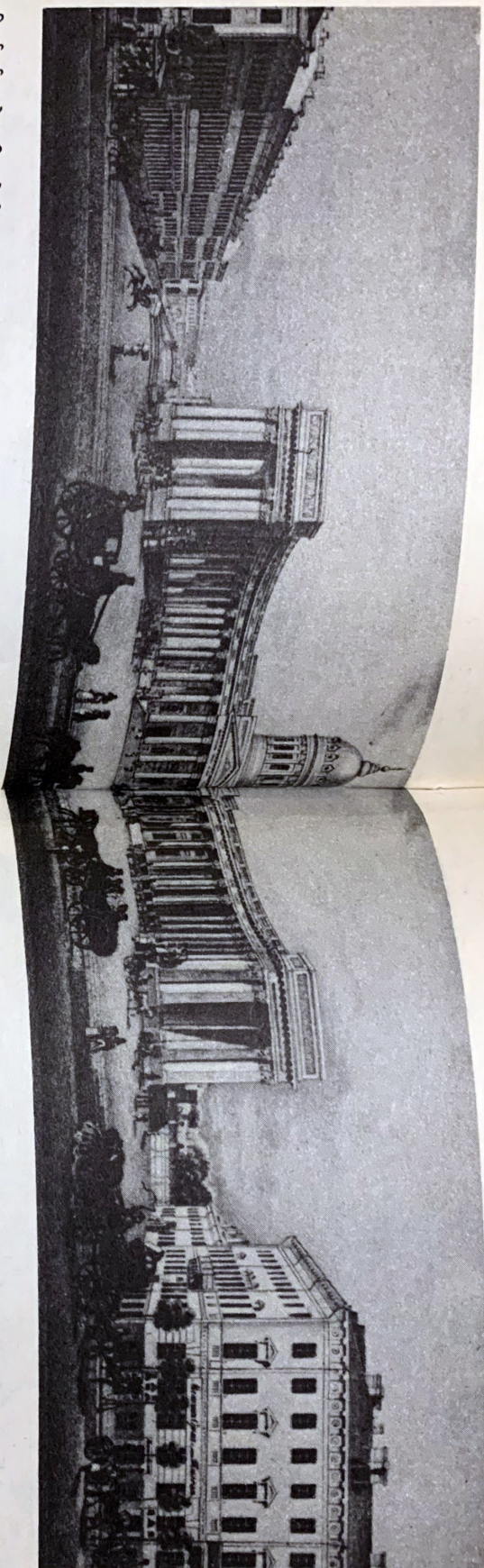
पीटर्सबर्ग। नेव्स्की प्रोस्पेक्ट। कज़ान गिरजाघर की झांकी। पुश्किन ने कज़ान गिरजाघर में दफ़न प्रसिद्ध सेनापति मिखाईल कुतूज़ोव को समर्पित एक कविता 'पावन समाधि के सम्मुख' में "ग्रेनाइट के विराट स्तम्भों" का उल्लेख किया है। लीथोग्राफ़। १८३०-४०।
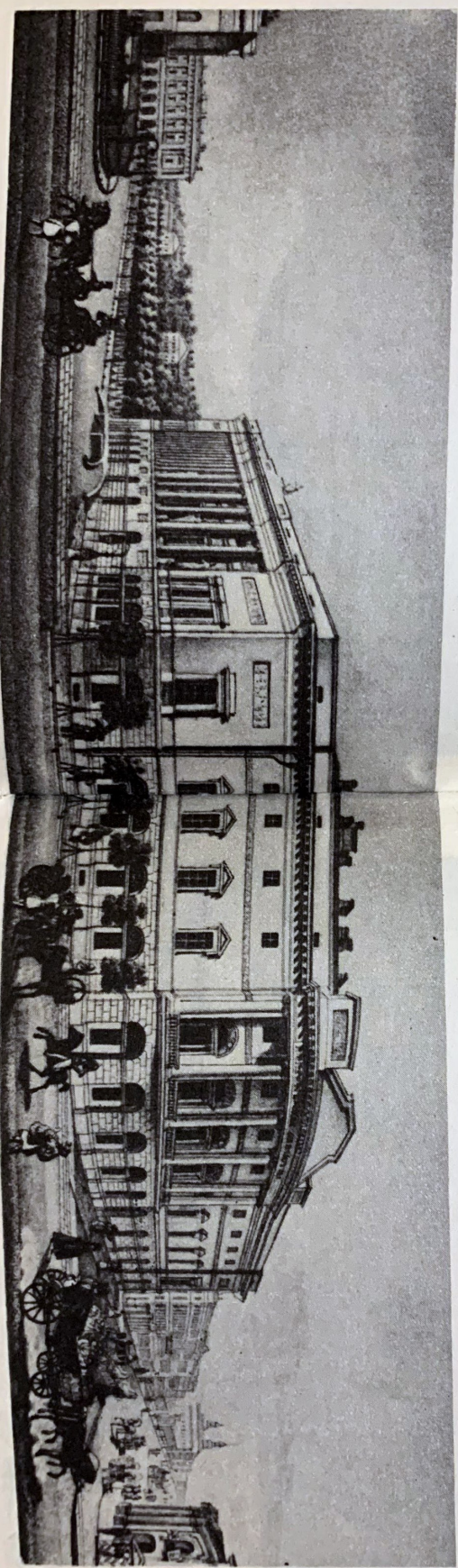
पीटर्सबर्ग। नेव्स्की प्रोस्पेक्ट। शाही सार्वजनिक पुस्तकालय की इमारत का दृश्य। लीथोग्राफ़। १८३०-४०।

पीटर्सबर्ग के ग्रीष्म उद्यान में कुछ रूसी लेखक: (बायें से दायें) क्रिलोव, पुश्किन, जुकोव्स्की, ग्नेदिच। चित्रकार चेर्नेत्सोव (१८३२) ने वास्तविकता के आधार पर यह चित्र बनाया।

पावेल नाश्चोकिन (१८००–१८५४)। मास्को के एक कुलीन। मौलिक और भावावेशी प्रकृति के व्यक्ति। चौथे दशक में पुश्किन के एक घनिष्ठतम मित्र। जलरंग-चित्र। १८३६।

विस्सारिओन बेलिन्स्की (१८११–१८४२)। साहित्य-समालोचक और पत्रकार, रूसी साहित्य में शास्त्रीय समालोचना के जनक। पुश्किन के कृतित्व पर कुछ बहुत ही श्रेष्ठ लेखों के रचयिता। जलरंग-चित्र। १८२०-३०।

नताल्या पुश्किना, विवाहपूर्व गोंचारोवा (१८१२–१८६३)। महाकवि की पत्नी।
व० गाउ द्वारा बनाया गया जलरंग-चित्र। १८४३।

पुश्किन। त० राइट द्वारा बनाया गया उत्कीर्ण-चित्र। १८३७।

मिखाईल लेर्मोन्तोव (१८१४–१८४१)। महान रूसी कवि, जिन्होंने पुश्किन की मृत्यु पर प्रसिद्ध 'कवि की मृत्यु' कविता रची, जिसके लिये उन्हें सैनिक कार्यवाही में रत सेना में काकेशिया भेज दिया गया। जलरंग-चित्र। १८४१।

येमेल्यान पुगाचोव (१७४४–१७७५)। ८वें दशक में किसान-क्रान्ति के नेता। पुगाचोव के व्यक्तित्व में पुश्किन ने बड़ी दिलचस्पी ली – उन्होंने न केवल लेखागार में संचित सभी दस्तावेज़ों का अध्ययन किया, बल्कि विद्रोह में भाग लेनेवाले स्थानों पर भी गये और वहां उन्होंने साक्षियों से बातचीत की। इसके परिणामस्वरूप 'कप्तान की बेटी' ऐतिहासिक उपन्यास और 'पुगाचोव का विद्रोह' शोध-ग्रन्थ का सृजन हुआ। 'पुगाचोव का विद्रोह' के प्रथम संस्करण में प्रकाशित उत्कीर्ण-चित्र। १८३४।

येकातेरीना द्वितीया (१७२९–१७९६)। रूसी सम्राज्ञी जो १७६६ में सिंहासन पर बैठीं। 'कप्तान की बेटी' उपन्यास में "अंग्रेज़ी नस्ल के कुत्ते के साथ", "सुबह का सफ़ेद फ़्राक", "रात की टोपी और रूईदार जाकेट पहने" त्सारस्कोये सेलो के पार्क में सैर करती हुई येकातेरीना द्वितीया का जो आंखों देखा-सा बिम्ब प्रस्तुत किया गया है, उसकी प्रेरणा सम्भवतः चित्रकार बोरोवीकोव्स्की द्वारा १८२७ में बनाये गये उक्त उत्कीर्ण-चित्र से मिली।

येकातेरीना कारामज़ीना (१७८०–१८५१)। प्रसिद्ध इतिहासकार कारामज़ीन की पत्नी। युवाकाल से ही पुश्किन अक्सर पीटर्सबर्ग में कारामज़ीन परिवार में जाया करते थे। कारामज़ीना के प्रति वे स्नेह और आदर की भावना रखते थे। १८४०-५० का चित्र।

कोन्स्तान्तीन दानज़ास (१८०१–१८७०)। स्कूल के ज़माने से पुश्किन के मित्र और दान्तेस के साथ द्वन्द्व-युद्ध के समय पुश्किन की ओर से साक्षी। १९वीं शताब्दी के ५वें दशक का रेखाचित्र।

२७ जनवरी (८ फ़रवरी), १८३७ को पुश्किन और दान्तेस का द्वन्द्व-युद्ध। नाऊमोव द्वारा १८८४ में बनाया गया तेल चित्र।

स्व्यातोगोर्स्क गिरजे मे पुश्किन की क़ब्र। लीथोग्राफ़। १८३७।

अलेक्सान्द्र तुर्गेनेव (१७८४–१८४५)। इतिहासज्ञ, विद्वान, लेखक, ऊंचे सरकारी पदाधिकारी। पुश्किन के वरिष्ठ साथी, जो पीटर्सबर्ग से प्स्कोव और स्व्यातोगोर्स्क गिरजाघर तक पुश्किन के शव के साथ गये। लीथोग्राफ़। १८३०।

व्लादीमिर दाल (१८०१–१८७२)। लेखक, विद्वान, डाक्टर। पुश्किन के मित्र। उन्होंने घायल पुश्किन का इलाज किया।
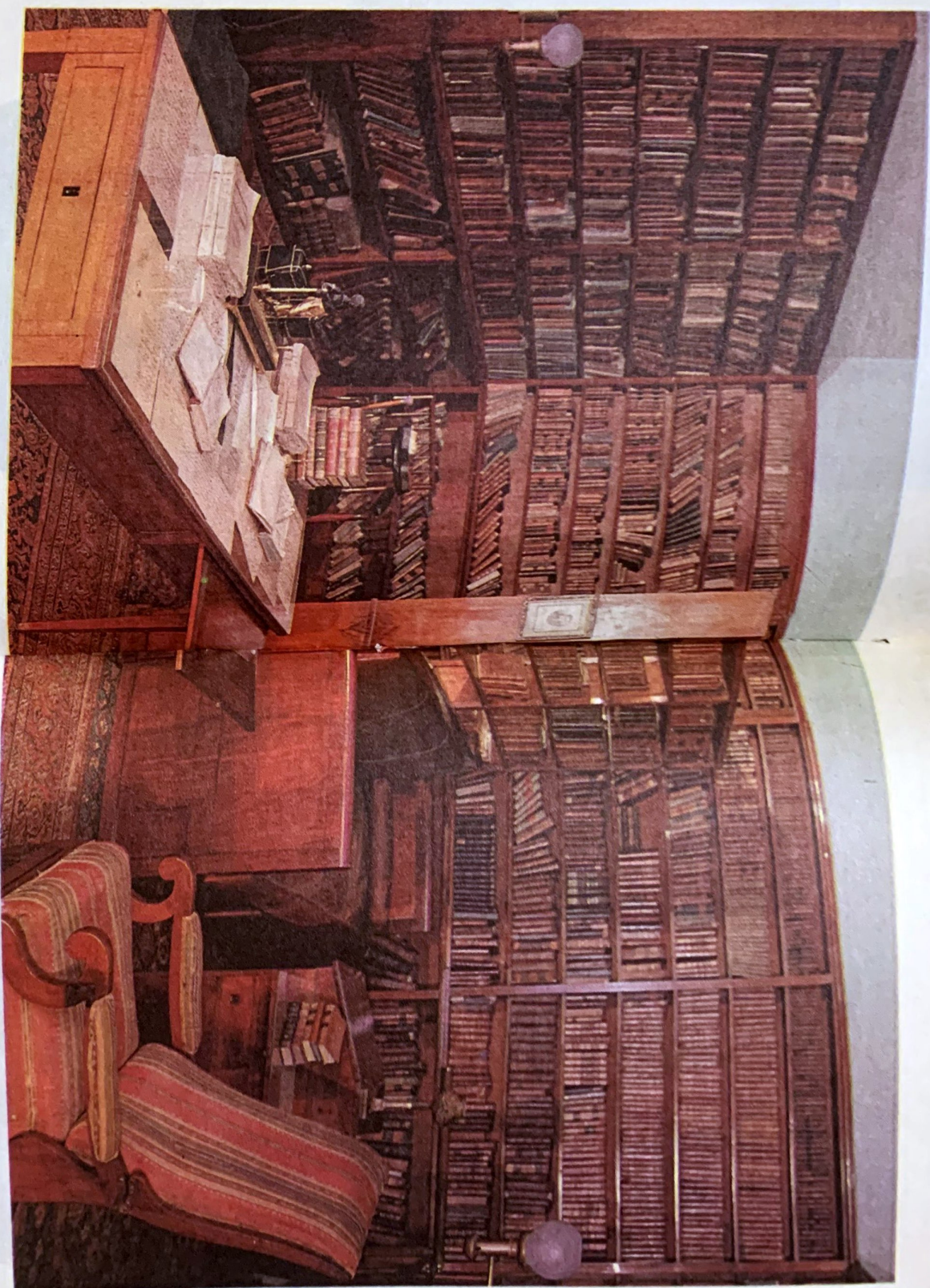
पीटर्सबर्ग में मोइका तटवर्ती फ़्लैट में पुश्किन का अध्ययन-कक्ष। अब यहां लेनिनग्राद का अखिल सोवियत संघीय पुश्किन संग्रहालय है।

ओपेकूशिन के ख़ाके के मुताबिक़ मास्को में बनाया गया पुश्किन का स्मारक। यह स्मारक चन्दा जमा करके बनाया गया और १८८० में इसका उद्घाटन हुआ।

और उसकी कठोरता फ़ौरन मेरी लल्लो-चप्पों में बदल गयी। तीन घोड़ों की बग्घी आन की आन में तैयार हो गयी, मैं उसमें बैठा और कोचवान से कहा कि वह मुझे मेरे पिता जी के गांव की ओर ले चले।

बग्घी सोये हुए गांवों के पास से बड़ी सड़क पर भागी जा रही थी। मुझे एक बात का डर था – कहीं रास्ते में रोक न लिया जाऊं। वोल्गा पर रात के समय बेड़े और उस पर लटकी लाशों से हुई भेंट यदि विद्रोहियों की उपस्थिति को प्रमाणित करती थी, तो साथ ही इस बात का सबूत भी देती थी कि सरकार की ओर से भी ज़ोरदार विरोध हो रहा है। किसी विकट स्थिति के लिये मेरी जेब में पुगाचोव द्वारा दिया हुआ अनुमति-पत्र भी था और कर्नल ग्रिनेव का आदेश-पत्र भी। किन्तु रास्ते में कोई नहीं मिला और सुबह होते न होते मुझे नदी और फ़र-वृक्षों का वह झुरमुट नज़र आने लगा जिसके पीछे हमारा गांव था। कोचवान ने घोड़ों पर चाबुक बरसाया और पन्द्रह मिनट बाद मैं ... गांव में पहुंच गया।

हमारी हवेली गांव के दूसरे सिरे पर थी। घोड़े पूरे ज़ोर से सरपट दौड़ रहे थे। अचानक कोचवान उन्हें सड़क के बीचोंबीच रोकने लगा। "क्या बात है?" मैंने बेसब्री से पूछा। "फ़ौजी चौकी है, हुज़ूर," बहुत जोश में आये अपने घोड़ों को मुश्किल से रोक पाते हुए कोचवान ने उत्तर दिया। वास्तव में ही मुझे मार्ग-बाधा और लट्ठ लिये सन्तरी दिखाई दिया। किसान-सन्तरी ने मेरे पास आकर टोपी उतार ली और पासपोर्ट मांगा।

"क्या मतलब है इसका?" मैंने उससे पूछा। "किसलिये यहां यह बाधा बनायी गयी है? किसकी पहरेदारी कर रहे हो तुम?"

"हुज़ूर, हम विद्रोह कर रहे हैं," उसने सिर खुजलाते हुए जवाब दिया।

"आपके मालिक लोग कहां हैं?" मैंने पूछा और अनुभव किया कि मेरा दिल बैठा जा रहा है।

"मालिक लोग कहां हैं?" किसान ने सवाल दोहराया। "हमारे मालिक लोग खत्ती में हैं।"

"खत्ती में, यह कैसे?"

"बात यह है कि गांव-कमेटी के अन्द्रेई ने उनके पैरों में शिकंजे

डाल दिये हैं और वह उन्हें ज़ार-पिता के सामने ले जाना चाहता है।"

"हे भगवान! अरे उल्लू, बाधा को हटा ले। मुंह बाये क्या देख रहा है?"

सन्तरी ने झिझक दिखाई। मैंने बग्घी से कूदकर उसके कान पर घूंसा जमाया (माफ़ी चाहता हूं) और खुद मार्ग-बाधा को हटा दिया। किसान कुछ न समझ पाते हुए एक बुद्धू की तरह टुकुर-टुकुर मेरी ओर देखता रह गया। मैं फिर से बग्घी में सवार हुआ और हवेली की ओर चलने का आदेश दिया। खत्ती अहाते में थी। तालाबन्द दरवाज़े पर दो किसान लट्ठ लिये खड़े थे। बग्घी बिल्कुल उनके सामने जाकर रुकी। मैं कूदकर नीचे उतरा और सीधा उनकी तरफ़ लपका। "दरवाज़ा खोलो!" मैंने उनसे कहा। सम्भवतः मैं बहुत भयानक लग रहा था। कुछ भी हो, वे दोनों लट्ठ फेंककर भाग गये। मैंने ताला और दरवाज़ा तोड़ने की कोशिश की, मगर दरवाज़ा बलूत की लकड़ी का था और बहुत बड़ा ताला तोड़ना मुमकिन नहीं था। इसी क्षण एक लम्बा-तड़ंगा जवान किसान नौकरों के घर से बाहर आया और उसने बड़ी अकड़ से यह पूछा कि मैं हंगामा करने की हिम्मत कैसे कर रहा हूं।

"गांव-कमेटी वाला अन्द्रेई कहां है?" मैंने चिल्लाते हुए उससे पूछा। "उसे बुलाओ मेरे पास।"

"अन्द्रेई नहीं, मैं ही हूं अन्द्रेई अफ़ानासियेविच," बड़े घमण्ड से कूल्हों पर हाथ रखे हुए उसने जवाब दिया। "क्या बात है?"

जवाब देने के बजाय मैंने उसका गरेबान पकड़ लिया, खींचकर उसे खत्ती के दरवाज़े पर ले गया और दरवाज़ा खोलने का हुक्म दिया। उसने कुछ ज़िद्द की, मगर "पैतृक" दण्ड ने उस पर भी असर डाला। उसने चाबी निकालकर खत्ती का दरवाज़ा खोल दिया। मैंने लपककर दहलीज़ लांघी और अन्धेरे कोने में, जहां छत में किये गये छोटे-से सूराख़ से धीमी-सी रोशनी आ रही थी, मुझे अपने माता-पिता दिखाई दिये। उनके हाथ बंधे हुए थे और पैरों में शिकंजे थे। मैंने उन्हें अपनी बांहों में भर लिया और मेरे मुंह से एक भी शब्द नहीं निकल सका। दोनों हतप्रभ-से मेरी ओर ताक रहे थे—सैनिक जीवन के तीन सालों ने मुझे इतना बदल दिया था कि उनके लिये पहचान पाना सम्भव नहीं था। मां अचम्भे से चीख़ उठीं और टप-टप आंसू गिराने लगीं।

अचानक मुझे प्यारी और जानी-पहचानी आवाज़ सुनाई दी – "प्योतर अन्द्रेइच ! यह आप हैं !" मैं स्तम्भित रह गया ... मैंने मुड़कर देखा तो पाया कि दूसरे कोने में मरीया इवानोव्ना भी उसी तरह बंधी हुई है।

पिता जी मुझे चुपचाप देखते जा रहे थे, ख़ुद अपने पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे। उनके चेहरे पर ख़ुशी चमक रही थी। मैं झटपट तलवार से उनकी रस्सियों की गांठें काटने लगा।

"नमस्ते, नमस्ते पेत्रूशा," मुझे अपनी छाती से लगाते हुए पिता जी ने कहा, "भला हो भगवान का, तुम्हें देख पाये ..."

"पेत्रूशा, मेरे प्यारे," मां बोलीं, "भगवान तुम्हें यहां ले आया ! तुम ठीक-ठाक तो हो ?"

मैंने उन्हें इस जेल से बाहर निकालने की उतावली की, किन्तु दरवाज़े के पास जाने पर मैंने उसे फिर से बन्द पाया।

"अन्द्रेई," मैं चिल्लाया, "दरवाज़ा खोलो !"

"नहीं खुलेगा दरवाज़ा," गांव-कमेटी के मुखिया ने बाहर से जवाब दिया। "ख़ुद भी यहीं बैठे रहो। हम तुम्हें हंगामा करने और सरकारी कर्मचारियों को गरेबान से पकड़ने का मज़ा चखायेंगे !"

मैं इस आशा से खत्ती में इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगा कि वहां से बाहर निकलने का कोई उपाय है या नहीं।

"बेकार कोशिश नहीं करो," पिता जी ने मुझसे कहा, "ऐसा बुरा मालिक नहीं हूं मैं कि मेरी खत्ती में चोर आसानी से घुस सकें और बाहर निकल जायें।"

मेरे आने पर कुछ देर के लिये ख़ुश हो उठनेवाली मेरी मां यह देखकर हताश हो गयीं कि सारे परिवार की तरह मुझे भी अपनी जान गंवानी होगी। किन्तु मैं जिस समय से माता-पिता और मरीया इवानोव्ना के पास आया था, अपने को अधिक शान्त अनुभव कर रहा था। मेरे पास तलवार और दो पिस्तौलें थीं और मैं घेरे का सामना कर सकता था। शाम होने तक ग्रिनेव को यहां पहुंचना और हमें आज़ाद करवा लेना चाहिये था। मैंने अपने माता-पिता को यह सब कुछ बता दिया और मां को शान्त करने में सफल हो गया। वे पूरी तरह मिलन की ख़ुशी की तरंग में बह गये।

"तो प्योतर," पिता जी ने मुझसे कहा, "काफ़ी शरारतें कर चुके हो तुम और मैं काफ़ी नाराज़ था तुमसे। लेकिन पुरानी बातों को याद करने से क्या हासिल? मुझे उम्मीद है कि अब तुम सुधर गये हो और समझदार हो गये हो। मुझे यह मालूम है कि जैसे किसी ईमानदार अफ़सर को शोभा देता है, तुमने वैसे ही अपनी फ़ौजी ड्यूटी पूरी की है। धन्यवाद। बुढ़ापे में मेरे दिल को तसल्ली दी है। अगर तुम्हारी बदौलत ही मुझे निजात मिलेगी, तो मेरी ज़िन्दगी दुगुनी मधुर हो जायेगी।"

मैंने आंसू बहाते हुए पिता जी का हाथ चूमा और मरीया इवानोव्ना की ओर देखा जो मेरे आ जाने से इतनी अधिक ख़ुश हुई थी कि बिल्कुल सुखी और शान्त प्रतीत हो रही थी।

लगभग दोपहर के समय हमें असाधारण हल्ला-गुल्ला और चीख़-चिल्लाहट सुनाई दी। "यह क्या मामला है," पिता जी ने कहा, "कहीं तुम्हारा कर्नल तो नहीं आ गया?" – "नहीं, यह मुमकिन नहीं," मैंने जवाब दिया। "वह तो शाम होने से पहले नहीं पहुंचेगा।" शोर बढ़ता चला गया। ख़तरे का घण्टा बजाया जा रहा था। अहाते में घुड़सवार अपने घोड़े दौड़ा रहे थे। इसी समय सावेलिच ने दीवार में किये गये सूराख़ में पके बालोंवाला अपना सिर घुसेड़ा और उस बेचारे बुज़ुर्ग ने दर्द भरी आवाज़ में कहा, "अन्द्रेई पेत्रोविच, अव्दोत्या वसील्येव्ना! प्यारे प्योतर अन्द्रेइच, मरीया इवानोव्ना, मुसीबत आ गयी! बदमाश लोग गांव में आ गये हैं। और जानते हो प्योतर अन्द्रेइच, कौन उन्हें लेकर आया है? अलेक्सेई इवानोविच श्वाबरिन, शैतान उसका बुरा करे!" श्वाबरिन का घृणित नाम सुनकर मरीया इवानोव्ना ने अपने हाथ झटके और बुत-सी बनी रह गयी।

"सुनो," मैंने सावेलिच से कहा, "किसी को घोड़ा देकर हुस्सारों की पलटन के पास घाट पर भेजो और कहो कि वह कर्नल को हमारे बारे में ख़तरे की ख़बर दे दे।"

"लेकिन किसे भेजूं, छोटे मालिक! सभी छोकरे विद्रोह किये हुए हैं और सारे घोड़े भी उन्होंने अपने क़ब्ज़े में कर लिये हैं! ओह, बुरा हो इनका! अहाते में आ गये – खत्ती की ओर बढ़ रहे हैं।"

इसी समय दरवाज़े के दूसरी ओर से कुछ आवाज़ें सुनाई दीं।

मैंने मां और मरीया इवानोव्ना को चुपचाप इशारा किया कि वे कोने में चली जायें, म्यान से अपनी तलवार निकाल ली और दरवाज़े के बिल्कुल क़रीब दीवार से सटकर खड़ा हो गया। पिटा जी ने पिस्तौलें लीं, दोनों के घोड़े चढ़ा लिये और मेरी बग़ल में खड़े हो गये। ताले में चाबी डालने की आवाज़ हुई, दरवाज़ा खुला और गांव-कमेटी के मुखिया का सिर दिखाई दिया। मैंने उस पर तलवार से वार किया, वह वहीं गिर गया और उसने भीतर आने का रास्ता रोक दिया। इसी समय पिता जी ने पिस्तौल से एक गोली चला दी। हमें घेरे में लेनेवाले लोगों की भीड़ गालियां बकते हुए तितर-बितर हो गयी। मैंने घायल को दहलीज़ से भीतर खींच लिया और अन्दर से कुंडी चढ़ा दी। अहाता हथियारबन्द लोगों से भरा हुआ था। मैंने श्वाबरिन को उनमें पहचान लिया।

"डरें नहीं," मैंने अपनी मां और मरीया इवानोव्ना से कहा। "अभी उम्मीद बाक़ी है। और पिता जी, आप और गोली नहीं चलाइये। हमें आख़िरी गोली बचाकर रखनी चाहिये।"

मां चुपचाप भगवान को याद कर रही थीं। मरीया इवानोव्ना फ़रिश्ते जैसी शान्ति से उसके पास खड़ी हुई अपने भाग्य-निर्णय की प्रतीक्षा कर रही थी। दरवाज़े के उस ओर से धमकियां, गाली-गलौज और गन्दी बातें सुनाई दे रही थीं। मैं अपनी पहलेवाली जगह पर और भीतर आने की हिम्मत करनेवाले को मौत के घाट उतारने को तैयार खड़ा था। बदमाश लोग अचानक ख़ामोश हो गये। मेरा नाम लेकर पुकारनेवाले श्वाबरिन की आवाज़ मुझे सुनाई दी।

"मैं यहां हूं, क्या चाहिये तुम्हें?"

"हथियार फेंक दो, बुलानिन, सामना करना बेकार है। अपने बुज़ुर्गों पर रहम करो। ज़िद्द करके बच नहीं सकोगे। मैं तुम तक पहुंच जाऊंगा!"

"कोशिश करके देखो, ग़द्दार!"

"न तो ख़ुद बेकार ही भीतर आऊंगा और न अपने लोगों की ही जान ख़तरे में डालूंगा। मैं खत्ती को आग लगाने का हुक्म दे दूंगा और फिर देखेंगे कि तुम क्या करते हो, बेलोगोर्स्क के डोन क्विग्ज़ोट। अब तो दोपहर के खाने का वक़्त हो गया। तुम इसी बीच फ़ुरसत से

इस बात पर सोच-विचार कर लो। अलविदा, मरीया इवानोव्ना, आपसे क्षमा नहीं मांगूंगा – सम्भवतः आपको तो अपने सूरमा के साथ अंधेरे में बैठे हुए ऊब महसूस नहीं हो रही होगी।"

खत्ती के पास सन्तरी तैनात करके श्वाबरिन चला गया। हम मौन रहे। हममें से हर कोई अपने-अपने विचारों में खोया हुआ था, दूसरे से उन्हें कहने की हिम्मत नहीं कर पा रहा था। मैं उस सब की कल्पना करने लगा कि ग़ुस्से में आया हुआ श्वाबरिन क्या कुछ कर सकता है। अपनी तो मुझे लगभग कोई चिन्ता नहीं थी। मैं यह भी स्वीकार कर लेता हूं कि अपने माता-पिता के भाग्य से भी मुझे मरीया इवानोव्ना के बारे में कहीं ज़्यादा फ़िक्र थी। मैं जानता था कि किसान और नौकर-चाकर मेरी मां को पूजते हैं तथा कड़ाई के बावजूद पिता जी को भी प्यार करते हैं, क्योंकि वे न्यायप्रिय थे और अपने अधीन लोगों की वास्तविक आवश्यकताओं से परिचित थे। उनका विद्रोह रास्ते से भटक जाना था, कुछ देर का नशा था और उनके ग़ुस्से की अभिव्यक्ति नहीं था। इसलिये वे ज़रूर ही उन पर रहम करेंगे। लेकिन मरीया इवानोव्ना? बदमाश और बेहया श्वाबरिन उसके साथ कैसा सुलूक करनेवाला है? इस भयानक विचार पर मैं तो सोचने की भी हिम्मत नहीं कर पा रहा था। भगवान क्षमा करे, उसे फिर से ज़ालिम दुश्मन को सौंपने के बजाय मैं तो ख़ुद अपने हाथों से उसकी हत्या करने को तैयार था।

लगभग एक घण्टा और बीत गया। गांव में नशे में धुत्त लोगों के गाने गूंजते थे। हमारी पहरेदारी करनेवालों को उनसे ईर्ष्या होती थी और वे हम पर झल्लाते हुए कोसने और हमें यातनायें देने तथा मार डालने की धमकियां दे रहे थे। हम यह इन्तज़ार कर रहे थे कि श्वाबरिन ने जो धमकियां दी हैं, उनका क्या नतीजा निकलता है। आख़िर अहाते में बड़ी हलचल हुई और हमें फिर से श्वाबरिन की आवाज़ सुनाई दी –

"आप लोगों ने सोच-विचार कर लिया? अपनी ख़ुशी से मेरे सामने हथियार फेंकने को तैयार हैं?"

किसी ने भी उसे उत्तर नहीं दिया। कुछ देर इन्तज़ार करने के बाद श्वाबरिन ने फूस लाने का हुक्म दिया। कुछ मिनट बाद आग

भड़क उठी, खत्ती में रोशनी हो गयी और दहलीज़ के नीचे वाले सूराख़ों से धुआं निकलने लगा। तब मरीया इवानोव्ना मेरे पास आई और मेरा हाथ अपने हाथ में लेकर धीरे-से बोली –

"बस, काफ़ी हो चुका, प्योतर अन्द्रेइच! मेरी ख़ातिर अपनी और अपने माता-पिता की जान नहीं लीजिये। मुझे बाहर जाने दीजिये। श्वाबरिन मेरी बात मान लेगा।"

"हरगिज़ ऐसा नहीं करूंगा," मैं बड़े ज़ोर से चिल्ला उठा। "आपको मालूम है न कि आपके साथ क्या बीतनेवाली है?"

"बेइज़्ज़ती मैं बर्दाश्त नहीं करूंगी," मरीया इवानोव्ना ने शान्ति से जवाब दिया। "किन्तु यह सम्भव है कि मैं अपने मुक्तिदाता और उस परिवार को बचा पाऊं जिसने इतनी उदारता से मुझ यतीम को शरण दी। तो विदा अन्द्रेई पेत्रोविच, अव्दोत्या वसील्येव्ना। आप मेरे संरक्षक ही नहीं, इससे कहीं अधिक थे। मुझे अपना आशीर्वाद दीजिये। आप भी मुझे क्षमा करें, प्योतर अन्द्रेइच। आप विश्वास कर सकते हैं कि... कि..." इतना कहते हुए वह रो पड़ी और उसने हाथों से मुंह ढंक लिया... मैं तो पागल जैसा हो रहा था। मां रो रही थीं।

"बस, अब यह सब रहने दो मरीया इवानोव्ना," मेरे पिता जी ने कहा। "कौन तुम्हें उठाईगीरों के पास अकेली जाने देगा! यहां बैठ जाओ और चुप रहो। मरना ही है, तो सभी एकसाथ मरेंगे। सुनो, वे और क्या कह रहे हैं?"

"मेरी बात मानते हो या नहीं?" श्वाबरिन चिल्ला रहा था। "देख रहे हैं? पांच मिनट में आप सब जलकर राख हो जायेंगे।"

"नहीं मानेंगे, नीच!" मेरे पिता जी ने दृढ़ आवाज़ में जवाब दिया।

पिता जी के झुर्रियोंवाले चेहरे पर अद्भुत उत्साह की सजीवता दिखाई दे रही थी, सफ़ेद भौंहों के नीचे चमकती हुई आंखें दहशत पैदा कर रही थीं। मुझे सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा –

"अब देर नहीं करनी चाहिये!"

उन्होंने दरवाज़ा खोला। आग भीतर की ओर लपकी तथा शहतीरों और उनके बीच जमी हुई सूखी काई की तरफ़ बढ़ने लगी। पिता जी ने पिस्तौल से गोली चलाई और "सब मेरे पीछे आओ!" चिल्लाते हुए दहकती दहलीज़ को लांघ गये। मैंने मां और मरीया इवानोव्ना

के हाथ पकड़े और जल्दी से उन्हें बाहर ले गया। पिता जी के कमज़ोर हाथ से घायल हुआ श्वाबरिन दहलीज़ के क़रीब पड़ा था। हमारे ऐसे अप्रत्याशित धावे से भाग उठनेवाली लुटेरों-बदमाशों की भीड़ फिर से हिम्मत बटोरकर हमें घेरने लगी। मैं तलवार के कुछ और वार करने में सफल रहा, किन्तु अच्छा निशाना बांधकर फेंकी गयी ईंट सीधी मेरी छाती में आकर लगी। मैं गिर पड़ा और एक क्षण को बेहोश हो गया। होश आने पर मैंने श्वाबरिन को ख़ून से रंगी हुई घास पर बैठे पाया और हमारा सारा परिवार उसके सामने था। मुझे बग़लों में हाथ डालकर सहारा दिया जा रहा था। किसानों, कज़्ज़ाकों और बश्कीरियों की भीड़ हमें घेरे थी। श्वाबरिन के चेहरे का रंग भयानक रूप से पीला था। एक हाथ से वह अपनी घायल बग़ल को दबाये हुए था। उसके चेहरे पर पीड़ा और क्रोध अंकित थे। उसने धीरे-धीरे सिर ऊपर उठाया, मेरी ओर देखा और क्षीण तथा अस्पष्ट आवाज़ में कहा –

"इसे सूली दे दो ... सभी को ... सिर्फ़ इस लड़की को छोड़कर ..."

बदमाशों की भीड़ ने इसी क्षण हमें घेर लिया और चीख़ते-चिल्लाते हुए फाटक की ओर घसीट ले गयी। किन्तु ये लोग हमें छोड़कर अचानक भाग खड़े हुए। ग्रिनेव और उसके पीछे नंगी तलवारें लिये हुए पूरा दस्ता फाटक को लांघकर अहाते में आ रहा था।

विद्रोही सभी दिशाओं में भागे जा रहे थे; हुस्सार उनका पीछा कर रहे थे, उनके टुकड़े कर रहे थे और बन्दी बना रहे थे। ग्रिनेव ने घोड़े से नीचे उतरकर मेरे माता-पिता को प्रणाम किया और तपाक से मेरे साथ हाथ मिलाया। "तो मैं ठीक वक़्त पर पहुंच गया," उसने हमसे कहा। "सो, यह है तुम्हारी मंगेतर!" मरीया इवानोव्ना लज्जारुण हो गयी। पिता जी उसके पास गये और यद्यपि वे मन में बड़ी भाव-विह्वलता अनुभव कर रहे थे, तथापि बाहरी तौर पर शान्त-स्थिर रहते हुए उन्होंने उसके प्रति आभार प्रकट किया। मां ने उसे गले लगाया, रक्षक-फ़रिश्ता कहा। "हमारे यहां पधारिये," पिता जी ने उससे कहा और ग्रिनेव को हमारे घर की ओर ले चले।

श्वाबरिन के पास से गुज़रते हुए ग्रिनेव रुका।

"यह कौन है?" घायल की तरफ़ देखते हुए उसने पूछा।

"यह है इनका मुखिया, इस गिरोह का सरदार," पिता जी ने कुछ गर्व के साथ उत्तर दिया, जिससे यह प्रकट हो गया कि वे पुराने फ़ौजी हैं, "भगवान ने मेरे कमज़ोर हाथ में इस जवान बदमाश को दण्ड देने और अपने बेटे की चोट का बदला लेने की शक्ति देकर बड़ी मदद की।"

"यह श्वाबरिन है." मैंने ग्रिनेव से कहा।

"श्वाबरिन! बहुत खुशी हुई! हुस्सारो! इसे ले जाओ! हमारे चिकित्सक से कहें कि इसके घाव पर पट्टी बांध दे और आंख की पुतली की तरह इसकी रक्षा करे। श्वाबरिन को अवश्य ही कज़ान के गुप्त आयोग के सामने पेश करना चाहिये। वह मुख्य अपराधियों में से एक है और उसकी गवाही महत्वपूर्ण होनी चाहिये।"

श्वाबरिन ने अपनी थकी हुई आंखें खोलीं। उसके चेहरे पर शारीरिक पीड़ा के अलावा और कुछ नज़र नहीं आ रहा था। हुस्सार उसे चोगे पर लिटाकर ले गये।

हम कमरे में दाखिल हुए। मैंने अपने बचपन के वर्षों को याद करते हुए धड़कते दिल से इधर-उधर नज़र घुमाई। घर में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था, सब कुछ अपनी पहले वाली जगह पर था। श्वाबरिन ने उसे लूटने नहीं दिया था और बेहद पतन के बावजूद उसमें तुच्छ लालच के प्रति स्वाभाविक घृणा बनी रही थी। नौकर-चाकर प्रवेश-कक्ष में सामने आये। उन्होंने विद्रोह में भाग नहीं लिया था और हमारे निजात पाने पर सच्चे मन से खुशी ज़ाहिर की। सावेलिच तो विजेता की तरह रंग में था। यहां यह बताना उचित होगा कि लुटेरों के हमले से पैदा हुई घबराहट के वातावरण में वह अस्तबल में भाग गया जहां श्वाबरिन का घोड़ा खड़ा था, उसने उस पर ज़ीन कसा, धीरे-से उसे बाहर लाया और हल्ले-गुल्ले की बदौलत सब की आंख बचाकर उसे घाट पर सरपट दौड़ा ले गया। वहां उसे वोल्गा के इस पार आराम करती हुई रेजिमेंट दिखाई दी। हमारे सिरों पर मंडरा रहे ख़तरे के बारे में जानकर ग्रिनेव ने फ़ौरन घोड़ों पर सवार होने तथा सरपट घोड़े दौड़ाते हुए हमारे पास पहुंचने का

हुक्म दिया – भगवान की कृपा से वे ठीक वक़्त पर पहुंच गये।

ग्रिनेव ने इस बात का आग्रह किया कि गांव-कमेटी के मुखिया का सिर शराबख़ाने के निकट कुछ घण्टों तक एक डंडे पर टंगा रहे।

हुस्सारों ने विद्रोहियों का पीछा किया और कुछ लोगों को बन्दी बनाकर ले आये। उन्हें उसी खत्ती में बन्द कर दिया गया जिसमें हमने अपने स्मरणीय घेरे का सामना किया था।

हम सभी अपने-अपने कमरे में चले गये। मेरे बुज़ुर्ग माता-पिता को आराम की ज़रूरत थी। मैं सारी रात नहीं सोया था, इसलिये बिस्तर पर जा गिरा और गहरी नींद सो गया। ग्रिनेव हुक्म-हिदायतें देने चला गया।

शाम को हम मेहमानख़ाने में समोवार के गिर्द जमा हुए और हंसते-हंसाते हुए टल गये भयानक ख़तरे की चर्चा करने लगे। मरीया इवानोव्ना चाय के प्याले तैयार कर रही थी, मैं उसके क़रीब जा बैठा और पूरी तरह उसी में खो गया। ऐसा प्रतीत हुआ कि मेरे माता-पिता को हमारा आपसी लगाव अच्छा लग रहा था। यह शाम अभी तक मेरी स्मृति में सजीव है। मैं सुखी था, पूरी तरह सुखी था – क्या हम इन्सानों की ज़िन्दगी में बहुत होते हैं ऐसे क्षण?

अगले दिन मेरे पिता जी को यह सूचना दी गयी कि किसान माफ़ी मांगने के लिये हवेली के सामने जमा हैं। पिता जी बाहर गये। उन्हें देखकर किसान घुटनों के बल हो गये।

"तो मूर्खो," पिता जी ने उनसे पूछा, "किसलिये विद्रोह करने की सूझी थी तुम्हें?"

"हम कुसूरवार हैं, हमारे मालिक," सभी ने एक आवाज़ में जवाब दिया।

"कुसूरवार तो तुम हो ही। शरारत करते हो और फिर ख़ुद ही पछताते हो। इस ख़ुशी में तुम्हें माफ़ करता हूं कि भगवान ने बेटे प्योतर अन्द्रेइच से मिलन करवाया है। कुसूरवार! बेशक, कुसूरवार हो! लेकिन ख़ैर – माफ़ी के लिये झुके हुए सिर को तो तलवार भी नहीं काटती। भगवान ने अच्छा मौसम दिया है, घास काटनी चाहिये, मगर तुम बेवकूफ़ों ने पूरे तीन दिन तक क्या किया? मुखिया! सभी को घास काटने के लिये भेज दो – और सुनो लाल बालोंवाले शैतान,

सन्त इल्या के दिन तक सारी घास की टालें तैयार हो जानी चाहिये। अब चलते बनो!"

किसानों ने सिर झुकाये और बेगार के लिये ऐसे चल दिये मानो कुछ हुआ ही न हो।

श्वाबरिन का घाव घातक नहीं था। उसे फ़ौजी पहरे में कज़ान भेज दिया गया। मैंने खिड़की से उसे घोड़ा-गाड़ी में लिटाया जाते देखा। हमारी नज़रें मिलीं, उसने सिर झुकाया और मैं झटपट खिड़की से दूर हट गया। मैं यह ज़ाहिर नहीं करना चाहता था कि अपने शत्रु के दुर्भाग्य और अपमान पर खुश हो रहा हूं।

ग्रिनेव को आगे जाना था। अपनी इस इच्छा के बावजूद कि मैं कुछ दिन तक अपने परिवार में और रहूं, मैंने उसका साथ देने का निर्णय किया। कूच के एक दिन पहले मैं अपने माता-पिता के पास गया और उस समय के रिवाज के मुताबिक़ मैंने उनके पैरों पर शीश झुकाया और मरीया इवानोव्ना से शादी करने के लिये उनसे आशीर्वाद देने का अनुरोध किया। मेरे माता-पिता ने मुझे उठाया और ख़ुशी के आंसू बहाते हुए अपनी सहमति व्यक्त की। कांपती हुई और पीला चेहरा लिये मरीया इवानोव्ना को मैं उनके पास ले गया। उन्होंने हमें आशीर्वाद दिया... उस समय मैंने क्या अनुभव किया, मैं इसका वर्णन नहीं करूंगा। जिसे इस चीज़ की अनुभूति हो चुकी है, वह मेरे वर्णन के बिना ही इसे समझ जायेगा और जिसे ऐसा दिन देखना नसीब नहीं हुआ, उसके लिये सिर्फ़ अफ़सोस ही कर सकता हूं और यह सलाह दे सकता हूं कि वक़्त रहते किसी से प्यार कर लो और माता-पिता का आशीर्वाद पा लो।

हमारी रेजिमेंट अगले दिन कूच को तैयार हो गयी। ग्रिनेव ने हमारे पूरे परिवार से विदा ली। हम सभी को इस बात का पूरा यक़ीन था कि फ़ौजी कार्रवाइयां जल्द ही ख़त्म हो जायेंगी। मुझे उम्मीद थी कि एक महीने बाद मैं शादी कर लूंगा। मरीया इवानोव्ना ने मुझसे विदा लेते हुए सभी के सामने मुझे चूमा। मैं घोड़े पर सवार हुआ। सावेलिच फिर से मेरे पीछे-पीछे हो लिया – रेजिमेंट चल दी।

मैं गांव की अपनी हवेली को, जिसे फिर से छोड़कर जा रहा था, दूर से देर तक देखता रहा। उदासीभरी पूर्वभावना मेरे मन को

आशंकित कर रही थी। कोई मेरे कान में मानो फुसफुसा रहा था कि मेरे सभी दुर्भाग्यों का अभी अन्त नहीं हुआ है। दिल यह महसूस कर रहा था कि अभी एक नया तूफ़ान आयेगा।

हमारे कूच और पुगाचोव के साथ लड़ाई के अन्त की चर्चा नहीं करूंगा। हम पुगाचोव द्वारा तबाह किये गये गांवों-बस्तियों में से गुज़रे और हमने अनिच्छा से बदक़िस्मत लोगों से वह छीन लिया जो लुटेरे छोड़ गये थे।

लोग यह नहीं जानते थे कि किसके आदेशों का पालन करें। शासन तो सभी जगह पर समाप्त हो गया था। ज़मींदार जंगलों में जा छिपे थे। डाकुओं-लुटेरों के गिरोह सभी जगह लूट-मार कर रहे थे। अलग-अलग फ़ौजी दस्तों के अफ़सर, जिन्हें उस वक़्त अस्त्राख़ान की तरफ़ भागे जा रहे पुगाचोव का पीछा करने के लिये भेजा गया था, अपनी मर्ज़ी से दोषियों और निर्दोषों को भी सज़ा देते थे... जहां यह आग भड़की हुई थी, उस सारे इलाक़े की ही भयानक हालत थी। भगवान न करे कि कभी बेमानी और क्रूरतापूर्ण रूसी विद्रोह को देखना पड़े। हमारे यहां जो लोग असम्भव उथल-पुथल की कल्पना करते हैं, वे या तो जवान हैं और हमारी जनता को नहीं जानते या फिर संगदिल हैं जिनके लिये दूसरों का सिर एक दमड़ी का है और अपनी गर्दन की क़ीमत एक कौड़ी है।

पुगाचोव भागता जा रहा था और जनरल इवान इवानोविच मिख़ेलसोन उसका पीछा कर रहा था। जल्द ही हमें यह पता चला कि उसे पूरी तरह कुचल दिया गया है। ग्रिनेव को अपने जनरल से यह ख़बर मिली कि नक़ली सम्राट को गिरफ़्तार कर लिया गया है और साथ ही उसे आगे न बढ़ने का आदेश प्राप्त हुआ। आख़िर तो मैं घर जा सकता था। मेरी ख़ुशी का कोई ठिकाना नहीं था – लेकिन एक अजीब-सी भावना मेरी ख़ुशी पर छाया डाल रही थी।

पुश्किन के गद्य पर एक दृष्टि

कथा-साहित्य का सृजन महाकवि पुश्किन के कृतित्व के विकास का नया चरण था।

तीसरे दशक के मध्य में पुश्किन गद्य की ओर उन्मुख हुए। १८२७ में उन्होंने 'पीटर महान का सेवक' ऐतिहासिक उपन्यास लिखना आरम्भ किया जो अधूरा ही रह गया।

तीसरे दशक के अन्त में उन्होंने १८१२ के महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध और १८२५ के दिसम्बरवादियों के विद्रोह के विषय से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित कई गद्य-रचनाओं के अंश लिखे और पाण्डुलेख तैयार किये।

१८३० में पुश्किन ने बोल्दीनो गांव में एक के बाद एक पांच लम्बी कहानियां लिखीं और उन्हें 'बेल्किन की कहानियां' शीर्षक के अन्तर्गत सूत्रबद्ध किया। रूसी साहित्य में पुश्किन ही ऐसे पहले लेखक थे जिन्होंने रूसी लोगों की विभिन्न सामाजिक श्रेणियों के जीवन और रहन-सहन का चित्रण आरम्भ किया। भूदासों की स्थिति की ओर कवि ने विशेषत: बहुत ध्यान दिया। जीवन के अन्तिम वर्षों में उनके प्रचारलेखों तथा कलात्मक गद्य-रचनाओं – 'गोर्यूख़िनो गांव की कहानी', 'दुब्रोव्स्की', 'कप्तान की बेटी' आदि में किसानों का विषय उनके कृतित्व का मुख्य विषय बन गया।

अत्यधिक स्पष्टता, अभिव्यक्ति की संक्षिप्तता और यथातथ्यता, अलंकृत करनेवाले किसी भी प्रकार के रूपकों और विशेषणों का सर्वथा अभाव, जल्दी से बढ़ता हुआ कथानक – ये हैं पुश्किन की शैली के

मुख्य लक्षण। "यथातथ्यता और संक्षिप्तता – गद्य के ये दो प्रथम गुण हैं। गद्य विचारों, और अधिक विचारों की मांग करता है – उनके बिना अभिव्यक्ति के अधिकतम सौन्दर्य से भी कोई बात नहीं बनेगी," पुश्किन ने लिखा है।

रूसी साहित्य के महान संशोधक पुश्किन यथार्थवादी गद्य के जनक बने।

दिवंगत इवान पेत्रोविच बेल्किन की कहानियां

पुश्किन ने ये कहानयियां १८३० की पतझर में बोल्दीनो गांव में लिखीं। इनमें से पहली कहानी 'ताबूतसाज़' ६ सितम्बर को, उसके बाद १४ सितम्बर को 'डाक-चौकी का मुंशी', २० सितम्बर को 'प्रेम-मिलन', १२ और १४ अक्तूबर को 'पिस्तौल का निशाना', और २० अक्तूबर को 'बर्फ़ीली आंधी' लिखी गयी। ६ दिसम्बर को पुश्किन ने "सर्वथा गुप्त रूप से" यह सूचित किया कि उन्होंने "पांच गद्य-कहानियां" लिखी हैं। १८३१ के अप्रैल में कवि ने ये कहानियां मास्को में पढ़कर सुनायीं। पुश्किन ने अपने नाम के बजाय कल्पित "दिवंगत बेल्किन" के नाम से इन्हें प्रकाशित करवाने का निर्णय किया और 'सम्पादक की ओर से' भूमिका भी इन कहानियों के साथ जोड़ दी और लेखन-तिथियों वाला क्रम बदलते हुए 'पिस्तौल का निशाना' तथा 'बर्फ़ीली आंधी' को संग्रह के आरम्भ में स्थान दिया।

ये कहानियां १८३१ के अक्तूबर के अन्त में प्रकाशित हुईं। पुश्किन के नाम से १८३४ में छपीं।

हुक्म की बेगम

यह लघु-उपन्यास १८३३ की पतझर में बोल्दीनो में लिखा गया। पुश्किन के समकालीनों के कथनानुसार इस रचना का मुख्य ताना-बाना कल्पित नहीं है। बूढ़ी काउंटेस मास्को के गवर्नर-जनरल द्मीत्री व्लादीमिरोविच की मां नताल्या पेत्रोव्ना गोलीत्सिना है जिसने सचमुच ही पेरिस में उस ढंग का जीवन बिताया था जैसा कि पुश्किन ने चित्रित

किया है। उसके पोते गोलीत्सिन ने पुश्किन को बताया कि एक बार वह जुए में हार गया और दादी से पैसे मांगने के लिये उसके पास आया। उसने पैसे तो नहीं दिये, मगर उसे तीन पत्ते बता दिये... "पोते ने पत्ते चले और जीत गया। आगे का कथानक मनगढ़न्त है।"

पुश्किन के ही कथनानुसार यह लघु-उपन्यास बहुत लोकप्रिय हुआ – "मेरी 'हुक्म की बेगम' का बड़ा चलन है। खिलाड़ी तिक्की, सत्ती और इक्के पर दांव लगाते हैं।"

कप्तान की बेटी

चौथे दशक के आरम्भ से पुश्किन ने किसानों के विद्रोह की विषय-वस्तु में विशेष रुचि ली। इस विषय पर चिन्तन करते हुए येमेल्यान पुगाचोव (१७४४–१७७५) के विद्रोह की ओर उनका ध्यान गया। कवि के मस्तिष्क में पुगाचोव के विद्रोह और कुलीन अनुयायी के बारे में उपन्यास लिखने के विचार ने जन्म लिया। जनवरी १८३३ में पुश्किन ने उपन्यास की पहली योजना तैयार की। शुरू में उन्होंने एक वास्तविक ऐतिहासिक व्यक्ति मिख़ाईल अलेक्सान्द्रोविच श्वानविच को उपन्यास का नायक बनाना चाहा। श्वानविच ग्रेनादेर रेजिमेंट में अफ़सर था, पुगाचोव के साथ हो गया था और बाद में उसे साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया था।

पुश्किन ने ऐतिहासिक उपन्यास 'कप्तान की बेटी' और वैज्ञानिक ग्रन्थ 'पुगाचोव के विद्रोह का इतिहास' पर एकसाथ काम करते हुए लेखागारों की सामग्री का अध्ययन किया और कभी विद्रोह की लपेट में आनेवाले स्थानों पर जाकर साक्षियों से बातचीत की।

उपन्यास की प्रारम्भिक योजना में बहुत काफ़ी परिवर्तन हुआ। पुगाचोव के विद्रोह का विषय अधिकाधिक सशक्त होता गया और साथ ही इसकी "रोमानी घटना" – उपन्यास के नायक और दुर्गपति की बेटी के प्रेम की दास्तान – ठोस शक्ल हासिल करती गयी।

उपन्यास धीरे-धीरे लिखा गया और १८३६ की पतझर में समाप्त हुआ। सेंसर के सामने इसे पेश करते हुए पुश्किन ने २५ अक्तूबर, १८३६ को सेंसर-अधिकारी प० कोर्साकोव को लिखा – "मिरोनोव

कल्पित नाम है। मेरा उपन्यास मेरे द्वारा कभी सुनी गयी इस दन्त-कथा पर आधारित है कि मानो एक अफ़सर अपने फ़र्ज़ के प्रति ग़द्दारी करते हुए पुगाचोव के गिरोहों में शामिल हो गया था और उसके बूढ़े पिता के सम्राज्ञी के क़दमों पर जा गिरने के फलस्वरूप उसे क्षमा कर दिया गया था। जैसा कि आप देख सकते हैं, उपन्यास 'सचाई' से बहुत दूर चला गया है।"

'कप्तान की बेटी' उपन्यास में पुश्किन ने १७७३–१७७५ के किसान-विद्रोह का एक बहुत प्रभावपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुगाचोवी आन्दोलन के सच्चे जनवादी और भूदासप्रथा-विरोधी स्वरूप को स्पष्ट किया है। स्वयं पुगाचोव को किसान-विद्रोह का प्रतिभाशाली और साहसी नेता चित्रित किया गया है। कवि ने पुगाचोव की समझ-बूझ, हाज़िरजवाबी, बहादुरी, दिलेरी और मानवीयता पर ज़ोर दिया है। १ नवम्बर, १८३६ को पुश्किन ने प० अ० व्याज़ेम्स्की के यहां आयोजित गोष्ठी में अपना उपन्यास पढ़कर सुनाया। 'कप्तान की बेटी' १८३६ में 'सोव्रेमेन्निक' (समकालीन) पत्रिका में पहली बार छपा।

पुश्किन के समकालीन, महान रूसी आलोचक बेलीन्स्की ने 'कप्तान की बेटी' का बहुत ऊंचा मूल्यांकन किया। "'कप्तान की बेटी'," उन्होंने लिखा, "एक तरह से गद्य में 'येव्गेनी ओनेगिन' है। कवि ने उसमें येकातेरीना द्वितीय के शासन-काल के रूसी समाज के जीवन का चित्रण किया है। अनेक चित्र वास्तविकता, विषय-वस्तु की सचाई और वर्णन की कलाकुशलता की दृष्टि से पूर्णता का चमत्कार हैं। निकोलाई गोगोल (१८०९–१८५२) 'कप्तान की बेटी' को कथा-साहित्य की श्रेष्ठतम रचना मानते थे। "इसमें सचाई और कृत्रिमहीनता ऐसी पराकाष्ठा पर पहुंच गयी हैं कि स्वयं वास्तविकता उनके सामने कृत्रिम और उपहास-चित्र-सा प्रतीत होती है," उन्होंने लिखा है।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन को इस पुस्तक के अनुवाद और डिज़ाइन के संबंध में आपकी राय जानकर और आपके अन्य सुझाव प्राप्त कर बड़ी प्रसन्नता होगी। अपने सुझाव हमें इस पते पर भेजें :

प्रगति प्रकाशन,
१७, ज़ूबोव्स्की बुलवार,
मास्को, सोवियत संघ।

ИБ № 10494

Редактор русского текста *А. Ф. Чеботкевич*
Контрольные редакторы *М. К. Арбаков,*
А. П. Карастина
Художественный редактор *Г. А. Семенова*
Технические редакторы *А. П. Агафошина,*
С. Л. Рябинина
Корректоры *Г. В. Колмыкова, Т. Г. Горобец*

Сдано в набор 28.09.81. Подписано в печать 19.02.82. Формат 84×108 1/32. Бумага офсетная. Гарнитура хинди. Печать офсетная. Условн. печ. л. 16,8 + 0,1 печ. л. вклеек Уч.-изд. л. 22,44. Тираж. 7160 экз. Заказ № 697. Цена 2 р. 79 к. Изд. № 34336.

Ордена Трудового Красного Знамени издательство „Прогресс" Государственного комитета СССР по делам издательств, полиграфии и книжной торговли. Москва 119021, Зубовский бульвар, 17.

Отпечатано на Можайском полиграфкомбинате Союзполиграфпрома при Государственном комитете СССР по делам издательств, полиграфии и книжной торговли. Можайск. 143200, ул. Мира, 93.

अलेक्सान्द्र पुश्किन (१७६६–१८३७) की चुनी हुई रचनाओं के दो खण्ड हिन्दी-पाठक को महान रूसी कवि की कलात्मक मेधा का आभास करवायेंगे, उनकी विधा-विविधता को स्पष्ट करेंगे।

दूसरे खण्ड में पुश्किन की श्रेष्ठ गद्य-रचनाओं – 'इवान बेल्किन की कहानियां' (१८३०), सामाजिक-मनोवैज्ञानिक कहानी 'हुक्म की बेगम' (१८३३) और पुगाचोव के समय से सम्बन्धित 'कप्तान की बेटी' (१८३६) उपन्यास को स्थान दिया गया है। इस सचित्र पुस्तक में उस युग की दस्तावेज़ी सामग्री – महाकवि और उनके रिश्तेदारों तथा मित्रों के छविचित्र, पुश्किन से सम्बन्धित स्मरणीय स्थानों के चित्र और पुश्किन द्वारा बनाये गये रेखाचित्र आदि – दी गयी है।